Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

JEEVAN SAKHA

1939

G. K. V.
LIB.
ARDWA

ukul Kangri Colle

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

078736

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

COMPILED

078736

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवनसखा

संख्या ४ अङ्क ११
नवम्बर, १९३९

शारीरिक
नैतिक
मानसिक
स्वास्थ्य का
पथ-प्रदर्शक

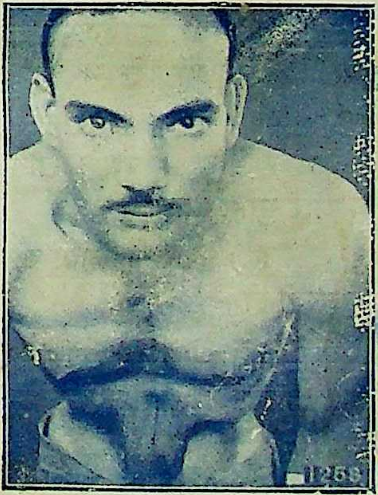

मध्यम नौलि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

संचालक तथा संपादक श्रीबालेश्वर प्रसाद सिंह

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपना, अपने परिवार का, अपने कुटुम्ब का और समाज का

ज़ीवन सुखमय बनाने के लिए

प्रत्येक स्त्री, पुरुष, बालक, युवक और वृद्ध के लिए अत्यन्त उपयोगी

प्रतिमास सज-धज कर नये रंग और रूप में निकलने वाला

हिन्दी में

स्वास्थ्य संबंधी

एक सचित्र मासिक पत्र

उपसम्पादक— विश्वम्भर नाथ द्विवेदी

जीवन-सखा

सम्पादक व संचालक— बालेश्वर प्रसाद सिंह

ध्येय—मनुष्य मात्र को सुखी, स्वस्थ और शक्तिशाली बनाने के लिए उनकी शारीरिक, मानसिक और नैतिक समस्याओं पर नया प्रकाश डालना।

धारणा—(१) मानव-जीवन स्वर्गीय सुख के अनुभव और उपभोग के लिए है।

(२) सच्चा स्वास्थ्य उसी संयमी सज्जन के हस्तगत होता है, जिसकी मानसिक और शरीरिक वृत्तियाँ परस्परानुकूल हैं।

(३) मनुष्य-शरीर एक ऐसा यन्त्र है, जो अपने आप ही अपनी मरम्मत और सुधार कर लेता है। उसके साथ अ-प्राकृतिक छेड़-छाड़ न करना ही उसे स्वस्थ रखने का सच्चा और सुगम उपाय है।

(४) देश का सच्चा कल्याण इसी में है कि हमारे बच्चे हृष्ट-पुष्ट, प्रसन्न-चित्त और तेजस्वी हों।

विषय—भोजन-विज्ञान, व्यायाम-विज्ञान, मनोविज्ञान, योगासन तथा क्रियायें, बच्चों का पालन-पोषण, रोगों की चिकित्सा, पूछे हुए जटिल प्रश्नों और समस्याओं का विशेषज्ञों द्वारा उत्तर, 'जीवन सखा' में बताये ढंगों से स्वास्थ्य-प्राप्त मनुष्यों के लिखित वृत्तान्त, आदि।

वार्षिक मूल्य ३)   स्फुट संख्या ।=)

पता:—

मैनेजर, 'जीवन-सखा'
प्राकृतिक स्वास्थ्य गृह,
८७, हिम्मतगञ्ज, इलाहाबाद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संयुक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त तथा बिहारप्रान्त के शिक्षाविभाग द्वारा स्वीकृत

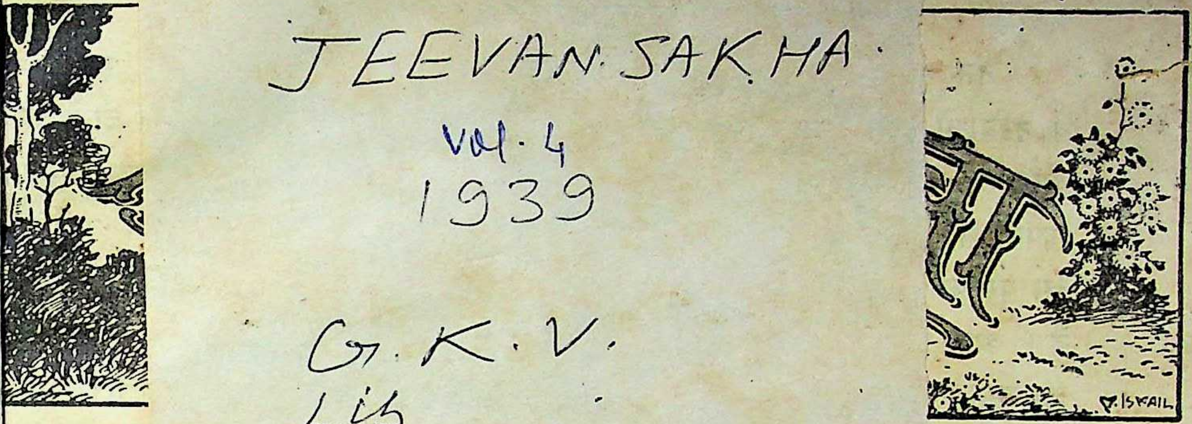

JEEVAN SAKHA
Vol. 4
1939
G.K.V.
Lib
HARDWAR

संख्या ४ { अंक ११

078736

विषय सूची

विषय	पृष्ठ
१—सम्पादकीय विचार	३
२—रोगियों की मनोवृत्ति [श्रीयुत जानकीशरण वर्मा]	५
३—नवरात्र का उपवास [श्रीयुत प्रिन्सपल केदारनाथ गुप्त, एम० ए०]	७
४—हिस्टीरिया (उन्माद) [श्रीयुत डाक्टर बालेश्वरप्रसाद सिंह]	९
५—भोजन—शरीर-सौन्दर्य का साधन [श्रीयुत विट्ठलदास मोदी]	११
६—जल [श्रीयुत विश्वम्भरनाथ द्विवेदी]	१४
७—ब्रह्मचर्य से लाभ [श्रीयुत रामशरण यादव,]	१७
८—खाना-पीना [श्रीयुत रामसहाय वर्मा]	२१
९—प्रसूतिका-गृह और प्रसूता [श्रीमती शरतकुमारी रूक्स]	२३
१०—दूध [श्रीयुत डा० शिवनाथराय,]	२६
११—जुदा जुदा दर्दों को मिटाने वाला मसाज [श्रीयुत संचालक, रामतीर्थ योगाश्रम, मुंबई] ...	२८
१२—दूध-चिकित्सा पर मेरी नोटबुक [श्रीयुत स्वामी जगदीश्वरानन्द, वेदान शास्त्री] ...	३०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राकृतिक चिकित्सा

संकलनकर्ता: प्रिन्सपल केदारनाथ जी गुप्त, एम० ए०

तनदुरुस्ती के लिए लोग बे-तरह इच्छुक हैं और इधर उधर डाक्टर, वैद्य, हकीम अ के दरवाज़ों पर हतोत्साह ठोकरें खाते फिरते हैं। अपना पैसा तथा तनदुरुस्ती दोनों बर करते हैं। स्वार्थ तथा परमार्थ की सिद्धि के लिए स्वास्थ्य आवश्यक है। प्रिन्सपल साह अपने संकलन द्वारा सब के लिए तनदुरुस्ती का सीधा और सरल रास्ता दर्शाया इस पुस्तक के चार खंड किये गये हैं। पहले में कुछ साधारण और आवश्यक वि है। आहार विषयक सब बातों का समावेश दूसरे खंड में है। व्यायाम के विविध प्र का समावेश तृतीय परिच्छेद में देकर और कुछ अधिक प्रचलित रोगों की चिकित्सा दे चतुर्थ खंड समाप्त किया गया है। इस सर्वांगपूर्ण सचित्र पुस्तक का दाम **२।) मात्र** है

स्वास्थ्य के नुस्ख़े

प्रकाशक: जीवन-सखा-कार्यालय

इस छोटी पुस्तक का परिचय उसके नाम से ही होता है। बिगड़ी तनदुरुस्ती बनाने के उपायों का विवरण इसमें है। उन उपायों को समझने के लिए जितनी सहायक बातों की आवश्यकता पड़ती है उनका विवरण इस में दे दिया गया है। टब मिट्टी की पट्टी आदि बनाने के तरीक़ों का पूरा विवरण है। इस पुस्तक के सहारे बीमार अपने को तनदुरुस्त बना सकते हैं। इस उपयोगी पुस्तक का **मूल्य ≈)॥** है।

तलाश

लेखक : ब्रजमोहन 'मिहिर'

आनन्दयोग, जीवन में रुचि, व्यक्तित्व, अनन्त में निवास और तलाश पर एक रीति से विचार किया गया है। लेखक ने हर एक बात में अपना अनूठापन नहीं छोड़ा है। के वास्तविक रहस्य तथा लक्ष्य आदि का विस्तृत वर्णन इस पुस्तक में दिया हुआ है। जो जीवन को 'जीवन' बनाना चाहता है उसे इस पुस्तक को अवश्य पढ़ना चाहिए। मूल्य ।≈) है

मिलने का पता:—

स्वास्थ्य-ग्रन्थ-भण्डार

८७, हिम्मतगंज, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय विचार

क्या प्राकृतिक चिकित्सा से सभी बीमारियाँ अच्छी होती हैं ?

ब प्राकृतिक चिकित्सक यह दावा करता है कि मनुष्यमात्र की जितनी बीमारियाँ हैं, सभी च्छी होनी चाहिए तो स्वभावतः इस दलील सामने जनता यह पूछती है कि क्या ? प्राकृतिक कित्सा से सभी बीमारियाँ अच्छी हो सकती हैं। का उत्तर है—नहीं, ऐसी बात नहीं है। मैं स्थ्य और बीमारी के नियम को जनता के मने रखता हूं, जिससे जनता खुद समझ सकती कि प्राकृतिक चिकित्सा से बीमारियाँ कहाँ तक च्छी हो सकती हैं।

मुख्यतः बीमारियाँ तीन बातों पर निर्भर करती हैं—

१ इनरवेशन, २ न्यूट्रीशन, ३ ड्रेनेज। ये तीन य कारण हैं। आगे चलकर इन्हीं की शाखा दर वा रोगोत्पत्ति की कारण सामग्री तैयार होती है और इसी से साध्य असाध्य का ज्ञान ा है। सिर से चलकर मेरुदण्ड से होता हुआ वनतत्व' का नस नस में दौरान होना ही रवेशन' है। इस क्रिया में रुकावट डालने वाले य से ही रोगोत्पन्न होता है।

न्यूट्रीशन—यानी पोषणतत्त्व का पूरा होना। शुद्ध और पर्याप्त ख़ून से मिलता है और उस की शुद्धि वा अधिकता शुद्ध सात्विक पुष्टिकर न से होती है।

विसर्जन क्रिया का ही नामान्तर 'ड्रेनेज' है। र के उपयोग से बचे फालतू पदार्थ के न लने से बीमारी पैदा होती है।

अब इन्हीं की शाखाएं चलती हैं—इनरवेशन की से (नं० १) जीवनशक्ति की कमी हो जाती है। शन की कमी से (नं० २) ख़ून में पोषक द्रव्यों की कमी होती है। और ड्रेनेज की कमी से (नं० ३) विजातीयपदार्थ जमा होने लगता है। उपर्युक्त (ऊपर लिखी) तीनों बातें ही प्रत्येक रोग के मुख्य कारण (प्राइमरी दशाएं) हैं, इसी से आगे सिकन्डरी (गौण कारण) की उत्पत्ति है जो कि रुग्नावस्था में साक्षात कारण प्रतीत होता है। नं० १ की कमी से परम्परा से यानी माता पिता से प्राप्त हुई गन्दगी यानी पूर्वजों से प्राप्त गर्मी, सूज़ाक, आतशक, प्रमेह वग़ैरह की बीमारियाँ निकल पाती हैं। नं० २ से छूतछात रोगों सम्बन्धी कीटाणु समूह का पैदा होना संभव होता है। इसी प्रकार (नं० ३) के पैदा हो जाने पर तरह तरह के फ़ीवर (ज्वर) का होना दाद, खुजली, छोटे बड़े फोड़ों का होना इत्यादि नाना प्रकार के चर्म रोगों का आक्रमण होता रहता है और ख़ून का बहना भी कभी जारी हो जाता है।

अब आप इस मुख्य एवं गौण कारण सामग्री के विवेचन हो जाने पर समझ सकते हैं कि कितने तरह के रोग हैं और उसके अनुसार साध्यासाध्य का अन्दाज़ भी लगा सकते हैं। बहुत से रोग तो ऐसे हैं जिनका उत्तरदायित्व रोगी पर है—जैसे फर्ज़ कीजिये नवीन ज्वर (Acute Diseases) सिर दर्द, पेट दर्द, कान दर्द वग़ैरह तुरन्त पैदा हुए तकलीफ़ें जो कि अक्सर खान पान के ग़लत तरीक़े से सम्बन्ध रखती हैं और थोड़े ही प्राकृतिक उपचार से शीघ्र शांत हो जाती हैं। दूसरी तरह के रोग जिनकी जवाबदेही तो मरीज़ पर है हो लेकिन रोग बहुत दिनों का है। सिर्फ़ इतना ही नहीं बल्कि ख़िलाफ़ (जहर की मानिन्द) दवायें खा खा कर प्रकृति के काम को रोक मर्ज़ को क़ायममुक़ाम (स्थानापन्न)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर दिया गया है। तिस पर भी शर्त यह कि भले ही रोग भयानक है और उसने वृक्ष की तरह पृथ्वी-स्वरूप शरीर में जड़ें कायम भी कर दी हैं लेकिन मगर मुक़ाबले में पहाड़ों को उखाड़ने वाली वायु के समान जीवनशक्ति भी बलवती है तो कोई कारण नहीं कि भयानक से भयानक रोगों को नेस्तोनाबूद (मूलोच्छेद) प्राकृतिक चिकित्सा से न किया जाय।

तीसरे दर्जे के रोग वे हैं जो कि मातृकुल या पितृकुल से सम्बन्ध रखते हैं और बीज रूप से मनुष्य शरीर में प्रविष्ट होते हैं या बटबीज से महान बटवृक्ष की भाँति जैसे जैसे उमर बढ़ती जाती है वैसे वैसे ये भी बढ़ते जाते हैं। इस प्रकार बढ़े रोगों को भी दो हिस्सों में विभक्त करना पड़ता है—एक तो साधारण (Simple) दूसरे भयानक, (Compound)। साधारण बढ़े रोग तो कुछ अर्से के प्रयत्न करने से प्राकृतिक उपचारों द्वारा हटाये जा सकते हैं। मगर परम्परा से प्राप्त बढ़े भयानक रोग तो प्राकृतिक चिकित्सा से भी नहीं हटाये जा सकते। यदि इनरवेशन भी ठीक नहीं साथ ही पूर्वोक्त मरीज़ की जवाबदेही वाले बहुत दिनों से चले आने के कारण भयानक हुए रोग भी बमुकाबिल जीवनशक्ति की कमी होने पर प्राकृतिक चिकित्सा से नहीं हट सकते।

सच्ची बात यह है कि मरीज़ को जब तक डाक्टर वैद्य या हकीम की एक बूँद एक गोली या एक भी काढ़े पर थोड़ा भी विश्वास रह जाता है, तब तक वह प्राकृतिक उपचारों को तो पास फटकने भी नहीं देता, और सोचता है यारो दस रोज़ की जिन्दगी है, इसमें भी तरह तरह की बढ़िया चीज़ों को खा मज़ा न उड़ा लिया तो क्या ख़ाक किया दुनिया में आकर।

साथ ही चार्वाक के सिद्धान्त का स्मरण कर कि—यावज्जीवेत सुखं जीवेत ऋणं कृत्वा घृतं पिवेत। भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः॥ अर्थात् दुनिया में जब तक जीवे, सुख से जीवे, उधार लेकर भी घी पीवे क्योंकि भस्मीभूत शरीर का पुनरागमन तो होना नहीं, जो कुछ खाया जाय खा लेना चाहिए।

मगर अफ़सोस कि वह यह नहीं समझ पाता कि सुख प्राकृतिक नियमों के पालन से है या उनके उल्लङ्घन से। सिर्फ़ इतना ही नहीं कि उसने खान पान के कारण प्राकृतिक नियमों का पालन न किया हो बल्कि समय समय पर प्रकृति के सफ़ाई के काम में ज़ोरशोर से दवाइयों के द्वारा ज़ोरोज़ुल्म (ज़बर-दस्त अन्याय) करता रहा, जिसकी वजह से जीवन शक्ति क्षीण हो गई। ऐसी दशा में 'आग लगने पर कुआं खोदना', इस मिसाल के अनुसार अब प्राकृतिक चिकित्सा से भी कुछ नहीं होगा। बस प्राकृतिक चिकित्सा में दो सार की बातें हैं—अपने अपराध से पैदा हुए भयानक रोग वा परम्परा से आये साधारण रोग उचित समय के उपचार से निश्चित हटेंगे यदि जीवनशक्ति काफ़ी है तो। अपने अपराध से पैदा हुए रोग भी नहीं हट सकते यदि जीवनशक्ति बहुत कम है। या परम्परा से आये भयानक रोग हैं तो वे भी नहीं हट सकते हैं। और चिकित्साओं की अपेक्षा प्राकृतिक चिकित्सा में यही विशेषता है कि जीवन शक्ति होने पर सौ फ़ी सदी रोग हटाये जा सकते हैं।

क्या और कैसे खाँये

[लेखक : डाक्टर बालेश्वर प्रसाद सिंह]

'भोजन की समस्या बड़ी विचित्र है। खाने का सवाल हल हो जाने पर किसी बात की चिन्ता नहीं रह जाती। खाने के मुताबिक ही आदमी की जिन्दगी बीतती है। जैसा कि नाम से स्पष्ट है इस पुस्तक में किन चीज़ों को खाना और किनको छोड़ना, किनको कितना खाना आदि मसलों पर विचार किया गया है। तरह तरह की सूचियाँ देकर गागर में सागर भर दिया यगा है। ऐसी उपयोगी पुस्तक का मूल्य केवल चार आना है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोगियों की मनोवृत्ति

श्रीयुत जानकीशरण वर्मा

यहां उन रोगियों की मनोवृत्ति के बारे में कुछ कहा जा रहा है जो जीर्ण रोगों से पीड़ित हैं। 'जीवन-सखा' के पाठकों को अच्छी तरह मालूम है कि बवासीर, गठिया, दमा, एक्जिमा जैसे जीर्ण रोग—बहुत समय तक धीमी गति से चलनेवाले पर दुखदाई रोग—अनुचित आहार-विहार और नये रोगों को बार-बार दवा देने के कारण होते हैं। ऐसे रोग शरीर में बने रहते हैं और शरीर के संग जाते हैं। ऐसे रोगों की सफल चिकित्सा भी औषधियों के द्वारा नहीं हो सकती। औषधि पर भरोसा रखनेवाले चिकित्सक इन रोगों में केवल आराम पहुँचा सकते हैं, उन्हें निर्मूल नहीं कर सकते। ये निर्मूल तो तब हों, जब कि रोगी अपने जीवन का, रहन-सहन, खान-पान, आचार-विचार का, ढंग बदल दे और प्रकृति के नियमों के अनुकूल रहने लग जाय। या तो वह स्वयं ऐसा करे या अगर वह बहुत दुर्बल है तो उसके घरवाले और उसके मित्र-संबंधी उसकी सहायता करें कि वह ठीक रास्ते पर चले। जो रोगी प्रकृति के अनुकूल रहते हैं वे अवश्य ही अपने जीर्ण रोगों को मार भगाते हैं। समय लग सकता है, क्योंकि वर्षों की गड़बड़ी के कारण जीर्ण रोग होता है, लेकिन इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि उचित भोजन, व्यायाम, आराम और मनोवृत्ति से शरीर फिर से नया हो जायगा और उसमें रोग टिकेगा ही नहीं।

यहाँ मैंने 'मनोवृत्ति' को सबसे पीछे रखा, पर है यह और सबों से प्रबल इसी के ठीक होने से और सब आसानी से ठीक हो जाते हैं। इसके दूषित रहने से भोजन, व्यायाम, आराम, कुछ भी ठीक ठीक नहीं हो पाता। अगर हो भी तो उस का पूरा प्रभाव शरीर पर नहीं पड़ता। जीर्ण रोग के दूर होने में सबसे बड़ी अड़चन है रोगी की चंचल और दूषित मनोवृत्ति। चतुर प्राकृतिक चिकित्सक इस पर पूरा ध्यान देते हैं, नहीं तो उन्हें सफलता देवी के दर्शन नहीं होते। बिगड़ी मनोवृत्ति के कई रूप-रंग, आकार प्रकार, हैं। इनमें से कुछ का वर्णन यहाँ किया जाता है :—

अधैर्य—रोगी बहुत जल्द अच्छा होना चाहता है। २५-३० साल के त्रुटिपूर्ण जीवन के फल-स्वरूप बवासीर या किसी और जीर्ण रोग से एक हफ़्ते में ही छुटकारा पाना चाहता है!

असंगत विचार—जीर्ण रोग का रोगी एक चिकित्सा-प्रणाली से दूसरी में भटकता फिरेगा, लेकिन प्राकृतिक चिकित्सा में जल्द नहीं आयेगा। और प्रणालियों में दवा का सहारा है, आशा की जाती है कि दवा जादू का सा असर दिखायेगी, पर प्राकृतिक चिकित्सा में केवल संयम का ही सहारा है। रोगी की इच्छा-शक्ति इतनी कमज़ोर पड़ जाती है कि वह भविष्य के स्थायी सुख के लिए अभी के अस्थायी सुखों को छोड़ना नहीं चाहता। अगर वह प्राकृतिक चिकित्सा आरंभ करता है तो भोजन इत्यादि के बारे में तरह-तरह के असंगत विचारों में फँसा रहता है, जिससे उसकी हालत के सुधरने में कठिनाई होती है।

सन्तोष—अक्सर देखा जाता है कि अगर कुछ संयम के बाद थोड़ा लाभ हुआ तो रोगी उससे संतुष्ट होकर फिर पहले की तरह खाने-पीने लगता है, जिससे या तो उसकी उन्नति एक हद तक पहुँच कर रुक जाती है या उसकी हालत फिर ख़राब हो जाती है।

उत्साह-हीनता और नैराश्य—चिकित्सा की सफलता में सबसे से ज़्यादा विघ्न-बाधा डालनेवाले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यही दोनों हैं। या तो रोगी स्वयं आशापूर्ण रहे या उसके, चिकित्सक का व्यवहार ऐसा हो कि रोगी के हृदय में आशा और उत्साह की कमी न हो। चिकित्सा के दिनों में ऐसे बहुत से अवसर आते हैं, जब कि चित्त में नैराश्य छा जाता है, पर यह विश्वास रखना चाहिए कि प्रकृति का नियम अटूट है। अगर नियमों की अवहेलना से रोग होता है तो नियमों के पालन से स्वास्थ्य भी अवश्य बनेगा।

इनके अलावा दूषित मनोवृत्ति बहुत तरह से प्रकट होती है। चिड़चिड़ापन भी दूषित मनोवृति का एक प्रकार है। इससे कभी-कभी बहुत कठिनाई उपस्थित होती है। घर वाले समझते हैं कि रोगी जान-बूझ कर और बिना मानी-मतलब के क्रोध कर रहा है, पर सच्ची बात यह रहती है कि रोगी अपनी मानसिक दुर्बलता के कारण चिड़चिड़ा हो जाता है, वह अपने वश में नहीं रहता।

असल में यह एक अटूट चक्कर सा है। दूषित मनोवृत्ति से स्वास्थ्य बिगड़ता है और बिगड़े स्वास्थ्य से मनोवृत्ति दूषित होती है और यह चक्कर इसी तरह जारी रहता है। इसका भयानक प्रभाव मनुष्य की अधोगति का कारण होता है, पर इसमें ज़रा भी सन्देह नहीं कि चतुर चिकित्सक के सम्हालने से या स्वयं चेत करने से परिस्थिति सम्हल जाती है।

मनुष्य 'ईश्वर-अंश' है, दिव्य है, सर्व-शक्तिमान है। वह अपने आप को, अपनी शक्ति को, अपने भविष्य को भूले रहता है। छोटे-छोटे सुखों के पीछे वह अपने बड़प्पन को गँवा देता है, पर क्या ऐसा हो सकता है कि ईश्वर का अंश बहुत दिनों तक कीचड़ में फंसा रहे? क्या इस में सन्देह है कि जभी वह चाहे वह अपने लक्ष्य तक पहुँच सकता है?

रोगी और चिकित्सक दोनों ही को अच्छी तरह समझना और जानना चाहिए कि जितने भी रोग हैं सभी पहले मन में अंकुरित होते हैं। जब विचार और भाव रोगी हो जाते हैं तभी शरीर रोगी होता है। मामूली और तीव्र रोगों में तो ऐसा होता ही है, पर जीर्ण रोगों में मन बेतरह रोग-ग्रस्त रहता है। इसी लिए न केवल शरीर की बल्कि मन की भी चिकित्सा होनी चाहिए। यों तो खान-पान के संयम से मनोवृत्ति कुछ ज़रूर सुधरती है पर इस समस्या को मन की ओर से देखना चाहिए न कि शरीर की ओर से।

सच पूछिए तो प्राकृतिक चिकित्सक को शिक्षक होना पड़ता है, वह भी ऊँचे दर्जे का शिक्षक। साथ ही यह भी है कि इस पद्धति से अगर कोई भी किसी का चिकित्सक बन सकता है तो स्वयं अपना। रोग, जो कि शारीरिक और मानसिक दुर्बलता का दूसरा नाम है, तभी जाता है, जब कि मनुष्य अपने आप को अपने हाथ में लेकर आगे बढ़ता है। जब तक वह ऐसा नहीं कर सकता तब तक उसके लिए एक दूसरा सहायक, चिकित्सक नहीं शिक्षक, चाहिए। इस शिक्षक का काम है शिष्य को स्वावलंबी बनाना।

मनोवृत्ति क्योंकर ठीक हो सकती है? चिकित्सक के जीवन के उदाहरण से, उसके प्रभाव से, उसके वचन से, उसकी सहानुभूति से; अपनी आन्तरिक प्रेरणा से, अपनी समझदारी से, अपनी इस जानकारी से कि मैं ईश्वर-अंश हूं और ईश्वर होऊँगा; इस जानकारी के अनुसार अपने आचरण से।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवरात्र का उपवास

श्रीयुत प्रिन्सपल केदारनाथ गुप्त, एम. ए.,

नेपोलियन बोनापार्ट कहा करते थे कि अधिक भोजन से हज़ारों आदमी मरते हैं किन्तु कम खाने से बहुत कम मनुष्य मरते हैं। नेपोलियन का कथन अक्षरशः सत्य है। हम लोग अपने शरीर और मस्तिष्क को विशेष रूप से आराम देते हैं किन्तु पेट के साथ हम ऐसा बर्ताव नहीं करते।

दफ़्तर, स्कूल, कालेज सब प्रति रविवार को बन्द रहते हैं ताकि काम करने वालों को विश्राम मिले और वे दूसरे सप्ताह में अधिक उत्साह और तेज़ी के साथ काम कर सकें, किन्तु यह अधिकार हम पेट को नहीं देते। प्रत्युत छुट्टियों में हम और भी भारी भोजन करते हैं, जिससे उसे भारी हानि पहुँचती है।

पेट संकेत रूप से विश्राम की सूचना हमें देता है किन्तु हम उसकी परवाह नहीं करते। इसका परिणाम यह होता है कि पेट की पाचन-शक्ति धीरे धीरे क्षीण हो जाती है और हम रोग के शिकार बनते हैं। कभी कभी यह रोग इतना प्रचण्ड रूप धारण करता है कि हमारी मृत्यु तक हो जाती है।

हम ऐसी परिस्थिति क्यों उपस्थित करें कि पेट अपना काम एकदम बन्द कर दे और हमें रोगों का सामना करना पड़े? क्यों न हम कभी कभी पेट को भी थोड़ा आराम लेने दिया करें ताकि वह उसके बाद अधिक शक्ति के साथ अपना काम कर सके?

हमारे पूर्वज इस बात पर विश्वास करते थे कि प्रत्येक मनुष्य को कम से कम सौ वर्ष तक अवश्य जीवित रहना चाहिये और इस कारण उन्होंने प्रत्येक व्यक्ति के लिये एकादशी उपवास की आयोजना की थी। इसका मतलब यह था कि प्रत्येक व्यक्ति को १५ दिन में एक रोज पेट को अवश्य विश्राम देना चाहिये। जन्माष्टमी और दूसरे उपवासों की आयोजना भी इसी अभिप्राय से हुई थी।

किन्तु आधुनिक समय में जब 'खाना पीना और मौज करना' आजकल के नव युवकों का उद्देश्य सा हो रहा है, हम लोग इन उपवासों के महत्व को बिलकुल भूल गये हैं। यदि हम उपवास करते भी हैं तो प्रायः गरिष्ठ से गरिष्ठ भोजन कर लिया करते हैं, जिससे लाभ की जगह हमें हानि पहुँचती है। आवश्यकता इस बात की है कि स्वास्थ्य के लिये इन उपवासों का फिर से सुधार किया जाय।

आगामी नव-रात्र का उपवास और सब उपवासों से अधिक महत्व पूर्ण है। इसका सम्बन्ध ऋतु से है। कुवाँर के पहिले वर्षा ऋतु में पाचन शक्ति निर्बल रहती है। पानी के कारण हम बाहर नियम से घूम नहीं सकते। मलेरिया ज्वर की अधिकता रहती है। यहाँ तक कि जो लोग तन्दुरुस्त हैं उनके भी शरीर भारी और बेचैन रहते हैं।

नवरात्र का व्रत वर्षा ऋतु से विकृत भीतरी शरीर को स्वच्छ कर देता है, एकत्रीभूत रोगों के कीड़ों को नष्ट करता है, शरीर के रग रग की सफ़ाई करता है और उसको काम करने के लिये फिर साफ़ सुथरा बना देता है।

नवरात्र का व्रत १३ अक्टूबर से शुरू होकर २१ अक्टूबर को समाप्त होता है। वास्तव में ९ दिन का पूरा उपवास होना चाहिये। बीच बीच में नीबू का रस और थोड़ा सा शहद पीना चाहिये और ईश्वर की आराधना करनी चाहिये; किन्तु इस प्रकार का उपवास बहुत कम लोग कर सकते हैं; क्योंकि इसमें इन्द्रिय निग्रह की अत्यन्त आवश्यकता है। साधारण पुरुषों को बीच का मार्ग काम में लाना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहिले तीन दिनों तक पूरा उपवास किया जाय। बीच बीच में नीबू का रस और शहद पीना चाहिये। दोनों समय एनीमा लेना चाहिये।

पहिले तीन दिनों तक पूरा उपवास किया जाय। बीच बीच में नीबू का रस और शहद पीना चाहिये। दोनों समय एनीमा लेना चाहिये। बिना एनीमा के लाभ कम पहुँचेगा।

चौथे दिन थोड़ा दूध और फलों का रस दिन में तीन या चार बार लेना चाहिए। पाँचवें दिन कुछ अधिक दूध बढ़ा कर इसी प्रकार का भोजन कायम रखना चाहिये। छठवें, सातवें, आठवें और नवें दिन, दिन में तीन बार दूध और फल खाना चाहिये। दसवें दिन फल और अन्न का भोजन करना चाहिये। ग्यारहवें दिन पूर्ववत् भोजन आरम्भ कर देना चाहिये। इन दिनों में मन और शरीर दोनों को पूर्ण विश्राम देना अत्यन्त आवश्यक है।

शक्ति-दर्शन

ले० पंडित शङ्कर लाल तिवारी

आज कल चारों ओर शक्ति का ह्रास दिखलाई पड़ रहा है। शक्ति के बिना शिव—कल्याण—का प्राप्त करना असंभव है। इसलिए श्री तिवारी जी ने इस पुस्तक को लिख कर जनता के समक्ष 'शक्ति-दर्शन' की क्षमता उपस्थित करने का सफल प्रयास किया है। इस पुस्तक में शारीरिक व मानसिक शक्ति के संपादन करने के तरीकों के सक्रिय वर्णन बड़े विस्तार से दिए गये हैं। इस पुस्तक की विशेषता यह है कि इसमें बतलाई हुई एक भी बात ऐसी नहीं जो साधारण जनता के अभ्यास से परे हो। १५० से ऊपर पेजों की इस पुस्तक का मूल्य सर्वसाधारण को सुलभ बनाने की गरज से केवल आठ आना रक्खा गया है।

आनंदमय जीवन का ह्रास और उसका कारण

ले० पंडित शङ्कर लाल तिवारी

ऐसा कोई मनुष्य नहीं जो आनंद न चाहता हो। श्री तिवारी जी ने बड़ खोज बीन के बाद इस पुस्तक में ऐसे उपायों का वर्णन किया है जिनके पालने से आनंद-मय-जीवन प्राप्त हो सकता है। आनंद के अभाव का वर्णन और उनको पुनः प्राप्त करने के साधन को बड़ी ही मनोरऔरं हिंदुस्तानी भाषा में लिख कर तिवारी जी ने साधारण जनता का बड़ा उपकार किया है। इस अनमोल पुस्तक का मूल्य छः आना है।

स्वास्थ्य पुस्तक भंडार,

८७, हिम्मतगंज, प्रयाग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिस्टीरिया (उन्माद)

श्रीयुत डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह

यह बीमारी क़रीब क़रीब सभी देशों में पाई जाती है, या यों कहिये कि होती है। पर स्त्री जाति विशेष को यह बीमारी ज्यादा सताती है। इनमें से भी सबसे अधिक कुँवारी लड़कियों में हुआ करती है। पर ऐसा चिकित्सकों का ख्याल है कि यह बीमारी शादी होने के बाद नहीं होती, पर बहुधा देखा गया है कि शादी होने के बाद भी यह बीमारी होती है। निश्चय रूप से यह कहना कि उक्त बीमारी कब होती है, बहुत मुश्किल सा है। ऐसे तो उक्त बीमारी स्त्री जाति विशेष के लिये ही कही जाती है, पर यह बीमारी लड़कों को भी अपना शिकार बनाती है, ऐसा सुना गया है।

लक्षण—इसके लक्षण भी बिचित्र हैं। कभी तो रोगी हँसता है, कभी रोता है और कभी बेसर पैर की बातें करता और बोलता है। इसके सिवा, इस रोग में फंसे रोगी का दिमाग़ बहुत तेज़ हो जाता है। कलकत्ते की एक समय की बात है कि लेखक को हिस्टीरिया के रोगी को देखने का साबक़ा पड़ा। मैं उसे देखने गया। मरीज़ा अनेक तरह की बातें करती थी। साथ ही यह भी कह गई कि हमारे चाचा अभी अभी ट्रेन से स्टेशन पर उतरे हैं, वह आ रहें, पन्द्रह मिनट में आ जायेंगे। हम लोगों ने उक्त बात को सिर्फ़ कल्पना मात्र ही समझा था। पर सचमुच पन्द्रह मिनट के बाद ऊपर लिखी बातें सत्य हुईं। इसी तरह हिस्टीरिया के दौरे में अनेक तरह की बातें मरीज़ या मरीज़ा करते हैं। और कभी ये बिलक्षणशक्ति वाली बातें सत्य हुआ करती हैं। यह बीमारी हमेशा एक तरह नहीं होती, कभी दो-तीन घन्टे का दौरा होता है और फिर निकल जाता है। जब कभी दो-तीन दिन का भी दौरा होता है, कभी तो दौरे की हालत में दाँत बैठ जाते हैं तो चार चार, पाँच पाँच दिन तक बैठे ही रहते हैं। एक समय की बात है कि एक औरत को जिसको कि इस बीमारी दौर शुरू हुआ। उसने यह समझ लिया था कि मैं अपने दोनों पैरों से बिल्कुल नहीं चल सकती। इस वजह से वह कुर्सी पर उठा कर इधर उधर घुमाई जाती थी। एक बार वह अपने बग़ीचे में चुपचाप बैठी हुई थी। कोई एक अन्जान आदमी उसके पास गया और चुम्बन करना चाहा। इतने में वह भागती हुई अपने पति के पास आई और अनेक तरह की शिकायतें करने लगी। उसके पतिदेव बहुत खुश हुए और उससे हँस कर कहने लगे चुम्बन लिया तो बेजा किया। खैर तुम्हारे पैर तो अच्छे हो गये। जो हजार दवायें करने पर भी नहीं अच्छे हुए। हटाओ जाने दो।

कारण—सचमुच इसके लक्षण बहुत बिचित्र हैं। पर ज्यादातर काल्पनिक ही होते हैं। यदि यह कहा जाय कि ऐसी कल्पना एक अच्छे स्वस्थ मनुष्य या स्त्री को हो यह ठीक नहीं है। यह तो एक रोगी-मस्तिष्क की भावना है। इस बीमारी की शुरूआत पेट से होती है। पहले कुछ दिन तक कब्जियत रहती है, इस कब्जियत से एक तरह का आंतों में भोजन के सड़न का विष बनता है। यह विष शरीर में खिंचता है, और धीरे धीरे ऊपर की ओर चढ़ता है। "कूने साहब" अपनी पुस्तक में लिखते हैं कि पेट में कब्जियत के कारण इससे उत्पन्न गर्मी की वजह से एक तरह का जोश सा चढ़ता है। जिसकी वजह से पेशाब में शिकायतें हुआ करतीं हैं। यह तो ठीक ही बात है कि भोजन की गड़बड़ी से बीमारी की उत्पत्ति है। हमारे घरों में बहुत दिनों से खाने पीने की व्यवस्था बहुत गड़बड़ सी है। वह यह कि कुछ घरों में एक शाम रोटी, भाजी, चांवल,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दाल, दूध दही एक साथ मिला कर खाते हैं। दोपहर को डट कर नाश्ता होता है और शाम के वक्त पूड़ी कचौड़ी, मालपुआ, लड्डू, चरपरी चीज़ों इत्यादि की बियारी होती है। ऐसा खाना एक ही दिन का क़िस्सा नहीं बल्कि प्रतिदिन का यही किस्सा है। शुरू से आख़ीर तक बिल्कुल ग़लत तरीक़े से भोजन हुआ। यह सिर्फ़ मेरी अज्ञानता ही का परिचय है। इन सब कारणों से अनेक बीमारियां होती हैं। इन्हीं बीमारियों में एक बीमारी हिस्टीरिया भी हैं।

इलाज

भोजन सुधार—पहले तीन दिन कुछ न खाओ, जब खाने की इच्छा हो तो पानी पियो। सुबह, शाम या दिन में एक बार आध घंटे मिट्टी की पट्टी रखने के बाद एनिमा लो। बहुत से लोग उपवास से डरते हैं, ऐसे लोग दिन में दो तीन बार सन्तरे का रस था नारियल का डाभ, शहद का शर्बत नीबू नीचोड़ा हुआ ले सकते हैं।

चौथे दिन भी सुबह एनिमा लेने के बाद एक फल खाओ और चार दिनों तक सुबह शाम फल खाकर ही रहो, फल इतना ही खाओ कि पेट भर जाय पर ज़रूरत से ज़्यादा न हो। यदि कोई फल न मिले तो किशमिश मुनक्के ज़रूर मिलेगें।

दूसरे हफ़्ते में फल के साथ थोड़ा ताज़ा धारोष्ण दूध लिया जा सकता है। उसमें चीनी मत छोड़ो, दूध में तो क़ुदरतन मिठास रहता ही है, लेकिन अगर तुम्हारी आदत बिगड़ गई है तो गुड़ या शहद का प्रयोग कर सकते हैं।

तीसरे हफ्ते में एक शाम फल खाओ और दूसरे शाम पकी तरकारी खाने को दो।

चौथे हफ्ते में एक बार फल और दूसरी बार एक रोटी या एक-दो हरी पत्तीदार तरकारियाँ खाओ दाल नहीं। इस तरह १ माह बीत जायगा। हो सकता है रोगी का शरीर कुछ कृश हो जाय, पर वह चंगा ज़रूर हो जायगा।

वाह्य उपचार—अब पेट की सफाई के बाद जब एनिमा नहीं लिया जाता है, उसके स्थान पर सिटिज़बाथ (Sitz) १० मिनट से शुरू करो, हफ़्ते में एक दो मिनट बढ़ा कर २५ मिनट तक लिया जा सकता है, एक हफ़्ते के बाद हिपबाथ लिया जा सकता है, सिटिज़बाथ, या हिबबाथ के बाद थोड़ी बहुत कसरत करना ज़रूरी होगा। अगर रोगी कमज़ोर है तो अपने शरीर को सिर्फ कम्बल को ओढ़ कर गरम कर ले। यदि ऐसा भी न किया जा सके तो पानी से भिगे शरीर को तौलिये के पोछने के बजाय हाथ की तलहथियों से रगड़ रगड़ कर शरीर को गरमा लेना चाहिये। सबेरे खिड़की के सहारे खड़े हो कर सारे शरीर को हाथों से रगड़ना चाहिये। यह बात ठीक है कि ऐसे उपचार में समय लगेगा अर्थात् लगता है, पर धीरज से इस इलाज को करते जाना चाहिये। रोगी ज़रूर स्वस्थ हो जायगा।

फलाहार और फलचिकित्सा

लेखक : श्री नारायण प्रसाद अरोड़ा बी० ए०

मनुष्य का वास्तविक आहार फल है। फल की विभिन्न अवस्थाएँ, फलों में विटामिन विवरण, फलों की तत्त्व प्रधानता, फलों के गुण और दोष आदि का विस्तृत विवरण है फल के प्रयोग से रोग को भगाना मामूली बात है। अरोड़ा जी ने इस पुस्तक से फलाहार की समस्या हल कर दी है। मूल्य १॥)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भोजन—शरीर-सौन्दर्य का साधन

श्रीयुत विट्ठलदास मोदी

'ईट एंड ग्रो बियुटीफुल' अर्थात् भोजन द्वारा सौन्दर्य प्राप्ति नामक एक उपयोगी पुस्तक गायेलार्ड हासर ने लिखी है। ये महाशय अमेरिका के संसार प्रसिद्ध स्टूडियो हालीवुड की अभिनेत्रियों के सौन्दर्य निर्देशक हैं। समझना कठिन न होगा कि ये अभिनेत्रियां शारीरिक सौन्दर्य के पीछे कैसी पागल रहती हैं? उनके लिये अंग प्रत्यंग के सौन्दर्य का कितना मूल्य होता है? चमड़े की ज़रा सी खुश्की या आँखों में ज़रा सा पीला पन आ जाना उनके लिये घातक सिद्ध होता है। कैमरा कुछ दूसरी ही कथा उनके बारे में कहने लगता है और वे बेचारी अपनी रोटी छूटती सी देखने लगती हैं। ऐसी अवस्था में हासर महाशय उनकी सहायता करते हैं। उन्होंने इसका अच्छा अध्ययन और अनुभव किया है कि भोजन में किन किन लवणों की कमी से चमड़े, आँखों, दांतों, नाखूनों और बालों आदि पर क्या क्या प्रभाव पड़ता है। अतः वे ज़रूरत के मुताबिक भोजन में हेर फेर करने की सलाह देते हैं। हासर महाशय का विश्वास है कि प्राकृतिक लवण ही हमारे लिये उपयोगी हो सकते हैं जो फल तरकारियों तथा मनुष्योपयोगी खाद्य पदार्थों में मिलते हैं। अतः उनके सारे सौन्दर्य सिद्धान्त भोजन में ही निहित हैं। वे लिखते हैं "कैसा आश्चर्य है कि स्वामी-मनुष्य अपनी मुर्गी, कुत्ते और घोड़े के भोजन पर तो ध्यान देता है। पर स्वयं मधुमेह सी बीमारी होने के पहले तक अपने भोजन पर तनिक भी विचार नहीं करता। वह बिना सोचे समझे खाता पीता और मुटाता रहता है। उसके दांत गिरते जाते हैं, बाल सफेद होते रहते तथा चांद चिकनी होती रहती है। खून पीला पड़ जाता है और स्नायुजाल कमज़ोर होता जाता है। मनुष्य ने जानवरों से इच्छित कार्य साधन ही तो कला की उन्नत करती है पर पीले बदन वाले यह जान नहीं पाते कि खून में लौह की कमी के कारण उनका बदन पीला पड़ रहा है। शरीर में कैल्सियम की मात्रा का अभाव हो रहा है कि दांत हिल तथा गिर रहे हैं और स्नायुजाल की कमज़ोरी का कारण फासफोरस की कमी है। ये जानकारी की सरल चीज़ें हैं और यह तो और भी सरलता से जाना जा सकता है कि किस भोजन पदार्थ में अमुक लवण का आधिक्य है।"

उपर्युक्त वाक्य में हासर महाशय ने अपनी पुस्तक का सारांश ही रख दिया है। उन्होंने खाल, Complxxion. बाल, दांत, आँख, नाखून, आदि के अनेक प्रकार के रोगों तथा कष्टों का वर्णन करते हुए, वे रोग भोजन में किस किस लवण की कमी के कारण होते हैं यह बताया है। फिर उन भोजनों की एक तालिका देती है जिनमें वे लवण अधिकता से मिलते हैं। यही नहीं कहीं कहीं तो उन भोजनों को स्वादिष्ट बनाने की तथा व्यवहार की रीति भी लिखी है। मुटापा, दुबलापन, अतिन्द्रा अपने को छोटा समझने की भावना आदि अनेक कारण भी वे भोजन को ही मानते हैं। और इनके दूर करने का भी साधन उन्होंने भोजन में ही ढूंढ निकाला है।

उन्हीं की पुस्तक के आधार पर हम खाल, बाल, दांत आँख नाखून आदि को उनकी रोगावस्था से मुक्तकर सुन्दरतम बनाने के साधनों पर का वर्णन करेंगे। पुस्तक के लेखक विदेशी हैं, अतः खाद्य-पदार्थों की सूची में बहुत सी ऐसी वस्तुओं के नाम आये हैं जो हमारे यहां पैदा नहीं होती तथा भोजनादि के जो नुस्खे हैं वे उनमें से अधिकतर हमारे स्वाद को मान्य न होंगे। फिर भी जो वस्तुवें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारे यहां मिलती हैं उनके उपयोग से कोई भी पाठक लाभ उठा सकता है और उनके उपयोग का साधन तो सभी सरलता पूर्वक ढूंढ ही सकते हैं। हम भी सहायता करने का प्रयत्न करेंगे।

खाल—

हमारे शरीर का चर्म अपनी स्वाभाविक अवस्था में शिशु चर्म सा स्वस्थ चमकीला एवं कोमल होना चाहिये। पर होता ऐसा कम है। देखने में तो यह अधिक आता है कि चौबीस वर्ष के युवा का चर्म साठ वर्ष के वृद्ध सा मुर्झाया फ़ीका सा चर्म है। किसी का चर्म मुर्झाया सा, तो किसी का बहुत सूखा तथा किसी का तैलयुत होता है। शरीर में सल्फर की कमी के कारण चर्म के अधिकतर रोग उत्पन्न होते हैं। सल्फर, मूली, प्याज, सलाद, फूल गोभी, लालपत्तागोभी, टमाटर, लट्स, पातगोभी में अधिक पाया जाता है। पर इन सभी वस्तुओं को कच्ची हीखाने की आवश्यकता नहीं। इनकी तरकारियां बना कर भी इनका उपयोग कर सकते हैं क्यों कि इन वस्तुओं के आग पर चढ़ने पर भी इसका सल्फर नष्ट नहीं होता।

खाल का सूखापन—

चर्म की ऐसी अवस्था का सम्बन्ध लोग धूप से जोड़ा करते हैं पर ऐसी बात नहीं है। चमड़े को मुलायम बनाने के लिये तेल और अनेक प्रकार के क्रीम वगैरह भी मलते रहते हैं पर इनसे लाभ के बदले हानि ही अधिक होती है। असल में खाल के रुखड़े और सूखे होने का कारण हमारे भोजन में विटामिन 'जी' की कमी है। विटामिन 'जी' पानी में घुलमिल जा सकता है और पकाने पर तो प्राय: नष्ट ही हो जाता है। यदि तरकारियां पकाई ही जाय तो पानी को फेंकना न चाहिये, उसे पीलेना चाहिये। विटामिन 'जी' ताज़ा दूध, मक्खन, अंडे मसूर, मटर, हाथ कुटे चावल, चोकड़दार आटे, ताज़े फलों और कोमल तरकारियों में पाया जाता है। तैलयुत चर्म का कारण मिठाई श्वेतसार तथा, पशु की चर्बी का अधिक उपयोग है। इनका व्यवहार कम कर देना चाहिये और इनके बजाय फल और तरकारियों का उपयोग अधिक करना चाहिये। यह परिवर्तन कुछ लोगों के लिये थोड़ा अखरने वाली चीज़ हो सकती है पर उनको यह परिवर्तन लाभ पर दृष्टि रख कर करही डालना चाहिये। हर समय तेल चुपड़ा हुआ सा चमड़ा कितना बुरा लगता है? चर्म की ऐसी दशा कभी कभी तो बड़ी ऊब पैदा करने वाली हो जाती है। इस रोग का शिकार बार २ साबुन से स्नान कर हर समय चिपकते रहने वाले गर्द और गुबार से अपने को मुक्त करने की कोशिश करता रहता है पर इस स्नान के कुछ घंटों बादही उसकी दशा पूर्ववत् हो जाती है। इस दशा से मुक्ति पाने के लिये भोजन परिवर्तन के कष्ट के रूप में चुकाया गया मूल्य अधिक सिद्ध न होगा।

इस परिवर्तन के अलावा सूर्य का उपयोग कीजिये। दिन में अवश्य ऐसा कोई समय निकालिये जब सूर्य की कोमल रश्मियां आपके अङ्ग प्रत्यङ्ग को छू सकें; अपनी जीवन दायिनी शक्ति आप में प्रवेश कर सकें; आप को निरोग बना सकें। शरीर की भीतरी और बाहरी सफ़ाई पर भी ध्यान देना आवश्यक है। खाल को स्नानों से साफ़ करते रहना शरीर की बाहरी सफ़ाई है। भीतरी सफ़ाई से घबराने की ज़रूरत नहीं, इसे भी समझिये। देखिये आप के गुर्दे ठीक काम करते हैं न? पेट की बड़ी आँते नियमित रूप से मल को निकाल रही है न। ऐसा तो नहीं है कि आप इनके वेग को अनुचित रूप से रोकते हैं? कब्ज़ रहता है तो घबराइये नहीं। नियमित भोजन से यह सहज ही दूर किया जा सकता है। परिवर्तन के रूप में जो फल और तरकारियों की मात्रा आप अपने भोजन में बढ़ायेंगे, अवश्य ही उससे आप का कब्ज़ दूर हो जायगा। यदि दूर नहीं हुआ तो मैं कह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकता हूँ कि आप कसरत नहीं करते हैं। कोई हलकी कसरत शुरू कीजिये। दो एक मील तेज़ी से टहलिये भी तो बहुत लाभ होगा।

गाजर, खीरे, ककड़ी और सन्तरे के रस के व्यवहार से आपको अधिक लाभ होगा। खीरा-ककड़ी सस्ती चीज़ है पर आप के लिये दूसरी इसके मुक़ाबले की पुरअसर दवा नहीं, जब मिलें तो इनका उपयोग दिल खोल कर कीजिये। इनके रस से मुँह हाथ भी धोइये। कभी कभी शरीर में भी चुपड़ कर आध घंटे बाद स्नान कर डालिये।

शरीर की खाल का काम क्या है इसे भी समझिये। उसके काम में बाधक होने के बजाय सहायक हूजिये। खाल से चिकनाहट, पसीना, बाल और नाखून निकलते रहते हैं। यह शरीर की सर्दी गर्मी को सम करने का प्रयत्न करता रहता है। जब शरीर-यन्त्र के स्वाभाविक कार्य में बाधा पड़ती है तो इसके कार्य को भी क्षति पहुंचती है। सांप जैसे केचुल बदलता है उसी तरह हमारे शरीर की खाल भी धीरे धीरे बदलती रहती है।

शरीर के इन कार्यों पर यदि आप ध्यान रखेंगे तो आप को कोई भी चर्म रोग होगा ही नहीं। यदि हो भी जाय तो आप ऊपर बताये गये तरीक़े से उन्हें आसानी से जड़ से खो सकते हैं। दाद, खजुली एक्ज़िमा जैसे हठीले रोग भी सल्फर और विटामिन 'जी' के अधिक उपयोग से आसानी से भगाये जा सकते हैं।

(मेरा अनुभव है कि कैसा भी पुराना एक्ज़िमा या किसी तरह की खुजली क्यों न हो गाजर के प्रयोग से निश्चपूर्वक भगाई जा सकती है। पहले एक दिन का उपवास करना चाहिये फिर तीन दिन केवल गाजर और गाजर के रस पर रहना चाहिये और इसके बाद एक सप्ताह गाजर और दूध पर।)

रोगों की अचूक चिकित्सा

(नवीन संस्करण)

लेखक : श्रीयुत जानकीशरण वर्मा

प्राकृतिक चिकित्सा की ओर लोगों की विशेष अभिरुचि देखकर वर्मा जी ने इस पुस्तक लिख कर साधारण हिन्दी भाषा का ज्ञान रखने वालों के हाथ में भी तनदुरुस्ती ठीक करने की बातों का पूरा विवरण दे दिया है। इसमें तनदुरुस्ती क्या है, क्यों बिगड़ी है और कैसे फिर सुधर सकती है आदि विषयों पर बहुत ही ठीक ढंग से प्रकाश डाला गया है। इसमें एक नवीनता यह है कि इसके बताये तरीक़ों के पालने में अपना कुछ ख़र्च नहीं पड़ता। इस अद्भुत और उपयोगी सचित्र पुस्तक का मूल्य २।।) मात्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जल

श्रीयुत विश्वम्भरनाथ द्विवेदी

मानव शरीर का अधिकांश भाग जल ही है। कितने अंश तक शरीर में जल है, इस विषय में मतभेद है। ७४%, ७०%, ८७% और अवस्था के अनुसार ५८ से ६५% तक है, इस तरह मुख्यतः चार भेद हैं। कुछ भी हो इससे तो इतना अवश्य ग्रहण किया जा सकता है कि शरीर का एक बड़ा अंश जल ही है। इस में मतभेद की गुंजाइश नहीं। बड़ी अवस्था वाले लोगों के शरीर में जल की कमी दिखाई देती है, जल की अनुपस्थित में बढ़िया से बढ़िया भोजन बेकार जाता है। यह शरीर के भीतर दूषित पदार्थों को जो अजीर्ण आदि कारणों से हर समय इकट्ठा होते रहते हैं, उनका प्रतिदिन प्रधानतया तीन मार्ग से जल-रूप में बहिर्गमन होता है। (मूत्र ४० औंस, मल में ३ औंस, स्वेद के रूप में ४ से ४० औंस तक) मतलब यह कि शरीर में जल की प्रधानता है। अनेक व्यापारों के लिए शरीर में जल की आवश्यकता है:--

१--दहनेंद्रिय के व्यापारों को सरल बनाने के के लिये खाद्यपदार्थों को जलमय अथवा मृदुल बना देता है।

२ --शरीर में पर्याप्त रक्त उत्पन्न करने एवं शरीर की घटनाओं को स्थायी बनाने के लिए जल की आवश्यकता है।

३--खाद्य पदार्थ जितने पोषक-द्रव्य हैं, उन्हें द्रावक रूप में परिवर्तित करके 'रक्त-रूप में शरीर के नाना भागों में पहुँचाने के लिये भी जल आवश्यक है।

४--शरीर के मैल को साफ करने के लिये पानी के उचित प्रयोग की भी आवश्यकता है। अधिक जल पीने से यह रस बहुत अधिक निकलने लगते हैं। इसकी यह अधिकता बदहज़मी का कारण होता है। यहाँ "अति सर्वत्रवर्जयेत्' है न कि 'अधिकस्य अधिके फलम्'।"

यदि बहुत न्यून मात्रा में जल पिया करें तो हमारे भोजन के अवशिष्ट उदर में बिल्कुल सूख जाते हैं। तद्वारा दहनेंद्रिय के नियमित कार्यों में बड़ी बाधा पड़ती है। इस कारण मलबंध भी हुआ करता है। ऐसे ही लोगों के यथा समय पेट साफ़ नहीं होते और अन्त में बीमारी के शिकार बन जाते हैं। इससे निष्कर्ष यह निकलता है कि हमें जल अवश्य उतना पी लेना चाहिये, जितना कि उदर के व्यापारों के लिये आवश्यक है। उदर से भोजन में जो परिवर्तन होते हैं, वे वहां के जल के न्युनाधिक्य पर निर्भर करता है। जब हम अधिक जल पी लेते हैं तो वह मूत्राशय में विसर्जनार्थ भेजा जाता है। यदि यहाँ उदर में हम काफ़ी जल न दें तो इन्हीं भोजन-वस्तुओं से आवश्यक जल उदर में व्यय हो जाता है। इससे अब यहाँ पर यह निचोड़ निकलता है कि जल खूब पीना चाहिये।

इससे यह तात्पर्य नहीं है कि उदर का अधिकांश भाग जल से भोजन के साथ ही साथ भर दें। किसी व्यक्ति के जल पीने का हिसाब उसके खाद्य-पेयद्रव्यों के ऊपर निर्भर करता है। खूब साग और सेर आधा सेर प्रतिदिन दूध तथा फलखाने वालों को पानी की बहुत कम आवश्यकता पड़ती है। काफी, चाय, कोको, शराब, शरबत आदि से जल पीने का पूर्ण गुण उपलब्ध नहीं होता। यदि शुद्ध जल के गुणों से लाभ उठाना है तो किसी प्रकार का कृत्रिम जल न प्रयोग करे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५—शरीर की रसायनिक परिवर्तन को आवश्यक धातुओं को प्रदान करने के लिये जल की जरूरत है।

६—उष्ण की अधिकता को, चर्म एवं अन्य अवयवों द्वारा पसीने या अन्य रूपों में बाहर निकाल देने के लिये जल की जरूरत होती है।

७—शरीर में एक तरह की गरमी पहुंचाने के लिये अथवा गर्मी कम करने के लिये जल ही की जरूरत है।

उपर्युक्त व्यापारों के लिए जल अनिवार्य समझा जाता है इनमें कुछ व्यापार तो जल अपने द्रवरूप में कर देता है और बाक़ी वाष्परूप में। हमारे खाद्य पदार्थों में पर्याप्त जल है। इसकी एक सूची नीचे लिखी जाती है।

चावल में १३%, गेहूँ में १५%, दाल में १५%, आलू में, ७५%, कंद, मूल फलों में ९०%, मट्ठे में ८८%, मांस ७० से ७८% तक, साग में ९५%, अंडा की सफेदी में ८४% उसके पीले अंश में ५१%, खालिस मक्खन में १५%, वार्ली धान्य में १५%, ओटस में १५%, चीनी में ५%, गन्ने में ७२%, बकरी के दूध में ८४-९९%, गाय के दूध में ८६-९४%, चाय, काफ़ी, कोको, सोयाबीन, आदि पेय पदार्थों में क़रीब १००% भी जल है। अलावा इसके खाना बनाने में भी जल का उपयोग होता है। यह जितना उस वस्तु में है उसका दुगुना होगा। आँवलटीन, सोडा वाटर, कोको आदि चार पांच गिलास प्रतिदिन पीने वालों की भी आज कल कमी नहीं है। इसके अतिरिक्त प्राणवायु तथा अंगारोदक के सम्मेलन से भी शरीर में थोड़ा जल उत्पन्न होता है। इस हिसाब के अनुसार :—

द्वै भागे पूरयेदन्नै-जलोनेकं प्रपूरयेत्।
वायो संचारणार्थाय-चतुर्थ मवशेषयेत्॥

यह सिद्धांत जल के संबंध में ठीक नहीं विदित होता। क्योंकि जब हम भोजन के साथ ही पर्याप्त जल पी लें तो चतुर्थांश अलग ही जल से क्यों भरें। भोजन के बाद चौथा भाग प्रतिदिन हम जल से भर लेगें तो बदहज़मी की बीमारी कभी साथ नहीं छोड़ेगी। फलस्वरूप यहाँ के अधिकतर हलवाइयों की भांति सामने पेट के स्थान पर एक बोरे का भार बहन करना पड़ेगा। इस बोरे की वजह नैसर्गिक सुख भोग से वंचित रहना पड़ता है, खाने के पश्चात् क़रीब १ घंटे के बाद इच्छा भर पानी पीना चाहिये। प्रतिदिन दो-ढाई सेर के पी लेना जरूरी जँचता है। बाज लोग खाना ठूँस-ठूँस कर खाते चले जाते हैं और उसको नीचे उतारने के लिये पानी बार बार पीते जाते हैं। ग़र्ज़े कि उनका मतलब भोजन का अन्दर पहुंचा देने से है कि अब उनकी आयु एक दिन की आयु और बढ़ने में संदेह नहीं।

भोजन के साथ अथवा तुरन्त भोजन के पश्चात् अधिक मात्रा में जल पीने से बदहज़मी ही नहीं अन्य कई प्रकार के भयंकर रोगों के भी कारण बन जाते हैं। किसी कारण वश ये रोग तुरन्त ही स्पष्टरूप से न दिखाई दें तो भी कुछ समय के बाद रोग ग्रस्त होना अनिवार्य सा है।

हमारे उदर के अंदर से एक प्रकार का अम्लजल निकलता है। लार की भाँति यह भी खाद्य पदार्थों को पचा कर उपयुक्त बनाने की वस्तु है। भोजन के साथ प्राकृतिक जल पीना नितान्त आवश्यक है, कृत्रिम पेय चाय आदि दहनेंद्रिय की शक्ति को कम कर देता है, अतः स्वास्थ्य के लिये हानिप्रद है। है। उनकी जगह शुद्ध जल पिया जाय तो उतना ही फलप्रद है।

ऊपर कहा जा चुका है कि जल के अनिश्चित रूप से पीने या बिल्कुल न पीने अथवा वक्त बेवक्त पीने से हानि होती है। अतः जल पीने का उचित समय भोजन के कम से कम दो घंटे पहले अथवा भोजन के दो घंटे बाद। इन समयों में चाहे जितना भी पानी पी लें हानिप्रद नहीं होता। उलटे एक एक ग्रास के साथ एक एक घूंट पानी पीना हानिप्रद है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस प्रकार जल का उचित व्यवहार करें तो वास्तव में उनका जीवन नाम सार्थक होगा। अन्यथा वह जीवन विनाशक भी है।

दो चार जल के अद्भुत चमत्कार यार्यो कहिये कि दो चार जल के नुस्खे जो स्वास्थ्य के लिये हितकर है, बताकर अपने इस छोटे से लेख को समाप्त करूँगा।

१—थोड़े से कुनकुने पानी में एक नीबू का रस निचोड़ कर प्रतिदिन सुबह, शाम पीने से पुराने से पुराना कब्ज़ दूर हो जाता है।

२—खांसी में शाम के वक्त थोड़ा कुनकुना पानी लिया फिर ज़रा सा काला नमक छोड़ दिया, बाद में नीबू का रस भी निचोड़ दिया, इस तरह प्रतिदिन नियमित रूप से एक हफ़्ा के सेवन से खांसी क्या पुराने से पुराना दमा भी भागते हुये देखा गया है।

३—बुख़ार में, एक सुन्दर स्वच्छ टप में पानी भर कर सुबह शाम हिपवाथ या शीर्षवाथ अथवा स्पाइन वाथ लें। साथ ही आध आध घन्टे पर नीबू का पानी भी पीता जाय तो निश्चय है कि वह बुख़ार क्या बुख़ार की जितनी जातियाँ हैं (गर्दन तोड़, मोतिफ़रा, टाइफाइड, इत्यादि) सब अच्छे हो जाते हैं।

४—पेट और सिर के दर्द में एक मोटे तौलिये को पानी में भिगोकर पेड़ू और सर पर रक्खें। और पानी के साथ नीबू का रस इस्तेमाल करता जाय तो निश्चय ही सब व्याधियाँ कोसों दूर भाग जायँगी।

५—आँख उठने तथा फोड़े होने पर भी स्वच्छ साफ़ ठन्डे पानी की पट्टी बनाकर रक्खे और नीबू का पानी पीता जाय वह ज़रूर इन बीमारियों से मुक्त हो जायगा।

और कहाँ तक लिखें पाठक वृन्द उगता रहे होंगे। मौका हाथ आने पर फिर लिखूंगा।

स्वर्गीय **एल० एन० चौधरी** की अनुपमदेन,

आदर्श-भोजन

पढ़िये? यह उनकी अँग्रेज़ी पुस्तक, आइडियलफूड फार हेल्थ एण्ड रीजुविनेशन, का हिन्दी अनुवाद है। अँग्रेजी पुस्तक के कितने ही संस्करण बिक चुके। आप इस पुस्तक से जानेंगे कि हमारे लिये उचित भोजन क्या है? हमें क्या खाना चाहिये। परमोत्तम अन्न, फल और तरकारियाँ कौन कौन सी हैं और उनके क्या गुण हैं। पुस्तक में एक अध्याय रोगों के प्राकृतिक चिकित्सा के अनुसार सरल इलाज का भी जोड़ा गया है। प्राकृतिक चिकित्सा के प्रेमी इसे अवश्य मँगावें पुस्तक अनुवादक हैं, प्रिंसपल केदारनाथ गुप्त। मूल्य ।||)

मिलने का पता—

जीवन-सखा कार्यालय,

८७ हिम्मतगंज,

प्रयाग,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रह्मचर्य से लाभ

श्रीयुत रामशरण यादव

जो देश, जो समाज, दुःखदायिनी दासत्व शृंखला से अपनी मुक्ति चाहता है, जो धर्म अपनी विजय वैजयन्ती भूमंडल में उड़ाना चाहता है, जो राष्ट्र अपने को सर्वोच्च बनाना चाहती है, जो जाति अपनी पतितावस्था से उत्थान चाहती है, उसके लिये ब्रह्मचर्य ही महामंत्र और अमोघ अस्त्र है। ब्रह्मचर्य के अतिरिक्त, सुख शान्ति के साधक दूसरा उपाय कहीं है ही नहीं। जो जाति ब्रह्मचर्य के महत्व को नहीं जानती, वह अधिक दिनों तक नहीं जी सकती। मृतक से मृतक जाति भी ब्रह्मचर्य रूपी अमृत पान करके संसार में अमर हो जाती है।

ब्रह्मचर्य से लाभ

ब्रह्मचर्य से ही मनुष्य का मानसिक जीवन स्फुरित होता है। उसके शारीरिक बल का भी सर्वोत्कृष्ट साधन ब्रह्मचर्य ही है। विद्वान लोग ब्रह्मचर्य को श्रेष्ठ समझ कर उसकी प्रतिष्ठा करते हैं। बुद्धिमानों को ब्रह्मचर्य अत्यन्त प्रिय है। ब्रह्मचर्य से ही दीर्घायु प्राप्त की जा सकती है। ब्रह्मचर्य से ही मृत्यु दूर भगाई जा सकती है।

ब्रह्मचर्येण तपसा, देवा मृत्यु मुपाघ्नत।
इन्द्रोह ब्रह्मचर्येण, देवेभ्यः स्वराभरत्॥
(अथर्ववेद)

ब्रह्मचर्य के तपोबल से देवताओं ने मृत्यु पर विजय प्राप्त की और इन्द्र को इसी ब्रह्मचर्य के पुण्य से सुरों में उच्चासन मिला।

ब्रह्मचर्य प्रतिठायां, वीर्य लाभो भवत्यपि।
सुरत्वं मानवोयाति, चान्तेयाति परांगतिम॥

ब्रह्मचर्य के पालन करने से वीर्य का लाभ होता है; ब्रह्मचर्य की रक्षा करने वाले मनुष्य को दिव्यता प्राप्त होती है और साधना पूरी होने पर परमगति भी उसे मिलती है।

न तपस्तपइत्याहु ब्रह्मचर्य तपोत्तम।
उर्द्धवरतो भवेद्यस्तु, सदेवोनतुमानुषः॥

तप कुछ भी नहीं है। ब्रह्मचर्य ही उत्तम तप है जिसने अपने वीर्य को वश में कर लिया वह देव स्वरूप है, मनुष्य नहीं।

चिरायुषः सुसंस्थाना, दृढसंहना नराः।
तेजस्विनो महावीर्या, भवेयुर्ब्रह्मचर्यतः॥

जो लोग विधिपूर्वक ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं, वे चिरायु, सुन्दर शरीर, दृढ़ कर्त्तव्य, तेजस्विता-पूर्ण और पराक्रमी होते हैं।

शान्ति कांति स्मृति ज्ञान मारोग्यञ्चापिसन्ततिम्।
य इच्छति महद्धर्मं ब्रह्मचर्य चरेदिह॥

जो शान्ति, सुन्दर, स्मृति, ज्ञान, स्वास्थ्य और उत्तम संगति चाहता है वह इस संसार में सर्वोत्तम धर्म ब्रह्मचर्य का पालन करे।

ब्रह्मचर्य सबसे उत्तम ज्ञान है, ब्रह्मचर्य अपरिमित बल है। यह आत्मा निश्चय रूप से ब्रह्मचर्यमय है, और यह मनुष्य शरीर में ब्रह्मचर्य से ही ठहरता है। ब्रह्मचर्य के पालन से ही मनुष्य को ब्रह्मवर्चस की उपलब्धि होती है। ब्रह्मवर्चस नाम है—आत्म ज्ञान का।

ब्रह्मचर्य से विद्या लाभ

विद्या विन्दतेऽमृतम्।

विद्या के प्रभाव से परमानन्द मिलता है।

ब्रह्मचर्येण विद्या, विद्यया ब्रह्मलोकम्

वीर्य रक्षा द्वारा ही विद्या प्राप्त होती है। विद्या के मिलने ही से मनुष्य ब्रह्मलोक का सुख प्राप्त करता है। ब्रह्मचर्य ही विद्या का मूल है। बिना ब्रह्मचर्य के विद्या की उपलब्धि नहीं हो सकती है। ब्रह्मचर्य और विद्या में वृक्ष तथा शाखा के समान सम्बन्ध है। यही कारण है कि ब्रह्मचर्य के द्वारा ही विद्या के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अध्ययन करने का नियम प्रचलित किया गया था। ब्रह्मचर्य से विद्यार्थी की धारण शक्ति सदा जागृत रहती है जिससे उसे थोड़े ही अभ्यास से विशेष लाभान्वित होता है। जो ब्रह्मचर्य युक्त विद्या अध्ययन करते हैं वे ही उच्च तथा यशस्वी विद्वान बन सकते हैं। उन्हीं की विद्या में वैज्ञानिक, अध्यात्मिक तथा गणित सम्बन्धी नवीन आविष्कार करने की शक्ति उत्पन्न होती है।

ब्रह्मचर्य से शक्तिसाधन

वीर्य ही बल है। बल ही वीर्य है। आज तक संसार में जितने बड़े बड़े योद्धा और शूरबीर हो गये हैं, जितने विजेता और रण कौशल हुए हैं सब को ब्रह्मचर्य का आश्रय लेना पड़ा है। बिना वीर्य के रक्षा किये शारीरिक बल की प्राप्त नहीं हो सकती है। जो बल अर्जन करना चाहे, उसके लिये ब्रह्मचर्य ही एक संजीवनी-वटी है। बिना वीर्य के शक्ति स्थिर नहीं रह सकती है।

ब्रह्मचर्य से स्वास्थ्य रक्षा

शरीर माद्यं खलु धर्म-स्वाधनम्।

हमारा शरीर ही सब धर्मो का प्रधान साधन है।

धर्मार्थ कामोक्षाणामारोग्यं मूल मूत्तमम्। (सूक्ति)

धर्म, अर्थ, काम, तथा मोक्ष का मूल कारण आरोग्य ही है।

जिस मनुष्य के तीनों दोष (बात, कफ तथा पित्त) अग्नि, धातु, मल तथा मूत्र आदि उचित अवस्था में हों जिसकी आत्मा इन्द्रिय तथा मन प्रसन्न तथा अपने अपने कार्यों में लगी हों वही पुरुष पूर्ण स्वस्थ कहलाता है। ब्रह्मचर्य और स्वास्थ्य में घनिष्ट सम्बन्ध है। जहाँ ब्रह्मचर्य नहीं वहाँ स्वास्थ्य नहीं।

ब्रह्मचर्य से दीर्घायु

दीर्घायु ब्रह्मचर्यया। (सूक्ति)

ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करने से मनुष्य को दीर्घायु प्राप्त होती है। दीर्घ जीवन का मूल कारण ब्रह्मचर्य ही है, जिसका जितना ही वीर्य पुष्ट है वह उतना ही अधिक दिन तक जीवित रह सकता है। बिधिवत् ब्रह्मचर्य का पालन कर हमारे पूर्वज लोग दीर्घ जीवी हुए थे। नीचे लिखे पुरुष कैसे सत्य, पुरुष, धर्मनिष्ट तथा सदाचारी थे जिन्होंने इतने दिनों तक अपने जीवन यात्रा को सुख पूर्वक बिताये थे।

भीष्म पितामह १७०, महर्षि व्यास १५७, बसुदेव १५५, बुद्धदेव १४०, घृतराष्ट्र १३५, श्रीकृष्ण १२६, कबीर १२०, महाकवि भूषण १०२, गोस्वामी तुलसी दास ९१ और सूरदास ८० वर्षों तक जीवित रहे थे। सदाचारी पुरुषों के आयु की यह तालिका कई एक पुस्तकों में से संग्रह किया है।

ब्रह्मचर्य से साहस और उत्साह

उत्साह तथा साहस के बिना संसार के एक काम भी सम्पादित होना असम्भव है। इन दोनों का निवास स्थान हृदय है, जिसका हृदय जितना ही बलिष्ट है वह पुरुष उतना ही उत्साही तथा साहसी देख पड़ता है। हृदय का बलवान होना ब्रह्मचर्य के आधीन है। जिसने वीर्य की रक्षा की है उसमें उत्साह तथा साहस की छाया देख सकते हैं। वीर्य के बिना हृदय कभी पुष्ट नहीं हो सकता। यह बात प्रायः देखने में आती है कि व्यभिचारी पुरुष अनुत्साही तथा असाहसी होते हैं। उत्साह और साहस का मूल वीर्य है—ब्रह्मचर्य का पालन है। ब्रह्मचर्य के पालन करने वालों ही को ये दो शक्तियाँ प्राप्त हो सकती हैं। यदि अपने को उत्साह और साहस से भूषित करना है तो अपने वीर्य की भली भाँति रक्षा करनी चाहिये।

ब्रह्मचर्य से सम्पत्ति सेवा

बिना पुरुषार्थ के धन नहीं मिलता। लक्ष्मी सदा पुरुषार्थ के वश में रहती है ब्रह्मचारी अपने नियम का दृढ़ होता है, वह अपने संयम, बल, धन इकत्र करता है। उसे सतत परिश्रम का अभ्यास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होता है। बड़े बड़े धनी जब तक ब्रह्मचर्यरत रहते हैं, तब तक उनकी उन्नति होती गयी। लक्ष्मी सदा ब्रह्मचारी और उद्योगी के ओर रहती है। यदि धनवान बनना हो या अपने सञ्चित धन को सुरक्षित रखना हो तो वीर्यरक्षा पर पूर्ण ध्यान दें।

ब्रह्मचर्य से अपूर्व मेधा

मेधा वह शक्ति है, जिसकी सभी विद्वान लोग उपासना करते हैं। मेधा वह पवित्र और श्रेष्ठ शक्ति है जो वीर्य रक्षा के द्वारा ही ग्रहण की जा सकती है। मनुष्य के शरीर में मस्तिष्क सब, से श्रेष्ठ स्थान माना गया है, वह मेधा शक्ति इसी विहार-क्षेत्र में विचरण करती है। ब्रह्मचारी पुरुषों की मेधा अत्यन्त तीव्र होती है। उनके मस्तिष्क में हमेशा उन्नति-प्रवाह प्रवाहित होते रहते हैं। वीर्यरक्षा से मस्तिष्क प्रबल होता है। निर्बल मस्तिष्क की अपेक्षा बलवान् मस्तिष्क अधिक कार्य कर सकता है। जो मनुष्य अपने वीर्य को सुरक्षित रखता है उसी का मस्तिष्क बलिष्ट और मेधा तीव्र हो सकती है।

ब्रह्मचर्य से सुसन्तान

कोऽर्थः पुत्रेन यातेन, यो न विद्वान् धार्मिकः।

उस पुत्र को उत्पन्न होने से क्या लाभ जो कि न तो विद्वान है न धार्मिक ही। हमारे पूर्वज मनोवांछित सन्तान उत्पन्न करते थे। वे सन्तान की इच्छा से ही मैथुन में प्रवृत होते थे। वीर्य रक्षण के प्रताप से वह शक्ति उनको प्राप्त थी, जिससे वे कभी भी निष्फल नहीं होते थे। यदि मनोनुकुल पुत्र उत्पन्न करना है, यदि अपनी सन्तान को उत्तम और सद्गुणी बनाना है, यदि उसे दीर्घ जीवन प्राप्त कराना चाहते हैं तो यह अत्यन्त आवश्यक है कि ब्रह्मचर्य का समुचित पालन किया जाय।

ब्रह्मचर्य से रोग-शान्ति

जात मात्रं नयः शत्रुं, व्याधिञ्च प्रशमन्नयेत्।
अति पुष्टांग युक्तोपि, स्पश्चातेन हन्यते॥ (सूक्ति)

शत्रु तथा व्याधि को उत्पन्न करतें ही नष्ट कर देना योग्य है, क्योंकि इनके बढ़ जानें पर अत्यन्त हृष्ट पुष्ट पुरुष भी इसके द्वारा मारा जाता है। ब्रह्मचर्य सब औषधियों का पितामह है, जो पुरुष इसको विधिवत् पालन करता है, वह कभी रोगी नहीं रह सकता है। अमृत तुल्य औषधोपचार करते रहने पर भी ब्रह्मचर्य का न पालन करने वाला पुरुष रोग रहित नहीं हो सकता। किसी रोग को अगर मूल से नष्ट करना हो तो उससे छुटकारा पाने तक अखण्ड ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिये।

ब्रह्मचर्य ब्रह्म-ज्ञान

ब्रह्म-ज्ञान के प्राप्त हो जाने पर मनुष्य बहुत शीघ्र ही परमानन्द का अधिकारी होता है। ब्रह्म ज्ञान के बिना किसी की मुक्ति नहीं हो सकती। ब्रह्मचर्य के पालन करने से निश्चय पूर्वक इच्छित आत्म ज्ञान प्राप्त होता है। जो पुरुष ब्रह्मज्ञान का लाभ करना चाहे वह ब्रह्मचर्य का नियमित रूप से पालन करे।

ब्रह्मचर्य से मुक्ति ब्रह्मत्व

पुत्र रहित पुरुष की मुक्ति नहीं होती। उसको स्वर्ग का मिलना तो अत्यन्त कठिन है। संसार में जितने ब्रह्मचारी पुरुष हैं वे सब स्वर्ग में जाते हैं। प्राचीन समय में बाल खिल्व, नीचकेता, हनुमान तथा भीष्म आदि अनेक ब्रह्मचारियों ने पुत्र उत्पन्न नहीं किया, पर वे मुक्त हो गये। ऐसा क्यों? क्योंकि उन्होंने अखण्ड ब्रह्मचर्य का पालन किया था। केवल पुत्र उत्पन्न करने ही से कोई पुरुष मोक्ष या स्वर्ग का अधिकारी नहीं बन सकता। पुत्र के योग्य होने पर ही ऐसा हो सकता है। ईश्वर के प्राप्ति के लिये भी ब्रह्मचर्य का पालन करना आवश्यक है। जिसके पालने से ईशत्व जैसा परम पद भी मिल सकता है, उसकी महिमा किसे गाई जा सकती है।

(शेष फिर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खाना-पीना

श्रीयुत रामसहाय वर्मा

जीवन सखा के पाठकों को यह भली भाँति मालूम हो गया है कि स्वास्थ्य के लिये समुचित आहार की कितनी आवश्यकता है। जो कुछ खाया जाय वह अच्छी तहर हजम हो जावे और फुजला दिन प्रतिदिन बाहर निकल जाया करे। जिस प्रकार अच्छे आटे के लिये चक्की (मशीन) और अनाज दोनों का अच्छा होना जरूरी है, उसी प्रकार उपर्युक्त क्रिया के लिये शरीर के प्रत्यंगों का ठीक रूप से काम करना और सुधारे हुये मेलदार भोजन का ठीक होना अत्यन्त आवश्यक है। हमारे भोजन में परियाप्त मात्रा में कार्वोज, फ़ैट, प्रोटीन, प्राकृतिक नमक तथा जल का होना जरूरी है। इतना होने पर भी एक समस्या शेष रह जाती है कि भोजन में हम जितना पानी लेते हैं उसके अलावा हमें पानी की कितनी आवश्यकता है?

हम चाहे जिस प्रकार का भोजन करें उसमें पानी अवश्य होता है। चाहे वह दृश्य हो अथवा अदृश्य। यदि भोजन प्रकृति के नियमानुसार होगा जैसे फल दूध तरकारी शाक रोटी चावल इत्यादि। जो भोजन अप्राकृतिक है, उनकी बात ही निराली है। फिर उतने पानी के अतिरिक्त भोजन की पाचन क्रिया को सहायता पहुँचाने के लिये और पानी पी नेकी आवश्यकता होती है।" भोजन का एक तिहाई हिस्सा जलमय है, मूत्र, मल, स्वास और पसीने के द्वारा जल शरीर के बाहर जाता है। जल कम पीने से मूत्र का रंग गाढ़ा पीला हो जाता है और गुर्दे को अपना काम करने में बहुत ही कठिनाई होती है। स्वस्थ्य मनुष्य को कम से कम २४ घंटे में ४ पाइंट जल जरूर पीना चाहिये गर्मी में इससे भी अधिक मात्रा हो सकती है। यदि शरीर में पानी की कमी रहेगी तो शरीर इस कमी को रक्त से पूरी करेगी, जिससे शरीर के दूसरे रसों के सूखने का डर है।" पानी कम पीने से कब्ज़ की शिकायत होती है।

अब प्रश्न उठता कि पानी पीने का समय कौन सा उपयुक्त है। प्रश्न बहुत सरल है, भूख लगने पर खाओ, प्यास लगने पर पियो। परन्तु हम अपने अप्राकृतिक जीवन में सरलता, कठिनता और कठिनता को सरलता का रूप दे देना ही अपना कर्तव्य समझते हैं। जब मनुष्य प्राकृतिक जीवन व्यतीत करता था, कन्द, मूल, फल का भोजन कर जलाशयों में अपनी प्यास बुझाता हुआ स्वस्थ रहता था, उस समय खाने पीने की इस सरल रीति को जानता और पालन करता था। उस समय प्रकृति पुजारी भोजन से क्षुधा तृप्ति करता था और भोजन पचाने के लिये जब प्यास लगती थी अर्थात् जब भोजन लगभग आधा हजम हो जाता था (दो या तीन घंटे बाद) प्यास बुझाता था। जैसे जैसे मनुष्य भोजन का केवल स्वास्थ्य ही की दृष्टि से नहीं वरन स्वाद की दृष्टि से उपयोग करने लगा वैसे वैसे उसका प्राकृतिक भोजन धीरे धीरे अप्राकृतिक स्थान पाने लगा। षटरस का प्राकृतिक रूप बिगड़ कर वन,वटी रसों का प्रचार हुआ वैसे ही वैसे मनुष्य जहाँ भोजन के दो या तीन घंटे पश्चात् पानी पीता था। भोजन के थोड़े ही पश्चात पानी पीने लगा और फिर यहाँ तक हुआ कि भोजन के (फौरन) बाद ही पानी का लोटा निगला जाने लगा। धीरे धीरे भोजन के साथ भी पानी पीना स्वादप्रिय व्यक्तियों का नियम हो गया! "यदा

* कब्ज़ या कोष्टवद्धता से उद्धृत।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

078736 गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार

यदा ही धर्मस्य ग्लानिर्भवतु भारत" की भाँति स्वाद प्रिय व्यक्तियों की दशा सुधारने के लिये श्री चाणक्य महराज का शुभागमन हुआ। और उन्होंने अपनी अन्य नीतियों की भाँति पानी पीने की नीति में भी कौशलता दिखलाई।

अजीर्णे भषेजम् वारी, जीर्णे वारि बल प्रदः।
भोजने चमृतं वारि, भोजनान्ते विष प्रदः॥

अर्थात् भोजन के अन्त में बिष तुल्य और भोजन के साथ साथ पानी पीना अमृत तुल्य है। चाणक्य महराज की इस नीति का अर्थ था कि मनुष्य भोजन के अन्त में पानी न पीये और वही दो या तीन घंटा पहले की भाँति पानी पिये। यदि कोई स्वादप्रिय व्यक्ति ऐसा करने में, अथवा षट रसादि ५६ प्रकार के भोजनों के कारण ऐसा करने में असमर्थ हो तो, भोजन करने के बाद पानी पीने से यही अच्छा है कि भोजन के साथ साथ धीरे धीरे थोड़ा पीवे। परन्तु इसका असर लोगों में उलटा हुआ और जो उस समय तक पुराने नियम का पालन करते आ रहे थे वह भी अब भोजन के साथ साथ पानी पीने लगे। श्री चाणक्य महरोज का आशय कुछ और था परन्तु हुआ कुछ और।

मैं एक बर्ष पहिले जीवन सखा के प्रचारार्थ दूसरे शहरों में जाया करता था बहुधा भिन्न भिन्न प्रकार के चिकित्सा विशेषज्ञों से वार्तालाप का शुभ अवसर प्राप्त होता था, केवल कुछ वैद्याचार्यों को छोड़, अन्य चिकित्सा विशेषज्ञों से बात करने पर यही ठीक जान पड़ा कि यह नियम पानी पीने का समय भोजनोपरान्त दो या तीन घंटे पश्चात पानी पिया जाय तो अधिक लाभदायक है। यही सही ढंग है, पानी पीने के लिये किसी चीज को खाकर पानी पीना और भूख लगने पर खाने के साथ पानी पीना अप्राकृतिक और हानिकारक है। मैं स्वयं लगभग दो साल से भोजन के समय बिल्कुल पानी नहीं पीता। मुझे इससे लाभ हुआ। पहले भोजन के साथ पानी पीने का इतना आदी हो गया था कि दूध या चाय पीने पर भी पानी की जरूरत होती थी। किन्तु जीवन सखा की प्रतियों ने मेरे अप्राकृतिक जीवन में उथल पुथल मचा दी। "जीवन-सखा" के प्रचार के समय स्वादप्रिय व्यक्तियों के वार्तालाप तथा शंकाओं ने मुझे प्राकृतिक जीवन बिताने में अधिक सहायता दी।

पाठकों का ध्यान मैं जीवन सखा की प्रतियों की ओर विशेषत: सन १९३६ की मई और जून की ओर ले जाना चाहता हूँ, जहाँ हमारे श्रद्धेय स्वर्गीय रायबहादर डाक्टर लक्ष्मी नारायण चौधरी रिटायर्ड सिविल सर्जन ने अपने लेख **"शरीर की अन्दरूनी सफाई"** में यह स्पष्ट लिखा है कि शरीर में गन्दगी आने का सबसे जबरदस्त कारण भोजन के ग़लत तरीक़े हैं। "बिना भूख के खाना, ज़रूरत से ज़्यादा खाना, ऐसी चीजें खाना जिन्हे न खाना चाहिये, खाते वक़्त पानी पी लेना वग़ैरह से खाना न तो ठीक हज़्म होता है न पाख़ाना ही साफ होता है" इससे स्पष्ट विदित होता है कि भोजन करते समय पानी बिल्कुल न पीना चाहिये। स्वर्गीय डाक्टर साहब ही के जून मास के लेख "कब्ज" में कब्ज के जितने कारण बतलाये गये हैं उसमें से खाने के साथ बहुत रसदार चीजें खाना या पानी पीना, इससे पचाने वाले रस पतले पड़ जाते हैं और अपना काम अच्छी तरह नहीं कर पाते। इन दोनों लेखों में हमारे सुप्रसिद्ध स्वर्गीय डाक्टर साहब का आशय साफ़ साफ़ जाहिर है कि भोजन करते समय बिल्कुल पानी न पीना चाहिये।

बात यह है कि जब हम भोजन को खूब चबाते हैं या दूध आदि जो पेय पदार्थ है पीते हैं उस समय भोजन के साथ साथ लार (Saliva) उदर में जाता है और भोजन पचाने का काम कम से कम उस समय तक करता है, जब तक भोजन के अन्य पचाने वाले रस भोजन पचाने की क्रिया को नहीं करने लगते। यदि भोजन करते समय पानी पिया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाय तो लार अपनी भोजन पचाने की शक्ति को खो देगा और कुछ समय तक पाचन क्रिया रुक जावेगी इसलिये पानी पीना भोजन करते समय बुरा है।

कुछ लोगों का विश्वास है कि यदि लार के साथ पानी मिल जावेगा तो लार अधिक मात्रा में बनेगा, बिल्कुल ग़लत धारणा है। लार अधिक न बन कर पतला हो जावेगा और सार हीन बनजावेगा।

पानी पीने के लगभग आध घंटे पश्चात तक पाचन क्रिया की गति धीमी पड़ जाती है, अतएव भोजन करने के आध घंटा पहले और भोजन करने के तीन घंटा पश्चात् पानी पीना चाहिये। भोजन करने के पश्चात् कम से कम एक घंटा पहले पानी कदापि न पीवे। इस नियम। में जरा भी ढिलाई करने से सारा मामला ख़राब हो जाता है।

इस नियम को आरम्भ करने में पहिले कुछ कठिनाई प्रतीत हो सकती है किन्तु घबड़ाना नहीं चाहिये। इस बात का अवश्य ध्यान रखना चाहिये कि भोजन प्राकृतिक ढंग का हो, नमक की मात्रा कुछ कम हो। भोजन धीरे धीरे चबा चबा कर किया जाय। यह बहुत साधारण सी बात है परन्तु इस से लाभ अनेकों है।

क—भोजन के समय पानी न पीकर कम से कम एक घंटा पश्चात पीने से पाचन क्रिया बहुत मज़े में होगी।

ख—पाचन क्रिया ठीक होने से तथा प्यास पर पानी पीने से पाचन क्रिया के अलावा बड़ी आँत का काम सुचारु रूप से चलता रहेगा, जिससे कब्ज़ से छुटकारा होगा। "कब्ज़ रोगों की नानी है" कब्ज़ के छुटकारे से शरीर को अनेक रोगों की अवश्यकता प्रतीत न होगी और आये दिनों की बीमारियों से दैनिक कार्य में विघ्न न होगा।

ग—परिवार में एक व्यक्ति के ऐसा करने से परिवार के अन्य व्यक्ति भी ऐसा करने लगेंगे, जिससे घर में सब का निरोग रहना साधारण सी अवस्था हो जावेगी। बच्चों पर खास असर पड़ेगा।

जीवन सखा के प्रेमी पाठकों का यान मैं डाक्टर बालेश्वर प्रसाद लिखित पुस्तक "क्या और कैसे खायें" के पृष्ट २८ की ओर ले जाना चाहता हूँ "एक महाशय को कुछ पेट की गड़बड़ी थी, उन्हें भोजन करने के एक घंटा बाद पानी पीने की राय दी गई कुछ दिनों में इस नियम पर चलने से उनकी शिकायत मिट गई।" पेट की गड़बड़ी किसी भी रोग का आरम्भिक कारण है यदि इसको अपने बश में कर लिया तो सधारण बात हो जावेगी कि हम हमेशा निरोग रह कर व्यायाम विश्राम ब्रह्मचर्य्य तथा मानसिक प्रसन्नता के साथ १०० वर्ष तक जीवन यापन कर सकें।

THE INDIAN NATUROPATH

(The Official Organ of the Indian Naturopathic Association, Bezwada)

Editor:

DR. SARMA K. LAKSHMAN, B.A., B.L., N.D.

It is the only journal of its kind published in India, expounding the philosophy of Naturism and the various branches of **Nature-Cure.** It has readers in India, Burma, Ceylon, America and Australia.

Annual Subscription Re. 1/8 or 3 shillings.

The Manager,

THE "INDIAN NATUROPATH"

BEZWADA.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रसूतिका-गृह और प्रसूता

श्रीमती शरतकुमारी रूकस

गर्भवती के बच्चा जनने के लिये एक जुदा घर नियत किया जाता है। उस घर को संस्कृत में सूतिकागार या सूतिका-गृह कहते हैं। बोल चाल की भाषा में उसे सोवर या सोहर कहते हैं। आज कल अशिक्षिता बहनें सूतिका गृह के लिये उस घर को चुनती हैं जो सब घरों में निकम्मा और फालतू होता हैं, तथा उसमें मकड़ियों के जाले और अंधेरा रहता है। प्रथमत: तो प्राय: मेरे घरों में खिड़िकियां और मोखें तथा रौशनदान कम होते हैं और जो होते हैं, उन्हें लोग कपड़ों से ठूंस ठूंस कर ऐसा बन्द कर देती हैं कि हवा के आने जाने को सांस भी नहीं रहती। [प्राचोन काल में ऐसा नहीं था। सुश्रुत में लिखा भी है कि सूतिका-गृह का प्रमाण घर से अलग जरूर हो, पर इसके साथ ही साथ ऊपर लिखी गई बातों से बिल्कुल प्रतिकूल हो। वह यह कि जिस कमरे में प्रसूता को रखना है वह कमरा कमसे कम ८ हाथ लम्बा और चार हाथ चौड़ा और काफ़ी ऊँचा हो। चारों तरफ खिड़कियां हों जिसमें धूप, रोशनी, हवा इत्यादि आसानी से आ जा सकें। उस कमरे में सिर्फ प्रसूता के ज़रूरी सामान को छोड़ कर अन्य और किसी प्रकार की चीज़ें वहाँ न हों, अगर हों भी तो सब साफ़ सुथरी और अच्छे ढंग से रक्खी होनी चाहिये।] मैं खुद बहुत सी प्रसूता बहनों के घर गई हूँ, वहां पर जा कर क्या देखती हूँ कि प्रसूता एक बन्द कमरे के एक कोने में अपने बच्चे के साथ पड़ी हुई है। वहां इतना अंधेरा था कि हाथ पसारे नहीं सूझता था। सामने के दरवाजे पर एक मोटे टाट का चिक़ पड़ा हुआ है, जिससे हवा का आना जाना बिल्कुल बन्द था। अस्तु इतना होने पर भी शान्त नहीं, कमरे के एक कोने में एक छोटी लकड़ी जला रक्खी थी। मैने पूछा इसे इतनी गरमी में क्यों जला रक्खा है, तब वे लोग मेरी बातों पर आश्चर्य करती हुई बोली! बहन हमारी परम्परा से चली आई है कि बच्चे की छट्ठी या यों कहिये कि उसके बरही तक बराबर जलती रहती है जिसके बुझ जाने पर बड़ा असगुन मानती हूँ। मेरी ग्रामीण बहनों में कितना भोलापन है, गौर से सोचें और इस बात पर विचार करें कि प्रसूता और उसके बच्चे पर कितना बड़ा अनर्थ किया जाता है। मैंने उन्हें लाख समझाया डर दिखलाया और अन्यान्य बातें सुनाई, पर उनके ध्यान में कब आने लगा।

अब आप लोग स्वयं अपना नफ़ा नुक़सान समझ सकती हैं। भला सोचिये भी तो एक तो दरवाज़ा बन्द, दूसरे आग जलाना, जिसका धुंवाँ उस अंधेरी और तंग कोठरी में गूंज उसकी हवा को खराब कर देती है। और उसके अन्दर बाहर से शुद्ध स्वच्छ वायु का प्रवेश होना दुर्लभ हो जाता है। जो कुछ आक्सीजन वायु में रहती है वह आग, धुवाँ अपने में ले लेती है। नाइट्रोजन और कारबन को बाहर फेंकती है जिसे प्रसूता और उसका बच्चा अपने सांस के साथ अन्दर लेते रहते हैं। जो स्वास्थ्य की दृष्टि से बड़ा ही आपत्ति जनक है।

दूसरी बात यह है कि प्रसूतिका गृह में प्रतिदिन बहुत सी नगर बधुयें भरी रहती हैं और समय समय पर गाना बजाना करती हैं। क्यों कि वे यह समझती हैं, खुशी का दिन है, चलो खूब गायें बजायें, पर वे कभी भी नहीं सोचती कि इस तंग कोठरी में तो हम सब भरी हैं जो कि इतनी गर्म मालूम होती है, साथ ही किसी किसी का सर भी चकराने लगता है। तो भला उस प्रसूता और बच्चे का क्या हाल होगा। यह बातें वे नगर बधुयें क्यों कर समझने लगीं। इन बातों की ओर तो उनके संगरक्षकों को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ध्यान देना चाहिये। पर इसकी तरफ उस खुशी के दिनों में लोग क्यों ध्यान देने लगे। जब प्रसूता तथा उसका बच्चा इन्हीं दैवी घटनाओं के कारण सदा के लिये इस संसार से चल बसते हैं, तब उन्हें ध्यान आता है और सोचते हैं कि असल मामला क्या था। पर बहुत दूर की सोचने के बाद दिमाग में आया भी तो यही कि कोई स्त्री योग, टुटका कर दी होगी। फिर भी अपनी बुद्धि से नहीं सोचेंगे कि यह सब हमारी उन्हीं खुशियों का परिणाम है। यह तो हुआ प्रसूतिका गृह का इतिहास अब थोड़ा प्रसूता के विषय में लिख देना उपयुक्त समझती हूँ। जिस समय भारत वर्ष में अंग्रेज लोग आये और अपना अधिकार पूर्ण रीति से जमा लिया, तब से उन लोगों ने यह सतत प्रयत्न किया कि मेरी सभ्यता अच्छी समझी जावे और उनके वेष, भूषा, रस्मो, रिवाज़, चाल चलन आदि की नकल की जावे। पुरुष समाज ने इस ओर जरूरत से ज़्यादा तरक्की की। परंतु भारतीय महिलायें अर्थात् मेरी बहनें बहुत दिनों तक इसका बिरोध करती रहीं। पर पुरुष वर्ग के अत्याचार से उसे भी विदेशीयता अपनानी पड़ी। अब इस समय तक विदेशी सभ्यता का प्रभाव स्त्री समाज पर काफ़ी पड़ चुका है। अब मैं यहाँ पर केवल एक ही, विषय पर लिख सकूँगी ! वह यह कि बच्चों के प्रति बढ़ती हुई लापरवाही और प्रसव के मृत्यु की संख्या। भारतीय ललनाओं की यह विशेषता है कि वे आदर्श ललना बनें।

बहुत सी मातायें अथवा बहनें प्रसव काल के समय चमाइन बुलाती हैं। यदि वे इन्हें न बुलावें तो करें क्या ! मजबूरन बुलाना ही पड़ता है। यह देवियाँ जब घरमें पधारती हैं। उस समय इनकी सूरत इनकी पोशाक देखते ही बनता है। एक बहुत पुरानी फटी तैल से चुपड़ी हुई साढ़ी पहने हुये, हाथ में मुद्दतों से जंग लगी हुई छुरी जो कि देखने मात्र से ही व्रणपैदा होती है लिये हुये आती हैं। यदि संयोग वश यह छुरी खो गई तब इसे वे बड़ा असगुन मानती हैं। पर इसके अभाव में घर की देवियाँ अपनी रोज की स्तेमाल करने वाली छुरी जिससे कि साग या भाजी इत्यादि चीजें काटती हैं, नारा काटने के लिये दे देती हैं। इसका परिणाम यह होता है कि बच्चे का नारा पक आता है। जिसे मातायें यह कहती हैं कि बच्चे को जमुआ कीड़ा पकड़ लिया है। पर वे अपनी त्रुटियों पर ध्यान न देंगी। यह तो हुआ दाई का इतिहास। अब थोड़ी प्रसूता के विषय में भी सुनिये। घर की सबसे मैली शाड़ी उसे पहनने के लिये दी जाती है और उसके बच्चे के लिये भी यही मैले कपड़े ओढ़ने और बिछाने के लिये दिये जाते हैं। जिससे उसके और उसके बच्चे के स्वास्थ्य के ऊपर बहुत बुरा असर पड़ता है। खाने पीने का समय भी नियत नहीं रहता। कभी १० बजे दे दिया, कभी १२ बजे दे दिया कभी, १ बजे दे दिया। इससे रही सही तनदुरुस्ती जाती रहती है। यही हालत उस अबोध शिशु की है। क्यों कि बच्चा जभी रोया तभी मां उठी, दूध लिया और पिला दिया ! इन बातों के होते हुये माताओं को सब से पहले प्रसूतिका गृह का निर्माण करना चाहिये। जैसा कि ऊपर लिख आई हूँ। दूसरे चमाइन के ऊपर भली भाँति ध्यान देना चाहिये। वह यह कि जब चमाइन घर में आवे तो फौरन उसे स्नान करा कर उसका वह मैला कपड़ा बदलवादो और साफ़ सुथरा कपड़ा पहनने के लिये दो। बाद में उसके औजारों को देखना चाहिये। एक साफ़ बर्तन में जरा सी मिट्टी और पानी भर कर आग पर चढ़ा देना चाहिये। जब पानी खूब खौलने लगे तब उसमें दाई के औज़ार छोड़ दो, थोड़ी देर बाद निकाल कर उसे साफ़ पानी से शुद्ध कर लेना चाहिये। जब सब काम भली भाँति हो जाय तब दाई को पसूता के पास जाने देना चाहिये। अब उसके पास खड़े होकर, उसके कृत्य को भली भाँति निरीक्षण करते रहना चाहिये। जितने काम वह करे उतनी बार उसका हाथ साबुन से धुला कर तब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरा काम करने पावे। यह तो हुआ दाई का सुधार। अब प्रसूता के सुधार के विषय में सुनने का कष्ट करें :—माँ को खूब स्वच्छ, साफ कमरे में रक्खो और उसमें ऐसी चीज मत जलाओ जिससे हवा दूषित हो जाय। हाँ जब कभी धूपवत्ती, इत्यादि खुशबू वाली चीजें जला सकती हो। गन्दी औरतों का आना जाना बिल्कुल बन्द कर दिया जाय, उसे खूब साफ धोती पहनने के लिये और कुछ कपड़े बिछाने के लिये देना चाहिये। यही हालत अथवा देख रेख बच्चे की भी होनी चाहिये।

सब के अन्त में प्रश्न उठता है कि भाई ये सब बातें तो हुईं। पर बच्चे और माँ के लिये खाना कब, किस तरह का देना चाहिये। उसे भी हम नीचे लिखे देती हूँ। बाज़ बहनें बच्चा होते ही गरम मसाले की अछवानी तथा तेल या घी में कढ़ी हुई पूड़ी खाने के लिये देती हैं, यही क्रम करीब छः दिन तक चलता है। बाद में सातवें दिन से रोटी, दाल, भात, तरकारी, बरा, पकौड़ी, इत्यादि चीजें खाने को देती हैं। ये सब चीजें किसी हद तक ठीक भी हैं, पर कभी ८ बजे, कभी ११ बजे, कभी १ बजे खाने को देती हैं यही खराब है। एक तो ऊपर लिखी गई चीजें हज़म होने में देर लगती है। दूसरे समय पर न खाने से कब्ज़ का रहना जरूरी है, अतएव उस प्रसूता के कब्ज रहने लगता है। और अन्याय तरह की बीमारियाँ होने लगती हैं। अब बहनें सोचें जब मां बीमार है तो उसके बच्चे को बीमार होना जरूरी ही है। क्योंकि उसके शरीर का सार तत्व (दूध) बच्चा पीता है इसलिये इसके आलावा, जभी बच्चा रोया तभी दूध पिलाया यह भी नहीं होना चाहिये। पहले बच्चे के रोने का कारण समझ, तब दूध पिलाना चाहिये। सो भी ऐसा नहीं, बल्कि दो, दो घन्टे का अन्तर दे कर। माँ को उस सौर में ऐसा खाना देना चाहिये, जो हल्का और पुष्ठि कारक हो, इससे न मां ही बीमार होगी और न बच्चा ही। सबेरे ७ बजे दूध पीने के लिये देना चाहिए, ११ बजते बजते रोटी, तरकारी, फल, दलिया इत्यादि शाम को करीब ३ बजे के सेव, नाशपाती या सूखे फलों का नाश्ता और रात में करीब ७ बजे के रोटी, भाजी, या दलिया दूध और किञ्चित फल खाने के लिये दिया जाया करे। इन सब चीजों के खाते हुए भी दूध की मात्रा ज्यादा कर देनी चाहिये। फिर देखिये माँ और उसका बच्चा कितना हृष्ट, पुष्ट और स्वस्थ रहते हैं। अच्छा अब मैं थोड़ा अंग्रेज प्रसूता के विषय में लिख अपने इस छोटे से लेख को समाप्त करती हूँ, क्यों की मेरी बहनें अकुलाती होंगी कि यह क्या बला सर पर आ गई। पर इसके लिये क्षमा करेंगी।

अंग्रेज रमणी अपने बच्चे और प्रसूता की देख-भाल के लिये एक ट्रेन्ड नर्स रखती हैं। यह नर्स उस बच्चे को अपना बच्चा समझ कर पालती हैं। ये नर्सें ऊपर लिखी गई विधि से बच्चे की परवरिश करती हैं। और घर की संरक्षक रमाणियाँ प्रसूता और उसके बच्चे के लिये सुन्दर साफ अच्छा कपड़ा ओढ़ने और बिछाने के लिये देती है। इसके आलावा कमरा भी साफ रहता ही है। उम्दा स्वादिष्ट भोजन समय समय पर देती रहती हैं, और खुद भी उसकी देख रखती हैं। यदि हम गरीब बहनें नर्स नहीं रख सकतीं तो अपने हाथ से तो कर सकती हैं फिर काहे की चिन्ता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूध

श्रीयुत डा० शिवनाथराय,

दूध की बनी चीजें :—

१—दही :—जमाया हुआ दूध ही अधिकतर दही के रूप में खाया जाता है। गरम दूध में थोड़ी दही डाल कर रखने से कुछ घंटों में दही तैयार हो जाता है Lactase जब lecticacid में परिणत हो जाता है, तब दही में खट्टापन आ जाता है।

इससे शरीर में गर्मी आती है, मलावरोध बढ़ता है, पाचन में भारी है, हृदय को शक्ति मिलती है। इसके व्यवहार से मानसिक तथा शारीरिक शक्ति बहुत बढ़ जाती है। मीठा दही कफ वर्धक है। इससे खुश्की दूर होती है। वायु की शिकायत नहीं रहती। कुछ खट्टा दही खाने से खून साफ़ होता है। कफ़ की वृद्धि जब रोकना हो तो थोड़ा नमक अदरक़, सोंठ, पीपर और पानी मिला देना अच्छा है। दही से बाल धोने से उनका स्वाभाविक सौंदर्य बिगड़ने नहीं पाता। दही यदि, रोटी, चावल, दूध या तेल की चीज़ों के साथ खाई जाय तो बहुत ही हानिकारक होती है। दही के पानी में बड़ी शक्ति है। इससे कफ़ का रोग हटता है, रोमकूप और पेट साफ़ करता है, और भूख बढ़ती है। अफ़ग़ानिस्तान में थोड़ा नमक मिला कर यह सुखा कर रख लिया जाता है। जरूरत होने पर पानी में घोल कर स्वादिष्ट पदार्थ में उपभोग कर लेते हैं।

२—लस्सी :—दही में खूब पानी मिला कर दूध की तरह पतला बना लिया जाता है।

इससे ठण्डक पहुँचती है। थाइसिस के कीड़े मरते हैं। पाख़ाना और पेशाब साफ़ होते हैं। ख़ून की सफ़ाई भी होती है। कफ की प्रकृति तथा बादी वालों को इसमें थोड़ा नमक मिला लेना फ़ायदा पहुँचाता है। यह बहुत जल्दी पच जाता है। पेशाब करने में अगर तक़लीफ हो तो थोड़ा गुड़ मिला कर इसके पीने से बहुत कुछ तक़लीफ रफ़ा हो जाती है। ख़जूर के बाद इसे पीने से ख़जूर की गर्मी शान्ति करता है और शक्ति देता है। लस्सी में अगर थोड़ा अमोनिया डाल कर लिया जावे तो पाण्डु रोग में बड़ा फ़ायदा करता है। तिल्ली और बरवट को हटाता है। कुनैन के अधिक व्यवहार से हुये रोगी को यह बहुत फ़ायदे मन्द है। इससे वायु विकार तथा मुटापा दूर होता है।

३—पनीर :—गरम दूध में नीबू का रस डालने से दूध फट जाता जाता है और छेना बन जाता है। विदेश में तरह तरह की चीजें इसके द्वारा बनती हैं। आलू को सलाद बनाने में इसको सहायता ली जा सकती है। ताजा छेना ही खाना स्वास्थ्य वर्धक है, यद्यपि उसका स्वाद अच्छा नहीं होता। इसमें :—३% पानी, २०% प्रोटीन, २% चीनी, २% नमक।

दही या पनीर का बचा हुआ हिस्सा पानी कहलाता है। इसमें ३% पानी, १% प्रोटीन, ५% चर्बी, ४½% कार्बोहाइड्रेट, ७% नमक। इसके व्यवहार से कब्ज़ या आतों की सफ़ाई हो जाती है। कमज़ोर मरीज़ों को यह भोजन का काम दे सकता है। जो बच्चे गाय का दूध पानी मिलाकर भी न पचा सकें उन्हें आधे सेर ऐसे पानी में ३ चम्मच दूध डाल देने से उसकी वृद्धि ठीक होगी और वे स्वस्थ हो जाते हैं।

४—मक्खन :—यह दूध की चर्बी ही है। ताज़े दूध में यह छोटे छोटे गोलों के रूप में रहते हैं। ये प्रोटीन से घिरे हुये पानी में मिले रहते हैं। मक्खन ठण्डक और अंधेरे में रखना चाहिये। क्योंकि रोशनी और गर्मी से इसमें बड़ा नुक़सान पहुँचता है। ठण्डक में रखने से एक हफ़्ते तक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मजे में रक्खा जा सकता है। नमकीन मक्खन से उतना लाभ नहीं होता।

मक्खन में ८७% चर्बी, पानी १०·७% और दूसरी चीजें बहुत मामूली हिस्सों में रहती हैं।

मक्खन के व्यवहार से खुश्की दूर होती है। हृदय की शक्तियों में वृद्धि होती है। चर्बी बढ़ाता है, दिमाग़ को शक्ति देता है। वीर्य, मूत्राशय तथा पित्ताशय और तिल्ली की गर्मी को हटाता है। और ओज की वृद्धि करता है। इससे आँख की शक्ति भी बढ़ती है। वजन बढ़ाने और मांस पेशियों को मोटा बनाने में यह बहुत गुणकारी है।

५—मक्खन या दूध:—ऐसे दूध का व्यवहार हालैण्ड में सबसे ज्यादा है। यह बहुत ही हाजिम है। एक प्रकार की खटाई (Lactic Acid) से इसकी उत्तमता बढ़ जाती है। इससे हृदय को शक्ति मिलती है। पेशाब की ख़राबी, तथा जिगर और तिल्ली को घटाता है।

६—घी:—मक्खन को गरम कर जब पानी निकाल दिया जाता है तो घी तैयार हो जाता है। ताज़ा घी गर्म होता है। बहुत ही मजबूत मेदा वाला ही इसे पचा पाता है। विष को नष्ट करने की इसमें अजीब शक्ति है, यह जुकाम और बुखार में बहुत हानि पहुँचाता है। गुर्दों के दर्द को हटाने में यह बड़ी सहायता देता है।

'चिनगारी'

यह पत्र जनता की चेतनता को जागृति करने उपयोगी सिद्ध हो रहा है... ....मेरी कामना है कि 'चिनगारी' को अपने मिशन में पूर्ण सफलता मिले और मुझे आशा है कि इसका जनता का उत्साह पूर्ण समर्थन प्राप्त होगा—

—सुभाषचन्द्र बोस

'चिनगारी'

चिनगारी को सभी अपनायें; इस का हाथ बटाये और इसके रोज में आने वाली बाधाओं को दूर करने में इसके सहायक हों। यही मैं चाहता हूँ।

—स्वामी सहजानन्द सरस्वती

'चिनगारी'

इसकी ज्वाला.........घोरतम, अन बरुद्ध अदीप्त ज्वाल। संसार-के कोने कोने में फैलेगी, और भस्म कर देगी पूँजीवाद के जर्जरित महल, उसकी अट्टालिकायें।

—यदुनन्दन शर्मा

'चिनगारी'

(प्रगति का अग्रदूत)

सचित्र साप्ताहिक

देश के लिये		विदेश के लिये	
वार्षिक मूल्य	४)	वार्षिक	८)
छमाही	२)	छमाही	४)
		वर्मा	५)
एक प्रति	-)	छमाही	३)

ऐजन्सी के लिये पत्र व्यवहार कीजिये

मैनेजर 'चिनगारी' 'चिनगारी' आफिस गया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जुदा जुदा दर्दों को मिटाने वाला मसाज

श्रीयुत संचालक—रामतीर्थ, योगाश्रम, मुंबई

अपने शरीर के तीन विभाग हैं जैसे मगज, फेफड़ा और पेट, इन तीनों अवयवों में हमेशा स्थूल और सूक्ष्म कार्य चालू रहता है। मगज के बयालिस विभाग होते हैं, उन में से कोई भी एक दो या तीन विभाग बलवान होते हैं, इसलिये उसमें रही हुई शक्ति के बमौजिब, कोई संगीत में, लेखन में, भाषण में, कलाओं में, आत्म ज्ञान में और कोई युद्ध में महान नाम प्राप्त करता है।

फेफड़ा जब आशक्त और संकुचित होता है तब स्वांस लेतें समय दर्द होता है। फेफड़े का काम खून को शुद्ध करने का है आक्सीजन वायु को साधे में पहुंचाना और रक्तवाहिनी नाड़ियां सतेज रखने का होता है जिसका फेफड़ा मजबूत और विशाल होगा वे विशेष जी सकते हैं। किसी किसी व्यक्ति का फेफड़ा देखते ही मालूम हो जाता है, कि इस व्यक्ति में कितनी शक्ति है। अमुक रोग के जन्तु खास फेफड़े में जड़ जमा बैठते हैं, तब वह रोग जल्दी नहीं मिटता, उस रोग को निकालने के लिये महान परिश्रम करना पड़ता है, उस रोग को मिटाने के लिये योग्य उपवास, मसाज और सूर्यकिरण चिकित्सा की अत्यन्त जरूरत है।

जिस व्यक्ति के गुण, धर्म, कर्म और स्वभाव अत्यन्त पवित्र हों वह व्यक्ति निंदिनीय कर्म करने वाले व्यक्ति के सिर पर थोड़ा सा हात फिराता है, तब उस व्यक्ति का स्वभाव बदल कर सज्जन बन जाता है। रासा होने का मुख्य कारण यह है कि अपनी हथेली में पाँव के तलुवों में और आंख में प्रति समय एक प्रकार का ओजस-उष्णता बहती रहती हैं इसे अँग्रेजी में Aupa कहते हैं, यह ओजस प्रत्येक व्यक्ति का आचार-विचार आहार और संग के अनुसार पवित्र या अपवित्र निकलती रहती है इस लिये जो मसाज करने वाले पवित्र आचार के हों तो थोड़े ही दिनों में सिर के रोग, फेफड़े के रोग, पेट के अमुक रोग नष्ट हो सकते हैं। मसाज के साथ तीन कार्य का संम्बध है (१) तेल (२) ओजस (३) खून की गती में फेर फार, जो शास्त्रीय पद्धति के अनुसार मसाज बराबर करने में आवे, तो मौत के पास पर पहुंचे हुये को भी एक वख्त बचा सकता है क्यों कि मसाज के साथ महान शक्ति रखने वाले आंतरिक मन की शक्ति बीमार व्यक्ति के मन में प्रवेश करने में आवे तो फौरन ही निःसदेह उस व्यक्ति के रोग मिटने के चिन्ह दृष्टिगोचर होना ही चाहिये।

मसाज करने वाले को कला और बल की जरूरत पड़ती है। बीमार व्यक्ति जो बिलकुल कमज़ोर हो तो धीरे धीरे हाथ फिरा कर याने रोगी को तकलीफ न हो और अच्छी तरह मालिश करके रोग निवारण करते जाना चाहिये। किसी किसी रोग में शरीर-बल की भी जरूर पड़ती है, दांत जिसके शरीर में अत्यंत मेह हो, उसे धीरे मालिस का असर नहीं होता, परंतु बल पूर्वक हाथ, पग, पीठ, भुजा आदि अवयवों को मसाज करने में आवे तो मेह घट जाती हैं।

वात और कफ प्रधान वाले को कुरंज का तेल, बदाम का तेल, अथवा राय का तेल उत्तम है, पित्त प्रधान शरीर वाले को खोपरे का तेल अथवा बदाम का तेल उत्तम है, सिर के मसाज के लिये ब्राह्मी का तेल उत्तम है।

मसाज से सिर का दर्द कैसे मिटे ?

सिर के लिये ब्राह्मी का तेल घिसना। सिर दर्द मिटाने के लिये चार जगह तेल मालिश करना चाहियें (१) ब्रह्म रंध, (तालुवे के) पीछे का भाग दोनों कान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के ऊपर के भाग को लगभग ५ से ८ मिनट तक घिसना चाहिये, कान के पीछे के भाग में दो नाड़ियां आई हुई हैं उन नाडियों को दबा कर मसाज करना चाहिये।

फेफड़े के दर्द तथा मजबूत बनाने के लिये फेफड़ा संकुचित हो या कोई भी दूसरी बीमारी हो तो साधारण इलाज कर उसे ५ मिनट तक मसाज करना चाहिये। आठ दिन बाद पंद्रह दिन तक स्वास (साधारण) फेफड़े में भर कर जितनी देर रोक सके उतनी देर तक साधारण हबाण देकर मसाज करना चाहिये। पंद्रह से एक महीने तक जरा जरा मसाज का समय बढ़ाते जाना चाहिये और रोगी को भी स्वांस ज्यादे समय तक ज्यादे प्रमाण में भर कर रोक रखना चाहिये। एक महीने बाद अनुकूल शक्ति के अनुसार अधिक समय तक मसाज करना चाहिये। इस तरह से दर्दी का शरीर हलका मालूम पड़ेगा तथा स्वांस लेते वक्त फेफड़े में दर्द नहीं होगा। शरीर में लोही का प्रमाण बढ़ेगा और खराब खून नहीं रहेगा।

सिर तथा आंख की गरमी शमन करने के लिये

रात को सोते वक्त पाँव के तलुवों को धो डालने के बाद गाय का घी कांसा के कटोरे से घिसना चाहिये।

मंदाग्नि, कब्जियत, अपचन, और नाभि खसक जाने पर बैठाने के लिये बदाम या अन्य अनुकूल तेल से पेट का मसाज करना चाहिये। मसाज करते समय हबाण मध्यम होना चाहिये। हाथ के पंजे तथा हथेली से पेटे को बरापर अड़ना चाहिये। दाहिनी तरफ से बांई तरफ हाथ फेरना चाहिये। शुरुवात में सफरा का भाग, कीड़ हो, जरी और कलेजे के ऊपर हाथ फेरने के बाद धीरे धीरे पेट का बीच का भाग (छोटी अंतड़ियें, मोटी अंतड़ियें मणिपुर चक्र वगैर:) के ऊपर मसाज करना चाहिये। तीन दिन तक दो मिनट, तीन से छः दिन तक तीन मिनट, छः से चौदह दिन तक चार मिनट, चौदह से एक महीने तक पांच मिनट, एक महीने बाद नरम या कठिन कोठे के प्रमाण से छः से बारह मिनट तक मसाज बढ़ा सकते हैं।

सामान्य रीति से मसाज शुरु करने के बाद पांचवें दिन से लाभ मालूम होने लगेगा। मसाज करके पौन घंटे बाद भोजन कर सकते हैं। शाम की बनिस्बत सुबह मसाज के लिये टाईम ठीक है।

कार्यकुशल व्यक्ति और जानकार व्यक्ति मसाज द्वारा वायु पग के संधियों का सूजन, लक़वा, हृदय बिकार, हाथ पग की कुलन, मेह वृद्धि, बात दोष, नल वायु, पीठ दर्द और दूसरे कई हठीले दर्दों को अच्छी तरह नाश हो सकता है।

सतयुग

नवयुग का सन्देश सुनाने वाला

मासिक पत्र

इसमें भविष्य में होने वाले महासमर; युगपरिवर्तन; नवीन अवतार; दैवी और प्राकृतिक उत्पात आदि के विषय में नई-नई बातें मिलेंगे।

इस समय हमारे चारों तरफ जो अशान्ति फैली हुई है और हर रोज जो भयंकरता घटनायें देखने और सुनने में आती हैं उनका भेद समझाने के लिये तथा भविष्य में आने वाली विपत्तियों से सावधान करने के लिये यह सच्चे मित्र तथा सहायक का काम करेगा।

एक साल का चन्दा ढाई रु०; छः महीने का सवा रु० है। जो सज्जन चाहें वे तीन महीने के लिये दस आने और एक महीने के लिये ४ आने का टिकट भेज कर भी मंगा सकते हैं। पत्र को देखने पर आप खुद ही उसकी उपयोगिता समझ कर स्थायी ग्राहक बन जायँगे।

पता—सतयुग आश्रम, बहादुरगञ्ज, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूध चिकित्सा पर मेरी नोटबुक

श्रीयुत स्वामी जगदीश्वरानन्द वेदान्त शास्त्री

क्रमानुसार दूधकल्प के विषय में "दूध कैसे प्रारम्भ करना चाहिये" इसका नम्बर आता है, जिस का अर्थ स्पष्ट होते हुए भी कुछ अधिक खुलासा करने के लिए यह कहा जा सकता है कि कोई भी चीज़ भले ही कितनी हितकर (फ़ायदेमन्द) हो अनुचित मात्रा या अनुचित देश काल वा अनुचित प्रकृति की दशा में ग्रहण करने पर सर्वथा हानिकारक (नुक्सानदेह) हो जाती है चाहे अमृत ही क्यों न हो परन्तु मात्रा में सेवन न करने से वही विषतुल्य घातक होगा, अतः "अति सर्वत्र वर्जयेत" का सिद्धान्त (मक़ूला) पालनीय है। इसी प्रकार देश काल का विचार भी सर्वदा अनुपेक्षणीय (काबिल गुरेज़) है क्योंकि अपवित्र देश में वा बेसमय से कोई वस्तु ग्रहण करने पर पूर्ण लाभ नहीं पहुंचा सकती।

ठीक इसी तरह अपनी प्रकृति को भी समझ लेने पर निश्चय करना पड़ता है कि कौन चीज़ किस रूप से ग्रहण करने पर हमारी हितकर हो सकती है। तब पूर्वोक्त (ऊपर लिखे) वाक्य (अलफ़ाज़) का खुलासा अर्थ हुआ कि—किस दशा में कितनी मात्रा वा कितने कितने समय पर दूध पीना चाहिये जिस से अमृतरूपी दूध का अमृतत्व सिद्ध हो।

तब इस प्रकार से दूध के अमृतत्व को सिद्ध करने का ही आगे प्रयत्न होगा। देखिये जब अवस्थानुसार दो या तीन दिन का उपवास नियम पूर्वक करने से शरीर शुद्ध हो गया, और खुराक न मिलने के कारण जठराग्नि मन्द सी मालूम पड़ने लगी तब ऐसी हालत में पहुंच जाने पर किसे कितना और कितनी देर बाद दूध लेना चाहिए इसे समझ लेवें। इसके लिए अमेरिकन डा० का मत है कि मरीज़ की ऊँचाई को माप लो और जितने फ़ीट मनुष्य लम्बा हो उतने सेर दूध उसे २४ चौबीस घंटे में पिलाना चाहिए। और जितने सेर दूध उसे दिन भर में यानी २४ घंटे में पिलाना उचित समझा जाय उसके दो हिस्से तो दिन में और एक हिस्सा रात्रि में देना चाहिए। जितने सेर दूध उंचाई के हिसाब से उचित समझा गया हो उतने औंस दूध प्रत्येक आधा घंटा में देते रहना चाहिए।

फ़र्ज़ कीजिए कि कोई मरीज़ ५॥ साढ़े पाँच फ़ीट लम्बा है तब उसे चौबिस घंटे में साढ़े पाँच सेर ८५॥ दूध देना होगा, और जब ८५॥ सेर दूध पिलाना है तो प्रत्येक आध घंटा में साढ़े पाँच औंस दूध देना चाहिए इस हिसाब से प्रातः से सायंकाल तक ८३॥~ तीन सेर दस छटाँक और शाम से ८१॥।~ एक सेर चौदह छटाँक रात भर तक।

चौबिस घंटे का मतलब आप के मत में है प्रातः ६ बजे या ७ बजे से जब दूध पीना शुरु किया गया दूसरे दिन के प्रातः ६ या ७ बजे तक। इस हिसाब के आधार पर आपका कहना है कि इस तरह आध आध घंटा पर दूध देते रहने पर ३२ बार में उतना दूध समाप्त करना चाहिए। शेष आठ घंटा मरीज़ के सोने और शौच (टट्टी) आदि में बीतें। ३२ बार को पूरा करने के लिये वे कहते हैं कि यदि मरीज़ सो जाय तो बीच में न उठा कर रात में जब भी वह जागे उसी समय उसे दूध पिलाना चाहिये इस प्रकार ३२ बार पूरा करना चाहिये। परन्तु भिन्न भिन्न रोगियों से प्राप्त हम लोगों का अनुभव वा मैंने स्वयं भी दूध कल्प कर जो अनुभव किया वह कुछ नियमों के विपरीत है। उनका कहना है कि लम्बाई के हिसाब से उतने सेर दूध पहले दिन से ही शुरू कर देना चाहिये इसमें वह यह तर्क (युक्ति) पेश करते हैं कि बहुत दिनों से पेट हरामी हो गया उस नें अपना पूरा काम छोड़ दिया है अतः अब उसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जितना काम देना चाहते हैं देवें हठात् उसे करना ही पड़ेगा दो चार रोज़ भले ही कुछ ननुनच करे (दिक्कत दे) मगर बाद में वह अपना काम ठीक करने लग जावेगा।

मुकाबले में हमारा अनुभव कहता है कि अगर इसी बात को भी माना जाय कि पेट बदमाश हो गया है तो भी हमें उसकी कार्यकारिणी शक्ति के अनुरूप ही कार्य देकर उस कार्य को सुचारु (भली प्रकार) रूप से करवाते हुए उसकी शक्ति को बढ़ाना चाहिये। नकि ज्यादा काम दे उसकी बदमाशी को बढ़ाते हुए अपने पैसे का भी नाश करते हुए बिगड़े काम से दुःख का अनुभव करना अच्छा है। 'शठे शाठ्यं समाचरेत्" बुरे के साथ बुराई करने का सिद्धान्त यहाँ पर उचित नहीं मालूम पड़ता जब कि नम्रता से अच्छी प्रकार काम निकल सकता है। दूसरा यह कि जब मरीज़ की रुचि नहीं होती और ज़बरदस्ती उसे दूध पिलाया जाता है तब दूध ठीक से हज़्म न होकर कै लाता है, सिर में चक्कर लाता है पेट में वायु करता है तब मरीज़ घबड़ाने लगता है और कष्ट के कारण इस नवीन चिकित्सा वा चिकित्सक पर अश्रद्धा होने लगती है और बाज़दफ़ा मरीज़ घबड़ा इसे छोड़ देता है। अतः ऐसा करना बेहतर होगा यदि पहले पहल कम दूध दिया जाय जो कि ठीक हज़्म हो जाय और मरीज़ को कष्ट भी न हो प्रत्युत् (उल्टा) शक्ति आने के कारण अधिक विश्वास होता जाय। तीसरी बात यह कि मर्द मरीज़ और स्त्री मरीज़ की लम्बाई एक होने पर भी प्रायः मर्द मरीज़ के मुकाबले में स्त्री मरीज़ दूध नहीं पी सकती, इनका भी फ़र्क करना ही पड़ेगा। चौथी बात यह कि भले ही शक्तिशाली चलते फिरते खाते पीते मरीज़ों के लिये यह ऊँचाई के अनुसार दूध का नियम पहले दिन लागू हो जाय परन्तु अल्पशक्तिवाले खटिया पर पड़े मरीज़ों के लिए तो यह नियम कभी हितकर हो ही नहीं सकता बल्कि और प्राणघातक हो जायगा। अतः यदि जिसे ऽ५॥ दूध देना है तो उसे शक्ति के अनुसार पहले दिन ऽ३ या ऽ४ सेर दूध प्रारम्भ करना ठीक है।

दूसरी बात वह कहते हैं कि २४ घंटे में ३२ मरतब्बे दूध देना चाहिये उसकी साधक युक्ति बताते हैं कि रात में जब भी मरीज़ उठे तभी उसे दूध पिलाना चाहिये। मगर अनुभव इसका पूर्ण विरोधी है क्योंकि कहना जितना सरल है करना वैसा सरल नहीं, मैंने अक्सर बहुत से रोगियों को देखा कि रात में ७-८ घंटा सोने के अलावा दिन में भी सो कर बहुत बार अपनी बारी चुका देते हैं। और उधर रात के ९ बजते २ निद्रादेवी की गोद में विश्राम करने लगते हैं। रात्रि में जब नींद टूटे तभी दूध पिलाना यह तो बड़ी मुस्तैदी का काम है कौन इस प्रकार इतनी चुस्ती से मरीज़ के ढिग रात भर बैठ सकता है, वह भी सिर्फ़ १ दो बार दूध पिलाने के निमित्त। मैं तो सब मरीज़ों की अपेक्षा हठ रखने वाला था मेरे सामने यह बात तो आ ही नहीं सकती थी कि दूध रुचिकर नहीं या आलस्यादि से कोई बारी चूक जाय, तथापि प्रातः ५॥ बजे या ६ से प्रारम्भ कर मुश्किल से रात के दस बजे तक ३० बारी पूरी कर पाता। इन सब बातों के आधार पर यह कहना पड़ता है कि मरीज़ को यदि ऽ६ छः सेर दूध देना है तो उसकी हालत के अनुसार ७ या ७॥ औंस प्रत्येक बार देना चाहिये।

अब प्रश्न उठता है कि दूध कैसा पीना चाहिये ? इसका सर्वोत्तम प्रकार तो यह है कि यदि कोई समर्थ पुरुष है और दो तीन गौएं रख सकता है तब तो यह है कि अपनी प्रकृति के अनुकूल वर्ण की गौओं को रख एक के बाद दूसरी और दूसरी के बाद तीसरी गौ को दोह, कर धारोष्ण दूध का सेवन कर सकता है। क्योंकि 'धारोष्णम् गोपयो बल्यम्' गौ का धारोष्ण दूध बलकारक होता है, यदि ऐसा न कर सके तो प्रात का दूध कुछ घंटे तक कच्चा पीते रहें बाद में यदि फटने की सम्भावना हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो उसे गर्म कर के रख लेंवे। गर्म करने के तरीके को भली प्रकार समझ लेवें—

दूध के बर्तन को आग पर हरगिज़ न रखें बल्कि यों करें कि कड़ाही या किसी भी खुले बर्तन में पानी को आग पर चढ़ा दें और दूध को किसी दूसरे बर्तन में डाल बंद कर कड़ाही में रख दें इसी तरह दूध खौलने लगेगा, तब उसे निकाल कुछ ठंढा कर मरीज़ को पिलावें। यदि मरीज़ को कब्ज़ की शिकायत या पेट में गांठें मालूम पड़ें तो कच्चा दूध न दे इसी प्रकार गर्म कर पिलावें वा ठंढा होने पर भी थोड़ी देर गर्म पानी में रख कुछ गर्म कर पिलावें। कै या अरुचि या वायु की दशा में भी इसी प्रकार कुछ देर गर्म पानी में रख पिलाने से सब तकलीफ़ रफ़ा होती है। यदि ठीक हज़्म न होने के कारण सिर में चक्कर या जी मिचलाना कै या पेट में वायु इत्यादि कष्ट दिखाई दें, तो बीच बीच में नीबू या संगतरे का रस चुसाने से ठीक होगा। शाम के समय वायु वग़ैरह की शिकायत अक्सर बूढ़ों को हुआ करेगी।

इस बात का ध्यान रखें कि दूध को ज़मीन पर न रख लकड़ी के स्टूल चौकी पर ही सफ़ेद खद्दर के कपड़े से अच्छी प्रकार ढांक कर रखा जावे। पास में पूरी सफ़ाई रहे ऐसा न हो कि बहुत सी मखियां पैदा हो दूध के बर्तनों पर बैठ उन्हें गन्दा कर दें। दूध कैसे पीना चाहिये ? दूध पीने में जल्दी हरगिज़ न करें पाव भर दूध पीने में २॥ या तीन मिनट खर्च करें, जैसे दूध को मुंह में लेकर उसे खूब चलावें जब उसमें लस पैदा हो जावे तब उसे अन्दर ले जावें, इस तरह करने से दूध शीघ्र हज़्म होगा। झूठी सभ्यता के ठेकेदारों को यह तरीक़ा ठीक न लगेगा हालांकि इसमें बुराई की कोई बात तो है ही नहीं मगर समझ की फेर से कुछ एक को बुरा मालूम होता है तब उनके हितार्थ एक दूसरा उपाय है जिससे वे लोग भी इस लाभ से ख़ाली नहीं रह सकते वे लोग शीशे की बनी नाली जैसी की सोडावाटर पीने के काम में आती है लेकर उसके द्वारा धीरे २ चूस चूस कर दूध को पीवें। जिससे कुछ न कुछ लुआब मुंह में तैयार होता जावे और दूध मुंह से ही हज़्म होना शुरू हो जावे। आप को समझना चाहिये कि जिस प्रकार शक्ति देने वाली सारी कड़ी चीज़ों को आप जितना मुंह में रख कुचलते हैं और मुंह के मिले लस से निगलते हैं उतनी जल्दी वह चीज़ हज़्म होती है वैसे ही दूध भी एक पुष्टिदायक (ताक़त बख़्श) पदार्थ है इसका खाना भी ऐसे ही प्रकार से होना चाहिये जिससे मुंह का लस अधिक मिल सके और शीघ्र पच जावे।

अब मैं पूर्व लिखित नियमों को संक्षेप से (इख़तिसार से) दुहराये देता हूँ। मरीज़ की ऊंचाई को नाप कर उसके हिसाब से जितने फ़ीट लम्बाई हो उतने सेर दूध देना उचित समझना चाहिये, और स्त्री मरीज़ को उसकी शक्ति के अनुसार कुछ कम या ज्यादह, ठीक आध आध घंटे के बाद उस हिसाब से एक डेढ़ औंस बढ़ा कर साधारण उष्ण दूध देते जाना चाहिये। दूध को शनैः २ प्रेम से पीना चाहिये और दिन में कम से कम चार बार नीबू या संगतरा चूस लेना चाहिये यदि प्रातः शौचादि से निवृत होकर एक नीबू चूस लिया जाय और बाद में दूध पीना शुरू किया जाय और सोने से पहले भी एक आध नीबू चूस लिया जावे तो अधिक हितकर होगा। दिन में एक दो बार गिलासों को वा दूध के अन्य पात्रों को मिट्टी या राखी से मलकर पानी से धोकर साफ़ कर लेना चाहिये।

शेष फिर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुन्दर स्वस्थ और सुखी जीवन के इच्छुकों को

पढ़िये ! **ये पुस्तकें पढ़नी चाहिये** लाभ उठाइये !!

(१) रोगों की अचूक चिकित्सा (द्वितीय संस्करण) : ले० जानकी शरण वर्मा बी. ए. २॥)
(२) प्राकृतिक चिकित्सा : सं० केदार नाथ गुप्त एम० ए० ... २)
(३) फलाहार और फल चिकित्सा : ले० नारायण प्रसाद अरोड़ा ... १॥)
(४) दूध ही अमृत है : ले० हनुमान प्रसाद गोयल ... १॥) सजिल्द २)
(५) सूर्य किरण चिकित्सा : ले० श्री गो० बा० जी टोंगू ... २॥
(६) स्वास्थ्य के नुस्खे : जीवन-सखा कार्यालय ... ... =)॥
(७) शक्तिदर्शन : ले० शंकर लाल तिवारी ... ... ॥)
(८) आनन्दमय जीवन का ह्रास और कारण „ ... ... ।=)
(९) क्या और कैसे खायें : ले० डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह ... ।)

स्वास्थ्य संबंधी पुस्तक मिलने का पता :—**मैनेजर, स्वास्थ्य ग्रंथ भंडार,**
८७, हिम्मतगञ्ज, इलाहाबाद

इसे ज़रूर पढ़िये

(१) 'जीवन-सखा' में प्रकाशित होने के लिए लेख कागज की एक ही ओर साफ़ अक्षरों में लिखे हों और पंक्तियों के बीच में संशोधन के लिए जगह हो। यदि लेख-संबंधी चित्र भेजे जाँय तो बहुत अच्छा हो।

(२) यदि अस्वीकृत लेख को कोई लेखक लौटाना चाहें तो उसके लिए पर्याप्त पोस्टेजस्टाम्प भेजने की कृपा करें।

(३) 'जीवन-सखा' की प्रतियाँ ग्राहकों के पास अच्छी तरह जाँचकर भेजी जाती हैं। इसलिए यदि कोई प्रति किसी ग्राहक के पास न पहुँचे तो कार्यालय का दोष नहीं है।

(४) मैनेजर से पत्र-व्यवहार करते समय ग्राहक-संख्या लिखना न भूलिये।

(५) लेख, समालोचना और परिवर्त्तन के लिए पत्र-व्यवहार सम्पादक, 'जीवन-सखा' इलाहाबाद, और विज्ञापन-प्रकाशक तथा ऐसे ही अन्य विषयों से संबंध रखने वाले पत्र-व्यवहार मैनेजर, 'जीवन-सखा' प्राकृतिक स्वास्थ्य गृह, ८७, हिम्मतगञ्ज इलाहाबाद, के पते से करना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Reg. No. A-2903
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

NATURE CURE HOME
ALLAHABAD

Try Nature's way. It is simple yet very effective. Nature only heals diseases, while Medicine suppresses them.

Disease:—Can only be cured by, and through the blood and its circulation in the living parts of the Body.

Any means that improves the quality, the quantity and the movement of the blood will assist in eliminating disease.

All these conditions are fulfilled by our method of treatment.

The following diseases are cured permanently and within a short time of 45 days by our method of milk treatment.

Nervous prostration, general debility, autointoxication, mild skin troubles, such as pimples, eczema, sallowness, wrinkles, etc., simple anemia, catarrh, biliousness, ringing in the ears, pleurisy, constipation, dyspepsia, indigestion, asthama, piles, insomnia, ulcer of the stomach, colitis, ulceration of bowels, goiter, malaria, arteriosclerosis (hard arteries), neuralgia, neurasthenia, acidity of stomach, chronic appendicitis, arthritis, urticaria or hives, carbuncles, diarrhœa or dysentery, dilation of stomach, gastritis, gout, impotence, neuritis, lumbago, sciatica, tenigrains, leucorrhea, enlargment of prostrate gland, gallstones and liver troubles, rheumatism, kidney diseases, and the first stage of consumption, high and low blood pressure, diabeties, obesity, jaundic etc.

All diseases are curable but not all patients.

Treatment used:—Hydropathy, cromopathy, geotherapy, massage, corrective exercises, Asanas and Pranamas, milk treatment, electricity, etc.

Write for prospectus with one anna stamp to,

The Manager:—THE NATURE CURE HOME,

87, Himmat Ganj,

ALLAHABAD.

Printed by Gopi Lal Dikshit at the Dikshit Press, Allahabad.
Published by Syt. Baleshwar Prasad Sinha.
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन सखा

शारीरिक, मानसिक नैतिक स्वास्थ्य का पथ-प्रदर्शक

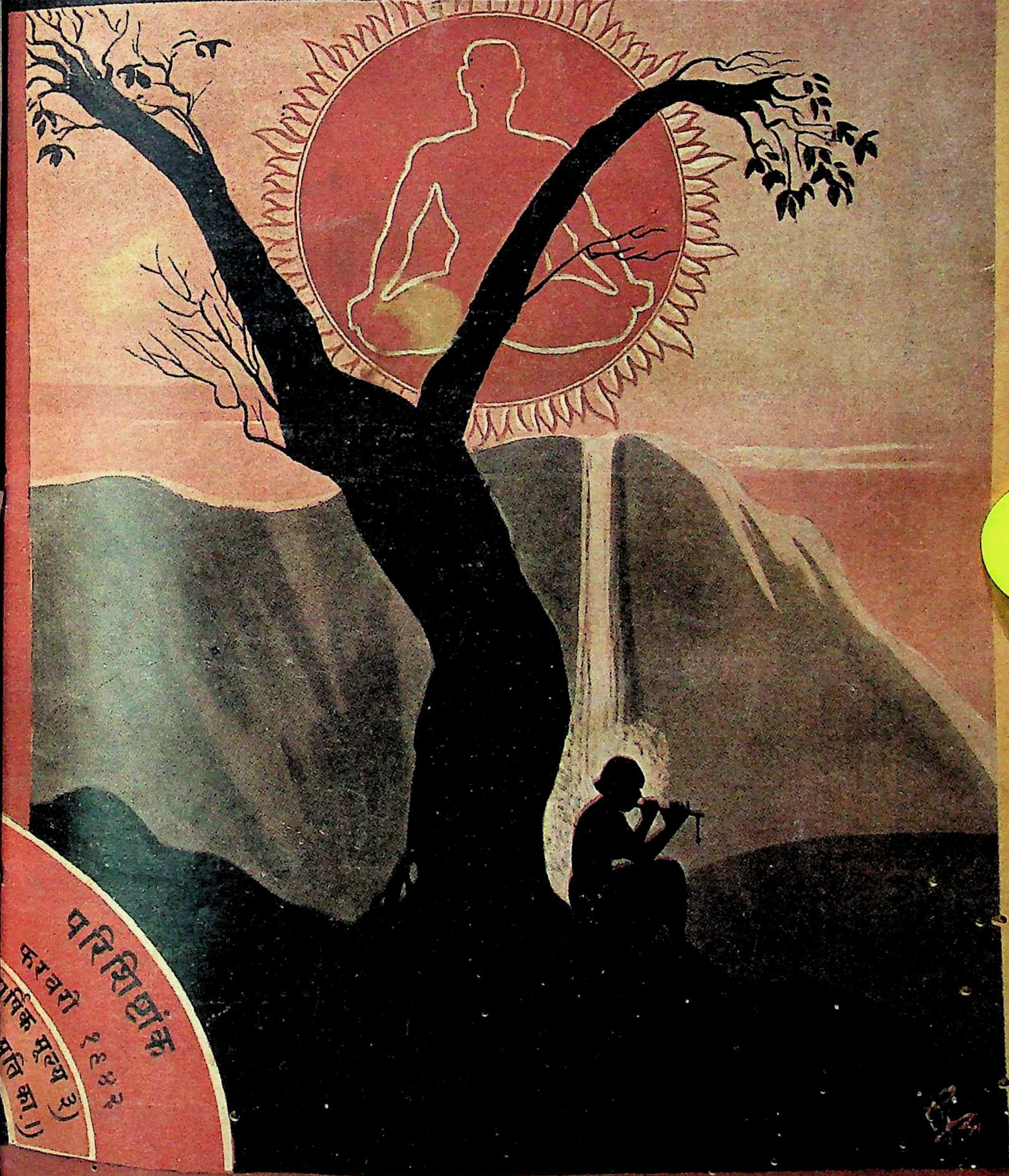

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

सम्पादक :: बालेश्वरप्रसाद सिंह

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'जीवन-सखा' के नियम

(१) 'जीवन-सखा' प्रतिमास पहली तारीख को प्रकाशित होता है।

(२) इसका वार्षिक मूल्य ३) तथा एक प्रति का ।) है।

(३) ग्राहकों को चाहिए कि वे जनवरी या जूलाई से ग्राहक बनें; यों साल के किसी महीने से भी ग्राहक बना जा सकता है।

(४) यदि महीने के पहले सप्ताह तक किसी ग्राहक को 'जीवन-सखा' का अंक न मिले तो १५ दिन के अन्दर इसकी सूचना पोष्ट आफिस से प्राप्त उत्तर के साथ कार्यालय को दे देनी चाहिए।

(५) पत्र भेजते समय ग्राहक को अपनी ग्राहक-संख्या, नाम और पूरा पता साफ़ साफ़ अक्षरों में लिखना चाहिए। उत्तर के लिए टिकट भेजना आवश्यक है।

(६) प्रकाशनार्थ भेजे जाने वाले लेख कागज के एक तरफ हाशिया छोड़ कर साफ अक्षरों में लिखे जाने चाहिए। लेख सम्बन्धी चित्र भी भेजे जा सकते हैं।

(७) नमूने की प्रति के लिए ।) का टिकट भेजना जरूरी है।

पता—मैनेजर, 'जीवन-सखा' कार्यालय, ८७, हिम्मतगञ्ज, इलाहाबाद

दमे के रोगियों को

एक नई आशा

योग-चिकित्सा का सहारा लीजिये—स्वास्थ्य-गृह में प्राकृतिक नियमों को पालन करते हुए अनेकों दमे के रोगियों ने नव जीवन प्राप्त किया है। शरीर तो नवीन होता ही है साथ साथ भारमय जीवन की भावना रोगी के मस्तिष्क से सदा के लिए अदृश्य हो जाती है और वह आध्यात्मिक सुख का अनुभव करता है। नीचे लिखे पते से नियमावली मंगाइये। पत्रोत्तर के लिए टिकट भेजना आवश्यक है।

मैनेजर-स्वास्थ्य-गृह

८७, हिम्मतगंज, इलाहाबाद

चश्मा छोड़िये

स्वास्थ्य-गृह में नेत्र-रोगों के लिए विशेष प्रबन्ध

स्थानीय यूनिवर्सिटी के एक विद्यार्थी लिखते हैं—"I have been cured of myopia by Dr. Sinha's method within a fortnight. Thanks to his insight in the treatment." S. Srivastava. विशेष विवरण के लिए नीचे लिखे पते से पत्र-व्यवहार कीजिये।

मैनेजर-स्वास्थ्य-गृह

८७, हिम्मतगंज, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी में प्रगतिशील साहित्य का एकमात्र प्रतिनिधि

हंस

जिसका प्रत्येक अंक किसी भी पत्रिका के विशेषांक से श्रेष्ठतर साहित्य से परिपूर्ण रहता है—क्योंकि हंस का प्रत्येक अंक साहित्य के लिए नई प्रेरणाएँ और नये संदेश लाता है; हंस हिन्दी साहित्य का ऐसा सजग और जागरूक नेता है जिसके पथ-प्रदर्शन में उसके वर्तमान और भविष्य का निर्माण हो रहा है। और हिन्दी के सजग पाठक उसके प्रति ऐसी ही श्रद्धा रखते हैं इसका उत्कृष्ट प्रमाण है गत अक्टूबर में प्रकाशित

कविता-अंक

की एक भी प्रति नहीं बची। आगे के अंकों की भी इतनी मांग है कि नियमित ग्राहक न रहनेवाले पाठकों को निराश रहना पड़ता है।

यदि आधुनिक साहित्य की प्रगति समझने के लिए हंस की प्रतियाँ रखने की अनिवार्यता बढ़ती जा रही है तो आप क्यों निराश हों ?

अपना चन्दा तुरन्त भेजकर ग्राहक क्यों नहीं बन जाते ?

हंस में आपको जो

- **कलापूर्ण कहानियाँ**
- **विवेचनात्मक लेख,**
- **सरस कवितायें,**
- **खरी आलोचनाएँ,**

पढ़ने को मिलेंगी वे आप अन्यत्र नहीं पा सकते। प्रत्येक रचना हिन्दी साहित्य की प्रगति को एक क़दम आगे बढ़ाती है, और एक नई टेकनीक, नई शैली और नई दृष्टि की ताज़गी से पाठक का ज्ञान-वर्धन और मनोरंजन करती है।

वार्षिक मूल्य ६), एक अङ्क का ।।)

व्यवस्थापक, 'हंस', बनारस कैंट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संस्कृति अङ्क ● दूसरा भाग

देश और विदेश के महान लेखकों ने 'विश्ववाणी' के संस्कृति अङ्क के लिये इतने अधिक और महत्त्वपूर्ण लेख भेजे हैं कि हमें संस्कृति अङ्क के और भाग प्रकाशित करने पड़ रहे हैं। जनवरी अङ्क के २०० पृष्ठों में तो भारतीय संस्कृति के ही पूरे लेख नहीं आ सके। इसलिये हमारा नम्र आयोजन है कि--

आगामी फ़रवरी अङ्क संस्कृति अङ्क का दूसरा भाग होगा

फ़रवरी अङ्क के लेखकों की सूची

१ संस्कृति तो है ही नहीं--जार्ज बर्नर्ड शा
२ संस्कृति का मूल आधार--अलबर्ट आइन्सटाइन
३ हमारे जीवन की संस्कृति--सर सर्वपल्ली राधा-कृष्णन
४ विज्ञान और भारतीय संस्कृति--सर सी. वी. रमन
५ भारतीय संस्कृति की नवचेतना--सर पी. एस. शिवस्वामी अय्यर
६ तलवार की संस्कृति--मेरिक डाड
७ अन्तर्राष्ट्रीय भाषा और राष्ट्रीय संस्कृतियाँ--अलबर्ट ग्यूरार
८ युद्ध और संस्कृति--श्री गोपाल हालदार
९ हम पीड़ित और शोषित निग्रो--और है हमारी भी संस्कृति--कुमारी ज़ोरा नील हर्स्टन
१० चीनी संस्कृति की नवचेतना--मेडम चियाङ्ग काइशेक
११ सोवियत् रूस में शिक्षा और संस्कृति--श्री बुद्ध देव वसु
१२ अरबी का वर्तमान और भविष्य--अलबर्ट वाइटन
१३ सर्व धर्म समभाव--स्वामी दरबारीलाल सत्यभक्त
१४ हिन्दू न्याय विधान--सर सीताराम पाटकर
१५ रणजीतसिंह--सर सफ़ात अहमद ख़ाँ
१६ हिन्दू मुसलमानों के लिये विचारणीय प्रश्न--
१७ हिन्दू मुसलिम भ्रातृ भाव--श्री चक्रवर्ती राज-गोपालाचारी
१८ नव व्यवस्था--श्री शंकर गणपतराव कोकने

इनके अतिरिक्त और अनेक लेख, सुन्दर कहानियाँ और रोचक एकांकी नाटक आदि होंगे

'विश्ववाणी' साहित्य की निर्मल गंगा है

देश के सभी विद्वानों की राय है कि 'विश्ववाणी' का एक एक अङ्क हिन्दी साहित्य की स्थायी वस्तु है। हिन्दी पाठकों का धार्मिक और पवित्र कर्तव्य है कि साहित्य के इस नव-निर्माण में वे 'विश्ववाणी' का हाथ बटायें।

आज ही पत्र लिखकर स्थायी ग्राहकों में अपना नाम लिखाइये

वार्षिक मूल्य ६)

एक अङ्क का ॥=)

मैनेजर, 'विश्ववाणी', इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विवाहोत्सवों पर उन्हें भेंट दीजिए !!

वर-वधुओं का पथ-प्रदर्शन करने वाला अमूल्य साहित्य !

१—दाम्पत्य जीवन

लेखक, श्रीरामनारायण 'यादवेंदु' बी० ए०, एल्-एल्० बी०। यह नवविवाहित दम्पतियों को आनन्द देने वाली अद्वितीय पुस्तक है। इस ग्रंथ में विवाह के उपरांत के गहन प्रश्न—आलिंगन, चुम्बन तथा सहवास आदि—पर बहुत ही मार्मिक एवं वैज्ञानिक विवेचन किया गया है। वैवाहिक जीवन को संसार में स्वर्ग बनाने वाली यह राष्ट्र-भाषा में केवल एक ही पुस्तक है। मूल्य सादी १), सजिल्द १।)

२—काम-विज्ञान

रचयिता, उदीयमान लेखक पंडित दीनानाथ व्यास, विशारद। इस विषय पर हिन्दी-भाषा में इने-गिने ग्रन्थ हैं, किन्तु उनमें वैवाहिक समस्याओं को समझाने की चेष्टा तक नहीं की गई। वैवाहिक शिक्षण, विषय का नैतिक धरातल, वैषयिक उत्कंठा, दांपतिक साम्य, सच्चा वैवाहिक जीवन आदि इनकी प्रमुख विशेषताएँ हैं। मूल्य सादी १), सजिल्द १।)

३—फूलों की सेज

लेखक, श्रीविजयबहादुरसिंह बी० ए०। इस अपूर्व पुस्तक में वयस्क युवक-युवतियों एवं नवविवाहित वर-वधुओं के हित की बातों का बड़ा ही मार्मिक वर्णन हुआ है। इसके मुख्य-मुख्य विषय ये हैं—यौवन, स्त्री-पुरुष के कर्तव्य-स्तन, ऋतु-धर्म, शय्या, समागम, अप्राकृतिक गमन, ऋतु-बाधा, प्रदर, हिस्टीरिया, वीर्य और आर्तव, गर्भाधान, वंध्यात्व, गर्भावस्था-समय, गर्भ रहने के लक्षण, दौर्हृद, गर्भ-प्रसव इत्यादि। पुस्तक तरुणियों के लिये जीवन-प्रदीप है। इसमें अश्लीलता, अभद्रता एवं कामासक्तता का लेश-मात्र भी समावेश नहीं। मूल्य सादी २), सजिल्द २।)

४—आदर्श पत्नी अर्थात इन्दिरा के पत्र

लेखक, श्रीरामनारायण 'यादवेंदु' बी० ए०, एल्-एल्० बी०। इस पुस्तक में नारी-हृदय और पुरुष-हृदय की ऐसी रहस्यमयी बातें बतलाई हैं कि जिनके समझे बिना दांपत्य विवाहित जीवन सुखी नहीं बन सकता। इसमें केवल-मात्र सिद्धांतों (Theories) का विवेचन नहीं है, प्रत्युत क्रियात्मक रूप से प्रत्येक विषय पर प्रकाश डाला गया है। पुस्तक सर्वथा शिष्ट, संयत और सुंदर भाषा में लिखी गई है। मूल्य १), सजिल्द १।।)

५—सुखी जीवन

लेखक, आचार्य श्रीचतुरसेन शास्त्री। प्रस्तुत पुस्तक में आचार्यजी ने अधिकार-पूर्ण सिद्धांतों का प्रतिपादन किया है। स्त्रियों का बचपन, उनका गार्हस्थ्य जीवन, उनकी तंदुरुस्ती आदि विषयों की जानकारी प्राप्त कर लेने पर स्त्रियाँ अपना जीवन निस्संदेह सुख-पूर्वक बिता सकती हैं। मूल्य सादी ।।), सजिल्द १)

मिलने का पता—गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय, लखनऊ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
१. मांशपेशियों और फुफ्फुस पर व्यायाम का प्रभाव—प्रो० भवानी प्रसाद, प्राकृतिक स्वास्थ्य शास्त्रोपाध्याय, कांगड़ी गुरुकुल विश्वविद्यालय, हरिद्वार	१२१
२. स्वस्थ रहने के लिए विश्राम—स्वर्गीय डा० सूर्यदेवसिंह	१२८
३. व्यायाम-प्रसार पर कुछ व्यावहारिक सुझाव—श्री जगेश्वर दयाल वैश्य, एम० ए०, बी० एस-सी०	१३४
४. बाल कवायद—राजरत्न प्रो० माणिकराव, बड़ोदा	१३६
५. शारीरिक विकास—सरदार पृथ्वीसिंह	१४३

अगले अङ्क में

१. आपकी आयु ?—श्री एस० मजूमदार
२. प्रसन्न रहने के १२ सरल नियम—
३. बापू—कुष्ठ रोगी की सेवा में—श्री प्रभुदयाल विद्यार्थी
४. भोजन सम्राट् सोयाबीन—श्री जगेश्वर दयाल वैश्य

एवं अन्य उपयोगी लेख

हिन्दी-कथा-साहित्य में यदि कलात्मक सरस सुरुचिपूर्ण कहानियाँ पढ़ना चाहते हैं तो केवल

कहानी

ही पढ़िये। अन्य बाज़ारू कहानी-मासिक-पत्रों की भाँति आपको इसमें विकृत साहित्य न मिलेगा। यह पत्रिका आपके बच्चे, बूढ़े, स्त्री-पुरुष सभी को रुचिकर और स्वस्थ सामग्री देगी। फिर भी इसका मूल्य सबसे सस्ता है।

सर्व-प्रशंसित विशेषांक या साधारण अंक की एक प्रति मँगा कर देखें।

साधारण प्रति चार आना : विशेषांक १९३९ चार आना

ताज़ा विशेषांक आठ आना : विशेषांक १९४० चार आना

वार्षिक तीन रुपये

कहानी की प्रतियाँ सरस्वती-प्रेस बुकडिपो, अमीनुद्दौला पार्क लखनऊ, चौक बनारस तथा कामताप्रसाद कक्कड़ रोड, इलाहाबाद से भी मिल सकेंगी।

व्यवस्थापक 'कहानी', बनारस कैंट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संयुक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त तथा बिहारप्रान्त के शिक्षाविभागों द्वारा स्वीकृत

परिशिष्टांक

फरवरी १९४२

जीवन-सखा

वर्ष ७ संख्या २

मांसपेशियों और फुफ्फुस पर व्यायाम का प्रभाव

प्रो० भवानीप्रसाद, प्राकृतिक स्वास्थ्य-शास्त्रोपाध्याय, कांगड़ी गुरुकुल विश्वविद्यालय, हरिद्वार

व्यायाम का शरीर के समस्त अवयवों पर प्रभाव पड़ता है, इसीलिए शारीरिक निर्माण तथा विकास के लिए इसका बड़ा महत्त्व है। हमारी मांसपेशियाँ किस प्रकार की हैं, उनके कार्यों का संचालन किस तरह होता है आदि बातों के सविस्तर विवेचन के साथ ही मांसपेशियों और फेफड़े पर पड़ने वाले व्यायाम के प्रभाव का इसमें वर्णन किया गया है।—सं०

मनुष्य की मांसपेशियाँ और अस्थियाँ मिलकर मनुष्य-देह के यन्त्र में उत्थापन दण्ड (Levers) का काम देती हैं। उनके द्वारा देह चलता फिरता है और उसमें सब प्रकार की गतियाँ होती हैं। प्रत्येक मांसपेशी एक जीवित यन्त्र है तथा प्रत्येक अस्थि उत्थापन दण्ड (Lever) या आधार दण्ड (Fulcrum) है। मनुष्य-देह प्रत्येक मांसपेशी या मांसपेशियों के समूह को किसी क्रिया के सम्पादन के लिए अपने प्रयोग में लाता है। ऐच्छिक मांसपेशियों (Voluntary muscles) के पाँच सौ, युग्म (जोड़े), शरीर से होने वाली क्रियाओं के करने के लिए दो सौ अस्थियों पर काम करते हैं।

मांसपेशियों का त्वचा और शारीरिक क्रियाओं से सम्बन्ध

ऐच्छिक मांसपेशियों (Voluntary muscles) के अतिरिक्त, जो हमारे शरीर के प्रायः आधे भाग का निर्माण करती हैं, अनैच्छिक मांसपेशियाँ (Involuntary muscles) भी हैं, जो हमारी इच्छा के बिना अपना कार्य स्वाधीनता से करती रहती हैं। इन अनैच्छिक मांसपेशियों की संख्या अकल्पनीय है—असंख्य है। हमारी त्वचा छोटी-छोटी मांसपेशियों का बना हुआ एक प्रकार का जाल है। हमारे प्रत्येक बाल तथा रोम में एक छोटी-सी मांसपेशी लगी हुई है। इसीसे बाल खड़ा होता या रोमाञ्च होता है। हमारा आमाशय भी मांसपेशियों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की एक थैली है। हमारी आँतें मांसपेशियों की एक लम्बी नली हैं। हमारे फुफ्फुस (फेफड़ों) की वायु प्रणालियों में भी मांसपेशियों से निर्मित भित्तियाँ हैं। प्लीहा (Spleen) और अन्य आभ्यन्तरीय अङ्गों में भी मांसपेशियाँ हैं। हृदय (Heart), जो देह के रक्त-संचार का बड़े पम्प वाला इंजिन है, मांसपेशियों की विलक्षण रचना है।

ऐच्छिक और अनैच्छिक मांसपेशियाँ

ये सब ऐच्छिक और अनैच्छिक मांसपेशियाँ वात नाड़ियों के प्रभाव से सिकुड़ती और फैलती रहती हैं। ऐच्छिक मांसपेशियाँ हमारी इच्छा-शक्ति की सेविका हैं और उसको स्वकार्य-साधन में समर्थ बनाती हैं। हाथ की मांसपेशियों का आश्चर्यजनक अभ्यास किसी वाद्य यन्त्र के बजाने, चित्रकारी आदि विविध कलाओं में दिखाई देता है। हृदय को प्रकम्पित कर देनेवाली शब्द-ध्वनि, तथा किसी राग के मधुर स्वर, मांसपेशियों की क्रिया पर निर्भर हैं। यह बात हमारे जीवन की प्रायः सभी दिशाओं में समान रूप से लागू है। हमारे मुख-मण्डल की छवि में वे आकस्मिक परिवर्तन, जिनको हम 'इङ्गित' या 'चेष्टित' कहते हैं, हमारी पेशल मांसपेशियों की उस लीला के ही कारण होते हैं, जिनके द्वारा मुख की त्वचा में संकोचन या विस्तारण क्रिया आवश्यकतानुसार होती हैं। ऐच्छिक मांसपेशियों के बिना मनुष्य यदि जीवित भी रहे, तो भी वह अपने विचार या भावनाओं को प्रकट करने या उन्हें दूसरों तक किसी भी प्रकार पहुँचाने में सर्वथा असमर्थ ही रहेगा।

मांसपेशियाँ किस तरह कार्य करती हैं

देह की मांसपेशियों, या जिन अस्थि-कण्टकों (Bony prominences) पर वे लगी हुई हैं, उन सब के पृथक्-पृथक् नामों के जानने की अपेक्षा यह जान लेना अधिक आवश्यक है कि मांसपेशियाँ किस प्रकार काम करती हैं और मांसपेशियों की क्रियाओं का जीवन के महत्त्वपूर्ण व्यापारों और शरीर से साधारणतः क्या सम्बन्ध है। जब कोई मांसपेशी इच्छा के अधीन कोई क्रिया करती है, तो वह उसके संकोचन द्वारा सम्पादित होती है। संकोचन के साथ ही उसमें स्थूलता भी आ जाती है; किन्तु उसमें (मांसपेशी) में जो विलक्षण परिवर्तन होते हैं, वे दृष्टगोचर नहीं होते। मांसपेशी में संकोचन के समय पीलापन हो सकता है; किन्तु ज्योंही वह काम करने लगती है, उसकी रक्तवाहिनी धमनिया (Arteries) फैल जाती और रक्त से भर जाती हैं। क्योंकि क्रिया के लिए आवश्यक सामर्थ्य (Energy), मांसपेशी को रक्त से ही प्राप्त होता है। क्रिया करती हुई मांसपेशी में अन्य मांसपेशियों की अपेक्षा उष्णता अधिक होती है। इसका कारण यह है कि मांसपेशी के संकोचन के साथ सदैव उसमें ताप की भी उत्पत्ति होती है। और यह ताप मांसपेशी में एकत्रित और रुधिर के द्वारा उसमें लाए गए किन्हीं द्रव्यों के दहन (जलने) से उत्पन्न होता है।

श्रान्ति (थकावट)

जब मांसपेशियों का कोई समूह, उदाहरणार्थ पैर की मांसपेशियाँ, किसी क्रिया में तत्पर होती हैं, जैसे जब वे कूदने या दौड़ने का कार्य करती हैं, तो इन क्रियाओं को करने वाला व्यक्ति बहुत शीघ्र हाँफने लगता है—उसका श्वास फूलने लगता है। यह एक प्रकार की श्रान्ति (थकावट) है। इसका कारण यह है कि जब कोई मांसपेशी क्रियाशील होती है तो वह उस समय अपने में परिभ्रमण करते हुए रक्त में भारी मात्रा में कर्बन द्वयोषिद (Carbonic acid gas) मात्रा उत्पन्न करती है। यह कर्बन द्वयोषिद् देह के लिए विष है और उसे फेफड़ों से होकर शीघ्र देह से बाहर निकल जाना चाहिए। रुधिर में उत्पन्न हुए इस गैस की मात्रा जितनी अधिक होती है, उतने ही अधिक वेग से क्रिया में प्रवृत्त व्यक्ति हाँफने लगता है और उसके श्वास की गति उतने ही वेग और तीव्रता से बढ़ जाती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। उग्र व्यायाम के प्रभाव से व्यायाम करने वाले व्यक्ति के फुफ्फुस, वक्षस्थल की बलवती गतियों के द्वारा अपने भरसक अवकाशानुसार फैल जाते हैं। किसी अन्य क्रिया की अपेक्षा उग्र व्यायाम द्वारा उत्तेजित श्वास की गति अधिकतर गहरी होती है। इसका कारण यह है कि यह श्वास-गति उन स्नायु-केन्द्रों (Nerve centres) के अनिवार्य आदेश के पालन के लिए होती है जिनके द्वारा ऐच्छिक शक्ति फुफ्फुसों का नियन्त्रण करती रहती है।

यदि व्यायाम में उग्रता कम हो, और वह दीर्घकाल तक किया जाय तो उसे करने वाले व्यक्ति का श्वास शीघ्र न फूलेगा; किन्तु कुछ समय के बाद मांसपेशियाँ इतनी थक जायँगी कि उस मनुष्य का हिलना डुलना कठिन, और कदाचित् असम्भव भी, हो जायगा। यह श्रान्ति (थकावट) मांसपेशियों में एकत्रित सामर्थ्य के संग्रह के व्यय हो चुकने के कारण नहीं होती है, किन्तु उन विष-द्रव्यों की उत्पत्ति ही उसका कारण है, जो मांसपेशियों की क्रिया के परिणाम स्वरूप उत्पन्न हुए हैं। उनमें मांस-पेशियों को निष्कर्मण्य या शिथिल कर देने का गुण है। यदि थक जाने वाला मनुष्य कुछ समय तक विश्राम कर ले तो उसकी थकावट दूर हो जायगी। उसके विश्रान्ति कारक विष उसके रक्त में से बाहर निकल जायँगे। इसके पश्चात् उक्त व्यायाम को पुनः किया जा सकता है।

पश्चात् श्रान्ति (बाद की थकावट)

लम्बे और उग्र, विशेषतः अनभ्यस्त, व्यायाम के अनन्तर किसी मनुष्य की मांसपेशियों में पीड़ा और कठोरता, भारी श्रान्ति के साथ अनुभव होने लगती है। और यदि व्यायाम बहुत ही उग्र और बहुत लम्बे काल तक किया गया है तो उसे ज्वर भी चढ़ आता है। ये चिन्ह, साधारणतः व्यायाम के कुछ घंटे और शायद एक दिन उससे भी अधिक समय तक प्रकट नहीं होते। इस तरह की श्रान्ति को ही पश्चात् श्रान्ति या बाद की थकावट कहते हैं।

स्वल्पकालीन व्यायाम की थकावट बहुत शीघ्र दूर हो जाती है। वह प्रायः कुछ ही मिनट में लुप्त हो जाती है। जितने अधिक काल तक और जितना अधिक परिश्रम किया जायगा उससे प्रकृतिस्थता की प्राप्ति के लिए उतने ही अधिक काल तक विश्राम की आवश्यकता होगी। कभी कभी व्यायाम में इतनी अति हो जाती है कि उसकी श्रान्ति से मृत्यु तक हो सकती है। दौड़ लगाने वाले कभी-कभी दौड़ के अन्त में गिर कर मर भी जाते हैं। घुड़दौड़ के घोड़े भी इसी कारण से कभी-कभी अकस्मात् मर जाते हैं। सन्देशवाहक कबूतर बहुधा अपनी तेज उड़ान के पश्चात् श्रान्ति से मर कर भू-शायी हो जाते हैं। इन अवस्थाओं में अतिक्रियाशील मांसपेशियों से समुत्पन्न श्रान्ति-विष का सवेग संचय ही मृत्यु का कारण होता है। श्रान्ति ही सदैव विषाक्तीकरण का कारण होती है, फिर चाहे वह श्रान्ति स्थानिक हो या साधारण।

यह उल्लेखनीय है कि मांसपेशी के किसी भी भाग के व्यायाम से साधारण श्रान्ति उत्पन्न हो सकती है, उदाहरणार्थ भागने से बाहु में थकावट आ सकती है, यद्यपि इस व्यायाम में बाहु से कोई श्रम नहीं लिया गया है।

मस्तिष्क और वात नाड़ियाँ भी दीर्घकाल तक मांसपेशियों के श्रम से थक जाते हैं। यह बता देना भी आवश्यक है कि किसी मनुष्य को केवल उसी व्यायाम के करने से थकावट होती है, जिसका उसको अभ्यास नहीं है। जब किसी काम का अभ्यास हो जाता है, तो वह कम थकावट या शायद बिना थकावट के भी किया जा सकता है। और उसके करने में कर्बन द्वयोषिद् की जो स्वल्प मात्रा उत्पन्न होती है, उससे यह प्रकट होता है कि मांसपेशी को कम काम करना पड़ा है।

व्यायाम और श्वसन-क्रिया

यह बताया जा चुका है कि व्यायाम और विशेषतः उग्र परिश्रम श्वास की गति को बहुत बढ़ा देता है और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उससे श्वास की गहराई में भी वृद्धि हो जाती है। ऐसा करने से आरम्भ में श्वास लेने में कुछ कठिनाई होती है; किन्तु कुछ ही समय पीछे जब श्वास स्थिर हो जाता है—हाँफना बन्द हो जाता है—तो श्वास आसानी के साथ लिया जा सकता है। इसका कारण यह है कि फुफ्फुसों के प्रत्येक भाग के पूरी तौर से फैलने में उनके सभी भागों को काम करना पड़ता है। इससे हमें एक महत्त्वपूर्ण शिक्षा मिलती है। वह यह है कि साधारण श्वास लेने से फेफड़ों के प्रत्येक भाग को काम नहीं करना पड़ता और इसलिए फुफ्फुस रोगी हो जाते हैं। इस दुष्परिणाम से बचने के लिए हमें प्रति-दिन ऐसे व्यायामों के द्वारा उनसे पूरा काम लेना चाहिए जिनमें गहरे और भरे हुए श्वास लेने की आवश्यकता होती है। ऐसे व्यायाम प्रतिदिन कई बार करने चाहिएँ। प्राणायाम इस कार्य के लिए सर्वोत्तम साधन है। इसीलिए प्रतिदिन प्रातः सायं के सन्ध्योपासन का एक आवश्यक अंग प्राणायाम भी है।

खुली वायु में दौड़ लगाना या तीव्र गति से टहलना फुफ्फुसों के आवश्यक पूर्ण विस्तार का उत्कृष्ट उपाय है। यदि किसी को इस कार्य का सुभीता न हो तो कमरे के भीतर व्यायाम करने से भी यह उद्देश्य सिद्ध हो सकता है किन्तु व्यायाम के कमरे के वातायन वायु के स्वतन्त्र संचार के लिए खुले रहने आवश्यक हैं। कमरे के आस-पास दौड़ लगाने की भी आवश्यकता नहीं। दौड़ का प्रयोजन इस प्रकार भी पूरा हो सकता है कि किसी स्थान में पहले एक पैर पर बोझ डालते हुए उससे फुदकते हुए चला जाय; उसके पश्चात् दूसरे पैर पर भार देकर उसे संचालित किया जाय। उपर्युक्त काम न करने वाली टाँग को पीछे की ओर उठाए रखना चाहिए। फेफड़ों के व्यायाम के लिए अन्य क्रियाशील गतियों से भी काम लिया जा सकता है, किन्तु टाँगों की क्रियाशील गतियाँ इस कार्य के लिए सबसे अधिक उपयोगी हैं। हाँफने की सीमा तक दौड़ लगाना ४५ वर्ष से ऊपर के मनुष्यों के लिए हानिकारक हो सकता है। जिन मनुष्यों को भ्रमण या दौड़ का अभ्यास है या जो प्रतिदिन या सप्ताह में कई बार पर्वतारोहण करते हैं, वे बैठे रहने वाले मनुष्यों की अपेक्षा सोते हुए भी अधिक गहरे श्वास लेते हैं। इससे उनके फेफड़ों में ओषजन (आक्सीजन) का अधिकतर प्रवेश होता है और उससे उनको अपने सारे शरीर की समुन्नति का अधिक अवसर मिलता है।

व्यायाम से पाचन में सहायता

व्यायाम से क्षुधा की उत्पत्ति, पाचन-रसों के निकास की वृद्धि और आँतों की आकुञ्चन-गति में तीव्रता आ जाने से पाचन में सहायता मिलती है। बाइबिल में आदेश किया गया है कि मनुष्य को अपनी रोटी अपने पसीने से कमाना चाहिए। इसका आशय यही है कि मनुष्य अपनी मांसपेशियों से परिश्रम करे। जो मनुष्य पसीने से बचते हैं या जो नित्य के व्यायाम की उपेक्षा करते हैं उनको अस्वस्थ रहने का दण्ड मिलता है। किसी महात्मा का कथन है कि जो मनुष्य कर्मशील नहीं है, उसे भोजन भी न करना चाहिए। प्रकृति भी निठल्ले पड़े रहने वालों की भूख और पाचन-शक्ति नष्ट करके यही शिक्षा देती है। अकर्मण्य मनुष्य खाने और पचाने की शक्ति रखता हुआ भी अपने शरीर में अनावश्यक और अनुपयुक्त या विजातीय द्रव्य का संग्रह करके अपने स्वास्थ्य को बिगाड़ता है, क्योंकि यह विजातीय द्रव्य मनुष्य के चेतन यन्त्रों के पुर्जों में चिपट जाता है और उसके रक्त को विष से भर देता है। इससे उसके देह की रोग-प्रतिरोधिनी शक्ति घट जाती है। प्रकृति इस भय के निवारणार्थ मनुष्य की क्षुधा का अपहरण कर लेती है और उसकी पाचन-शक्ति घटा देती है। जब कोई आलसी या बैठे रहने का अभ्यासी मनुष्य प्रकृति प्रदत्त रक्षा के इस साधन को मिर्च मसालों के द्वारा रसना को उत्तेजना प्रदान करके या नित्य नाना प्रकार के उत्तेजक आहार खा कर दूर फेंक देता है, तो वह परम पिता परमात्मा का विरोध करता है और उसकी आज्ञा के उल्लंघन का दण्ड उसको अवश्य भोगना पड़ता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मांसपेशियों का विकास

मांसपेशियों का विकास यद्यपि उनके व्यायाम द्वारा प्राप्त होने वाला सबसे बड़ा लाभ नहीं है, तो भी वह एक आवश्यक लाभ तो अवश्य ही है। उसके द्वारा मांसपेशियों के विकास के साथ-साथ जो शारीरिक शक्ति में साधारण वृद्धि होती है, वह मनुष्य को लगातार घेरे रहने वाले उसके जीवन के रोगरूपी शत्रुओं से युद्ध करने के लिए प्रतिरोधिनी शक्ति के रूप में बहुत सहायता पहुँचाती है। मनुष्य की दृढ़ मांसपेशियाँ उसके दृढ़ हृदय का प्रमाण हैं क्योंकि मांसपेशियों के व्यायाम से अवश्य ही हृदय का भी विकास होता है। दृढ़ हृदय दृढ़ रक्त संचार और देह के प्रत्येक भाग में पर्याप्त मात्रा में रक्त पहुँचाने की गारंटी करता है।

मनुष्य की मांसपेशियों में उसके शरीर की अन्य रचना से यह भेद है कि मांसपेशियाँ काम करने से किसी निश्चित सीमा तक अधिकाधिक दृढ़ होती जाती हैं। कई व्यक्तियों में तो मांसपेशियों के विकास का विलक्षण सामर्थ्य होता है। उदाहरणार्थ डा० विन्शिप (Dr. Winship) ने नियमित व्यायाम के अभ्यास से दो हजार आठ सौ पौंड (३५ मन) का भार उठाने का सामर्थ्य प्राप्त कर लिया था और कनाडा-निवासी सेन्ट साइर (St. Cyr) महाशय तो इससे भी बढ़ गए थे अर्थात् वे उनसे एक हजार पौंड अधिक वजन उठा लेते थे, किन्तु ये दोनों महाशय युवावस्था में ही अकाल मृत्यु का ग्रास बन गए और उन्होंने अपनी मांसपेशियों के इस विलक्षण और कदाचित् विनाशक विकास से कुछ भी लाभ प्राप्त नहीं किया था। प्रायः प्रत्येक व्यवसाय में मांसपेशियों का विकास बहुत लाभदायक है और जीवन की प्रत्येक दिशा में उससे उस शारीरिक बल और कार्य-शक्ति का आधार प्राप्त होता है, जो अकल्पनीय मूल्य की चेतनामयी पूँजी है।

बाहुओं और पैरों की मांसपेशियों के विकास की अपेक्षा मध्य काय (धड़) की मांसपेशियों का विकास

२

अधिक महत्त्वपूर्ण है। वक्षस्थल की मांसपेशियों का विकास फुफ्फुसों की स्वस्थ क्रिया के लिए आवश्यक है। उदर की मांसपेशियों का विकास उदरस्थ अङ्गों को यथा स्थान स्थित रखने और श्वसन-क्रिया में सहायता के लिए आवश्यक है। पृष्ठ भाग (पीठ) की दृढ़ मांसपेशियाँ शरीर के स्वास्थ्य युक्त आसन (बैठक) को बनाए रखने के लिए आवश्यक हैं। ठीक-ठीक आसन से बैठना, फुफ्फुसों की क्रिया और वक्षस्थल तथा उदर के सभी भागों के स्वस्थ संचालन के लिए अनिवार्य है। पृष्ठ (पीठ) की मांसपेशियों के विकास में प्रमाद से श्वसन-क्रिया के अङ्ग (श्वसन-संस्थान) और उदरस्थ पेशियों में दौर्बल्य आ जाता है और उससे विविध प्रकार की दैहिक कुरूपताएँ, यथा—चपटी और धँसी हुई छाती, उभरे हुए गोल कन्धे, मेरुदण्ड की वक्रता (टेढ़ापन) और विविध आभ्यन्तरीय अङ्गों की स्थान-च्युति उत्पन्न होती हैं। ये कुरूपताएँ कुछ तो अप्राकृतिक आसनों या शरीर की स्थितियों से और स्त्रियों में अधिकांश तंग परिच्छदों (वस्त्रों) से उत्पन्न होती हैं। तंग वस्त्र मध्यकाय की समुचित क्रिया में बाधक होते हैं।

उभरे हुए कन्धे और चपटी छाती

ये कुरूपताएँ बहुत ही साधारण हैं। जिस मनुष्य की छाती चपटी और भीतर को धँसी हुई होगी, उसके कंधे भी उभरे हुए होंगे अर्थात् ये दोनों बातें साथ-साथ होती हैं। उसी मनुष्य के कन्धे उभरे हुए रहते हैं, जो अपनी छाती को आगे की तरफ निकली हुई रखने के बजाय पीछे को झुकी हुई रखता है। यह कुरूपता निर्बल छाती या संकीर्ण छोटे फेफड़ों की ही सूचक नहीं है, किन्तु उससे यह भी प्रकट होता है कि ऐसी छाती वाले मनुष्य की पृष्ठ (पीठ) की मांसपेशियाँ निर्बल हैं और उसको झुक कर या शिथिल स्थिति में बैठने का अभ्यास पड़ गया है। इस अभ्यास का जन्म स्वभावतः गर्दन झुका कर बैठने या काम करने की आदत के परिणाम-स्वरूप होता है। अधिकांश मनुष्य जो अधिक बैठे रहते हैं या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिनका व्यवसाय उनको झुक कर बैठने के लिए विवश करता है, वे उभरे हुए कन्धे वाले होते हैं। यह दशा अपने व्यवसाय के लिए बाहर रहने वाले किसानों में भी लेखकों, विद्यार्थियों और व्यापारियों के समान विद्यमान है। इसका कारण यह है कि किसानों में भी बैल आदि हाँकने या अपने कार्य से निवृत्त होकर विश्राम लेने के समय झुक कर बैठने का प्रमाद पूर्ण कुटेव पड़ा हुआ है। बहुत से मल्लों (पहलवानों) के कन्धे भी उभरे हुए होते हैं। इसका कारण भी स्वस्थ आसन से बैठने में उनका प्रमाद ही है। इस कुरूपता से मनुष्य का देह ही निर्बल और सौन्दर्य-रहित नहीं होता है, किंतु इससे उसकी श्वसनक्रिया का सामर्थ्य भी घट जाता है और उसके फेफड़ों का ऊपरी भाग काम नहीं करता है या इस प्रकार क्षय (Consumption) और अन्य रोगों का निमन्त्रण मिलता है। यह रोग निर्बल और निष्क्रिय फेफड़ों के तंतुओं में रहने वाले कीटाणुओं से उत्पन्न होते हैं।

जिन मनुष्यों के चिपटी छातियाँ और उभरे हुए कन्धे हों उनको कठोर बिस्तरों पर सिर के नीचे पतली तकिया लगा कर या बिना तकिए के ही पीठ के बल सोना चाहिए।

निर्दोष तथा सदोष आसन की स्थिति

जब कोई मनुष्य छाती को चिपटी करके और कन्धों को उभार कर बैठता है तो उसके मध्यकाय (धड़) की मांसपेशियाँ शिथिल (ढीली) पड़ जाती हैं। वक्षोऽस्थि या उरः फलकम् (Sternum) और पर्शुकाएँ (पसलियाँ) भीतर की ओर दब जती हैं। उसका परिणाम यह होता है कि आमाशय (Stomach), यकृत (Liver) और अन्य उदरस्थ अंग नीचे की ओर को ढुलक जाते हैं। उदर की मांसपेशियाँ ऐसी शिथिल (ढीली) पड़ जाती हैं कि वे उदर के अंगों को सहारा नहीं दे सकती हैं और इसके अवश्यम्भावी परिणामस्वरूप रुधिर-संघात (Conjestion) होता है। इससे देर से या शीघ्र यकृत, आमाशय, आंत्र (Bowels) और अन्य उदरस्थ अंगों के रोगों का प्रादुर्भाव अवश्य होता है।

जब कोई मनुष्य सीधा बैठता है तो उसकी छाती उभर कर तन जाती है, पेट की मांसपेशियाँ भीतर को खिंच जाती हैं, आभ्यन्तरीय अंग अपने अपने स्थान में स्थिर रहते हैं। इन अंगों के रक्त-संचार में क्रियाशीलता बनी रहती है तथा वे अपना अपना कार्य स्वाभाविक दशा में करते रहते हैं।

कटिशूल, पार्श्व पीड़ा, शिरोवेदना, अजीर्ण आदि तरह तरह के रोग लोगों को बहुत कष्ट देते हैं और उनसे त्राण पाने के लिए नाना प्रकार की औषधियों का सेवन करते हैं। किन्तु उनसे वास्तविक लाभ बहुत कम होता है। यह रोग बहुधा शरीर को ठीक स्थिति में न रख कर बैठने से ही उत्पन्न होते हैं। यदि बैठने की इस सदोष स्थिति को ठीक कर लिया जाय और गहरे और खींच कर श्वास लेने के साथ सीधा बैठने की आदत डाली जाय तो इतने से ही बहुत से रोग चले जायँ। देह की कई कुरूपताओं के सुधारने का सर्वोत्तम साधन शरीर को ठीक स्थिति में रखना है और इसका बहुत बड़ा महत्त्व है। माता-पिता और अध्यापकों को चाहिए कि वे अपने संरक्षित बालकों को सीधा होकर बैठने की शिक्षा दें और उनसे अपने सिर यथासम्भव ऊँचा करके बैठने का अनुरोध करते रहें।

यह भी स्मरण रखना चाहिए कि बैठने की दशा में नीचे नहीं झुकना चाहिए; सदैव सीधा और तन कर बैठना चाहिए। छाती को उन्नत रखना चाहिए और उदर की मांसपेशियों को भीतर को खींचे रहें। इस स्थिति के लिए आरम्भ में सावधानी के साथ प्रयत्न करने की आवश्यकता होती है। यदि कुछ काल तक प्रतिदिन उक्त प्रकार से बैठने का प्रयत्न किया जाय तो इसका अभ्यास हो जाता है और उसके द्वारा स्वास्थ्य-समुन्नति के बहुत से लाभ प्राप्त होते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मांसपेशियों के विकास और व्यायाम से होने वाले लाभों की प्राप्ति के लिए शारीरिक परिश्रम से बढ़कर अन्य कोई उपाय नहीं है। इसलिए हमें दैनिक घरेलू कार्य स्वयं करते रहना चाहिए और उन कार्यों के लिए नौकरों पर निर्भर न रहना चाहिए। किन्तु इन कार्यों के करते हुए भी देह को ठीक स्थिति में रखना कभी न भूलना चाहिए। बालकों के लिए बाहर खेल-कूद, छोटे-छोटे फल और शाक-पात बोने तथा घर की स्वच्छता में सहायता पहुँचाने के काम बहुत अच्छे व्यायाम हैं। वृद्ध पुरुषों को पर्याप्त मात्रा के व्यायाम की आवश्यकता है। किन्तु उनको उग्र व्यायामों से बचे रहने की सावधानी रखनी चाहिए, जिससे उनके शरीर पर परिश्रम का भारी बोझ न पड़े और उनका श्वास न फूल जाय। वक्षःस्थल की भित्ति कठोर होती है और युवा पुरुषों के सदृश वृद्ध पुरुषों के फेफड़ों में फैलने का सामर्थ्य नहीं होता उनका हृदय भी शीघ्र अति श्रान्त हो जाता है। किन्तु व्यायाम के अभ्यासी वृद्ध पुरुषों को व्यायाम से थकावट नहीं मालूम होती और उनको अति परिश्रम से तत्काल हानि नहीं पहुँचती है। परन्तु कुछ समय के बाद उनको भी उससे होने वाली हानि का पता लग जाता है। मित व्यायाम में जितने गुण हैं अति व्यायाम में उतने ही दोष हैं। स्त्रियों को भी हलका व्यायाम करना चाहिए। स्त्रियों और वृद्ध पुरुषों के लिए प्राणायाम बहुत हितकर है।

व्यायाम की तीन श्रेणियाँ—मृदु व्यायाम, मर्यादित व्यायाम और उग्र व्यायाम—हैं। मृदु व्यायाम से न तो श्रान्ति होती है और न उसमें श्वास फूलता है। मर्यादित व्यायाम वह है, जिसको पर्याप्त समय तक करने से श्रान्ति तो हो जाय किन्तु श्वास न फूले। उग्र व्यायाम करने से श्वास फूल जाता है और यदि इसको लगातार किया जाय तो मनुष्य बहुत बेहाल हो जाता है। मृदु व्यायाम निर्बल पुरुषों के लिए उपयोगी है। उग्र व्यायाम की आज्ञा केवल उन युवा और प्रौढ़ पुरुषों को है, जो अपने जीवन भर यथासाध्य व्यायाम के अभ्यासी रहे हैं। मर्यादित व्यायाम का विधान श्वास-समुन्नति के लिए प्रत्येक श्रेणी के मनुष्यों को है। यह न समझना चाहिए कि गहरी श्वसन-क्रिया उत्पन्न करने वाले व्यायाम हानिकारक हैं। व्यायाम से उत्पन्न होने वाले लाभों में प्रगाढ़ श्वसन-क्रिया सर्वोत्तम लाभ है। श्वास फूलने और गहरे श्वास लेने में सावधानी रखनी चाहिए।

भ्रमण से पर्याप्त व्यायाम हो जाता है, किन्तु मन्द-मन्द टहलने से साधारण स्वाथ्य के मनुष्यों की पेशियों को बहुत कम मेहनत करनी पड़ती है। जब टहलने की गति प्रति घंटा ५ या ६ मील तक कर दी जाय, तो मांसपेशियों का श्रम पर्याप्त हो जाता है।

इस लेख का सारांश यही है कि स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए बाल, वृद्ध, युवा, वनिता प्रत्येक मनुष्य को अपनी शक्ति के अनुसार कुछ न कुछ शारीरिक श्रम अवश्य करते रहना चाहिए। भगवती श्रुति का भी यही आदेश है—

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छत ँ समाः

(यजु०, अध्याय ४०, मं० २.)

अर्थात् मनुष्य कर्म करता हुआ ही सौ वर्ष जीने की इच्छा करे!

सचित्र हठयोग

लेखक—स्वामी शिवानन्द सरस्वती

जनरल प्रिंटिंग वर्क्स, कलकत्ता से प्रकाशित प्रस्तुत पुस्तक आसन-व्यायाम सम्बन्धी एक अभूतपूर्व देन है। इस ग्रन्थ के अध्ययन से सर्वसाधारण सुगमता पूर्वक शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक बल तथा उन्नति प्राप्त कर सकते हैं। साथ ही इसमें विभिन्न रोगों के लिए आसन, प्राणायाम तथा अन्य यौगिक क्रियाओं की सरल विधियाँ भी दी गई हैं। पुस्तक की उपयोगिता इसकी एक प्रति मँगा कर ही जानी जा सकती है।

पुस्तक मिलने का पता—**मैनेजर, प्राकृतिक स्वास्थ्यगृह, ८७ हिम्मतगंज, इलाहाबाद**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वस्थ रहने के लिए विश्राम

स्वर्गीय डा० सूर्यदेव सिंह

हमारे शरीर के लिए जितना आवश्यक व्यायाम है उतना ही विश्राम भी। अनुभवी लेखक ने इस लेख में बताया है कि दिनभर के परिश्रम से थके-माँदे घर लौटने पर रात में सो जाना ही विश्राम नहीं है। विश्राम का वस्तुतः क्या अर्थ है तथा हमारे सुखी जीवन के लिए इसका कितना महत्त्व है, यह इस लेख में पढ़िए। --सं०

जिस तरह हवा, पानी, भोजन इत्यादि जीवन-धारण के लिए आवश्यक हैं, उसी तरह विश्राम भी है। प्रकृति के अनेक कानूनों में से यह भी एक बड़ा कानून है जिसे प्रत्येक प्राणी को मानना जरूरी है। विश्राम की विशद व्याख्या की आवश्यकता हमें यहाँ प्रतीत नहीं होती क्योंकि इसके मूल अर्थ से सभी परिचित हैं, गूढ़ार्थ से भले ही परिचित न हों। विश्राम का अर्थ यह कदापि नहीं कि काहिल बन कर बिस्तर पर लेटे रहें और किसी तरह का काम न करें। बल्कि विश्राम का मतलब यह है कि दैनिक काम और मेहनत के बाद शरीर और मन को ढीला करना। अर्थात् शरीर और मन को पूर्ण छुट्टी देना ही विश्राम कहलाता है। परिश्रम करने के बाद कोई दिल-चस्प खेल खेलना, टहलना, मन बहलाव के लिए कुछ पढ़ना अथवा अपनी रुचि विशेष (Hobby) के अनु-सार कोई चीज बनाना आदि भी विश्राम के ही अन्तर्गत आते हैं। मनुष्य को ऐसा करना चाहिए जिससे मस्तिष्क एवं शरीर के सारे अंग और सारी नसों का पूर्ण रूप से शिथिलीकरण (Relaxation) हो जाय और इस प्रकार पूर्ण शान्ति प्राप्त करके ताजगी का अनुभव करें। अर्थात् काम करते करते जो मानव शरीर की शक्ति (Energy) नष्ट हो गई है वह विश्राम के द्वारा शरीर में लाई जाय, आराम या विश्राम का यही उद्देश्य है।

रोगियों को तो और भी ज्यादा आराम या विश्राम की आवश्यकता है। क्योंकि रोग होने का मतलब है कि शरीर या मन विश्राम चाहता है। नए रोग (Acute disease) में काफी विश्राम की उतनी आवश्यकता नहीं पड़ती जितनी कि पुराने रोग (Chronic disease) में। इस रोग में अगर पूर्ण विश्राम (Complete rest) नहीं हुआ तो रोग शीघ्र जायगा ही नहीं। इस तरह के रोगियों के लिए उनके शरीर और मस्तिष्क का पूर्ण शिथिलीकरण होना ही चाहिए। इस तरह के रोग उत्पन्न होने का खास कारण यह है कि हमने अपने मन, पेट, हाथ-पाँव इत्यादि को कभी भी विश्राम नहीं दिया है अर्थात् उसे लोहे की मशीन समझ कर दिन-रात उससे काम लिया है। अतः शरीर रूपी मशीन जर्जरित होकर भयंकर रोग का शिकार हुआ है।

यूरोप में क्या बूढ़े, क्या जवान, क्या धनी, क्या गरीब, सभी ने अपने दैनिक कार्यों के लिए समय निर्धा-रित कर रक्खा है; प्रतिदिन आठ घंटे काम करने का आठ घंटे सोने का तथा आठ घंटे विश्राम करने का।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यही उनके दैनिक जीवन का कार्य-क्रम है। वे इस नियम का बड़ी कड़ाई के साथ पालन करते हैं। ७५ वर्ष के एक बूढ़े को मैंने कुछ कुलियों के साथ फुटबॉल खेलते देखा। वह स्विस था। अंग्रेजी कम जानता था। पूछने पर उसने शारीरिक जोर बढ़ने का इशारा किया। यूरोप निवासी ज्योंही सोना खत्म होगा, अपने जीविकोपार्जन में लग जाएँगे और निर्धारित समय समाप्त होते ही, वे विश्राम करने लग जाएँगे। लाख काम क्यों न हो, रात भर में ही करोड़पति होने की आशा क्यों न उफन पड़ी हो, चन्द घंटे में ही दिवालिया हो जाने का खतरा क्यों न दिखाई देता हो पर वे इसकी तनिक भी परवाह न करेंगे—करेंगे कब, जब उन्हें पूर्ण विश्राम मिल जायगा। बिना विश्राम किए वे कदापि अपने दैनिक काम पर नहीं जुटेंगे। आजकल लन्दन पर प्रायः हर रोज बमों की बौछार होती रहती है पर सिनेमाघर, नाचघर आदि मनोविनोद के स्थान भरे ही रहते हैं। फुटबाल, घुड़दौड़, क्रिकेट, मैच इत्यादि जारी ही हैं। अगर लोग विश्राम से मुख मोड़ लेते तो आमोद-प्रमोद के जितने भी स्थान हैं सब बन्द नजर आते। हाईड पार्क में अब भी लोग उसी तरह से जाते और आनन्द मनाते हैं। यह एक ऐतिहासिक घटना है कि वाटरलू की लड़ाई के थोड़ी ही देर पहले नेपोलियन पर विजय प्राप्त करने वाला ड्यूक आफ वेलिंगटन (Duke of Wellington) नाच-गान करके विश्राम कर रहा था।

अमेरिका निवासी भी इस नियम को कार्यान्वित करके इस समय संसार में बड़े अध्यवसायी तथा उन्नतिशील गिने जा रहे हैं। कहा जाता है कि अमेरिकन रास्ते में दौड़ते हुए चलते हैं। बात यह है कि वे बड़ी तेजी के साथ चलते हैं जो उनके उत्साह, काम करने की तत्परता और विश्राम से उत्पन्न हुई शक्ति का परिचायक है। उचित विश्राम के बाद मनुष्य दूने उत्साह से काम करने लगता है और कार्य करने की शक्ति बढ़ जाती है। थकावट का वे नाम तक नहीं जानते। इसका नतीजा यह होता है कि वे निर्धारित समय के पहले अपना कार्य बड़ी आसानी से कर लेते हैं। जापानियों ने जो ६० वर्ष के भीतर इतनी उन्नति कर ली है इसका प्रधान कारण यह है कि कार्य करने तथा विश्राम लेने के जो यूरोप में नियम हैं उसका उन्होंने भी अनुकरण किया है। जापान में घरेलू उद्योग-धन्धों (Cottage industry) का काफी प्रचार है। भारतवर्ष में जो तरह-तरह के खिलौने, बाजा, बटन, शृंगार के समान देखने में आते हैं उनमें से अधिकांश जापानियों के हाथ से बने होते हैं। पर जापानी दिन-रात इन खेलौनों के ही पीछे नहीं पड़े रहते। अपने घर में भी अपना एक निर्धारित कार्य-क्रम बना रक्खा है और निर्धारित समय तक काम कर चुकने के बाद वे भी विश्राम में लग जाते हैं।

दिनरात अबाधगति से मशीन की नाईं खटने से मनुष्य-जीवन जीवन नहीं रह जाता; वह तो चलती चक्की हो जाता है जो दूसरी चीज को पीसने के साथ साथ स्वयं भी घिसती है। मैं तो कहूँगा कि मशीन भी 'रेस्ट' लेती है। उसे भी साफ करने की जरूरत पड़ती है। उसे भी कोयला-पानी देकर चलने के उपयुक्त बनाया जाता है। अगर उसे नियमित रूप से कोयला-पानी न दिया जाय, उसके कलपुर्जे साफ न किए जायँ, तो वह भी बेकाम हो जायगी।

रेलगाड़ी के इंजन को ही लीजिए। कितनी मुस्तैदी से इसमें कोयला, पानी, तेल इत्यादि डाला जाता है और लम्बी दौड़ान में किस तरह से इंजन बदला जाता है। इसका मतलब यह नहीं कि वह बेकाम हो गया और अब उससे काम नहीं लिया जायगा बल्कि इसका मतलब यही है कि उसकी सफाई करके, उसमें कोयला, पानी, तेल डाल कर उसे फिर काम के लायक बना लिया जाय। प्रायः सब जगह मशीन को लोग इस तरह से आराम देते हैं। जहाँ यह नियम लागू नहीं होता वहाँ की मशीनें दिनरात घिसती घिसती थोड़े ही अरसे में बेकार हो जाती हैं।

बाइबिल में लिखा है कि परमात्मा ने पहले इस दुनिया को बनाया, फिर आकाश, चाँद, तारे, फिर नदी,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहाड़ की सृष्टि की। संसार की पूरी रचना कर चुकने पर सोम, मंगल, दिन बनाए और रविवार विश्राम के लिए बनाया और स्वयं उस दिन अपना सारा कार्य बन्द करके 'रेस्ट' लिया। यह रूपकात्मक (Allegorical) है। इसका मतलब यह है कि दिन जो बनाए गए हैं वह काम करने ही के लिए नहीं बल्कि विश्राम के लिए भी। अतः यदि सप्ताह में ६ दिन काम करो तो एक दिन रविवार को विश्राम भी लो। इसीलिए ईसाई लोग रविवार को बड़ा पवित्र मानते हैं और उस दिन परमात्मा को याद करने के सिवाय दूसरा काम नहीं करते और हफ़्ते भर जो काम करने से थकावट होती है उसे दूर करते हैं। बाइबिल के रचयिता का जो भी विचार रहा हो लेकिन मेरा ख्याल है कि जनता धार्मिक ग्रन्थों में उल्लिखित वाक्यों, महात्माओं के उपदेशों तथा आचार्यों के बनाए नियमों को विशेष कर बड़ी श्रद्धा की दृष्टि से देखती है तथा उसका अनुकरण करती है। इसलिए ऐसा नियम परमात्मा के नाम पर ही बनाया गया है जिसे लोग मानें। हिन्दू लोग भी रविवार को बहुत पवित्र मानते हैं और उसे सूर्य का दिन कहते हैं। बहुत से लोग उस दिन नमक नहीं खाते और व्रत रखते हैं। ऐसी बहुत सी बातें हैं जिन्हें धर्म का रूप दे दिया गया है जिससे लोग पालन करने में आना-कानी या हिचकिचाहट न दिखावें।

मैं ऊपर लिख चुका हूँ कि यूरोप-निवासी विश्राम के सिवाय आठ घंटे सोने के लिए रखते हैं। लेकिन मेरा कहना है कि सोने का नियम किसी आदमी का बनाया हुआ नहीं है। वह तो प्रकृति-प्रदत्त है जिसे हमें करना ही होगा। यदि हम रात्रि में सोने के नियम का पालन न करेंगे तो हमें इसकी सजा भुगतनी पड़ेगी। हम लोग भले ही न समझें पर प्रकृति समझती है कि काम करने के बाद आराम कितना आवश्यक है। इसी वजह से उसने रात बनाई कि जीव-जन्तु मात्र अपना काम समाप्त कर रात में विश्राम करें। यदि ऐसा नियम न होता तो बहुत आदमी ऐसे मिलते जो चौबीसों घंटे पापड़ बेलना बन्द न करते। इस नियम का पालन संसार के सब प्राणी अपने आप करते हैं।

अतः इस नियम का उल्लंघन करने वाला सुखी नहीं रह सकता। एक ही दो रात जो जागता है उसे दिन में काम करने की इच्छा नहीं होती और अगर करता भी है तो खुशी से नहीं। इस तरह से प्रकृति के नियम को तोड़ने वाला व्यक्ति अन्त में रोगी हो जाता है।

अब हमें विचार करना है कि रात्रि के अलावा दिन में काम करने के बाद मनुष्य के अलावा और जीव-जन्तु आराम करते हैं या नहीं। यदि हम विचार करें तो पता चलेगा कि हमारे घरेलू पशु-पक्षी भी काम करने के पश्चात् दिन में आराम करना चाहते हैं। मिसाल के तौर पर आप अपनी गाय या भैंस को ले लीजिए। उसे चराने के लिए मैदान में ले जाइए। पहले वह घूम घूम कर चरेगी। फिर थकावट दूर करने के लिए हरी से हरी घास का चरना बन्द करके आराम करेगी। उस समय घास काट कर देने पर भी नहीं खाएगी। भैंस को यदि तालाब मिला तो वह जल का पूर्ण उपयोग करने के हेतु उसमें पैठ जाएगी। घंटों जल में रह कर विश्राम करेगी। गर्मी के दिनों में भैंस, गाय, बैल, बकरे, भेड़ इत्यादि गाँवों में पेड़ की घनी छाया में बैठ कर विश्राम लेते हैं। आप कबूतरों को लीजिए। प्रातःकाल होते ही वे बाहर निकल जाएँगे और जहाँ उन्हें दाना मिलेगा वहाँ से चुग कर पेट भर लेंगे फिर अपने खोप में आकर घुटक-घुटक कर विश्राम लेंगे।

इस कानून को मानव-समाज में लागू करना अत्यन्त हितकर तथा परमावश्यक है। जो मनुष्य काम करने के बाद आराम नहीं करता उसका स्वास्थ्य थोड़े ही दिनों में खराब हो जाता है। उत्साह तथा प्रसन्नता की झलक उसके मुख पर दिखाई पड़ती ही नहीं। वह दिन भर काम के बोझ से ऐसा लदा रहता है कि रात को ठीक से सुख की नींद भी नहीं ले सकता। बात यह है कि वह सोते समय भी चिन्तित रहता है और मन में यही विचारते सो जाता है कि मुझे अभी बहुत काम करना है। अगर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रात न हुई होती तो उसे कर लेता। भले ही वह निद्रा लेने की इच्छा करे पर सच्ची निद्रा उसे आ नहीं सकती क्योंकि मस्तिष्क में तो काम करने का ज्वालामुखी भभक रहा है। ऐसे आदमी का जीवन थोड़े ही दिनों में भार हो जाता है। वह लोभ में पड़ कर काम तो जरूर करना चाहता है पर ठीक से कर नहीं सकता। उदाहरण के लिए एक क्लर्क को लीजिए। उसे अपने आफिस का सारा कार्य दे दीजिए। लगातार उसे वही काम करते रहने दीजिए। कभी फुर्सत न दीजिए। देखिए आपका काम कितना खराब हो जाता है। पहले तो रुपए के लोभ से वह काम करना चाहेगा, पर पीछे बहुत अधिक काम देख कर घबराएगा, नाक-भौं सिकोड़ेगा, और अन्त में हतोत्साह होकर प्रतिदिन के काम को करेगा और सर्वदा यही इच्छा करता रहेगा कि कब समय पूरा होगा कि घर जायँ। इसका फल यह होता है कि वह हर समय थकावट महसूस करता है और अपने काम से जी चुराता है। इसलिए वह किसी काम को सुचारु रूप से नहीं कर सकता। सर्वदा वह अपनी ड्यूटी में अधूरा ही रहता है और उसे असफल जीवन व्यतीत करना पड़ता है। अतः यह बात स्वयं सिद्ध है कि कछुए या खरहे की चाल से काम करने वाले दोनों को विश्राम की आवश्यकता है।

बहुत अफसोस के साथ कहना पड़ता है कि भारत-वासी यह जानते नहीं कि विश्राम क्या चीज है। वे यही समझते हैं कि ईश्वर ने दिन काम करने तथा रात सोने के लिए बनाई है। अतः दिन भर खूब काम करो और रात में जब काम न किया जाय तो सो जाओ। भारतवर्ष के बड़े बड़े शहरों, मिलों, कारखानों इत्यादि में 'ओवर-टाइम वर्क' (Over time work) करने की परि-पाटी खूब चल गई है। दिन का काम समाप्त न होने पर रात को बत्ती जला कर लोग काम करते पाए जाते हैं। बेवकूफी तो लोगों की तब नजर आती है जब कहते हैं कि भाई आज काम बहुत मिल गया इसीलिए ऐसा किया जा रहा है, पर यह नहीं सोचते कि काम का अन्त कभी नहीं है। इस संसार को कर्मक्षेत्र कहा गया है। काम की यहाँ भरमार है। Art is long and time is fleeting—अर्थात् 'काम लम्बा है और समय भागत जा रहा है' वाली बात है। अतः काम उसी समय समाप्त है जब हम उसे छोड़ कर फुर्सत ले लें। कलकत्ते के मारवाड़ियों पर तो दया आती है। उनके मुनीमों की खूब पिसाई होती है। कलकत्ते के करोड़पति मार-वाड़ी सुबह से शाम तक तो अपनी दूकान पर पाए जाते हैं फिर रात के १ बजे तक हिसाब मिलाते हैं। बाद में कुछ देर बिस्तर पर पड़ जाते हैं। यदि ऐसे लोग बीमार पड़ें और दवा का बाजार गर्म रहे, तो आश्चर्य ही क्या है? उनके यहाँ रविवार या व्रत के दिन भी छुट्टी नहीं होती। हाल में बंगाल सरकार ने एक कानून बनाया है जिसके अनुसार सब दूकानदारों को रविवार के दिन दूकान बन्द करनी होगी और अपने नौकरों, मुनीमों और मातहतों को छुट्टी देनी होगी और प्रति दिन उन्हें निश्चित समय तक ही काम करना होगा। देखें यह कानून कहाँ तक कारकुनों, मजदूरों, मुनीमों, जमादारों, कुलियों इत्यादि के लिए लाभदायक सिद्ध होता है। यहाँ के मिलों में भी इसी तरह से लोगों से काम लिया जाता है। कोयले की खानों में काम करने वाले कुलियों को भी विश्राम नहीं मिलता। इस तरह से लगातार काम करने के कारण, कुली, मजदूर, मुनीम, क्लर्क इत्यादि की मृत्यु ३० से ३५ की उम्र में हो जाती है। इस तरह से खटने वाले लोग शीघ्र घिस कर जर्जरित हो जाते हैं। जीवन की ज्योति ऐसे लोगों के चेहरे पर खोजने से मिलेगी ही नहीं। कहाँ तक गिनाया जाय, उचित विश्राम न करने से बड़ी हानि होती है और मानव-समाज पुरुषार्थ-हीन, जीवन-रहित तथा निष्प्राण हो जाता है।

पहले मैं बता चुका हूँ कि विश्राम हमारे लिए उतना ही आवश्यक है जितना पानी और हवा। लेकिन जिस तरह हम पानी को पीकर, हवा में साँस लेकर जीवन-धारण करते हैं, उसी तरह हम विश्राम से अपने परिश्रम को हरण कर जीवन-शक्ति प्राप्त करते हैं। उचित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा में काम करने और उचित मात्रा में आराम लेने पर ही हमारा जीवन स्वस्थ, सुखमय और रोग-रहित हो सकता है।

जिस तरह बार बार खाना खाते रहने पर और पेट को यथोचित विश्राम न दे सकने के कारण वह शक्ति-हीन हो जाता है और हमें नाना प्रकार के रोग धर दबाते हैं, उसी तरह हमारा मस्तिष्क, हाथ-पाँव, जीभ-मुँह इत्यादि भी विश्राम चाहते हैं। यह देखा गया है कि बहुत से लोग दिन-रात चिन्ता करते पागल हो गए हैं। इसकी साफ वजह यह है कि दिन-रात फिक्र करते करते दिमाग काम के लायक नहीं रह जाता और उसमें इतनी गर्मी भर जाती है कि वह आदमी कुछ सोच ही नहीं सकता और पागल हो जाता है। इसी तरह शारीरिक हालत भी खराब हो जाती है।

यह देखा गया है कि बहुत से लोग जो, दिन-रात अपने नाना जंजाल में फँसे रहते हैं और जिन्हें दम मारने की फुर्सत नहीं मिलती, उत्साह बढ़ाने या मस्तिष्क को ताजा करने के लिए अनेक तरह की नशीली चीजें जैसे सिगरेट, तम्बाकू, चुरुट, पान, चाय, कहवा, अफीम, शराब इत्यादि व्यसन पाल लेते हैं। तात्कालिक परिणाम चाहे जो भी होता हो पर पीछे इनसे बड़ी खराबी होती है। ये सब मातदिल जहर (Slow poison) के नाम से प्रसिद्ध हैं। इससे बहुतों की मृत्यु हो जाती है। जिस समय ये चीजें खाई जाती हैं कुछ उत्साह मालूम पड़ता है पर नशा उतरते ही उन्हें कमजोरी मालूम पड़ती है और उन चीजों को फिर खाने की इच्छा हो जाती है और उनके बिना रहा नहीं जाता। इधर काम में फँसे रहने के कारण आराम नहीं मिलता और उधर नशीली चीजों का सेवन जारी रहता है, इसका नतीजा यह होता है कि उनका शरीर रोग का घर बन जाता है और वे अकाल मृत्यु के शिकार हो जाते हैं। यदि ऐसा जीवन व्यतीत करने वाला प्राणी जिन्दा भी रहा तो उसे बड़ा ही कष्ट कर जीवन बिताना पड़ता है।

विश्राम ही उत्साह की कुँजी है। उसे छोड़कर जो मादक-द्रव्य का सहारा लेता है उसे फिर जीवन कहाँ से मिल सकता है। इसलिए उत्साह की खोज में रहने वाले, सफलता चाहने वाले और रोग-रहित बनने वाले व्यक्ति को नियमित विश्राम करना चाहिए।

हमारे देश के लोग समझते हैं कि प्रातःकाल से सन्ध्या तक आफिसों, दूकानों, कचहरियों, कार-खानों और खेतों में काम कर लेने के बाद, रात में खाना खाकर सो जाना ही आराम है। पर वास्तव में इस तरह का सोना विश्राम नहीं कहा जा सकता। यह तो प्रकृति-प्रदत्त है। इससे छुट्टी किसी को मिल ही नहीं सकती। इसे विश्राम के साथ शामिल करना ठीक नहीं। इसमें कोई शक नहीं कि इससे भी शरीर तथा मन में स्फूर्ति आती है। शेक्सपियर ने 'मैकबेथ' (Macbeth) में लिखा है—'सोना एक तरह का स्नान है जिससे मनुष्य का शरीर और दिमाग ताजा और तर हो जाता है।' पर सोने और फिर काम करने का जो कार्यक्रम है उससे मन का बहलाव नहीं होता। शरीर तथा मन की कसरत नहीं होती। वह हर रोज की 'ड्यूटी' और रोजमर्रा काम में ही लगा रहता है जिससे आदमी रूखापन (Monotony) महसूस करता है। यदि यह संसार से मन बहलाव के सारे खेल तमाशे हटा दिए जायँ, घूमना फिरना बन्द कर दिया जाय तो मनुष्य को यह संसार सूना दिखाई पड़ने लगे, जीवन का आनन्द बिलकुल न रहे।

जिस तरह खाने-पीने के ढंग हैं उसी तरह विश्राम के भी रास्ते हैं। मैंने जूरिच, लोकारनो, लुगानो, मौन्ट-कारलो, दीवोस इत्यादि स्थानों में देखा है कि सहस्रों आदमी यूरोप के भिन्न भिन्न देशों से आकर वहाँ जुटे हुए हैं और शरद् कालीन खेलों में भाग ले रहे हैं। जाड़े के दिनों में आप स्विस पहाड़ियों पर जिधर नजर दौड़ाइए उधर ही लोग वर्फ के ऊपर स्कीइङ्ग, स्केटिङ्ग, टैवोगान, स्नो-जम्पिंग, क्लीजन-शूटिंग इत्यादि खेलते दिखाई पड़ेंगे। क्या बच्चे, क्या बूढ़े, क्या जवान सभी इस खेल में भाग लेते हैं। प्रातःकाल जल-पान करके वे बाहर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निकल जाएँगे और पहाड़ों के शिखर पर चढ़ कर फिसलते हुए दो चार मील तक चले जाएँगे। इसी तरह बाहर से आनेवाले लोगों के खेल का क्रम जारी रहेगा। जो वहाँ के निवासी हैं वे ९ या १० बजे लौट आते हैं और फिर अपने काम में जुट जाते हैं। सन्ध्या समय अपने कार्य से निवृत्त होकर फिर पहाड़ पर चले जाते हैं और तरह तरह के खेल से मन बहलाते हैं। इन लोगों को मैंने जाड़े में हाकी खेलते अनेक तरह की बर्फीली मूर्ति बना कर जलूस निकालते, हिम-नृत्य (Snow dance) करते तथा अनेक तरह के खेल खेलते देखा।

लौटती बार मुझे वेनिस और ब्रिन्डसी में ठहरने का अवसर मिला। रात में मैं शहर में घूमने निकला तो मुझे प्रत्येक दूकान पर आठ-आठ, और दस-दस आदमियों की टोलियाँ मिली। वे आपस में गा-बजा रहे थे। कहीं-कहीं पर डान्स भी हो रहा था। पूछने से पता चला कि वे दिन की थकावट को दूर करने के लिए नाच-गाने से मन प्रसन्न कर रहे हैं। यह प्रथा करीब बारह और एक बजे रात तक प्रत्येक दूकान और होटल में जारी रहती है। भारतवर्ष के गाँव में यह प्रथा पहले थी। लोग रामायण और महाभारत की कथा-वार्ता और नाच-गान के रूप में विश्राम कर लिया करते थे पर अब यह प्रथा मिटती जा रही है।

हम लोगों का न तो कोई काम करने का नियम है और न विश्राम का। हमें चाहिए कि अपना जीवन नियमित बनावें। बच्चों में भी ऐसी ही आदत डालें। हमारे प्रत्येक काम का निर्धारित क्रम 'रुटीन' बना रहना चाहिए। जीवन का सुसंचालित होना आवश्यक हैं। हम लोगों को यह आदत छोड़ देनी चाहिए कि अमुक काम को समाप्त करके ही भोजन करेंगे, विश्राम लेंगे। ऐसा करना स्वास्थ्य के लिए हानिकर है। हमें तो निश्चित समय के अनुसार अपना काम समाप्त करके दूसरे काम में लग जाना चाहिए। जिनका जीवन नियमित नहीं वे ठीक समय पर कोई काम नहीं कर सकते। विश्राम के समय हमें वही काम करना चाहिए या उसी तरह का खेल खेलना चाहिए जिससे मन में, और तन में स्फूर्ति मिले। बड़ी बड़ी छुट्टियों में हमें देश-विदेश की यात्रा करनी चाहिए। तीर्थ-स्थानों में घूम कर उनका निरीक्षण करना चाहिए और इस बात की खोज करनी चाहिए कि किस दृष्टि से इस तीर्थ-स्थान का स्थापन हुआ। भारतवर्ष में इतने पुराने ऐतिहासिक स्थान हैं जिनका अगर कोई जीवन पर्यन्त भी खोज करता रहे तो उसकी समाप्ति नहीं हो सकती।

YOGIC COURSE OF EXERCISES

YOU NEED

ON

How to cure Premature Ejaculation
and to increase retentivity

Price Rupees Five only

C. SMRITI & COMPANY
5 Shah Khaki Street - Meerut

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यायाम-प्रसार पर कुछ व्यावहारिक सुझाव

श्री जगेश्वर दयाल वैश्य, एम० ए०, बी० एस-सी०

इस लेख के लेखक एक मर्मज्ञ शिक्षाविद् हैं। स्कूलों और कालेजों के अलावा हमारे सार्वजनिक तथा राष्ट्रीय जीवन में व्यायाम-प्रसार किस प्रकार किया जाय इसके सम्बन्ध में आपने कुछ सलाहें पेश की हैं जो विचार करने योग्य हैं।——सं०

आज प्रत्येक भारतवासी इस बात को महसूस करता है कि उसे व्यायाम की कितनी आवश्यकता है, फिर भी हमारे यहाँ व्यायाम का प्रसार जिस तीव्र गति से होना चाहिए उतना नहीं हो रहा है। इसके कई कारण हैं। इनमें से कुछ पाठकों के सामने विचारार्थ रखता हूँ।

स्कूल और व्यायाम

आजकल स्कूलों में खेलों (Games) का कुछ ऐसा आतंक छाया हुआ है कि खेल-कूद (Sports) और व्यायाम को लोग प्रायः छोड़ते जा रहे हैं। कुछ वर्ष पूर्व संयुक्त प्रान्त में मूँगरी (Indian clubs), हौरीज़न्टल बार (Horizontal bar) और पैरेलेल बार्स (Parallel bars) का काफी प्रचार था लेकिन गत वर्षों में अनिवार्य खेल (Compulsory games) की जो बाढ़ आई उसमें सब बह गए। खेलों का प्रचार होना चाहिए लेकिन व्यायाम-प्रथा को नष्ट करके नहीं। इसका कारण ? कारण स्पष्ट है, खेल व्यायाम का स्थान कभी नहीं ले सकते क्योंकि—(१) खेल से शरीर स्वस्थ रह सकता है लेकिन मांसपेशियों की वृद्धि नहीं हो सकती। (२) कुछ बच्चों के शरीर का गठन बड़ा विचित्र होता है, उनके शरीर के कुछ अंग बहुत ही अविकसित होते हैं। ऐसे बच्चों का शरीर उचित व्यायाम से ही ठीक हो सकता है। (३) भारतवर्ष कृषिप्रधान और बहुत गरीब देश है। यहाँ पर जगह-जगह इतने क्लब आदि नहीं हैं कि विद्यार्थी-जीवन के बाद काफी नवयुवकों को खेल की सुविधा प्राप्त हो सके। इसका परिणाम बड़ा भयंकर होता है। विद्यार्थी-जीवन में केवल लोग खेलते ही हैं, व्यायाम की ओर ध्यान नहीं देते; फिर बाद में खेल की सुविधा प्राप्त नहीं होती और व्यायाम की आदत नहीं रहती इसलिए न तो वे खेलते हैं और न व्यायाम ही करते हैं। यह परस्थिति बहुत विनाशकारी साबित हो रही है। वे स्वयं अपना ही स्वास्थ्य खराब नहीं करते बल्कि उनके व्यायाम न करने से उनके बच्चों में अथवा दूसरे अनपढ़ मनुष्यों में व्यायाम के प्रति उदासीनता बढ़ती जा रही है। (४) व्यायाम की आदत विद्यार्थी-जीवन में पड़ जाने पर वह व्यक्ति चाहे जिस गाँव, कसबे या शहर में चला जाय और चाहे जिस पद पर पहुँच जाय, उस स्थान पर कोई क्लब हो या न हो, उसका अपने व्यायाम का कार्य-क्रम सदैव चालू रह सकता है।

बालक और व्यायाम

व्यायाम-प्रसार की योजनाओं को शीघ्र सफल बनाने का एक सरल उपाय यह है कि बालकों के सामने स्कूलों तथा घरों में व्यायाम का एक व्यावहारिक रूप दिखलाई पड़े अर्थात् वे घर पर अपने पिता, भाई आदि बड़ों को और स्कूल में ऊँची कक्षाओं के बालक और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिक्षकों को व्यायाम करते देखें। केवल यह कहने भर से कि "मोहन, व्यायाम नित्य करना चाहिए" मोहन के अन्दर व्यायाम के लिए प्रेम और उत्साह कभी पैदा नहीं हो सकता। वह अपने शिक्षकों और बड़ों के सामने भले ही कुछ न कहे लेकिन उसके अन्तस्तल में यह प्रश्न अवश्य उठता है कि वे स्वयं तो करते नहीं और मुझ से उसकी तारीफ के पुल बाँध देते हैं और कहते हैं कि सब को नित्य प्रति व्यायाम करना चाहिए।

इसलिए शिक्षकों और अभिभावकों का यह कर्तव्य है कि वे, यदि अपने लिए नहीं तो कम से कम छोटे बालकों के लाभार्थ अथवा सामाजिक कर्तव्य समझ कर व्यायाम नित्यप्रति किया करें।

अखाड़े और व्यायामशालाएं

भारतवर्ष में विशेषतः हिन्दुओं में असंख्य रुपया दान किया जाता है लेकिन वे आवश्यक-अनावश्यक उपयोगी-अनुपयोगी और कुपात्र-सुपात्र का कुछ भी ख्याल नहीं करते। आजकल अखाड़े और व्यायामशालाओं से अच्छा दान का पात्र कौन है?

व्यायामशालाओं में कुछ दिन जोश बना रहता है लेकिन बाद में वह शान्त हो जाता है। इसका क्या इलाज है?

(१) अभी कुछ दिन के लिए तो इसका एक मात्र उपाय लोगों में इसके प्रति आकर्षण उत्पन्न करना है। आज से पचास वर्ष पहले डाक्टरी स्कूलों और कालेजों में भर्ती होने के लिए बहुत ही कम विद्यार्थी तैयार होते थे। उनकी इस उदासीनता को दूर करने के लिए छात्रों में तरह तरह के प्रलोभन, छात्रवृत्ति आदि दिए गए हैं जिसका फल यह हुआ कि कुछ ही दिनों बाद बहुत ही अधिक संख्या में छात्र उधर जाने लगे। इसी प्रकार व्यायामशालाओं और अखाड़ों में नियमित रूप से जाने वालों को दूध, अंकुरित चने आदि दिए जायँ। वहाँ की एक विशेष प्रकार की पोशाक हो जो सदस्यों को मुफ़्त या आधे मूल्य में दी जाय।

(२) जिस प्रकार क्रिकेट, फुटबाल, हाकी, वालीबाल, टेनिस आदि के मैच की प्रथा है, उसी प्रकार व्यायामशालाएँ और अखाड़े भी एक प्रकार की मैच-प्रणाली चालू करें।

(३) समय-समय पर व्यायाम-प्रदर्शन का प्रबन्ध किया जाय।

(४) प्रत्येक वर्ष गर्मी की छुट्टियों के लिए एक सुव्यवस्थित और संगठित व्यायाम-योजना तैयार की जाय। शिक्षा-विभाग और जनता के सहयोग से जगह-जगह व्यायाम-शिक्षा के लिए क्लास खोले जायँ। जो विद्यार्थी और शिक्षक वहाँ पर जायँ उनके ठहरने और भोजन का मुफ़्त प्रबन्ध किया जाय।

(५) साप्ताहिक और मासिक पत्र भी इस दिशा में काफी सहायता कर सकते हैं। व्यायाम सम्बन्धी लेख और चित्रों का प्रभाव जनता पर अवश्य पड़ेगा। कुछ मासिक पत्र और साप्ताहिक तो इस ओर ध्यान देने लगे हैं, लेकिन इतना ही पर्याप्त नहीं है।

स्कूलों के तत्वावधान में प्रातःकालीन व्यायाम-क्लास

व्यायामशालाएँ और स्थानीय स्कूल मिल कर ऐसा संगठन करें कि शहर के प्रत्येक भाग में व्यायामशालाएँ स्थापित हो जायँ। प्रत्येक स्कूली छात्र के लिए यह अनिवार्य कर दिया जाय कि वह अपने घर के पास वाली व्यायामशाला में प्रत्येक दिन प्रातःकाल जाया करे। व्यायामशालाएँ उन सब बालकों की हाजिरी नियमपूर्वक लें और उसकी सूचना समय-समय पर स्कूल को देती रहें। यह स्कूलों का कर्तव्य होगा कि वे इस बात को देखें कि प्रायः सभी बालक किसी न किसी व्यायामशाला में प्रति दिन जाते हैं।

वाचनालयों (Reading rooms) तथा पुस्तकालयों का यदि जगह-जगह पर खोलना आवश्यक है तो व्यायामशालाओं और अखाड़ों का खोलना उससे कहीं अधिक आवश्यक है। इस ओर जितनी जल्दी ध्यान दिया जाय उतना ही राष्ट्र की दृष्टि से हितकर होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाल-कवायद

राजरत्न प्रो० माणिकराव, बड़ोदा

राजरत्न प्रो० माणिकराव का वास्तविक नाम श्री गजानन यशवन्त ताम्हणे हैं। गायकवाड़ सरकार की ओर से आपके कुल को 'माणिकराव' की पैतृक उपाधि मिली है। आप 'बड़ोदा के भीष्म पितामह' के नाम से प्रख्यात हैं। आप बाल-ब्रह्मचारी हैं। बड़ोदा में आपने श्री जुम्मादादा व्यायामशाला की स्थापना की है जो भारत-प्रसिद्ध है। इस लेख में आपने छोटी अवस्था के बालक-बालिकाओं के लिए व्यायाम का जो सरल तरीका बताया है वह कितना उपयोगी है, यह बताने की आवश्यकता नहीं।—सं०

शरीर का धारण, उसका पोषण और वृद्धि के लिए शरीर में विशेष मात्रा में रक्त-संचय होना चाहिए और उसीके साथ अशुद्ध रक्त का उत्सर्ग भी उसी मात्रा में जल्दी से होना आवश्यक है। जन्म से अन्त समय तक ये दोनों क्रियाएँ साथ-साथ चलनी चाहिए। ऐसी क्रियाएँ विशेष प्रकार के व्यायाम में विशेष स्नायुओं को मिलने वाले आन्दोलनों से हो सकती हैं। उम्र के लिहाज से ये व्यायाम भिन्न-भिन्न प्रकार के हों तो व्यायाम का उचित परिणाम स्नायु और रक्त पर होकर शरीर में शुद्ध रक्त का संचय सदा होता रहेगा जिससे स्नायु-वृद्धि के द्वारा मनुष्य शक्तिमान और आरोग्य बना रहेगा।

शरीर के किसी भी भाग को संचालित करने, या ऐसा करने की इच्छा मात्र से शरीर में रासायनिक प्रक्रिया शुरू हो जाती है। श्वासोच्छ्वास से जो ऑक्सिजन शरीर में प्रवेश करता है उसके कारण रुधिर के लाल लोलक बनकर शरीर के सर्व तन्तुओं में प्रसार पाते हैं और शरीर के भीतर उत्पन्न हो जाने वाले सभी विकार अथवा मल कार्बन डायोकसाइड के रूप से बाहर निकल जाते हैं। ज्यों-ज्यों आप अधिक काम करेंगे त्यों-त्यों परिश्रम-मूलक घसीट अधिक मात्रा में होगी

योग तथा प्राकृतिक चिकित्सा सिखलाने की वृहद् योजना

प्राकृतिक स्वास्थ्यगृह, इलाहाबाद के तत्वावधान में योग तथा प्राकृतिक-चिकित्सा पद्धति सिखाने का विशेष प्रबन्ध किया गया है। शिक्षा-काल दो-दो सप्ताह का तीन बार करके कुल छः सप्ताह में समाप्त होगा। शिक्षण-काल १५ फरवरी से आरंभ होता है, जो शिक्षार्थी इस अवसर से लाभ उठाना चाहें वे १० फरवरी तक प्रार्थना-पत्र भेजें। प्रत्येक दो सप्ताह के शिक्षण-काल के लिए फीस केवल पाँच रुपया होगी। प्रथम शिक्षण-काल की फीस प्रार्थनापत्र के साथ भेजना अनिवार्य है। शिक्षण का विस्तृत विवरण पत्र के साथ चार आने के टिकट भेजने से प्राप्त हो सकेगा।

शिक्षण-काल की समाप्ति पर शिक्षार्थियों की परीक्षा होगी जो उत्तीर्ण होंगे वे एन० डी०, डी० वाई० (N.D., D.Y.) डिप्लोमा प्राप्त करेंगे।

८७ हिम्मत गंज
इलाहाबाद

बालेश्वरप्रसाद सिंह
डाइरेक्टर—प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिसका शरीर के बाहर निकल जाना आवश्यक है। शरीर में ऑक्सिजन (प्राण-वायु) का अधिक मात्रा में उत्पन्न होना और कार्बन डायोक्साइड का अधिक मात्रा में बाहर निकल जाना अत्यन्त आवश्यक है। ज्यों-ज्यों आप अधिक परिश्रम करेंगे त्यों-त्यों आपको ज्यादा हवा साँस के जरिए बाहर से भीतर खींचने और इसी तरह भीतर की दूषित वायु को बाहर निकाल देने के लिए वेग के साथ साँस लेनी पड़ेगी। श्वासोच्छ्वास के अतरिक्त शरीरस्थ अन्य विकार त्वचा और मूत्रपिंड द्वारा बाहर निकलते हैं। जिस समय अपन जल्दी से मेहनत या व्यायाम करते हैं उस समय ये मल इतनी अधिक मात्रा में उत्पन्न होते हैं कि वे सब के सब एक बारगी बाहर नहीं निकल सकते।

शरीर की आवश्यकता और क्षमता के अनुसार समुचित व्यायाम कर लेने के बाद समुचित रूप से आराम लेने से किसी प्रकार की हानि नहीं होती; बल्कि लाभ ही होता है। मेहनत अथवा व्यायाम बन्द करने के बाद देर तक श्वासोच्छ्वास और रुधिराभिसरण की क्रिया वेग से चालू रहती है। कारण यह कि मेहनत से उत्पन्न होने वाले समस्त विकार शरीर से बाहर निकलने के बाद जिन तन्तुओं का नाश हुआ हो उनका फिर से निर्माण हो जाना आवश्यक होता है। इसलिए ये दोनों क्रियाएँ पूर्ण होने तक श्वासोच्छ्वास और रुधिराभिसरण की क्रिया शीघ्रता से हुआ करती है।

व्यायाम से शरीर को दो प्रकार से रक्त-पूर्ति होती है। जब शरीर के केवल एक आध स्नायु पर श्रम पड़ता है उस समय उस भाग के जिस मज्जातन्तु के द्वारा वहाँ पर रक्त पहुँचता है, उस अवयव को आवश्यकता होते ही अधिक मात्रा में रक्त मिल जाता है। इसी प्रकार उस स्नायु को जिस धमनी के द्वारा रक्त पहुँचता है वह फूलती है, यानी उसमें अधिक रक्त-संचय होता है। व्यायाम से स्नायु का संकोचन होता है। इसलिए नसों पर दबाव पड़ने से अशुद्ध रक्त अधिक अंशों में आगे ढकेला जाता है। परमेश्वर ने नसों में अगणित परदे रक्खे हैं। इस कारण उनमें से गया हुआ अशुद्ध रक्त पीछे न हट कर हृदय की तरफ जाता है। इसी प्रकार जब एक आध स्नायु दब जाता है, उस समय उसका अशुद्ध रक्त मोटी नसों से होकर हृदय में जाता है। वहाँ से वह फेफड़े में जाता है जहाँ फिर उसकी शुद्धि हो जाती है।

व्यायाम जिस प्रकार का होगा उसी प्रकार का शरीर के तन्तुओं पर प्रभाव पड़ेगा। व्यायाम के साधारणतः तीन प्रकार होते हैं, (१) वे व्यायाम जिनमें बहुत ही शक्ति काम में लानी पड़ती है—जैसे कोई भारी वजन उठाने का व्यायाम, (२) वे व्यायाम जिनमें थोड़े समय में स्नायुओं को शीघ्रता-पूर्वक काम करना पड़ता है—जैसे दौड़ना, (३) जिनमें मन्द गति से लेकिन बहुत समय तक एकसाँ मेहनत करनी पड़ती है, चाहे वह किसी भी प्रकार की हो। तीसरे प्रकार की मेहनत में न दम लगता है और न स्नायु और दिमाग पर ज्यादा दबाव पड़ता है लेकिन इतनी सहनशीलता आने के लिए फेफड़े और हृदय को अबाधित गति से काम करना चाहिए यानी शरीर में उत्पन्न हुए विषाक्त पदार्थों को तत्काल बाहर निकाल देने का उसमें सामर्थ्य होना चाहिए।

प्रत्येक व्यक्ति को यह स्वयं निश्चित कर लेना चाहिए कि उसे अपनी शारीरिक शक्ति, रहन-सहन तथा रोजगार के मुताबिक किस प्रकार का और कितने समय तक व्यायाम करना चाहिए। ऊपर बताई गई बातों को ध्यान में रखते हुए सभी लोगों को व्यायाम करने की आदत डालनी चाहिए। हर एक इंनसान को अपने स्नायुओं को मजबूत बनाने के लिए कुछ समय तक भारी मेहनत करना लाजिम है। शरीर में स्थूलता न रहे, इस वास्ते कई एक जल्दी से तथा कई एक धीमे से किए जाने वाले व्यायाम करने चाहिए।

इस दृष्टि से बचपन में आठ वर्ष से अधिक अवस्था के बालक-बालिकाओं के करने लायक यह बाल-कवायद का व्यायाम तैयार किया गया है। यह व्यायाम इसी उम्र के बालक-बलिकाओं के लिए उपयोगी हो, ऐसी बात नहीं। किन्तु इस अवस्था के बालक-बालिकाओं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में व्यायाम करने का जो अभ्यास पड़ जाता है उसके आधार पर वे आगे चलकर अपेक्षाकृत अधिक महत्त्वपूर्ण व्यायाम बड़ी सहूलियत के साथ कर सकते हैं। श्री जुम्मादादा व्यायाम-मन्दिर के विद्यार्थीगण ये व्यायाम नित्य नियमित रूप से किया करते हैं। इस व्यायाम के इष्ट परिणाम इन विद्यार्थियों के शरीर पर होते नजर आते हैं।

यह कवायद आजकल थोड़े बहुत अंशों में भारतवर्ष में चारों तरफ शुरू हो गई है। बम्बई सरकार ने शारीरिक शिक्षा के कार्यक्रम में जो व्यायाम निर्धारित किया था उसमें बालक-बालिकाओं के वास्ते इस बाल-कवायद को भी स्थान दिया गया था। यह बाल-कवायद किस प्रकार से करना चाहिए इसका आज तक स्पष्टीकरण न होने से शिक्षकों को तथा विद्यार्थियों को बहुत दिक्कत होती थी लेकिन वह दिक्कत यहाँ पर दी गई बातों से दूर हो जायगी।

इस व्यायाम का खुलासा विस्तृत न होने के कारण कई जगह ऐसे व्यायाम से संगीत का सम्बन्ध जोड़ दिया गया नजर आता है, परन्तु इससे व्यायाम से होने वाले फायदों में कमी आए बगैर नहीं रहती। व्यायाम में श्वासोच्छ्वास की जो मुख्य क्रिया पूरक, कुम्भक और रेचक होती है उसकी तरफ इस संगीत से दुर्लक्ष्य होता है और इस प्रकार इस व्यायाम का समुचित लाभ नहीं उठाया जा सकता। कई जगह तो लाठी में घुँघरू आदि लगाकर बाह्य प्रदर्शन को अधिक महत्त्व दिया जाता है।

अतः यहाँ पर इस व्यायाम की क्रिया और उसके फायदे सुगमतापूर्वक समझाने की चेष्टा की गई है।

बाल-कवायद

[illegible]—इस व्यायाम के लिए विद्यार्थियों की संख्यानुसार विस्तृत, स्वच्छ और खुला मैदान होना चाहिए। व्यायाम के समय धूल न उड़े इस वास्ते उस पर पानी छिड़कना जरूरी है। इस जगह आठ-आठ फुट के अन्तर पर लकीर खींच देना चाहिए।

लाठी—इस व्यायाम में इस्तेमाल की जाने वाली लाठी हर एक के एक हाथ की अँगुली से दूसरे हाथ के कन्धे तक की लम्बी होनी चाहिए। उसकी मोटाई दो इंच तक हो और वह सीधी और पॉलिश की हुई होनी चाहिए।

एक कतार—यह हुक्म मिलते ही सब लड़कों को अपनी ऊँचाई के अनुसार हुक्म देने वाले के सामने एक सीधी कतार में खड़े हो जाना चाहिए। इस वक्त लाठी बाएँ बगल में रखनी चाहिए।

टुक गिन्ती—इस हुक्म के साथ एक, दो, तीन, चार, इस प्रकार चार-चार की टुकड़ी हो सके, इस रीति से अंक गिने।

नाप लेव—इस हुक्म के मिलने पर कतार के पहले लड़कों को अपनी जगह पर ही खड़े रहना और बाकी को दूसरों के बाएँ बाजू की तरफ सरक कर अपना दाहिना हाथ अपने ऊपर के लड़के के कन्धे पर सीधा लम्बा करके रखना और खड़े रहना चाहिए।

जैसे थे—इस हुक्म के मिलने पर कन्धे पर का हाथ नीचे लाकर अटेंशन की स्थिति में खड़े रहना चाहिए।

सजावट एक—टुक गिनती में एक, दो, तीन, चार, इस प्रकार चार-चार लड़कों की एक-एक टुकड़ी बनती है। उनमें एक नम्बर वाले लड़के को अपनी जगह पर स्थिर रहना चाहिए। दूसरे नम्बर वाले को आठ कदम आगे, नम्बर तीन वाले को चार कदम आगे और नम्बर चार वाले को चार कदम पीछे हटना चाहिए। इस प्रकार की सजावट करने से एक कतार की चार कतार होकर हर एक विद्यार्थी को काम करने के लिए पूरी जगह मिल जायगी।

दाहिने निगाह—यह आदेश मिलने पर हर एक कतार के पहले नम्बर के लड़के को अपनी जगह पर स्थिर खड़े रहकर आगे देखना और बाकी लड़कों को अपनी दृष्टि दाहिने बाजू की ओर घुमानी चाहिए। अपने ऊपर के एक लड़के को छोड़कर दूसरे की ठुड्डी नजर आवे इस प्रकार आगे-पीछे सरक कर सीधी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कतार में खड़े रहना चाहिए।

साम् निगाह—दाहिने बाजू की ओर फिराई हुई गरदन झटके से सामने लाकर ठाट की स्थिति में खड़ा हो जाना चाहिए।

आराम—दाहिना हाथ बाएँ हाथ की मुट्ठी के नीचे लाठी पर रखकर बाईं बगल में से लाठी के नीचे का कोना ऊपर करते-करते बाहर निकाल कर सीधे पैर के अँगूठे के पास लाठी का नीचे का कोना जमीन पर रखकर दाहिना हाथ कड़ा करके लाठी तिरछी पकड़नी चाहिए।

होशियार—लाठी जमीन से सीधी उठाकर अँगूठा और उसके पास की उँगली से लाठी पकड़कर हाथ के सीधे लकीर में लाठी को रखना चाहिए। हाथ सीधा रखना होगा।

दाँव १ कमर-झुक—हर एक दाँव में ८ अंक तक गिनना है।

१. बायाँ हाथ काटकोन में लाकर बाएँ हाथ को अँगूठे और उसके पास की उँगली से लाठी को पकड़ना और उँगलियाँ लाठी पर रखना चाहिए। बायाँ हाथ दाहिने बाजू की तरफ ले जाते हुए समूचे शरीर को पैर के पंजे के बल उठाना और साथ ही एड़ी जमीन पर टिकाना होगा। ऐसा करते वक्त छाती और मुँह सामने होना चाहिए।

२. समूचा शरीर पंजे के बल उठाकर फिर एड़ियाँ जमीन पर टिकाते हुए लाठी को जंघों से लगाकर दोनों हाथ में जमीन के समानान्तर रखना चाहिए।

३. लाठी को जमीन के समानान्तर और छाती के सामने रखते हुए दोनों पैर दोनों बाजू को फैलाना और इसमें १८ इंच का अन्तर रखना चाहिए।

४. हाथ की मुट्ठियाँ जमीन को सहूलियत से पहुँच सकें, इस प्रकार से झुकना चाहिए। पैरों को सीधे रख कर लाठी दोनों पैर के अँगूठों के पास समानान्तर से रखना चाहिए।

५. एकदम सीधे होकर लाठी सहित दोनों हाथ बीच में न मोड़ कर सिर पर ले जाना चाहिए। इस समय सामने देखना चाहिए।

६. सिर पर ले गए हुए हाथ सीधे सामने से नीचे जंघा के पास लाना चाहिए। ऐसा करने से अंक २ की स्थिति होगी।

७. बायाँ हाथ लाठी सहित दाहिने बाजू को काटकोन में ले जाना यानी लाठी को दाहिने बाजू के समानान्तर खड़ी करना चाहिए। इससे अंक १ की स्थिति होगी।

८. बायाँ हाथ झटके से निकाल कर आराम की पहली स्थिति में हो जाना चाहिए।

दाँव २. पीठ हाथ बैठ जाओ—

१. पहले दाँव के अंक १ की स्थिति
२. ,, अंक २ ,,
३. ,, अंक ३ ,,
४. लाठी पीछे की तरफ गर्दन पर आड़ी लाना।
५. नीचे पंजाबैठक लेकर बैठना।
६. फिर सीधे खड़े होकर लाठी गरदन पर रहने देना।
७. गरदन पर से लाठी हटाकर पहले दाँव के अंक की स्थिति में खड़ा हो जाना।
८. पहले दाँव के अंक ८ की स्थिति में खड़ा होना।

दाँव ३. कुख आनी

१. पहले दाँव के अंक १ की स्थिति
२. ,, अंक २ ,,
३. बायाँ पैर बाएँ बाजू की ओर जोर से उठाकर पटकना और उसके बीच में अन्तर २ फुट ६ इंच का रखना। बाएँ कूख की तरफ जोर से सीधी अणी मारना।
४. पैर नजदीक ले जाकर पहले दाँव के अंक २ की स्थिति में खड़ा होना।
५. दाहिना पैर दाहिने बाजू को २ फुट ६ इंच के अन्तर पर जोर से उठा कर पटकना और दाहिने बाजू को जोर से अणी मारना।
६. दाहिना पैर नजदीक ले जाकर पहले दाँव के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंक २ की स्थिति में खड़ा होना।

७. पहले दाँव के अंक ७ की स्थिति में होना।

८. पहले दाँव के अंक ८ की स्थिति में होना।

दाँव ४—तिरछे हुल

१. पहले दाँव के अंक १ की स्थिति में खड़ा होना

२. ,, अंक २ ,,

३. बायाँ पैर बाएँ बाजू को ४५° डिग्री के कोने पर उठा कर डालना और साथ ही उस बाजू को अणी मारना।

४. अंक २ की स्थिति में खड़े रहना।

५. दाहिना पैर दाहिने बाजू को ४५° डिग्री के कोने पर उसी सरल लकीर से पीछे डालना और उसी बाजू को अणी मारना।

६. अंक २ की स्थिति में पैर नजदीक लाकर खड़े रहना।

७. पहले दाँव के अंक ७ की स्थिति में होना।

८. पहले दाँव के अंक ८ की स्थिति में खड़े रहना।

दाँव ५—तिरछे हुल दो

१. पहले दाँव के अंक १ की स्थिति में खड़ा होना।

२. ,, अंक २ की ,,

३. दाहिना पैर दाहिने बाजू को ४५° डिग्री के कोने पर आगे की बाजू को डालना और उसी बाजू को जोर से अणी मारना।

४. अंक २ की स्थिति में होना।

५. बायाँ पैर बाएँ बाजू को ४५° डिग्री के कोने पर उसी सीधी लकीर में पीछे की तरफ बाजू को डालना और पीछे उसी बाजू को अणी मारना।

६. अंक २ की स्थिति में खड़ा होना।

७. पहले दाँव के अंक ७ ,,

८. ,, अंक ८ ,,

दाँव ६—पाँव पटक

१. पहले दाँव के अंक १ की स्थिति में खड़ा होना।

२. ,, अंक २ ,,

३. बायाँ पैर आगे दो फुट के अन्तर पर सीधा डालना। लाठी छाती के आगे जमीन के समानान्तर आड़ी पकड़ना। हाथ सीधा रखना।

४. बायाँ पैर पीछे ले जाकर अंक २ की स्थिति में खड़े रहना।

५. सीधा पैर दो फुट के अन्तर पर सीधा आगे डालना। लाठी छाती के आगे जमीन से समानान्तर आड़ी पकड़ना। हाथ ढीला रखना।

६. दाहिना पैर पीछे ले जाकर अंक २ की स्थिति में खड़े रहना।

७. पहले दाँव के अंक ७ की स्थिति में रहना।

८. ,, अंक ८ ,,

दाँव ७—पाँव पटक—दो रुख

१. पहले दाँव के अंक १ की स्थिति में रहना।

२. ,, अंक २ ,,

३. बायाँ पैर बाएँ बाजू की ओर सीधी लकीर में डालकर बाएँ बाजू की ओर मुँह फिराकर खड़े रहने के बाद लाठी छाती के सामने आड़ी जमीन से समानान्तर और सीधा रखकर पकड़ना। दोनों पैरों के बीच दो फुट का अन्तर रखना।

४. अंक २ की स्थिति में रहना।

५. दाहिना पैर सीधे बाजू की ओर २ फुट का अन्तर डालकर फिर सीधे बाजू की ओर मुँह फिरा कर खड़े रहने के बाद लाठी छाती के सामने आड़ी और जमीन के समानान्तर हाथ सीधा रखकर पकड़ना।

६. अंक २ की स्थिति में आना।

७. पहले दाँव के अंक ७ की स्थिति में होना।

८. ,, अंक ८ ,,

दाँव ८—शिर घुम-हाथ

१. पहले दाँव के अंक १ की स्थिति में खड़ा होना।

२. ,, अंक २ की स्थिति में आना।

३. ,, अंक ३ ,,

४. बाएँ बाजू से लाठी सिर पर से दोनों हाथ में पकड़ कर फिराना। चक्कर पूरा कर लेने के बाद लाठी बाएँ बाजू के बगल में समानान्तर खड़ी रखना। बाएँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हाथ के नीचे सीधा हाथ बगल में और लाठी बगल के पीछे के भाग में रखना।

५. लाठी बगल में से निकाल कर सीधे बाजू से सिर पर फिरा कर सीधे बाजू के बगल में समानान्तर लाकर रखना। दाहिना हाथ साधारण स्थिति में और बायाँ हाथ बगल में रखना।

६. बगल में से हाथ निकाल लेने पर अंक २ की स्थिति में खड़े रहना।

७. पहले दाँव के अंक ७ की स्थिति में खड़े रहना।

८. ,, अंक ८ ,,

दावँ ९—कमर-कस

१. पहले दाँव के अंक १ की स्थिति में खड़ा होना।

२. ,, अंक २ की स्थिति में आना।

३. बायाँ पैर २ फुट पीछे रखकर लाठी सिर पर लाना। कमर में से पीछे नजर फिरा कर लाठी की तरफ देखना।

४. अंक २ की स्थिति में होना।

५. दाहिना पैर २ फुट पीछे लाकर खड़े रहना। बाद में लाठी सिर पर लेकर पीछे हटना। दृष्टि ऊपर के बाजू की ओर लाठी की तरफ रखना।

६. पीछे लाया हुआ पैर पूर्व स्थिति में रखकर अंक २ की स्थिति में होना।

७. पहले दाँव के अंक ७ की स्थिति में खड़ा होना।

८. ,, अंक ८ की ,,

दाँव १०—कमर-कस

१. पहले दाँव के अंक १ की स्थिति में खड़ा होना।

२. ,, अंक २ की ,,

३. बायाँ पैर बाएँ बाजू की ओर सीधी लकीर में २ फुट का अन्तर डालकर और बाएँ बाजू की ओर मुख फिराकर खड़े रहते हुए लाठी सिर पर ले जाना और कमर में से पीछे फिरना। दृष्टि लाठी की तरफ रखना।

४. बायाँ पाँव पहली स्थिति में लाकर अंक २ की स्थिति में खड़ा होना।

५. दाहिना पैर दाहिने बाजू की ओर सीधी लकीर में २ फुट का अन्तर डालकर रखना। दाहिने बाजू की ओर मुँह करके खड़े रहते हुए लाठी सिर पर ले जाकर कमर में से पीछे फिराना। दृष्टि लाठी की तरफ रखना।

६. दाहिना पैर पूर्व स्थिति में लाकर अंक २ की स्थिति में खड़े रहना।

७. पहले दाँव के अंक ७ की स्थिति में आना।

८. ,, अंक ८ ,,

दाँव ११—पचफेर कुख

१. पहले दावँ के अंक १ की स्थिति में खड़ा होना।

२. ,, अंक २ की स्थिति में आना।

३. दाहिने बगल में लाठी लपेटकर बायाँ हाथ बगल में और दाहिना हाथ नीचे, बायाँ पैर २ फुट ६ इंच आगे। बाजू से ४५° डिग्री के कोने पर डालकर लाठी का अग्र भाग जमीन की तरफ रखना।

४. लाठी बगल में से निकालकर पैर को पूर्व स्थिति में लाना और अंक २ की स्थिति में खड़े रहना।

५. बाएँ बगल में लाठी लपेटकर दाहिना हाथ बगल में और बायाँ हाथ नीचे, दाहिना पैर आगे की तरफ बाजू से ४५° डिग्री के कोने पर डालकर लाठी की नोक जमीन की तरफ रखना।

६. लाठी बगल में से निकाल कर पैर को पूर्व स्थिति में लाना और अंक २ की स्थिति में खड़े रहना।

७. लाठी सीधे बगल में लपेटकर बायाँ हाथ बगल में और दाहिना हाथ नीचे, बायाँ पैर बाएँ बाजू से २ फुट ६ इंच के अन्तर पर ४५° डिग्री के कोने पर डालकर पीछे की तरफ घूम कर खड़ा होना। लाठी की नोक जमीन की तरफ रखना।

८. पाँव नजदीक ले जाकर अंक २ की स्थिति में पहली दिशा की तरफ मुँह करके खड़ा होना।

९. लाठी बाएँ बगल में लपेटकर दाहिना हाथ बगल में और बायाँ हाथ नीचे रखना। दाहिना पैर पीछे बाजू के २ फुट ६ इंच के अन्तर पर ४५° डिग्री के कोने पर डालकर पीछे फिरकर खड़ा होना। लाठी की नोक जमीन की तरफ रखना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०. पाँव नजदीक लाकर अंक २ की भाँति पूर्व स्थिति में खड़ा रहना।

११. लाठी सीधे बगल में लपेटकर बायाँ हाथ बगल में और दाहिना हाथ नीचे रखना। बायाँ पैर आगे २ फुट ६ इंच के अन्तर पर डालकर खड़ा रहना। लाठी की नोक जमीन की तरफ रखना।

१२. आगे पड़ा हुआ पाँव पहले के स्थान पर लाकर अंक २ की स्थिति में खड़ा होना।

१३. लाठी बाएँ बगल में लपेट कर दाहिना हाथ बगल में और बायाँ हाथ नीचे लाकर और दाहिना पैर आगे २ फुट ६ इंच के अन्तर पर डालकर खड़ा होना। लाठी की नोक जमीन की तरफ रखना।

१४. पैर पीछे ले जाकर अंक २ की स्थिति में खड़ा होना।

१५. पहले दावँ के अंक ७ की स्थिति में रहना।

१६. पहले दावँ के अंक ८ ,,

लाठी-लपेट---बाएँ हाथ की अँगुलियाँ लाठी और दाहिने हाथ के कन्धे के बीच में ले जाकर लाठी पकड़ना और लाठी के नीचे की नोक ऊपर करके लाठी बाएँ बगल में ले जाना।

एक-कतार---आगे बढ़े हुए विद्यार्थियों को आठ और चार कदम पीछे और पीछे रहने वालों को चार कदम आगे आकर अपनी-अपनी जगह पर एक कतार में खड़ा हो जाना चाहिए।

नमस्ते---दाहिना हाथ झटके से कांडे में से मरोड़ना। हाथ का पंजा छाती पर आड़ी रखना। हथेली छाती की तरफ रखना और अपना मस्तक थोड़ा आगे झुकाना। ये दोनों क्रियाएँ एक ही वक्त होनी चाहिए। इसके बाद गरदन ऊपर उठाकर सामने देखना और हाथ पूर्व स्थिति में झटके से लाना।

कवायद विराम---यह हुक्म मिलते ही तमाम विद्यार्थियों को 'दाहिना रुख' करके बाएँ बाजू को एक कदम आकर दाहिने बाजू की तरफ से रुआब से दौड़ते हुए मैदान छोड़ कर चले जाना।

प्राकृतिक चिकित्सा की सफलता

चिकित्सा की सफलता इसी में है कि प्रत्येक उपचार के कराते समय और उपचार के बाद भी रोगी को आनन्द का अनुभव हो। प्राकृतिक दृश्यावली, वातावरण की स्वच्छता एवं पवित्रता, सयुक्ति व्यवस्था समय पर सेवा, व्यक्तिगत देखभाल रोगी के आनन्द को और भी बढ़ाते तथा आरोग्य की प्राप्ति शीघ्र कराते हैं। यह सब इकट्ठे आपको प्राकृतिक चिकित्सा के नवीनतम साधनों से सुसज्जित 'आरोग्य मन्दिर' में ही मिलेंगे। आरोग्य मन्दिर की निजी डेयरी भी है जहाँ गायों को रोगी के रोग के अनुसार खाद्य और जड़ी बूटियां खिलाकर दूध में औषध गुण उत्पन्न किया जाता है। स्त्रियों की चिकित्सा के लिए विशेष प्रबन्ध एवं सकुटुम्ब रहने वालों के लिए अलग अलग क्वार्टर हैं।

विशेष जानकारी के लिए उत्तर के लिए डाक टिकट के साथ आज ही लिखिए। चिकित्सा पत्र-व्यवहार द्वारा भी की जाती है। **पत्र व्यवहार का पताः—**

आरोग्य मन्दिर
सूँड़ी कुवां, बशारतपुर
गोरखपुर

विट्ठलदास मोदी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शारीरिक विकास

सरदार पृथ्वी सिंह

सरदार पृथ्वी सिंह ने माध्यमिक स्कूलों और कॉलेजों में शिक्षा ग्रहण करने वाले छात्र-छात्राओं के शारीरिक विकास का न्यूनतम माप स्थिर करने के लिए एक योजना प्रस्तुत की है। इस योजना का हम हृदय से स्वागत करते हैं और आशा करते हैं कि इसका देश-व्यापी प्रचार होगा।—सं०

हमारे उष्ण प्रधान देश में शारीरिक तथा मानसिक परिश्रम के लिए सबसे उत्तम समय प्रातःकाल या सन्ध्या है जब सूर्य अपनी कोमल किरणों द्वारा हमारे शरीर में एक प्रकार की नई जीवन-शक्ति का संचार कर देता है। सन्ध्या समय प्रायः सभी जगहें सार्वजनिक खेलों के प्रेमियों से घिरी रहती हैं और नगर के अप्राकृतिक जीवन ने नवयुवकों को रात को देर तक जागने की ऐसी शिक्षा दे रक्खी है कि देर तक सोए रहने के कारण वे प्रातःकाल जाग सकते ही नहीं। इसका फल यह होता है कि नवयुवक प्रातःकाल के शारीरिक व्यायाम के लाभों से वंचित रह जाते हैं।

स्कूल और कालेजों की सामग्रियाँ परिमित हैं। व्यायाम के विषय में भी विद्यार्थी अपने माता-पिता को उसी प्रकार तंग करते हैं जिस प्रकार वे दूसरे विषयों में, और अपने यहाँ की शिक्षा-प्रणाली ऐसी खर्चीली है कि विद्यार्थियों के माता-पिता खर्च के मारे तबाह रहते हैं। इन विषयों को ध्यान में रखते हुए बड़ा असन्तोष होता है। एक ऐसे पिता का उदाहरण लीजिए जिसे अपने पाँच वयस्क लड़कों को पढ़ाना पड़ता है। उसे तो स्कूल की फीस के लिए कम से कम २० रुपए देने पड़ते हैं और लड़कों की उम्र के साथ-साथ यह रकम भी बढ़ती जाती है। यद्यपि यह हालत बम्बई के स्कूलों की है पर अन्यत्र भी यह दशा कोई अच्छी नहीं है और यह स्पष्ट है कि स्कूल की फीस इससे अधिक बढ़ाई नहीं जा सकती।

यह बात भी बिलकुल साफ है कि हम लोगों को मानसिक धुरन्धर और शारीरिक टिड्डियों की आवश्यकता नहीं है। हमारा तो ध्येय यह होगा कि हम शरीर और मन दोनों के धुरन्धर उत्पन्न करें। हमें अपने भावी नागरिकों को शरीर से इतना बलवान बनाना होगा कि वे जीवन की बाधाओं का मुस्कुराते-मुस्कुराते सामना कर सकें। हम यह नहीं चाहते कि कसी भी पुरुष या स्त्री को केवल शारीरिक अयोग्यता के कारण मुँहकी खानी पड़े। मेरी समझ में तो कोई इस बात से इनकार न करेगा कि यदि किसी पुरुष या स्त्री को समाज का एक सहायक सदस्य बना कर रखना हो तो यह आवश्यक होगा कि प्रत्येक युवक और युवती के लिए जिसकी अवस्था १६ वर्ष की हो चुकी हो शारीरिक योग्यता की न्यूनतम मर्यादा कायम कर दी जाय। अब प्रश्न यह खड़ा होता है कि क्या शारीरिक योग्यता का कोई माप स्थिर किया जा सकता है? क्या हम अपने बालकों की शारीरिक योग्यता माप सकते हैं और यदि ऐसा सम्भव हो तो क्या हम ऐसा कर सकते हैं कि इस परिमिति की प्राप्ति, बिना किसी अधिक खर्च के और बिना वर्तमान पाठ्यक्रम को किसी प्रकार की असुविधा पहुँचाए, हो सके। इस प्रश्न का उत्तर मिलता है कि 'हाँ'। हम शारीरिक योग्यता की एक न्यूनतम परिमिति स्थापित कर सकते हैं जो एक सोलह वर्ष की अवस्था वाले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साधारण बालक में आवश्यक हो। यह परिमिति बिना एक पाई खर्च किए, वर्तमान मानसिक विकास के क्रम को बिना कोई बाधा पहुँचाए और सार्वजनिक खेलों की बिना किसी क्षति के स्थिर की जा सकती है।

वर्त्तमान योजना का ध्येय

वर्तमान योजना के ध्येय के विषय पर सरकारी कमेटी की रिपोर्ट बड़ी विद्वत्तापूर्ण है। परन्तु उस कमेटी द्वारा प्रस्तुत योजना की प्राप्ति के लिए कुछ समय की प्रतीक्षा आवश्यक है। यदि इस योजना का पूर्ण रूप दिया जाय तो इस बात का पूर्वाभास मिलता है कि इसके लिए काफी जगह और काफी संख्या में योग्य शिक्षक चाहिएँ। इसके पहले कि सरकारी योजना पूरी तौर से चालू हो जाय यह नितान्त आवश्यक है कि प्रत्येक शिक्षा-विचारक और व्यायाम-सिद्धान्ती एक ऐसी योजना प्रस्तुत करे जो वर्तमान परिस्थिति में शीघ्र ग्रहणीय हो। मैं ऐसी योजना प्रस्तुत करने का साहस करता हूँ। इस योजना का यह लक्ष नहीं है कि शारीरिक शिक्षा में प्रवीण करने का कोई विस्तृत क्रम उपस्थित किया जाय। परन्तु इस योजना का मतलब यह है कि प्रत्येक बालक और बालिका को कम से कम इतनी शारीरिक सुविधाएँ मिल जानी चाहिए जिससे वह इस योग्य हो जायँ कि संसार में रह सकें।

कोई भी ऐसा विद्यार्थी मानसिक विषयों के लिए उपयुक्त न समझा जाय जो इस योजना में प्रस्तुत शारीरिक योग्यता की जाँच में सन्तोष न दे सके। इस प्रकार यह योजना गवर्नमेंट और जनता के सामने यथाशीघ्र और चारों ओरि स्थिर करने योग्य न्यूनतम क्रम उपस्थित करने का एक प्रयास मात्र है।

१६ वर्ष के विद्यार्थियों के उत्तीर्ण होने की जाँचों की एक लिस्ट दी जाती है—बालिकाओं की जाँचें कुछ आसान रहेंगी और इनमें कुछ परिवर्तन रहेंगे।

शारीरिक योग्यता की परीक्षाएँ

१६ वर्ष के विद्यार्थियों के शरीर-निर्माण की कसरतें—

नाम	समय और अन्य विवरण
१—एक मील की दौड़	६ मिनट ३० सेकंड
२—एक मील चलना	१४ मिनट
३—सौ गज की दौड़	१६ सेकंड
४—१० मील साइक्लिग	१ घंटा
५—एक साँस में १०० बैठक	अपरिमित समय

मेरा विश्वास है कि इस मर्यादा की प्राप्ति से शारीरिक उन्नति की अच्छी नींव पड़ जायगी। इसकी प्राप्ति एकबारगी नहीं पर नैतिक अभ्यास द्वारा हो सकती है।

६—लम्बी कूद	१३ फीट
७—ऊँची कूद	४ ,,
८—दंड कूद	६ ,,
९—वजन फेंकना	१८ ,, (किसी १६ पौंड की भारी वस्तु को १२ फुट की दूरी पर फेंकना।)

यदि इन विषयों पर काबू हो जाय तो ये केवल शारीरिक संयम मात्र के लिए ही पर्याप्त नहीं पर दैनिक जीवन के लिए भी उपयुक्त होंगे।

१०—५० दंड	अपरिमित समय
११—४ बार अपने बाजुओं पर अपना शरीर उठाना	,,
१२—३६ सूर्य-नमस्कार	,,

१३—अपनी तौल के एक आदमी को १०० गज तक ढोना

१४—निम्नलिखित आसनों की शुद्ध क्रिया—

१—शीर्षासन
२—सर्वांगासन
३—हलासन
४—भुजंगासन
५—धनुरासन

ऊपर बतलाए हुए क्रम शरीर के ऊपरी भाग को बलशाली बनाने के लिए और मस्तिष्क के छिद्रों को उत्तम रस पहुँचाने के लिए बहुत आवश्यक हैं।

लड़कियों की परीक्षाएँ परिशिष्ट में दी हुई हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सामूहिक खेल

सहयोगी और खेलाड़ी प्रवृत्ति उत्पन्न करने के लिए स्कूली जीवन में टीम के खेलों का होना नितान्त आवश्यक है, क्योंकि खेल ही एक ऐसी वस्तु है जो मनुष्य को पूर्ण बनाती है। यह ठीक ही कहा गया है कि मनुष्य वही पूर्ण है जो खेलाड़ी हो। इस वस्तु को प्राप्त करने के लिए पाश्चात्य खेलों को नहीं लेना चाहिए जिनके लिए अधिक जगह और महँगे यन्त्रों की आवश्यकता हो—यह वस्तु भारतवर्षीय राष्ट्रीय खेलों को व्यापकता देने से अधिक प्राप्त की जा सकती है। 'खो-खो', 'हु तु तु' और आट्या-पाट्या इत्यादि खेलों को उचित प्रोत्साहन मिलना चाहिए। स्कूल के प्रत्येक छात्र और छात्रा को शारीरिक योग्यता के सर्टिफिकेट के लिए इन खेलों की दक्षता का पूरा प्रदर्शन करना होगा।

सामूहिक व्यायाम

हमें अपमानित होना पड़ता है व्यक्तिगत रूप से मैदान में संगठित और अनुशासित संघ-शक्ति का प्रदर्शन नहीं कर सकने के कारण। इतिहास में बरावर हम इस वात को देखते आ रहे हैं कि यद्यपि किसी भी राष्ट्र के गुणों की व्यक्तिगत प्राप्ति में हम सबसे ऊँचे ठहरते हैं फिर भी उसका संगठित रूप देने में हम काफी पीछे हैं। अपने इस राष्ट्रीय अवगुण को दूर करने के लिए हमें इस बात का यथासाध्य प्रयत्न करना चाहिए कि हमारे नवयुवकों के मस्तिष्क में अनुशासन की शक्ति का संचार हो जाय। यह तो तभी सम्भव हो सकता है जब हम अपने नवयुवकों को सामूहिक व्यायाम की शिक्षा दें। सामूहिक व्यायाम की शिक्षा के लिए यदि लाठी, भाला, लेजिम और मुग्दल इत्यादि को सम्मिलित कर लिया जाय तो बड़ा लाभ होगा। जहाँ ऐसी छोटी-छोटी वस्तुएँ उपलब्ध न हों वहाँ सामूहिक व्यायाम का काम पैर के ड्रिल और हाथों के संचार द्वारा कराके काम चलाया जा सकता है।

ये ही तीन प्रकार की जाँचें हैं जिनमें मैट्रिकुलेशन परीक्षा में चुने जाने वाले प्रत्येक छात्र अथवा छात्रा को उत्तीर्ण होना होगा। भिन्न-भिन्न स्कूलों में क्रियात्मक रूप देकर यह देखा जायगा कि यह निश्चित मर्यादा कहाँ तक उचित है। इस तरफ यत्न आरम्भ हो चुका है और इसका नतीजा थोड़े ही समय में जनता और सरकार दोनों के सामने आ जायगा। इन जाँचों को कम से कम पूरे तीन साल तक जारी रखना चाहिए। इसके वाद यह निश्चित है कि हम साधारण स्वास्थ्य में उन्नति अवश्य पाएँगे और इन तीन सालों में हमें पूरी सामग्री मिल जायगी जिससे हम इस योजना में पर्याप्त उन्नति भी कर सकेंगे साथ ही एक समय ऐसा आवेगा कि ये जाँच अपने विद्यार्थियों के लिए इतने आसान पड़ेंगे कि हमें इन्हें फिर से कसना पड़ेगा। हम सभी को यह आशा रखनी चाहिए कि ऐसा समय दूर न हो।

सोलह वर्ष के एक विद्यार्थी को शारीरिक उन्नति की किस परिमिति पर पहुँच जाना चाहिए यह बतलाने का साहस तो मैंने किया परन्तु इस परिमिति पर वह किस प्रकार पहुँच जाय इसका विवेचन तो मैं उस संस्था के व्यायाम-शिक्षक पर ही छोड़ता हूँ जिस संस्था का वह विद्यार्थी हो। सावधानी के लिए एक शब्द यह कह देना आवश्यक है कि तेरह वर्ष से कम अवस्था वाले विद्यार्थियों को पुट्ठों की कठिन कसरतें और १३ वर्ष से अधिक अवस्था वाली लड़कियों को हॉपिंग, जंपिंग और स्किपिंग जहाँ तक हो नहीं कराना चाहिए। शिक्षक को यह देखना भी आवश्यक है कि विद्यार्थियों में व्यायाम के आधिक्य की बुराइयाँ न आने पाएँ।

इस योजना को देखने से यह शीघ्र ही मालूम होगा कि हमें बहुतायत में व्यायाम-शिक्षकों की आवश्यकता नहीं है। एक ही शिक्षक पर्याप्त है। उसे लड़कों को एक या दो बार व्यायाम की उचित रीति बता कर इस बात की निगरानी करते रहना चाहिए।

प्रतियोगिता

प्रतियोगिताओं की रीति में परिवर्तन होना नितान्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आवश्यक है। प्रतियोगिता की भावना को इस साँचे में ढालना चाहिए कि मनुष्य में उत्तमोत्तम गुणों का संचार हो। अब तक प्रतियोगिता के प्रवर्तकों का ध्येय यह रहा है कि प्रतियोगियों में इस प्रकार का जोश भर दिया जाय कि वे उत्साहित होकर अपनी अधिकतम शारीरिक शक्ति और कौशल दिखला सकें। परन्तु अपने अनुभव से मैं यह अच्छी तरह कह सकता हूँ कि उस ध्येय की प्राप्ति कभी नहीं हो पाई है। स्कूल और कालेजों के चुने चुनाए व्यक्ति प्रति वर्ष प्रतियोगिता के लिए निहित विषयों के पुरस्कार लेते रहे हैं परन्तु इससे नवयुवकों में द्वेष और ईर्ष्या की और प्रतियोगिता में भाग लेने से अलग रहने की प्रवृत्ति जागरित होती जा रही है। प्रतियोगिता का ध्येय प्रतियोगियों की संख्या बढ़ाना होना चाहिए और यह होना चाहिए कि वे एक निश्चित परिमिति प्राप्त करें।

शारीरिक योग्यता की माप ऊँची करने के लिए हम निम्नलिखित जाँच का क्रम प्रस्तुत करते हैं——

१. एक मील दौड़ की प्रतियागिता	५ मिनट १० सेकेंड
२. १२ मील की साइकिल प्रतियोगिता	६० मिनट
३. १०० गज दौड़ की प्रतियोगिता	१३ सेकेंड
४. एक मील चलने की ,,	१० मिनट
५. १५० दंड	अपरिमित समय
६. ४ फीट ६ इंच की ऊँची कूद	,,
७. १५ ,, ,, लंबी ,,	,,
८. ७ ,, दंड-कूद	,,
९. १२ ,, रस्सी की चढ़ाई	,,
१०. अपने आपको सात बार ऊपर खींचना	,,
११. अपनी तौल के बराबर बोझ लेकर १०० गज दौड़ना	,,
१२. सूर्यनमस्कार १००	,,

(लड़कियों की जाँच का क्रम परिशिष्ट में दिया गया है)

सभी संस्थाओं को उचित है कि वे अपनी-अपनी संस्थाओं के सभी ऐसे विद्यार्थियों का समुचित सम्मान करें जिन्होंने व्यायाम की यह परिमिति प्राप्त कर ली है। इस सम्मान के प्रकार कई हो सकते हैं। किसी सुप्रसिद्ध व्यक्ति द्वारा जो उसका सभापति बनाया गया हो उन्हें माला दिलाई जा सकती है, सबों का एक सामूहिक फोटो लेकर उस संस्था के हाल में टाँगा जा सकता है और उसे अखबारों में प्रकाशनार्थ भेजा जा सकता है। इस प्रकार सफलता का कोई चिन्ह उन सबों को दिया जा सकता है।

ऊपर दिए हुए सभी माप यद्यपि हम लोगों की दृष्टि से कम हैं लेकिन इसे क्रमशः ऊँचा उठाया जा सकता है। इसीसे जनसाधारण की शारीरिक और क्रियात्मक-शक्ति बढ़ेगी।

संस्थाओं के अन्दर खेल-प्रतियोगिता

जब हम भिन्न-भिन्न संस्थाओं के अन्दर प्रतियोगिता का प्रबन्ध करते हैं तो यह आशा की जाती है कि हम शारीरिक योग्यता का माप कुछ ऊँचा रक्खें। इसके साथ-साथ हमें इस बात का उपाय भी सोचना चाहिए जिससे हम संस्थाओं को अधिक से अधिक संख्या में प्रतियोगी भेजने की प्रेरणा कर सकें।

ऐसी प्रतियोगिताओं के लिए निम्नलिखित सीमा स्थिर की जायगी——

१. एक मील की दौड़	५ मिनट १५ सेकेंड
२. १२ मील की साइक्लिंग	५० मिनट
३. १०० गज की दौड़	१२ सेकेंड
४. १ मील चलना	१० मिनट
५. २०० दंड	अपरिमित समय
६. ऊँची कूद	४ फीट १० इंच
७. लम्बी कूद	१८ फीट
८. दंड कूद	८ फीट ६ इंच
९. रस्सी की चढ़ाई	१५ फीट
१०. अपने आपको ऊपर खींचना	१० बार
११. अपने बराबर तौल का बोझ	

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकर २०० गज चलना

१२. १५० सूर्यनमस्कार अपरिमित समय

(लड़कियों की जाँच का क्रम परिशिष्ट में है)

प्रतियोगी संस्थाओं को उचित है कि वे किसी अथवा प्रत्येक विषय के लिए कम से कम १० प्रतियोगी भेजें। वांछित तो यह है कि भिन्न-भिन्न विषयों के लिए दस-दस विद्यार्थियों के अलग-अलग संघ हों।

प्रतियोगिता के प्रत्येक विषय के लिए १० नम्बर सुरक्षित होने चाहिए। यदि दस की संख्या में किसी विषय में आठ विद्यार्थी सफल हों तो प्रति विद्यार्थी एक नम्बर के हिसाब से वह आठ नम्बर पाने का अधिकारी होगा। प्रत्येक विषय पर हम एक पुरस्कार रख सकते हैं उस संघ के लिए जो दस में दसों नम्बर प्राप्त कर ले और यदि सभी प्रतियोगी संघ पूरे नम्बर प्राप्त कर लें तब वे सभी उस पुरस्कार के भागी होंगे। सब विषयों में मिल कर जिस संस्था का सबसे अधिक नम्बर आवेगा उस संस्था को चैम्पियनशिप का एक शील्ड मिलेगा।

संस्थाओं के बीच संघ-खेल और सामूहिक व्यायाम की प्रतियोगिता

खेल में दो दलों के बीच प्रतियोगिता का यह अर्थ कभी नहीं होना चाहिए कि खेल में हार जाने वाले दल का नाम लिख लिया जाय, बल्कि उसका मतलब यह होना चाहिए कि वह दल अपने उस कौशल का प्रदर्शन करे जिसमें उसने दक्षता प्राप्त कर ली है और इस प्रकार वास्तविक दक्षता अथवा कौशल प्राप्त करने के लिए एक सामंजस्यपूर्ण वातावरण की सृष्टि करे, जिससे उस कौशल की प्राप्ति में दूसरे दलों को भी आनन्द मिले। यदि कौशल का चातुर्य प्रदर्शित करना मात्र प्रतियोगिता का मतलब हो तो दो प्रतियोगी संस्थाओं की प्रतियोगिता के वर्तमान ढंग को बन्द कर देना चाहिए। ऐसा सबसे अच्छी तरह तब हो सकता है जब प्रतियोगी एक ही संस्था के हों। जो संस्थाएँ राष्ट्रीय खेलों के प्रदर्शन में दिलचस्पी रखती हों उन्हें उचित है कि वे खेल के लिए दो दल तैयार करें और प्रत्येक विषय के प्रदर्शन के लिए पाँच मिनट का समय रक्खें। ऐसा करने से सभी संस्थाएँ अपने सुन्दर प्रदर्शनों से दर्शकों की प्रशंसा और सहायता प्राप्त कर सकती हैं। टूर्नामिन्टों के अन्दर आजकल जितने विषय प्रदर्शित किए जाते हैं उन सबों का प्रदर्शन ऊपर बताए हुए ढंग पर किया जा सकता है।

आरम्भ में तो प्रतियोगिता के वर्द्धकों, व्यवस्थापकों, संरक्षकों को स्थापित परम्परा के तोड़ने में कुछ कठिनाई होगी परन्तु प्रतियोगिता में एक सुव्यवस्थित वातावरण पैदा करने के लिए तथा युवकों की शारीरिक आवश्यकताओं की खातिर यह आवश्यक होगा कि हम उस स्थापित परम्परा को तोड़ने के लिए दृढ़ संकल्प कर लें जो किसी प्रकार हमारे हित के लिए सहायक नहीं हो सका है।

समयान्तर में जनता उस सत्य विचार की प्रशंसा करने लगेगी जो प्रतियोगिता के लिए अत्यावश्यक है और इससे उसको इस योजना में निहित पथ पर खेलों को ले चलने में पर्याप्त सुविधा मिलने लगेगी।

हम सभी इस बात के लिए आतुर हैं कि बम्बई की सरकार कमिटी के सभी सलाहों को कोई रूप देकर कार्य में परिणत करे जिससे युवकों का शारीरिक पुनरुद्धार हो। परन्तु अनुभव से यह मालूम होता है कि हमें इस विषय पर निर्भर बहुत नहीं होना चाहिए क्योंकि कई बार गवर्नमेन्ट ने कई कमेटियाँ बनाईं अनेक गलतियों को दूर करने के लिए और आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अनेक ठोस ढंग पेश करने के लिए परन्तु इन कई सालों से हम सदा निराश ही होते आ रहे हैं। इसलिए कोई कारण नहीं है कि हम गवर्नमेंट कमेटी की रिपोर्ट पर आश्रित रहें। पर केवल एक ही बात है जिससे हम यह आशा कर सकते हैं कि कमेटी की उस प्रस्तुत योजना द्वारा कुछ हाथ आ जा सकता है: वह यह है कि यह कमेटी उस सार्वजनिक गवर्नमेंट की नियुक्त की हुई थी जिसे राष्ट्र की जनता ने शासन की बाग डोर दी थी। इस बात से हम गाफिल नहीं हैं कि हमारा राष्ट्र सामग्रियों के लिहाज से बहुत गरीब है और इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

योजना को कार्यरूप में परिणत करने में बहुत सी बाधाएँ हैं। अतएव मैं नवयुवकों के अभिभावकों से यह अनुरोध करता हूँ कि जिस योजना को देश के सामने मैंने प्रस्तुत करने का साहस किया है उसके प्रति काफी ध्यान दें। यदि इस योजना का व्यवहार सारे देश में हो जाय तो एक साधारण गणना से यह बताया जा सकता है कि हमारे पास चार लाख ऐसे शिक्षित युवक हो जायँगे जो अपने-अपने विद्यालयों में प्रतिदिन अपना समय न्यूनतम शारीरिक योग्यता की प्राप्ति के लिए लगाते हों। मेरी यह हार्दिक इच्छा है कि राष्ट्र के नेता इस योजना की आवश्यकता को भाषण और अखबारों द्वारा प्रचार करेंगे।

परिशिष्ट

(क) शारीरिक योग्यता की जाँचें—

१६ वर्ष की बालिकाओं के लिए

नं०	नाम	समय प्रमाण और अन्य विस्तार
१.	आधी मील की दौड़	४ मिनट
२.	एक मील चलना	२० मिनट
३.	१०० गज की दौड़	२० सेकेंड
४.	एक साँस में २५ सूर्यनमस्कार	

५. निम्नलिखित आसनों की शुद्ध क्रिया—

१—शीर्षासन
२—सर्वांगासन
३—हलासन
४—भुजंगासन
५—धनुरासन
६—शलभासन

(ख) बालिकाओं के बीच प्रतियोगिता की जाँचें—

१.	आधे मील की दौड़	३ मिनट
२.	१ मील चलना	१४ ,,
३.	१०० गज की दौड़	१६ सेकेंड
४.	सूर्य-नमस्कार	एक साँस में ५०

(ग) संस्थाओं के बीच प्रतियोगिता—

बालिकाओं के लिए

१.	आधे मील की दौड़	२ मिनट ३० सेकेंड
२.	एक मील चलना	१२ मिनट
३.	१०० गज की दौड़	१४ सेकेंड
४.	सूर्य-नमस्कार	एक साँस में ७५

नोट—संघ-खेल और सामूहिक व्यायाम में बालक और बालिकाओं में कोई भेद करने की आवश्यकता नहीं है।

वैद्यों, हकीमों, डाक्टरों तथा व्यापारियों के लिये

सस्ती टेबलेट (गोली) बनाने की मशीनें

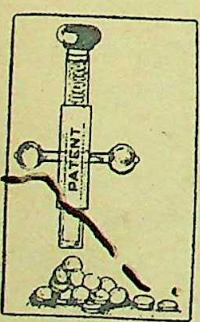

यह पीतल की बहुत ही मज़बूत बनीं हुई हैं। वर्षों चलतीं हैं। १ घंटे में कई हज़ार हर छोटे बड़े साईज़ की टेबलेट (गोलीं) बनातीं हैं। मू० टेबलेट मशीन ४), गोली मशीन मू० ५)। दोनों एक साथ मंगाने पर सिर्फ ८) में मिलेंगीं। डाक खर्च ।।=) पृथक।

मैनेजर—भारत कंपनी नं० ८, सिरसागंज [यू० पी०]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पढ़िये ! लाभ उठाइये !!

सुन्दर, स्वस्थ और सुखी जीवन के इच्छुकों को ये पुस्तकें पढ़नी चाहियें

(१) रोगों की अचूक चिकित्सा (तृतीय संस्करण) : श्री जानकीशरण वर्मा, बी० ए० .. २॥)
(२) सरल शरीर-विज्ञान : श्री जानकीशरण वर्मा, बी० ए० .. .. .. १॥)
(३) प्राकृतिक चिकित्सा : श्री केदारनाथ गुप्त०, एम० ए० .. .. २)
(४) मठा उसके गुण तथा उपयोग (परिवर्द्धित संस्करण) : श्री महेन्द्रनाथ पाण्डेय .. ।=)
(५) दूध ही अमृत है : श्री हनुमानप्रसाद गोयल .. .. .. १॥)
(६) स्वास्थ्य के नुस्खे : 'जीवन-सखा' कार्यालय .. .. .. =)॥
(७) क्या और कैसे खायें : डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह .. .. .. ।)
(८) ब्रह्मचर्य ही जीवन है : श्री स्वामी शिवानन्द .. .. .. १)
(९) आदर्श-भोजन : श्री एल० एन० चौधरी .. .. ॥)
(१०) सचित्र हठयोग : श्री स्वामी शिवानन्द .. .. १)
(११) कब्ज या कोष्ठबद्धता : डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह .. .. .. ।-)
(१२) फलाहार और फल-चिकित्सा : श्री नारायण प्रसाद अरोड़ा .. .. १)
(१३) फल उनके गुण तथा उपयोग : श्री केशवकुमार ठाकुर .. .. .. १)
(१४) आरोग्य साधन : महात्मा गांधी .. .. ।)
(१५) नवीन चिकित्सा विज्ञान (जल-चिकित्सा) : श्री लूई कूने .. .. .. ३॥)
(१६) आकृति-निदान : श्री लूई कूने .. .. २)
(१७) बच्चों की रक्षा : श्री लूई कूने .. .. ।=)
(१८) मैं निरोग हूँ या रोगी : श्री लुई कूने .. .. ।=)
(१९) उपवास-चिकित्सा : बरनर मैकफेडन .. .. १=)
(२०) स्वास्थ्य के लिए शाक तरकारियाँ : श्री महेन्द्रनाथ पाण्डेय .. .. .. १)
(२१) हम सौ वर्ष कैसे जीवें : श्री केदारनाथ गुप्त, एम० ए० .. .. .. १)

Rs. as.

(२२) Nature Cure by H. Lindlahr, M.D. 6 0
(२३) Practical Nature Cure by Dr. K. L. Sharma, N.D. .. 4 0
(२४) Pranayama by Dr. K. L. Sharma, N.D. 0 2
(२५) The Nature Cure of Eye defects by Dr. L. Kamesvaram M.A., N.D. 0 8
(२६) Your Diet in Health and Disease by Harry Benjamin .. 0 12

स्वास्थ्य संबंधी पुस्तकें मिलने का पता :—

मैनेजर, स्वास्थ्य ग्रंथ-भंडार, ८७, हिम्मतगञ्ज, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निराश जनों की एक ही आशा

प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह

जहाँ कितने ही असाध्य समझे जाने वाले रोगियों ने अपने को अच्छा कर लिया

स्वास्थ्य-गृह में किन रोगों की चिकित्सा सफलता-पूर्वक होती है ?

साधारण दुर्बलता, स्नायु-दौर्बल्य, सभी तरह के चर्म रोग, रक्ताभाव, पुराना जुकाम, खाँसी, क़ब्ज़, संग्रहणी, प्लुरिसी, दमा, बवासीर, निद्राभाव, आमाशय का ज़ख्म, आँतों की ख़राबी, सभी तरह के ज्वर, घेघा, धमनियों का कड़ा हो जाना (Arteriosclerosis), रक्त चाप का बढ़ना और कम होना (High and Low Blood pressure), उपान्त्रदाह, (Appendicitis), जहरबाद (Carbuncle), गठिया, पित्ती उछलना, पेचिश, सब तरह के दर्द और सूजन, गुर्दे की बीमारी, यकृत की बीमारियाँ, नपुंसकता, मधुमेह (बहुमूत्र), मोटापा, दुबलापन, यक्ष्मा, कर्णरोग, उन्माद, सभी तरह के स्त्री-रोग इत्यादि इत्यादि ।

रोगियों की सुविधा का विशेष प्रबन्ध

रोगियों के आराम और सुविधा के ख्याल से स्वास्थ्य गृह में इस साल से कुछ परिवर्तन कर दिए गए हैं । इस वर्ष से इसकी तीन श्रेणियाँ कर दी गई हैं । प्रथम श्रेणी वाले रोगियों से कमरे का किराया १५) और परामर्श शुल्क ३०) मासिक और द्वितीय तथा तृतीय श्रेणी के रोगियों से क्रम से १०) कमरे का किराया और २०) परामर्श शुल्क, तथा ७) कमरे का किराया और १०) परामर्श शुल्क मासिक लिए जायंगे। सुविधाओं का पूरा विवरण पत्र लिख कर मँगाइए । पत्र के साथ टिकट भेजना जरूरी है ।

मैनेजर—प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह, ८७ हिम्मतगंज, इलाहाबाद

PRINTED BY J. K. SHARMA AT THE ALLAHABAD LAW JOURNAL PRESS, ALLAHABAD
PUBLISHED BY ... SINHA, 87 HIMMATGANJ, ALLAHABAD
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized

जीवन सखा

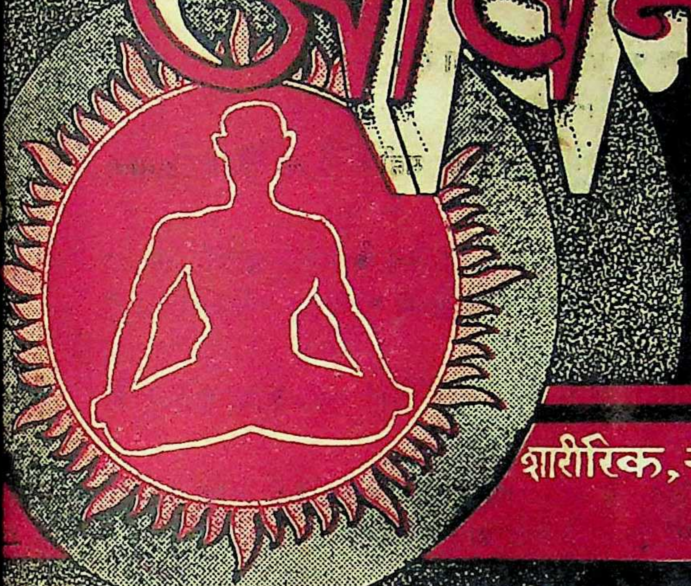

शारीरिक, मानसिक और नैतिक स्वास्थ्य का पथ-प्रदर्शक

संयुक्त प्रान्त, मध्य प्रान्त तथा बिहार के शिक्षा विभागों द्वारा स्वीकृत

इस अङ्क में पढ़िये

१—रोग क्यों ?	...	(अवतरण) ...	१३९
२—भोजन की समस्या	...	श्रीकृष्णदास भट्ट ...	१४०
३—नीरा ...	...	श्री महेन्द्रनाथ पाण्डेय, आयुर्वेद-विशारद	१४४
४—हैजा ...	...	डाक्टर बालेश्वरप्रसाद सिंह ...	१४७
५—सूर्य चक्र जागरण	...	श्री श्यामसुन्दर झँवर ...	
६—नासूर अच्छा हो गया	...	श्री प्रकाशचन्द्र खंडेलवाल, कानपुर	१५४
७—आपकी प्रकृति आम्ल है या क्षार	...	डा० मेनूकल, ...	१५६
८—सम्पादकीय	...	...	[illegible]
१०—प्रश्नोत्तर	...	...	१६१

जुलाई ९४३

संपादक

डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह

वार्षिक मूल्य ३॥) प्रति अङ्क का

१० फरवरी १९४४ को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'जीवन-सखा' के नियम

(१) 'जीवन-सखा प्रतिमास इक्कीसवीं तारीख को प्रकाशित होता है।

(२) इसका वार्षिक मूल्य ३॥) तथा एक प्रति का ।~) है।

(३) सज्जन-गण जनवरी या जुलाई से ही ग्राहक बनें; यों किसी महीने से भी ग्राहक बनाया जा सकता है।

(४) मास के अन्त तक 'जीवन-सखा' का अंक न मिले तो १५ दिन के अन्दर इसकी सूचना पोस्ट आफिस से प्राप्त उत्तर के साथ कार्यालय को दे देनी चाहिए। अन्यथा मुफ्त में वह अंक फिर न मिलेगा।

(५) पत्र भेजते समय अपनी ग्राहक-संख्या नाम और पूरा पता साफ साफ अक्षरों में लिखना चाहिए। उत्तर के लिए टिकट भेजना आवश्यक है।

(६) प्रकाशनार्थ भेजे जाने वाले लेख कागज के एक तरफ हाशिया छोड़ कर साफ अक्षरों में लिखे जाने चाहिए। लेख सम्बन्धी चित्र भी भेजे जा सकते हैं।

(७ नमूने की प्रति के लिए ।~) का टिकट भेजना जरूरी है।

पता—मैनेजर, 'जीवन-सखा' कार्यालय, ११ लूकरगंज, इलाहाबाद

चश्मा छोड़िए

स्वास्थ्य-गृह में नेत्र-रोगों के लिए

विशेष प्रबन्ध

स्थानीय यूनिवर्सिटी के एक विद्यार्थी लिखते हैं—'I have been cured of myopia by Dr. Sinha's method within a fortnight. Thanks to his insight in the treatment." S. Srivastava. विशेष विवरण के लिए नीचे लिखे पते से पत्र-व्यवहार कीजिये।

मैनेजर—स्वास्थ्य-गृह

११ लूकरगंज, इलाहाबाद

दमे का अचूक इलाज

डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह, संचालक प्राकृतिक स्वास्थ्य-गृह द्वारा अब तक अनेकानेक रोगियों पर किए गए अनुभूत प्रयोगों का अद्भुत चमत्कार! ९९ प्रतिशत रोगियों को रोग मुक्त करने का रेकार्ड! इसके लिए रोगियों को हमारे स्वास्थ्य-गृह में सिर्फ एक महीने से लेकर २ महीने तक रहने की जरूरत है। स्वास्थ्य-गृह में रोगियों के रहने का समुचित प्रबन्ध। घर पर रह कर चिकित्सा कराने वाले रोगियों का इलाज पत्र-व्यवहार द्वारा होता है। विशेष विवरण के लिए टिकट के साथ आज ही लिखें।

मैनेजर—स्वास्थ्य-गृह

११ लूकरगंज, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन सखा

वर्ष ८ | जून-जुलाई १९४३ | अङ्क ६-७

रोग क्यों ?

रोग के दो कारण होते हैं, बाहरी (Objcetive) और भीतरी (Subjective)। शारीरिक धर्म अथवा स्वास्थ्य-सिद्धान्त के विरुद्ध आचरण करना रोग का वाह्य कारण और अनिष्ट-कारी मनावृत्तियों का असंगत प्रयोग तथा अहितकर चिन्ता, कल्पना इत्यादि उसके भीतरी कारण होते हैं।

शरीर और मन के समस्त रोग इन्हीं दो कारणों से होते हैं। हम जानते हैं कि स्वास्थ्य-रक्षा के लिए पुष्टिकर भोजन, विशुद्ध जल, संयमित इन्द्रिय परिचालन, परिमित परिश्रम और समुचित निद्रा और इसके साथ ही साथ दैनिक जीवन में कुछ सद्भ्यास (Well regulaled habits) की भी आवश्यकता होती है। जिस प्रकार इन सबके बिना स्वास्थ्य भंग होता है, उसी प्रकार काम, क्रोध, लोभ, हिन्सा, द्वेष इत्यादि मनोवृत्तियों का असंगत और असंयत व्यवहार अथवा अपने या दूसरे के सम्बन्ध में अनिष्ट करने वाले चिन्तन द्वारा देह और मन में तरह-तरह की व्याधियां उत्पन्न हुआ करती हैं। वाह्य कारण स्थूल भाव से शरीर में और भीतरी कारण सूक्ष्म रूप से मन के भीतर काम करते हैं। इसलिए बाहरी रोग सहज में मालूम हो जाता है, किन्तु रोग का मूल भीतरी ही कारण होता है। सभी रोग पहले मन में उपजते हैं, बाद में शरीर में प्रकट होते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भोजन की समस्या

##卐 श्री हैरो बेंजमिन के विचार 卐

लेखक—श्री कृष्णदास भट्ट

[ब्रिटेन के प्रसिद्ध प्राकृतिक चिकित्सक श्री हैरी बेंजमिन को कौन नहीं जानता ? आपकी एक परम उपयोगी पुस्तक है—'योर डायट—इन हेल्थ एन्ड डिज़ीज़' (तन्दुरुस्ती और बीमारी में क्या खाँय ?) प्रस्तुत लेख उसी पुस्तक में से भारतीयों के लिए अनावश्यक अंश निकाल कर भारतीय ढङ्ग पर लिखा गया है, ताकि हम इससे भर पूर लाभ उठा सकें—लेखक ।]

आज संसार में हमें रोग और अस्वास्थ्य के जो चिह्न चारों ओर दिखाई पड़ते हैं उसका मुख्य कारण है—बिना समझे बूझे भोजन करना। जब तक इसकी उचित दवा नहीं की जाती तब तक चाहे जितनी दवाएँ कीजिए, रोग जाने का नाम न लेगा। आज के वैज्ञानिक चाहे जितने आविष्कार करें उनसे तब तक कोई स्थायी लाभ नहीं हो सकता जब तक रोग के इस असली कारण की दवा नहीं की जाती।

भोजन की समस्या अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है, परन्तु मजेकी बात तो यह है कि डाक्टर और वैज्ञानिक इसकी ओर तो जरा भी ध्यान नहीं देते, उल्टे अपनी सारी शक्ति कीटाणुओं की खोज और उनके संहार में लगा देते हैं। हमारे स्वास्थ्य के ठेकेदार हमारे भोजन की ओर तो ख्याल करते नहीं, रोग के कीटाणुओं के पीछे ही परेशान रहते हैं! उसका नतीजा होता है कि 'मर्ज़ बढ़ता ही गया ज्यों ज्यों कि दवा की!' ऐसे असंख्य उदाहरण हैं जब कि केवल भोजन में सुधार, नियमित आहार-विहार, व्यायाम तथा सूर्य-स्नान आदि से लोग सर्वथा चंगे हो गये और सो भी वे लोग जिन्हें असाध्य कहकर डाक्टर लोग जवाब दे चुके थे!

जनता की अनभिज्ञता

जब स्वयं डाक्टरों का यह हाल है तो साधारण जनता की भोजन सम्बन्धी अनभिज्ञता पर आश्चर्य करने की बात ही क्या है! लोग यह जानते ही नहीं कि हम भोजन क्यों करते हैं, हमें क्या खाना चाहिए, कब खाना चाहिये और कितना खाना चाहिये? स्वाद ने उनकी आदत इतनी बिगाड़ दी है कि सादा, सप्राण और प्राकृतिक भोजन तो उन्हें फूटी आँख नहीं भाता, उल्टे चटपटा, मसालेदार, निष्प्राण और अप्राकृतिक भोजन ही उन्हें रुचता है। शरीर की आवश्यकता कितनी है और कब उसे भोजन की जरूरत है ये बातें ताक पर रखी रहती हैं और लोग असमय, बिना वास्तविक भूख के, आवश्यकता से कहीं अधिक चीजें पेट में ठूंस लेते हैं। रीति-रिवाज, रहन-सहन और आदत ही इस विषय में उनकी पथ-प्रदर्शिका है। ज़रूरत और गैर जरूरत की बात तक नहीं सोचते!

निष्प्राण भोजन

आज हमारे सामने जो भोजन उपस्थित किया जाता है उसमें इस बात का कोई ध्यान नहीं रखा जाता कि वह हमारे स्वास्थ्य की दृष्टि से हितकर हो। उसमें हमारे स्वाद की पूर्ति का ही सबसे अधिक ख्याल किया जाता है। तरह तरह की मिठाइयां, अचार, मुरब्बे चटनियां, आइस-क्रीम, पेय, डब्बों का दूध, मक्खन तथा अन्य असंख्य खाद्य पदार्थ जो हमें प्रतिदिन खाने को मिलते हैं, स्वाद के लिए उनके असली पोषक तत्वों की बलि चढ़ा दी जाती है। मिर्च-मसाले डालकर, तेज घी आदि में भूनकर, उनके सार पदार्थ का बिलकुल कचूमर निकाल दिया जाता है!

यह बात स्वप्न में भी न सोचिये कि जो वस्तु खाने में, स्वाद में बढ़िया लगती है वह भोजन की दृष्टि से भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'बढ़िया' है। वस्तुतः बात तो यह है कि जो स्वादिष्ट वस्तुएं आपके सामने घर, बाहर, होटल या दावत में पेश की जाती हैं वे अजीज भले ही हों 'किन्तु उत्तम भोजन' की श्रेणी की वस्तु नहीं होतीं। 'उत्तम भोजन' में तो मेल मिलावट का अथवा उसका रूप विकृत करने की कोई बात ही नहीं होती। प्रकृति ने उसे जिस रूप में उत्पन्न किया है उसी रूप में वह सर्वश्रेष्ठ होता है।

गाजर, आलू, सेब या नासपाती को छीला, उबाला या पकाया नहीं कि उसका प्राकृतिक लवण नष्ट हुआ। हरे शाक गरम पानी में पकाये नहीं कि उनका खाना व्यर्थ हो गया, वे कौड़ी काम के भी न रह गये। परन्तु हो क्या, आज सारा सभ्य संसार यही तो करता है। गाजर का हलुवा बनता है, आलू उबाल कर उसका पानी भी फेंक दिया जाता है और छिलका भी। हरे साग पकाते समय मिर्च मसालों से भूनकर अथवा गरम पानी में उबालकर सर्वथा सारहीन बना दिये जाते हैं!

यही नहीं सफेद मैदा, भूसी निकाला हुआ सफेद आटा या डबल रोटी, मिल का कुटा चावल, सफेद शकर, पर्ल बार्ली-सब हमारे भोजन की वस्तुएं हैं। सर्वथा निष्प्राण! इनमें जितने पोषक तत्व थे वे सब हमारे व्यापारी समुदाय ने निकाल बाहर कर दिये और निस्सार पदार्थ हमारे सामने ला रखे खूब बढ़िया आकर्षक रूप में! ये बच्चों के लिए तरह तरह की मिठाइयां क्या हैं कैसी हैं? इस पर हम कत्तई ध्यान नहीं देते। इनके फल-स्वरूप हमारे बच्चे दिन दिन दुर्बल और रोग का शिकार बनते जाते हैं यह बात हम स्वप्न में भी नहीं सोच सकते।

बच्चों की मिठाइयों का असर

हाल में अमेरिका में जांच पड़ताल हुई तो पता चला कि इस वैज्ञानिक और सफाई के युग में भी ४ लाख बच्चे हृदय की बीमारियों से १० लाख बच्चे क्षय रोग से, १० लाख बहरापन या कान के रोगों से, ४० लाख पोषक तत्वों के अभाव से, ६० लाख टांसिल बढ़े होने से, १ करोड़ दांतों के रोग से पीड़ित हैं और १॥ करोड़ बच्चों का स्वास्थ्य ऐसा है जिसकी ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है!

इन हृदय दहला देनेवाले आंकड़ों की ओर ध्यान देना प्रत्येक माता पिता का कर्तव्य है! 'बच्चोंका भोजन' अथवा 'बच्चों की मिठाई' के नाम पर बिकने वाली चीजों की ही यह मुख्यतः करामात है। इनके बदले यदि उन्हें ताजे फल और हरे शाक खाने को मिलें तो मजाल है कि वे बीमार पड़ जायँ? उनके साथ यदि थोड़ा ताजा दूध, थोड़ी सी चोकरदार आंटे की रोटी, मक्खन, क्रीम, शहद और कुछ सूखे मेवे उन्हें मिल जायँ फिर तो उनकी बाढ़ और तन्दुरुस्ती आदर्श हो उठे।

आज के सभ्यता के युग में बच्चों के लिए बिकनेवाले बाजारू खाद्य या पेय पदार्थों, मिठाइयों तथा आकर्षक अन्य चीजों की बिलकुल बिक्री बन्द कर देना आवश्यक है।

एलफ्रेड मेककेन ने 'साइन्स आफ ईटिंग' नामक पुस्तक में लिखा है—'भोजन में मिलावट करने से पशु, मानव अथवा मूक प्राणी स्वर्ग का रास्ता नापते हैं, परन्तु भोजन में इतनी अधिक मिलावट होने पर भी कोई व्यक्ति अदालतें जाकर मुकदमा नहीं दायर करता कि अमुक खाद्य पदार्थ ने मेरे बच्चे को मार डाला!'

दाँतों के रोगों का कारण

हमारी नयी पीढ़ी के दांत इतने कमजोर क्यों हैं, इस प्रश्न पर आपने कभी विचार किया है? दांतों के डाक्टर गली-गली में बढ़ते जा रहे हैं इसका मुख्य कारण क्या है? इसका एकमात्र कारण यही है कि शरीर को उचित मार्ग से भोजन द्वारा उचित मात्रा में प्राकृतिक लवण नहीं मिलते! उस कमी की पूर्ति अन्यत्र से की जाती है। शरीर के भीतर दांतों में ही प्राकृतिक लवण का खजाना है। ९६ % वहाँ पर लवण और प्राकृतिक पदार्थ हैं। भोजन से जब खटिक (कैलशियम) और प्राकृतिक लवण नहीं मिलते तो शरीर दांतों से उन्हें लेकर उनकी पूर्ति कर लेता है। इसी का नतीजा है कि छोटी उमर से ही दांत खराब होने लगते हैं।

एक उदाहरण

११ अप्रैल १९१५ को पता चला कि 'क्रोनप्रिंज विलहेम' नामक जर्मन क्रूजर अमेरिका के न्यूपार्ट न्यूज स्थान से थोड़ी दूर समुद्र में लंगर डाले पड़ा है और उसके ५०० में से ११० व्यक्ति एक ऐसे रोग से आक्रान्त हैं जिसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डाक्टर 'बरी बेरी' कह कर पुकारते हैं। वह २२५ दिन से लगातार समुद्र में ही था। श्री मेककैन, जो एक खाद्य पदार्थ बनाकर बेचने वाली भारी कम्पनी के खाद्य रासायनिक थे और यह आविष्कार करके कि ये कम्पनियाँ अपना ही उल्लू सीधा करती हैं जनता का स्वास्थ्य चाहे चूल्हे में जाय चाहे भाड़ में, उससे अलग होकर उनका भण्डाफोड़ करने में प्रवृत्त थे और खाद्य पदार्थों के अन्वेषण में ही अपना जीवन खपा रहे थे किसी भांति इसका सुराग लगा कर जहाज पर पहुँचे और उन्होंने बीमारों को देखकर बताया कि इनकी बीमारी का कारण और कुछ नहीं निष्प्राण भोजन है। आपने उन्हें ठीक करने का ठेका लिया और ताजे फलों तथा तरकारियों के रसपर रखकर सबके सब मरीजों को बिलकुल चंगा कर दिया! उनमें से कुछ की हालत तो बहुत ही बिगड़ी हुई थी और डाक्टर लोग परेशान थे कि आखिर इन्हें हो क्या गया!

पर श्री मैककेन तो जानते थे कि सफेद रोटी, मिल के कुटे चावल, पर्ल बार्ली, सफेद चीनी, अण्डे की सफेदी, छिले आलू, मांस-मछली तथा अन्य अनेक निष्प्राण व्यंजनों के कारण इन लोगों की यह दशा हो गयी है। खनिज पदार्थों और प्राकृतिक लवणों के अभाव में ही ये लोग पंगु हो रहे हैं। बस, जहां उपर्युक्त निष्प्राण भोजन सर्वथा बन्द कर उन्हें ताजे फलों तथा तरकारियों का रस दिया जाने लगा कि उनके स्वास्थ्य पर जादू का-सा असर होने लगा और बहुत थोड़े समय के भीतर सभी बीमार सर्वथा स्वस्थ्य हो गये।

मांसाहार से हानि

दूध, पनीर या अण्डे में मनुष्य को जितना प्रोटीन मिलता है उतना मांस में नहीं मिलता। दूसरे दूध आदि में के हानियां हैं ही नहीं जो मांस में हैं। मांस में जितना प्रोटीन उपलब्ध है उससे नहीं अधिक दूषित और निस्सार पदार्थ पेट में जाता है। इसके अलावा जब कोई पशु मारा है जात। तो उसकी पाचन क्रिया आदि अकस्मात स्थगित हो जाने से वे निस्सार पदार्थ पेट में ही रह जाते हैं, जो साधारण अवस्था में मल-मूत्र के रूप में बाहर निकल निकल जाते। मुर्दे आदि में ये विषैले पदार्थ भरे रहते हैं और इन्हीं को लोग बड़े स्वाद से खाते हैं! यों यदि मांस खाना ही इष्ट हो तो वह कच्चा और बिना पका, रक्त और हड्डी सहित खाना चाहिये। पर भला कोई 'सभ्य' पुरुष ऐसे कैसे खा सकता है? तब उसकी राक्षसों में गणना न हो उठेगी?

मनुष्य के दाँत और शरीर के विभिन्न अङ्गों की रचना सें स्पष्ट है कि वह मांसाहारी प्राणी नहीं बनाया गया। उसके लिए तो फल ही प्रकृति के अनुकूल भोजन है। गर्म देशों में तो मांस बिलकुल ही न खाना चाहिये। मलेरिया और पेचिश से बचने के लिए ऐसा करना अनिवार्य है। मांस में ६६ प्रतिशत ऐसे दूषित और निस्सार पदार्थ रहते हैं जो मूत्र रूप में बाहर निकल जाते हैं। इसलिए मांस के स्थान पर मनुष्य को रसीले फल और सलाद का व्यवहार करना चाहिये। मांस न खाना चाहिये।

हमारे पेय पदार्थ

मदिरा, चाय और कहवा का पेय के रूप में प्रयोग होता है परन्तु इनसे स्वास्थ्य जिस बुरी तरह चौपट होता है, यह छिपा नहीं है। सभी जानते हैं कि इनके अत्यधिक प्रयोग का कैसा भयंकर दुष्परिणाम होता है। चाय में थीन और टैनिन नाम के दो भयानक विष होते हैं। कहवा में भी वही बात है। इन विषों के प्रभाव से पहले कुछ उत्तेजना महसूस होती है परन्तु वह और कुछ नहीं, स्वास्थ्य को और अधिक गिराने की भूमिका मात्र होती है। कहवा का असर दिल और गुर्दे पर अधिक बुरा पड़ता है। इनके द्वारा आरम्भ में थोड़ी स्फूर्ति के धोखे मनुष्य अपना स्वास्थ्य बहुत बुरी तरह चौपट कर लेता है। इन सारे पेयों का सर्वथा बहिष्कार कर देना चाहिये।

भोजन के समय किसी भी तरल पदार्थ का, यहां तक कि पानी का भी, पीना अच्छी आदत नहीं। पानी या तो भोजन के पहले ही पी लिया जाय अथवा भोजन करने के २ या ३ घण्टे बाद। सर्वोत्तम पेय तो ताजे रसीले फलों का रस होता है। प्रातःकाल दो एक सन्तरे का रस अथवा रात के समय एक गिलास गरम पानी में आधे नीबू का रस गुर्दे तथा शरीर के भीतरी अङ्गों के स्वास्थ्य के लिए परम लाभदायक सिद्ध होगा।

भोजन और रोग

हमारे शरीर की उन्नति, विकास और पोषण के लिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिन पदार्थों की आवश्यकता है वे यदि उसे न मिलेंगे तो उसका अस्वस्थ रहना स्वाभाविक है। साथ ही माना कि आवश्यक पदार्थ मिल गये परन्तु शरीर के दूषित द्रव्य को बाहर निकालने के लिए आवश्यक खनिज पदार्थ और लवण न मिले तो भी शरीर में दूषित पदार्थ के एकत्र होने से शरीर का अस्वस्थ होना आश्चर्य की बात नहीं। दो कारण तो ये हुये। इनके अलावा तीसरा कारण अस्वस्थ रहने का यह है कि शरीर को जितने खाद्य पदार्थ की आवश्यकता है, उससे कहीं अधिक पदार्थ उसमें ठूँस लेना और उसकी रोजाना सफाई और पाचन क्रिया न होते रहने से उसमें दूषित पदार्थों का ढेर लग जाना तथा पाचनेन्द्रियों का अत्यधिक परिश्रम करने में अपनी शक्ति का अपव्यय करने के लिए वाध्य होना। किन्तु सभ्य संसार इन सब बातों का आदी है। और इसीसे शरीर में रोगों की उत्पत्ति होती है।

रोग क्या है? शरीर को साफ करने की प्रकृति की स्वाभाविक चेष्टा का ही नाम रोग है। जब दूषित मल शरीर में एकत्र हो जाता है तो जुकाम, सर्दी खांसी बुखार आदि के रूप में शरीर इस बात की हमें सूचना देता है। किन्तु यदि प्रकृति की इस स्वाभाविक रीति से सफाई के मार्ग में बाधा डालकर दूषित पदार्थों को बाहर न निकलने देकर भीतर ही दबा देने की चेष्टा की जाती है तो उसका परिणाम भयंकर होता है और वह यथा समय गठिया, साइटिका, सूजन आदि के रूप में बाहर आता है। अथवा और भी आगे बढ़ने पर फेफड़ों, लिवर, गुर्दों, मस्तिष्क आदि में असर होने लगता है और उसे हम ब्रंकाइटिस, हृद रोग, कैंसर और पक्षाघात के रूप में देखते हैं।

सर्वांश में ऐसा तो नहीं कहा जा सकता कि सब रोग केवल भोजन की गड़बड़ी से होते हैं तंतु प्रणाली की थकावट, रक्त तथा नाड़ियों में खराबी चोट धक्का आदि कुछ अन्य बातें भी रोग का कारण होती हैं; परन्तु इस बात का दावा किया जाता है कि अधिकांश रोगों का कारण भोजन सम्बन्धी गड़बड़ी, निष्प्राण मात्रा से अत्यधिक खाया गया गंदे तरीके से तैयार किया गया असंतुलित भोजन ही है। भोजन यदि ढङ्ग से किया जाय, उसकी सब बातें समझ कर खाया-पिया जाय, तो आज के जमाने में चारों ओर फैले रोगों का नाम निशान तक मिट जाय।

कीटाणुओं का सिद्धान्त

और कीटाणु? शायद आप पूछें। ये बेचारे तो प्रकृति के छोटे छोटे सफाई के दरोगा हैं। मानव शरीर में बरसों से जो दूषित पदार्थ एकत्र होते रहते हैं उन्हें ये बड़ी आसानी से साफ कर सकते हैं। जैसे मक्खियां शरीर के 'बाहर' की सफाई करती हैं उसी तरह ये छोटे छोटे कीटाणु 'शरीर के भीतर' की। यदि हमारे वैज्ञानिक शरीर को कीटाणुओं से मुक्त करने के बजाय शरीर के भीतर एकत्र गन्दगी और दूषित पदार्थों को दूर करने की ओर अपना ध्यान लगाते तो रोग की असली 'जड़ ही दूर हो जाती और ये कीटाणु, जिनके पीछे वे रात दिन परेशान रहते हैं, खुदबखुद गायब हो जाते!

शरीर की सफाई

शरीर के स्वास्थ्य के लिए केवल क्षारमय पदार्थों की ही आवश्यकता नहीं होती, कुछ मात्रा में जल और शुद्ध ओषजन की भी जरूरत पड़ती है। ओषजन सांस के द्वारा शरीर के भीतर पहुंचती है और फिर रक्त वाहिनी नसों से सारे शरीर में चक्कर लगाती है। शरीर की सफाई ४ मार्गों से होती है—कार्बन दी ओषद के द्वारा फेफड़ों की पसीने द्वारा त्वचा की, मूत्र द्वारा गुर्दे की और मल द्वारा पेट की अँतड़ियों की। इसीलिए स्वास्थ्य शास्त्री गहरी सांस लेने पर इतना जोर देते हैं ताकि उसके द्वारा शरीर का कार्य संचालन मजे में हो।

शरीर की ढङ्ग से सफ़ाई न होना अस्वास्थ्य का चिह्न है। जिस व्यक्ति के शरीर के दूषित पदार्थ शरीर से ठीक ढङ्ग से बाहर नहीं निकलते वह खांसी, सर्दी, जुकाम और बुखार का अकसर शिकार बना रहता है।

और कब्ज? वह तो इस बात का प्रमाण है कि शरीर के भीतरी मोरचे की हालत दुरुस्त नहीं है! आज सभ्य समाज में कब्ज का ऐसा बोलबाला इसलिए है कि वह प्रकृति के आदेशों की अवहेलना कर गलत तरीके से अपना जीवन बिता रहा है। उसने अपनी आदतें ऐसी बिगाड़ रखी हैं कि वह रात दिन इसी प्रकार के कष्ट भोगा करता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है और अपने दुःख के असली कारण की खोज ही नहीं करता।

हमारा पेटूपन

प्रकृति द्वारा स्वाभाविक रूप में मिले फल, पोषक तत्व साग-सब्जी के स्थान पर आज हमारे भोजन में असंख्य कृत्रिम पदार्थ घुस आए हैं। हमारे स्वाद की प्रवृत्ति का दूषित लाभ उठाकर हमारे सामने प्रति दिन जो भोजन रखा जाता है उसमें पोषक तत्व तो नाम मात्र को होता है। हां, हमारी स्वाद की वासना की पूर्ति का भरपूर सामान रहता है। बाजार में मिलने वाली मिठाइयाँ, चटनियाँ, अचार, मुरब्बे, घर में बना तरह तरह का तला-भुना सामान, घी तेल आदि में जला कर बनाई गई चीजें सर्वथा निस्सार होती हैं। और उन्हीं को हम रोज खाते हैं—सुबह, दोपहर और शाम। साथ ही हमें वे इतनी रुचती हैं कि हम भूख से चौगुनी अठगुनी चीजें पेट में डालते चले जाते हैं और रुकने का नाम नहीं लेते। यह पेटूपन आज के सभ्य समाज का बहुत बड़ा रोग है। शरीर की आवश्यकता से चौगुना पचगुना भोजन पेट में ठूंसने का ही कुफल हम 'रोग' के नाम से पुकारते हैं। पेट पर इतना अधिक बोझ डाला जाता है जिसका कोई ठिकाना नहीं और एक बार की सफाई हो नहीं पाती और दूसरी, तीसरी, चौथी तह जमती जाती है!

समस्या का हल

तब इसका उपाय? उपाय इसका बिलकुल सरल है। हमें इस बात को अच्छी तरह सीख लेना होगा और केवल सीखने से ही काम न चलेगा उसे जीवन में कार्यान्वित करना होगा कि हम क्यों भोजन करते हैं, हमें क्या खाना चाहिये, कब खाना चाहिये और कितना खाना चाहिये। बरसों प्रकृति के अनुरूप चलकर, शरीर की आवश्यकता भर ही सादा सप्राण और शुद्ध प्राकृतिक भोजन करके ताजे फल, हरे साग तथा उचित मात्रा में पोषक तत्व लेकर ही हमें अपनी स्वाद वृत्ति पर विजय प्राप्त करनी होगी। तभी हम अपना शरीर स्वस्थ रख सकेंगे और बीमारियों के चक्कर से सदा के लिए मुक्त हो सकेंगे। इसके अलावा इस समस्या का दूसरा कोई हल हो नहीं सकता।

—०—

नीरा

ले०—श्री महेन्द्रनाथ पाण्डेय, आयुर्वेद-विशारद

[नीरा को संस्कृत में ताल-क्षीर कहते हैं। इससे स्पष्ट है कि प्राचीन समय में यह केवल नशा खोरी की चीज नहीं समझी जाती थी, बल्कि इसके अद्भुत गुणों से भी लोग परिचित थे। आहार-शास्त्र की दृष्टि से अगर देखा जाय तो इसमें दूध से भी अधिक उपयोगी आहार-तत्व मिलते हैं। इसका औषध-गुण भी अनुपमेय सिद्ध हुआ है। क्षय-रोग से पीड़ित होने वाले रोगियों के लिए तो यह अमृत के समान है। पाण्डेय जी ने इस लेख में नीरा के इन्हीं अद्भुत गुणों पर प्रकाश डाला है। —स०]

ताड़ और खजूर के ताजे रस को नीरा कहते हैं। इसी रस को बासी करके इसमें नशीला गुण आ जाने पर लोग नशे के लिए पीते हैं। नशे के रूप में इस्तेमाल करने से लोगों के पैसे और स्वास्थ्य दोनों नष्ट होते हैं। इस पर गवर्नमेंट की इक्साइज़ ड्यूटी लगती हैं, इस कारण यह मँहगी भी बिकती है।

नशे के अलावा इसका प्रयोग औषधि रूप में भी होता है और बेरी बरी जैसे भयानक रोग के लिए यह रामबाण समझा जाता है। यदि लोग नशे के लिये न पी कर स्वास्थ्य सुधारने के लिये पियें तो अधिक लाभ हो। नीरा खजूर और ताड़ का रस होता है इसलिए इसमें खजूर और ताड़ का गुण अवश्य रहता है। इसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक तरह से फल का रस समझना चाहिए। और फलों के रस में जो रक्त में क्षार बढ़ाने वाली तथा रक्त को साफ करने की अपूर्व शक्ति होती है वह रसमें काफी मात्रा में पाई जाती है।

नीरा के सम्बन्ध में कुछ अधिक कहने के पहले थोड़ा सा खजूर और ताड़ के विषय में बता देना भी आवश्यक जान पड़ता है।

खजूर

खजूर और छुहाड़ा दोनों एक जाति के पेड़ हैं, दोनों के गुण भी एक से हैं। इसलिए दोनों का साथ साथ वर्णन समझना चाहिए। खजूर एक प्रकार का मीठा फल है। इसका पेड़ अरब, सिन्ध आदि मरु-स्थानों में होता है। यह पुष्टिकारक, शुक्र और बल को बढ़ाने वाला तथा मूर्च्छा और बात-पित्त नाशक माना जाता है। खजूर दो प्रकार का होता है एक जंगली और दूसरा देशी। जंगली खजूर को सेंधी और खरक आदि कहते हैं। यह बहुत ऊँचा नहीं होता और हिन्दुस्तान में बंगाल, बिहार, गुजरात, केरोमंडल आदि देशों में बहुत होता है। लगाये हुए खजूर में जड़ के पास अंकुर निकलते हैं, जंगली में नहीं। जंगली के फल किसी काम के नहीं होते खजूर की ताड़ी से गुड़ और सिरका भी बनाया जाता है। लगाये जाने वाले खजूर को पिण्ड खजूर कहते हैं। इस प्रकार के खजूर सिंध पंजाब, गुजरात और दक्षिण में अधिक होते हैं। वहां इनकी खेती की जाती है, पौधे बीज से और जड़ के पास के अंकुरों से पैदा किये जाते हैं। जब पेड़ आठ वर्ष का पुराना हो जाता है तब फलता है। फल बड़े बड़े घौदये लगते हैं। जब तक पक नहीं जाते अधिक पानी देने की जरूरत रहती है। पकने के समय फल पीले होते हैं और फिर फूल आते हैं और अन्त में लाल हो जाते हैं, इन फलों को छुहारा कहते हैं। सिंध में पेड़ के पके फल को खुरमा और पकने के पहले तोड़े गये फल को छुहारा कहते हैं।

बम्बई, काहिरा आदि से जो खजूर आता है उसमें चीनी मिला कर दबा देते हैं। इस कारण वह अधिक मीठा हो जाता है। किन्तु उसमें सड़ने का मादा अधिक हो जाता है क्योंकि इसकी चीनी में उबाल आता है।

खजूर या छुहारा शराब पीने से उत्पन्न हुए विकार को शान्त करता है। यह दस्तों को रोकता है बढ़ते हुए पीव को रोकता है, तथा अधिक पसीना आना, लार गिरना, अधिक आँसू बहना भी रोकता है। इससे छुहारा पाक नामक एक उत्कृष्ट औषधि बनती है जिससे ताकत आती है और वीर्य बढ़ता है।

खजूर की ताड़ी

बल वीर्य बढ़ाने वाली एवं कुछ नशा करने वाली और दीपन है। बात कफ-नष्ट करने वाली, रुचिकारक और पित्त बढ़ाने वाली है।

ताड़

ताड़ की तरफ बड़े लोगों का ख्याल नहीं गया है यह भी बंगाल, बिहार और दक्षिण रत्नागिरि आदि में बहुत होता है। इसके फल गरीब लोग खाते हैं। इससे एक प्रकार का रस निकलता है जो बासी करके नशे के लिए दिया जाता है। ताड़ के रस का गुड़ और मिश्री दोनों बनते है और औषधि प्रयोग में सब आते हैं। ताड़ से जो रस निकलता है जब तक वह ताजा रहता है ताजे फल के समान गुण रखता है। रोगों को दूर करने के लिए जिस प्रकार फलों का रस प्रयोग में लाया जाता है उसी प्रकार इसका भी प्रयोग किया जाता है। इसकी चीनी ईख की चीनी के समान नहीं होती बल्कि फलों की चीनी के समान होती है। इसलिए बच्चों को देने से लीवर (यकृत) नहीं बढ़ता जैसा कि ईख की चीनी देने से होता है। अब लोगों का ध्यान इस ओर गया है और ताड़ की मिश्री और गुड़ काफी मात्रा में बनने लगे हैं।

तुरन्त की ताड़ी नशीली नहीं होती, और पित्त शान्त करती है। ताड़ी खट्टी होने पर वात शान्त करती है, और पित्त उत्पन्न करती है। रक्त-पित्त में ताजी ताड़ी का प्रयोग लाभदायक होता है। खांसी के साथ रक्त आना बन्द हो जाता है और बल बढ़ता है। ताड़ी की पुलटिस घाव और फोड़े के लिए अत्यन्त उपकारी होती है ताड़ी से सिरका भी बनाया जाता है।

बेरी बेरी नामक भयानक रोग में डाक्टर लोग ताड़ी देना पसन्द करते हैं। इस रोग में गुर्दे की खराबी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और आंत की कमजोरी के कारण शरीर का जहर नहीं निकलता, भूख कम लगती है. पांव में सूजन आ जाती है, दिल कमजोर हो जाता है । इस रोग की उत्पत्ति विटामिन बी' की कमी के कारण मानी जाती है । ऐसा माना जाता है कि विटामिन 'बी' पहुँचाने से यह रोग नहीं होता है। बेरी-बेरी अकसर उन लोगों को होता है जो मशीन का छंटा चावल, जिसमें से कना बिलकुल निकाल दिया जाता है, खाते हैं अथवा सेल्हा चावल खाते हैं और मिल का पेरा कड़वा तेल इस्तेमाल करते हैं ।

बेरी बेरी वस्तुतः हाजमे का रोग है । हाजमा बिगड़ने से गुर्दा भी ठीक काम नहीं करता और आंतें भी नहीं करतीं और शरीर की वहिष्करण क्रिया भी ठीक नहीं हो पाती जिससे जहर शरीर में इकट्ठा हो जाता है । जिनको बेरी बेरी नामक रोग होता है उनको आंख का एक भयानक रोग जिसे ग्लाइकोमा कहते हैं अकसर होता है ।

ताजी ताड़ी में विटामिन 'बी' काफी मात्रा में होता है साथ ही यह अग्नि को भी दीप्त करती है, खाने को हजम करती है, साथ ही इसमें पेशाब लाने का जबरदस्त गुण है, इस कारण शरीर का मल बाहर निकालने में यह मदद पहुँचाती है । साथ ही सूजन को और बात कफ को कम कर देती है । इसी गुण से मुग्ध होकर डाक्टर लोग इसका इस्तेमाल करते हैं ।

जिस तरह फलों का कल्प प्रायः सभी रोगों को दूर करने और रक्त की अम्लता कम करके आरोग्य प्राप्त करने के लिए किये जाते हैं उसी प्रकार नीरा का कल्प भी होता है ।

रत्नागिरि की तरफ जब लोग अधिक बीमार होते हैं और औषधि से आराम होने की आशा नहीं रह जाती तब वे जंगल में चले जाते हैं इसे वे वन-निवास कहते हैं। उधर ताड़ के पेड़ बहुत हैं वहां लोग ताड़ का रस ही खाते पीते हैं, यहां तक कि आबदस्त लेने के लिए भी ताड़ का रस ही इस्तेमाल करते हैं और कुछ दिनोंमें नीरोग हो जाते हैं । यह है ताड़ के रस की महिमा ।

ताड़ के रस का कल्प अकेला और मिश्र दोनों तरह का होता है । जब ताड़ का रस अधिक न मिले तो एक वक्त रोटी सब्जी खाने को दिया जा सकता है और बाकी वक्त ताड़ का रस । जहां तक हो सके ताड़ का रस ताजा ही लेना चाहिये ।

खमीर या मद्य सार हाजमे को बढ़ाता है। पेट में जाने के बाद इसका कुछ अंश जरूर पैदा हो जाता है जिसके कारण हाजमा दुरुस्त होता है । हाजमा की गड़बड़ी से उत्पन्न होने वाले सभी रोगों में इसका प्रयोग किया जाता है ।

निर्बलता और आलस्य दूर करने के लिए इसका सफल प्रयोग होता है । ताड़ के रस से खजूर का रस अधिक मीठा होता है । क्षय रोग के पूर्व रूप में इसका प्रयोग अद्भुत गुण दिखाता है । मुँह से खून आने में या कफ में रक्त आने में भी नीरा का प्रयोग होता है । यदि कोई नीरा का कल्प न भी कर सके तो भी जितना मिल सके उतना लिया करें । सुबह के समय सूर्योदय से पहले प्रति दिन पीने से साधारण स्वास्थ्य सुधरता है । इसके सेवन से दुबले बच्चे भी मोटे हो जाते हैं ।

नारियल का पानी भी एक तरह का नीरा ही है। उसका प्रयोग भी रोग-नाश के लिए होता है । जिन लोगों को नीरा मिल सके निःसंकोच इस्तेमाल करना चाहिये ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैजा

लेखक—डाक्टर बालेश्वरप्रसाद सिंह

अन्य रोगों की भांति हैजा होने का भी प्रधान कारण शरीर में मल अथवा विजातीय द्रव्य का बढ़ जाना ही होता है। एक ही तरह का दूषित आहार-बिहार करने तथा किसी अस्वच्छ, गन्दे वातावरण के कारण यह संक्रामक रूप धारण कर लेता है। गरमी का मौसम या उमस शरीर में एकत्र दूषित पदार्थ को उभाड़ने वाला तथा उसमें सडांध पैदा करने वाल होता है, इस प्रकार इस मौसम में यह रोग अधिकता से फैलता हुआ पाया जाता है। यह रोग इतना भयानक होता है कि इसमें कुछ ही घन्टे या अधिक से अधिक एक-दो दिन में ही रोगी की मृत्यु हो जाती है। इसके रोक-थाम के लिए डाक्टर लोग जो हैजे का टीका लगाते हैं, वह अचूक उपाय न तो होता है, और न हो ही सकता है। यही कारण है कि इस तरह के निवारक-उपाय किये जाने पर भी हर साल हजारों की संख्या में हैजे से मौतें हुआ करती हैं।

प्राकृतिक चिकित्सा में सभी रोगों की जड़ या बुनियाद एक ही बताई जाती है। इसलिए इस रोग के भी सम्बन्ध में भोजन सुधार पर ही सबसे अधिक ज़ोर दिया गया है। अगर शरीर का खून साफ़ है, उसमें कोई खराबी नहीं है तो हमें कोई भी रोग नहीं सता सकता। जिस व्यक्ति के रक्त में खारापन (alkalinity) है उसमें हैजे के कीड़े अपना विष नहीं फैला सकते। खून में क्षार की मात्रा अधिक होने से हैजे के कीड़े अगर किसी तरह शरीर में प्रवृष्टि हो भी जायँ तो वे तत्काल मर जाते हैं, जिससे शरीर को कोई कष्ट नहीं होता। प्राकृतिक चिकित्सक कीटाणु का होना तो मानते हैं, किन्तु उनका दावा है कि कीटाणु हमारे शरीर की सफाई के लिए, हमारे मित्र के ही रूप में होते हैं, वे हमारे शत्रु नहीं हैं। इसलिए कीटाणुओं के हौवे से हमें घबड़ाने और परेशान होने की कोई जरूरत नहीं है। हमें अपने भोजन तथा अन्दरूनी और बाहरी सफाई पर ही सबसे अधिक ध्यान देना चाहिये।

हमारे रहन-सहन का ढङ्ग भी हमारे शरीर के स्वास्थ्य पर बड़ा असर डालता है। साफ और खुली, हवादार जगह में रहने से रोगों के बढ़ने की कम सम्भावना रहती है। गन्दी जगह में, जहां पर अनेक प्रकार की दुर्गन्ध आती हो, सूर्य का प्रकाश थोड़ा या नहीं के बराबर पहुँचता हो, जहां पर स्वच्छ वायु खूब अधिक मात्रा में नहीं मिलती, घर की छतें जहां नीची होती हैं, और जिनकी भली भांति धुलाई, पुताई और सफाई नहीं होती, वहां हैजा क्या कोई भी रोग हो सकता है।

रक्त की सफाई के लिए हमें हर रोज एक या दो बूंद नींबू का रस पानी में मिला कर पीना चाहिये। कभी-कभी प्याज या पुदीने का रस भी व्यवहार में लाया जा सकता है। ऐसा करने से शरीर का रक्त शुद्ध होगा, रक्त में पहले से जो विकार पैदा हो गए होंगे वे दूर हो जायँगे। हैजे से हिफाजत या बचाव के लिए यही उपाय है।

यदि किसी नगर या गांव में हैजे का प्रकोप फैला हो तो हमको अपने भोजन की ओर ध्यान देना चाहिए। ऐसे समय में अपने भोजन के ढंग और प्रकार को बदल देना चाहिए। भोजन, हलका और जल्द पच जाने वाला होना चाहिए।

ऊपर जो बातें बताई गई हैं, वे हैजे से बचाव के प्रारम्भिक उपाय के तौर पर सावधानी या हिफाजत के ही लिए हैं और उन कारणों का निराकरण करने वाली हैं जिनसे हैजे की बीमारी होती है। अब यहां पर कुछ ऐसे उपाय बताए जाते हैं जिनसे हैजे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की बीमारी हो जाने पर रोगी को फायदा पहुंचाया जा सकता है :—

रोग का निदान

हैजा दो प्रकार का होता है—एक तो वह जिसमें रोगी को कै-दस्त बहुत होते हैं। पेशाब बन्द हो जाना इसका पहला लक्षण है। दो-चार कै-दस्त होने के बाद ही रोगी को मूर्छा सी आने लगती है और वह निःशक्त तथा निर्जीव होने लग जाता है। दूसरे किस्म के हैजे में कै-दस्त और पेशाब बिलकुल बन्द हो जाते हैं। अगर रोगी कै करना भी चाहता है तो भीतर से कुछ नहीं निकलता। पेट फूल जाता है और रोगी की बेचैनी और घबड़ाहट बढ़ जाती हैं। शरीर में, और खास करके शरीर के जोड़ों में, ऐंठन होने लगती हैं। रोग के अन्तिम चरण में रोगी को कभी-कभी हिचकी भी आने लगती है जो दम टूटने के साथ ही बन्द होती है। इस दूसरे किस्म के हैजे में रोगी को साधारण हैजे के मुकाबले में बहुत अधिक कष्ट इसलिए होता है क्योंकि इसमें शरीर के भीतर एकत्र हुए मल को बाहर निकालने के सभी साधन बन्द हो जाते हैं।

उपचार

इन दोनों तरह के हैजों का उपचार करीब-करीब एक ही तरह का चलता है। इनमें जो एक मुख्य अन्तर होता है वह यह है कि सूखे हैजे में रोगी को थोड़ी-थोड़ी देर के अन्तर से २-३ बार एनिमा दिया जाय, इससे रोगी को लाभ होगा। उपचार का अन्य क्रम इस प्रकार होना चाहिये।

(१) हैजा हो जाने पर सबसे पहले यह करना चाहिये कि रोगी को किसी भी तरह की खाने-पीने की कोई चीज न दी जाय। जब तक रोग दूर न हो जाय, रोगी को उपवास कराना चाहिए।

(२) हैजे के रोगी को प्यास अधिक लगती है, इसलिए जब-जब और जितना वह चाहे पानी में नींबू का रस मिला कर उसे पिलाना चाहिये। इससे शरीर के रक्त में क्षार की मात्रा बढ़ जायगी। इस प्रकार तैयार हुआ क्षारमय रक्त हैजे के कीटाणुओं का नाश करने में समर्थ हो जायगा।

(३) पेड़ू पर मिट्टी की गीली पट्टी आध-आध घंटे के लिए एक-एक या दो-दो घण्टे के अन्तर से रोगी के पेड़ू पर लगाना चाहिए। इससे रोगी को बहुत अधिक शान्ति मिलेगी। नीली बोतल का पानी १०-१० मिनट पर एक-एक औंस पिलाना चाहिए। रोग का दौरा कम होने पर उसी हिसाब से इसका प्रयोग भी कम कर देना चाहिये।

(४) रोगी को एक टब में, जिसमें ठण्डा पानी हो, बिठा देना चाहिये। पैरों को बाहर मामूली गरम पानी से भरे बर्तन में रखना चाहिए। पैर वैसे भी साधारण तौर से गरम पानी से भरे बर्तन में रखे जा सकते हैं। यदि इस बीच रोगी को पाखाने जाने की हाजत हो तो उसे तुरन्त टब से निकाल लेना चाहिए। इस तरह हर डेढ़ या दो घण्टे के बाद जब-जब कै या दस्त हो तो उसके बाद मिट्टी की पट्टी और १० मिनट के लिए पेड़ू-नहान (hip bath) अदल-बदल कर या सिर्फ मिट्टी की पट्टी या सिर्फ पेड़ू-नहान जारी रखना चाहिये, और इस क्रम को तब तक जारी रखना चाहिए जब तक कि रोगी को ज्वर न हो जाय। बुखार हो जाने पर रोगी को आराम से लिटा देना चाहिये। इससे शरीर के अन्दर की गरमी निकल जायगी और रोगी को शीघ्र स्वास्थ्य-लाभ हो जायगा।

सफलता के कुछ उदाहरण

जिस हैजे को साधारण लोग तथा बड़े-बड़े डाक्टर समान रूप से इतना सांघातिक और खतरनाक समझते हैं, वे प्राकृतिक चिकित्सा से किस प्रकार अच्छे हो जाते हैं, इसके दो एक उदाहरण लीजिए। एक बार मैं कलकत्ता गया हुआ था। वहाँ मेरे सामने हैजे का एक रोगी लाया गया, जिसे डाक्टरों ने जवाब दे दिया था। इसलिए वह मेरी चिकित्सा में रक्खा गया। मैंने एक शीशी में पानी और नींबू का रस मिला कर रोगी के पीने के लिए रख दिया। इसके साथ साथ अन्य ऊपर बताए गए उपचार जारी रहे। दो दिन में रोगी बिलकुल चंगा हो गया।

किन्तु ऐसे भी उदाहरण हैं जब कि रोगी को सिर्फ पानी में लिटा दिया गया है और केवल इसी से उसकी प्राण-रक्षा हो गई है। अयोध्या में एक साधु को हैजा हो गया। उसने यह विचार करके कि अब कोई मेरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देख-रेख करने वाला तो है नहीं और मैं पड़ा-पड़ा यहीं मर जाऊँगा, सरजू नदी में जाकर बैठ रहा। उसने सोचा, प्राण निकल जाने पर मेरे निर्जीव शरीर को सरजू नदी की तरंगें बहा ले जायंगी। वह मृत्यु की प्रतीक्षा कर रहा था। इस प्रकार वह ७-८ घण्टे तक पानी में ही पड़ा रहा, लेकिन उसकी मौत नहीं आई! निदान, वह पानी के बाहर निकल आया और वह अपने को चंगा पाने लगा।

इसी तरह का एक और भी उदाहरण है, जब कि संथाल परगने में एक हैजे के रोगी की प्राण-रक्षा कर ली गई थी। उस रोगी को सलाइन इन्जेक्शन भी दिया गया लेकिन उसकी हालत बिगड़ती ही गई। इतने में एक संथाल आया। उसने रोगी के कुटुम्बियों से कहा, 'इसे यहाँ से घर ले चलो।' उसने रोगी को अस्पताल से वापस ले जाकर एक तालाब में पानी में बैठा दिया। थोड़ी ही देर बाद रोगी कहने लगा, "मुझे ठण्ठ लग रही है, जल्दी पानी से मुझे बाहर निकाल लो।" लेकिन उस आदमी ने कहा--"अभी आधा घंटे तक और उसी प्रकार पड़े रहो।" उसके कुछ ही देर बाद रोगी को बुखार हो आया। उसके दो दिन बाद वह बिलकुल स्वस्थ था। ये दो उदाहरण प्राकृतिक चिकित्सा की अचूक सफलता के परिचायक हैं।

हैजा दूर हो जाने पर

जब हैजे का रोग शान्त हो जाय, तो धीरे-धीरे उपवास भंग करना चाहिये। पहले दिन रोगी को थोड़ा-सा किसी ताजे फल का रस देना चाहिये। फिर क्रमशः फल के रस की मात्रा बढ़ाई जाय। इसके बाद रोगी को फलाहार कराया जाय। कुछ दिन तक रोगी को फल और शाक-भाजी खाकर रहने के बाद अपने साधारण भोजन पर आ जाना चाहिये।

अनुपम अवसर

'रोगों की अचूक चिकित्सा' के पाठकों के लिए एक स्वर्ण अवसर मिल रहा है। ग्रन्थकार ने पत्र द्वारा चिकित्सा के लिए समय निकालना निश्चय किया है। जो इससे लाभ उठाना चाहते हों वे निम्न-लिखित पते पर अपना पत्र पूरे विवरण के साथ भेज सकते हैं। प्रत्येक पत्र के उत्तर के लिए २=) की फ़ीस है। विवरण में उम्र साधारण स्वास्थ्य, संभवतः वजन, रोग का संक्षिप्त इतिहास, वर्त्तमान कष्ट, जो चिकित्सा अब तक हुई उसका हाल रहना चाहिए।

पता—हर्षवर्द्धन वर्मा, 'तरुण' कार्यालय, नया कटरा, इलाहाबाद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूर्य-चक्र जागरण

लेखक—श्री श्यामसुन्दर भँवर

जिस प्रकार सूर्य का सौर मंडल से सम्बन्ध है उसी प्रकार शरीरस्थ सूर्य का हमारे शरीर से सम्बन्ध है। यह सूर्य-चक्र ही जीवन और प्रकाश का श्रोत है। इसी शक्ति के द्वारा पाचन क्रिया होती है, हृदय को प्रकाश मिलता है, शरीर को शक्ति और गति प्राप्त होती है। इस चक्र को प्रदीप्त कर लेने से जीवन-क्रम बलयुक्त, नवशक्ति सम्पन्न और नियमित हो जाता है। आसन, प्राणायाम आदि व्यायाम की दृष्टि से भी यह हमारे लिए बहुत महत्वपूर्ण है। सं०—

हमारे प्राचीन महर्षियों ने शरीर में विभिन्न चक्रों का ज्ञान प्राप्त कर विश्वकल्याणार्थ विभिन्न ग्रन्थों में उनका विवेचन किया था। अज्ञानवश हम उन्हें भूल चुके थे। पर हर्ष की बात है कि अब ऐसे कई लुप्तप्राय साधनों और विज्ञानों का पाश्चात्य एवं भारतीय विद्वानों द्वारा पुनरुद्धार हो रहा है, जिनके हम सतत ऋणी हैं।

इन विभिन्न चक्रों में (मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूरक, अनाहत, विशुद्ध, आज्ञा और शून्य) सब से महत्वपूर्ण चक्र तो शून्य चक्र है, जहाँ पर भगवान् श्री शिव का वास माना गया है। परन्तु इस चक्र को जाग्रत करना अत्यन्त कठिन है। इसके अतिरिक्त एक बात यह भी है कि इस चक्र का जागरण बिना मणिपूरक चक्र के जागरण के कभी नहीं होता है। इसी मणिपूरक चक्र (Epigastric or Solar Plexus) को ही अन्तः सूर्य-चक्र भी कहते हैं।

"सूर्य आत्मा जगस्तस्थुपश्च" = वेद।

अर्थात् इस जगत का प्राण—जगत का आत्मा सूर्य ही है। सूर्य अनन्त शक्ति का भण्डार है। उसी के कारण संसार की सभी महत्वपूर्ण क्रियाएं होती हैं। इन्हीं सूर्य का मानव शरीर के इस मणिपूरक चक्र में स्थान माना गया है। इसी चक्र के कारण शरीर का प्रत्येक कार्य संचालित होता है। सूर्य का सौर मण्डल से जिस प्रकार सम्बन्ध है उसी प्रकार शरीरस्थ सूर्य का शरीर से सम्बन्ध है। यह सूर्य चक्र ही जीवन और प्रकाश का स्रोत है—इसी की शक्ति भोजन को पचाती है, हृदय को प्रकाश देती है, शरीर को शक्ति और गति प्रदान करती है। सूक्ष्मदर्शी योगी प्राण का स्थान नाभि और मेरुदण्ड के मध्य स्थित मणिपूरक चक्र में मानते हैं। तार की गुच्छी के समान नाभि प्रदेश में ज्ञान-तन्तुओं के जाल का एक गुच्छा है, जिसका मन के आवेगों के साथ सीधा सम्बन्ध है। इसके प्रकाशमान होने पर शरीर और मन व्याधिमुक्त हो जाते हैं। इस चक्र को जागृत करने से नवजीवन का संचार होता है। हमें सचेत होकर अब इस सूर्य-चक्र का दर्शन करना चाहिए यह हमारा 'अन्तर्ज्योति आत्म सूर्य-चक्र' है। सूर्य-चक्र की किरणों द्वारा जीवन-तत्व शरीर में पहुँचता है। इसी सूर्य-चक्र को जागृत करके विलक्षण लाभ उठाया जा सकता है।

विधियाँ

सूर्य चक्र को जागृत करने की तीन मुख्य विधियां हैं—एक लेट कर, दूसरी पद्मासन से और तीसरी वीरासन से। पद्मासन और वीरासन द्वारा इस चक्र को जागृत करने की क्रियाओं में कोई खास भेद नहीं है। पद्मासन में श्वास की क्रिया के साथ यह क्रिया की जाती है और वीरासन में बिना श्वास-प्रश्वास रोके भी सिर्फ ध्यान और समय-समय पर प्रबुद्धकारिणी सूचनाओं द्वारा ही इस सम्बन्ध का—इस सूर्य-चक्र को प्रदीप्त और जागृत करने का—कार्य किया जा सकता है।

आगे बढ़ने के पहिले अच्छा हो यदि हम इस जीवन शक्तिवर्धक सूर्य-चक्र का आकारादि समझ लें।

शरीर में योग-शास्त्र सम्मत जितने भी चक्रों की गणना की गई है उनमें से प्रत्येक का आकार कमल के फूल सा होता है। प्रत्येक चक्र का कमल अलग-अलग (यानी विभिन्न संख्या की पंखड़ियों का—जैसे किसी फूल में ९, किसी में ४, किसी में १०—१२ आदि पँखड़ियां) और अलग-अलग वर्ण (रङ्ग) का होता है। इसी प्रकार से पूरे दल और वर्ण के साथ ही हमें अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूर्य-चक्र का ध्यान करना है। सूर्य-चक्र "स्वः" लोक का प्रतिनिधि है। इसका दशदल नीलवर्ण पद्म है।

जागृत करने का कार्य किसी भी विधि से करिये किन्तु सब से पहिले आप अपने मन को शांत कीजिये, चित्त को सूर्य-चक्र में लगाइये और मानसिक आदेश कीजिये— 'सूर्यचक्र जागो, जागो सदैव जागृत रहो— सदैव मेरे शरीर में, मेरे मन में पूर्ण शक्ति भरते रहो— मुझे सदैव आनन्दमय और मस्त रक्खो।"

(१) लेट कर—किसी एक ऐसे स्थान पर चित्त लेट जाइये जहां पर शुद्ध वायु अच्छी आ रही हो, और हो सके तो वह स्थान ऐसा भी चुनिये कि वहां प्रातःकालीन सूर्य-रश्मियां भी आपके शरीर पर पड़ें, ऐसा न बन पड़े तो अपने कमरे में ही करिये। शरीर पर केवल अंगवस्त्र या कौपीन (और ठंड में बनियान) मात्र ही रहने दें। थोड़ी देर तक धीरे धीरे दीर्घ पूरे गहरे श्वास-प्रश्वास करिये। उसके बाद मन को सूर्य चक्र मे पूरी तरह लगाने का प्रयत्न करिये और मानसिक आदेश कीजिये, 'सूर्य चक्र जागृत हो।" फिर धीरे धीरे श्वास अन्दर खींचिये और उसे नाभिस्थित सूर्य चक्र में केन्द्रित करिये। श्वास खींचते समय यह भावना धारण करिये —'मैं प्राण, शक्ति, बल, तेज आदि खींच कर अपने अन्दर प्रविष्ठ करा रहा हूँ। मेरे अङ्ग-प्रत्यंग में बलवान हो रहे हैं—सब में शक्ति और बल, तेज और ओजस का पूर्ण प्रकटीकरण हो रहा है। मैं सूर्य-रश्मियों का तेज और शुद्ध वायु का बल अपने अन्दर खींच रहा हूँ। मैंने वायु के साथ तेजादि को भी खींच कर अपने मणिपूरक चक्र में, अन्तः सूर्य चक्र में नाभिस्थित सूर्य-चक्र में, दशदल पद्म नीलवर्ण सूर्य-चक्र में केन्द्रित कर लिया है।" इस श्वास को अब कुछ देर तक सूर्य-चक्र में, नाभि में, स्थिर रखिये और पेट को थोड़ा दबाइये भी और छाती को फुलाइये। फिर बिना श्वास ग्रहण करते या छोड़ते हुए इसी श्वास को छाती में लाइये और छाती को संकुचित कर पेट को फुलाने का प्रयत्न कीजिये। अब कुछ सेकन्ड श्वास को छाती में ठहरा कर इसी श्वास को (बिना बाहर से ग्रहण करते हुए या इसे छोड़ते हुए) नाभि से नीचे पेड़ू के पास ले आइये और कुछ देर वहां रखिये। उसके बाद श्वास का धीरे धीरे रेचक करिये—बाहर छोड़िये। श्वास को सूर्य-चक्र में स्थित करते हुए और इसी प्रकार छाती और पेड़ू में भी कुम्भक करते हुये यह भावना करनी चाहिये : "मुझमें अभय, बल, साहस आरोग्य, आनन्द आदि गुणों का प्राकट्य हो रहा है। ध्यान रहे कि चित्त-वृत्तियां सूर्य-चक्र की ओर हों और साधक को यह विश्वास हो कि सभी सद्गुण सूर्य-चक्र के कारण शरीर में प्रकट हो रहे हैं) सूर्य-चक्र जागो, जागो, सदा जागृत रहो। अब मेरा सूर्य-चक्र जागृत है।"—(फिर आप देखेंगे कि थोड़े दिनों के अभ्यास से ही आपको सूर्य-चक्र के जागरण का स्पर्धास्पद सुखद अनुभव प्राप्त होगा—वहां उसी का एक पद्माकार अपूर्व तेज दिखाई पड़ेगा।) रेचक करते समय यह भावना करिये, कि "मैं सारे दुर्गुण, कुटेव, आधि-व्याधि अश्रद्धा, संशय, द्वेश, काम, क्रोध, घृणा, निराशा आदि सब दूषित विकार बाहर फेंक रहा हूँ। अब मेरा शरीर निर्मल हो मैंने सब दोष बाहर फेंक दिये हैं। मुझमें अब कोई दोष नहीं है—मुझमें अब किसी दोष के लिए स्थान नहीं है क्योंकि अब मेरा सूर्य-चक्र जागृत हो गया है।"

यह क्रिया-विधि दो चार बार पढ़ने से अच्छी तरह समझ में आ पावेगी। इस क्रिया को प्रतिदिन नियमित तीन-चार बार ही करिये और विलक्षण आनन्द का स्वयं अनुभव करके दूसरों को भी बताइये। इस क्रिया के करने से ही एक नवीन बल और जीवन का कितना मधुर अनुभव होता है! दिल कुछ कर उठने को चाहता है उस समय। मनोबल बढ़ता है, चरित्रगठन होता है। सुख और शान्ति प्राप्त होती है। सब अशान्ति और उद्विग्नता बिलकुल काफूर हो जाती है। जब आप उद्विग्न या अशांत हों तब फिर आप इस क्रिया को कर सकते हैं—पर एक ही समय में ३-४ बार से अधिक नहीं करना चाहिये। इस क्रिया (सूर्य-चक्र जागरण) की विधियों में वास्तव में विलक्षणता है। इनके द्वारा बहुत कम समय में एक बहुत अच्छे व्यायाम के साथ साथ कितना अच्छा मानसिक विकास भी हो जाता है। इन क्रियाओं को कीजिये और देखिये कि इनमें शारीरिक व्यायाम भी कितना अधिक हो जाता है—कितना सरल तरीका है 'प्राणायाम के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगभग सम्पूर्ण लाभों को उठाने के साथ ही और भी बहुत कुछ' प्राप्त कर लेने का। विचार कीजिए और अनुभव कीजिये। मैंने स्वयं जब इसे पहली बार अच्छी तरह किया तो मैं दो बार से अधिक इस लेट कर की जाने वाली क्रिया को नहीं कर सका क्योंकि श्वास ने एक आवृत्ति और करने में हिचकिचाहट प्रकट की। शरीर का बहुत सा मल स्वेद के रूप में बाहर निकल जाता है और पेट की उड्डियान और बन्धों सरीखी कसरत हो जाती है। वास्तव में पेट और फेफड़ों का इस क्रिया द्वारा पूर्ण व्यायाम हो जाता है। इससे कब्ज बिलकुल दूर हो जाता है, पाचन-शक्ति बढ़ जाती है पेट में यदि मोटापन हो तो दूर हो जाता है, फेफड़े दृढ़ और दोष-रहित हो जाते हैं। हमारी दृष्टि में तो यह प्राणायाम सरीखा ही एक अच्छा व्यायाम है। इस कारण व्यायाम-प्रेमियों को इसका भी अनुभव जरूर करना चाहिये। समय तो इसमें कितना कम लगता है, यह आप स्वयं ही देख सकते हैं। शायद कुछ को यह क्रिया सरल मालूम हो परन्तु इसके करने पर ही यह तो ठीक मालूम होगा--और यदि यह सरल भी दिखाई दे तो सरल समझ कर इसकी महत्ता में और भी आधिक्य आ जाता है, क्योंकि इसका प्रभाव बड़ा आश्चर्य-जनक है।

जो व्यक्ति शीर्षासन करते हों उनके लिए एक और बात अच्छी यह है कि शीर्षासन के बाद शवासन जो किया जाता है उसमें शीर्षासन कर चुकने के कुछ मिनट बाद से वे इस क्रिया को सानन्द कर सकते हैं। इस प्रकार उनका शवासन का समय भी पूर्णरूपेण सदुपयोग में व्यय हो जायगा। (यह भी ध्यान रहे कि जाग्रत करने की क्रियाओं के बाद एक-दो मिनट आराम कर लेना चाहिए) मैं स्वयं शीर्षासन के बाद शवासन में कुछ देर ठहर कर शान्ति पाठ, विश्व-प्रेम साधन और सद्गुणाकर्षण के बाद आनन्द से इस विचक्षण क्रिया द्वारा सूर्य-चक्र को जागृत कर मस्त रहता हूँ।

अभ्यास के आरम्भ में हृदय में धड़कन मालूम हो तो भयभीत न होना चाहिए और न घबराना ही चाहिए बल्कि शांत चित्त से आग्रह पूर्वक आनन्द से करते रहना चाहिए। अभ्यास से हृदय-रोग, फेफड़े और गले के भी कई रोग दूर होकर वे पुष्ट और बलवान हो पावेंगे।

(२) पद्मासन से—इसी विचित्र और महान् सूर्य-चक्र का जागरण पद्मासन के द्वारा भी किया जा सकता है। इसमें पहले पद्मासन लगाकर दीर्घ श्वास-प्रश्वास करने के बाद उन्हीं सूचनाओं और भावनाओं द्वारा श्वास अन्दर खींचना चाहिए। फिर उस श्वास को एक ही स्थान में—नाभिस्थित सूर्य-चक्र में—केन्द्रित रख कर उसी ओर एकाग्र दृष्टि रख कर फिर बतलाई गई सूचनाएँ देनी चाहिए। थोड़ी देर (पहिले जितनी देर श्वास सरलता पूर्वक ठहरा सके उतनी देर तक और बाद में अभ्यास से अवधि बढ़ाई जा सकती है।) तक वहां पर श्वास को टिकाये रखने के बाद बहुत धीरे धीरे भावनाओं के साथ रेचक करिए—इस प्रकार की ५ आवृत्तियों से एक ही बार में २० आवृत्तियों तक बढ़ा सकते हैं।

(३) वीरासन से—इसमें सुबह सूर्योदय से पहले उठकर स्नानादि करके शान्त स्थल में पवित्र आसन पर दोनों पैरों की एड़ियों पर (वीरासन के सदृश) बैठ जाइए। दोनों हाथ उलटे करके घुटनों पर पैर ऐसे रखिए जिससे अंगुलियों की नोकें पेट की ओर रहें। इसके बाद साधारण, स्वाभाविक रीति से श्वास-प्रश्वास करते हुए सूर्य-चक्र को जागृत करने का प्रयत्न कीजिए—मानसिक आदेश कीजिए कि वह जागृत हो रहा है—अब सूर्य-चक्र जागृत है। इस क्रिया में कुम्भक आदि का कष्ट नहीं करना पड़ता परन्तु ध्यान और सूचनाओं पर अधिक जोर देना पड़ता है। हां, इस क्रिया के द्वारा एक अन्य लाभ यह जरूर हो सकता है कि यदि मनुष्य इस मणिपूरक चक्र (जिसमें 'स्वर विज्ञान' के अग्नि-तत्व का वास है) में इस अग्नि-तत्व और रं बीज का भी साथ साथ ध्यान और जाप करता रहे तो उसे उपर्युक्त लाभों के अतिरिक्त तत्वसिद्धि और स्वर-ज्ञान का भी सुअवसर प्राप्त हो जाय।

प्रत्येक क्रिया का एक ही ध्येय है। परन्तु प्रत्येक अपना-अपना विशिष्ट स्थान अवश्य रखती है। मेरी दृष्टि में तो साधारण लोगों को ध्यान में रखते हुए पहिली विधि (लेट कर) सब से अच्छी है। फिर जिसे जो उपयुक्त और सरल लगे। एक बात और यह है कि प्रथम दो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रियाओं में से किसी क्रिया के बाद यदि आप 'गज-करणी" भी थोड़ी-थोड़ी करें तो और भी लाभ हो, कारण इन क्रियाओं के करने के बाद उदरस्थ कफ आदि दूषित विकार जल पीकर गजकरणी क्रिया से वमन बाहर खींच कर निकाल फेंकने में बहुत सरलता होती है। परन्तु इस क्रिया का चक्र-जागरण से कोई सम्बन्ध नहीं, यह तो सिर्फ अधिक लाभ उठाने वालों के लिए है। यों तो कोई खास आवश्यक नहीं। गजकरणी के लिए जो इच्छुक हों उन्हें हठयोग-प्रदीपिका देखनी चाहिए।

सूर्य-चक्र भावनाओं का केन्द्र है। इसको प्रबुद्ध करने से सभी उच्च भावनाएँ अपने आप मन में प्रकट हो जाती हैं। और जहां उच्च भावनाएँ परिपूर्ण हैं वहां बुरी भावनाएँ तो रह ही कैसे सकती हैं? क्योंकि बुरी भावनाओं का—अमङ्गल का—तो अस्तित्त्व ही नहीं है—वह तो सिर्फ पवित्र भावनाओं का—मंगल का—अभाव मात्र है। "ध्यान रहे कि श्वास के साथ सूर्य-चक्र में प्राण जाता है। प्राण और मन का घनिष्ट सम्बन्ध है। जहाँ मन जाता है, वहीं प्राण भी चला जाता है। प्राण के वश में सब हैं। सूर्य-चक्र में प्राण का संयम करने से कमजोरी, निरुत्साह, निराशादि सब अशुभ विचार दूर हो जाते हैं। शुभ विचारों पर लक्ष्य रखने से सूर्य-चक्र का विकास होता है और दूषित विकार और विचार अपने आप दूर हो जाते हैं"—डा० नागर। इस चक्र के साधन द्वारा कुण्डलिनी जैसी महान और दिव्य शक्ति का जागरण भी सरल हो जाता है। ब्लैवेट्स्की का कहना है—

'This influence strengthens, rejuvenates and normalises the life-process,' अर्थात् इस प्रभाव से जीवन-क्रम बलयुक्त, नवशक्ति सम्पन्न और सुनियमित हो जाता है।

'सूर्य-चक्र की प्रदीप्ति के फलस्वरूप साधक में आत्मरक्षा की क्षमता बहुत अधिक मात्रा में बढ़ जाती है।" The solar Plexus gives conscious Emotional Control अर्थात् "यह चक्र मनोविकारों पर सचेतन प्रभुत्व प्रदान करता है।"

बिल्कुल नई किताब

श्रीयुत जानकीशरण वर्मा की प्रसिद्ध पुस्तक रोगों की अचूक चिकित्सा, का चौथा संस्करण तैयार हो रहा है। लगभग दो महीने में पुस्तक प्रकाशित हो जायगी। इस बार इस में अनुभव की बहुत सी नई बातें मिलाई गई हैं। जिससे पुस्तक की व्यावहारिक उपयोगता और भी बढ़ गई है। इस चौथे संस्करण से मानो एक नई पुस्तक पाठकों के हाथ में मिलेगी।

मैनेजर—स्वास्थ्य-गृह-भंडार, लूकरगंज, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'नासूर अच्छा हो गया'

श्री प्रकाशचन्द्र खंडल वाल, कानपुर

मेरा भाञ्जा चि० किशन जब सात वर्ष का था तो एक बार बीमार हुआ। ऐसे तो वह जन्म काल से ही अकसर बीमार रहता था, और डाक्टर वैद्य प्रायः चिकित्सा करते रहते थे किन्तु इस बार उसके दाहिने कूल्हे में एक बहुत बड़ा फोड़ा हो गया जो कि इलाज किये जाने पर भर गया। इस बालक के इसी रोग से उसी स्थान पर दो बार घाव हुआ, फिर अच्छा हुआ। इस प्रकार उसने नासूर का रूप धारण कर लिया। मथुरा जी में कुशल डाक्टरों द्वारा आपरेशन भी कराया गया। पर लाभ न हुआ, कुछ दिन के बाद वह कानपुर लाया गया और यहां उसका आपरेशन कराया गया। पर जख्म ठीक होने के दो दिन बाद ही खुल गया। तब डाक्टरों की राय हुई, एक्सरे (x-ray) द्वारा तस्वीर ले कर आपरेशन किया जाय। अतः उसको कानपुर के प्रिन्स आफ़ वेल्स अस्पताल में भरती कराया गया जहां x-ray द्वारा तस्वीर लेने के बाद उसका आपरेशन हुआ। लेकिन वह सफल नहीं हुआ ड्रेसिंग में गलती रह गई इसलिए दुबारा आपरेशन करना पड़ा। साथ में calium के injections और दूसरी दवायें दी जाती थीं। डाक्टरों ने उसे अच्छा समझ कर उसे अस्पताल से छुट्टी दे दी। लेकिन घर आने के कुछ दिन बाद घाव फिर खुल गया।

इसी बीच पता लगा कि हाथरस में एक खत्री सज्जन के पास नासूर की बहुत अच्छी दवा है। जिसे वे अपने हाथ से घिस कर लगा दिया करते हैं। (यह कार्य वे धर्मार्थ ही करते थे) उनके यहां जाकर दिखाने पर उन्होंने मनोयोग पूर्वक उसकी चिकित्सा की। फल-स्वरूप घाव अच्छा होता दिखने लगा, लेकिन एक साल भी पूरा न होने पाया था कि वह नासूर पुनः उसी हालत में आ गया। तब वह दुबारा हाथरस ले जाया गया। पुनः चिकित्सा से वह ठीक हो गया और फिर क़रीब २-२॥ साल तक ठीक हालत में रहा।

गत वर्ष मथुरा जी में मलेरिया का प्रकोप हुआ—यह लड़का मलेरिया से पीड़ित हुआ। कभी अच्छा, कभी बीमार, इसी हालत में कई महीने व्यतीत हो हुए। इस बीच जिस कूल्हे में घाव था उस ओर का पैर जकड़ गया जिससे उसका हिलना डुलना तक मुहाल था। दर्द भी विशेष था, यद्यपि इलाज बराबर चल रहा था पर रोग ठीक न होने के कारण रोगी अत्यन्त क्षीणकाय हो गया था। उसे बुखार आता था—कई डाक्टर-वैद्यों का इलाज कराया गया एवं कितने ही प्रकार के तेलों की मालिश की गई पर रोग ठीक न हुआ।

संयोग वश मुझे मथुरा जाकर उसे देखने का अवसर मिला। उसकी यह हालत देख कर बड़ा दुख हुआ। उस समय उसके लाने में कठिनाई ही नहीं। खतरा भी था। किन्तु मैं उसी हालत में हठ-पूर्वक उसे कानपुर ले आया यह सोच कर कि जब अनेक अच्छे चिकित्सकों एवं एवं चिकित्सा पद्धतियों द्वारा उसे लाभ नहीं हुआ तो सम्भव है उसे प्राकृतिक चिकित्सा द्वारा लाभ हो जाय। यद्यपि उसके ठीक होने में पूरे परिवार को निराशा थी पर मैंने पूर्ण विश्वास के साथ प्राकृतिक चिकित्सा का सहारा लिया। प्रारम्भ में प्रतिदिन उसे पेड़ू पर मिट्टी की पट्टी एनीमा तथा नासूर के स्थान और पैर में स्टीम देता रहा। पथ्य केवल शंतरे और टमाटर का रस का चलता रहा। १५ वें दिन रोग का उभाड़ हुआ और पेशाब के साथ, मवाद की तरह का सफेद द्रव पदार्थ अत्यधिक मात्रा में निकला। यह हाल दो-तीन दिन तक रहा उसके बाद अपने आप बन्द हो गया। १५ वें दिन तक केवल टमाटर और शंतरे के रस पर रहने के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण रोगी और भी क्षीण हो गया था उसे फलों के रस पर और नहीं रखा जा सकता था। अतः १६ वें दिन से मठे का प्रयोग किया गया, हर आध घंटे के बाद थोड़ा-थोड़ा करके मठा दिया जाता था। इस प्रकार सात-आठ दिन बाद उसके शरीर में कुछ शक्ति और स्फूर्ति आई, धीरे-धीरे बुखार भी कम हुआ। इसके १४-१५ दिन बाद जिस स्थान में नासूर था उसमें दर्द और टीस शुरू हुई उस स्थान पर मिट्टी की पट्टी—ठण्ढा गरम सेंक और स्टीम की व्यवस्था की। पाँच दिन बाद उसमें पीलापन नजर आया और धीरे-धीरे बढ़ता रहा तथा वह जगह फूलती रही। इसके सात-आठ दिन बाद वह फूट गया और जख्म का रूप धारण कर लिया, इससे मवाद अत्यधिक मात्रा में निकला।

उस समय मैंने श्री जानकी शरण वर्मा लिखित 'रोगों की अचूक चिकित्सा' नामक पुस्तक के अनुसार गरम पानी और नींबू के रस से धुला कर गरी के तेल में नींबू का रस मिला कर लगाता रहा। स्टीम और मिट्टी की पट्टी भी चलती रही। इससे जख्म अन्दर से भरता हुआ नजर आया तथा लाली भी दिखलाई देती थी, पर घाव के ऊपर की खाल में सड़न और नीलापन था वह दूर हो होता नजर नही आता था। तब यह विचार किया कि किसी डाक्टर को बुलाया जाय और उसका ऊपरी आपरेशन करा दिया जाय ताकि जख्म साफ होने में अन्दर से कोई खराबी न रह जाय। डाक्टर को बुलाकर दिखाया उन्होंने कहा उसमें ऊपरी खाल हटा देने में कोई लाभ नहीं होगा। इसे अस्थि-क्षय रोग (T.B.of bones) है, सम्भव है पेरिस-प्लास्टर और कैल्शियम इन्जेक्शन से फायदा हो। उन्होंने सिर्फ आपरेशन करने से इन्कार कर दिया, तब मुझे और चिन्ता हुई। मैंने ऐसा विचार किया कि इस सम्बन्ध में किसी अच्छे प्राकृतिक-चिकित्सा विशारद की सम्मति अवश्य लेनी चाहिए। यह निश्चय करके मैंने भारत के प्रसिद्ध प्राकृतिक चिकित्सा-विशेषज्ञ और इलाहाबाद के 'नेचर-क्योर होम' के सञ्चालक डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह जी को पत्र लिखा। उन्होंने कृपापूर्वक कानपुर आने का कष्ट किया। उन्होंने उसे देख कर मुझे ढाढ़स बँधाया और कहा कि यह अवश्य ठीक हो जायेंगे। उन्होंने उसके भोजन क्रम में परिवर्तन किया, खाली मठे के स्थान पर रोटी, सब्जी, फल और मठा इत्यादि देने का परामर्श दिया जिससे शनैः शनैः उसके क्षीण शरीर में बल का सञ्चार हुआ। जख्म के लिये उन्होंने इलाहाबाद आकर एक तेल (Vegitable knife) भेजा। मैं उसे लगाके सुबह शाम ड्रेसिंग करता रहा। तेल लगाने में उसे किसी प्रकार का कष्ट नहीं होता था, उससे जख्म के अन्दर की खराबी और ऊपरी खाल की सड़न दूर हो गई। १५-२० दिन में जख्म ठीक हो गया। पर पैर अब तक सीधा न होता था। एक दूसरे बालक का पैर सीधा न होने पर श्रीयुत डाक्टर साहब ने लाल काँच द्वारा सूर्य रश्मियों को पैर पर डालने को बताया था। वही प्रयोग मैंने उस बालक पर भी किया और लगातार १५ दिन रश्मि-प्रयोग से ही वह चलने फिरने लगा। यह बालक अकसर बद-परहेजी भी कर लेता था जिसके कारण बीच-बीच में कष्ट बढ़ भी जाता था, पर अब वह ठीक तरह से चलता फिरता है, जख्म एकदम ठीक हो गया है और अब उसका शरीर भी साधारण स्वस्थावस्था में है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपकी प्रकृति आम्ल है या क्षार ?

लेखक—डा० मेन्कल, पूना

[डा० मेन्कल भारत के प्रसिद्ध आहार-शास्त्री हैं। आपकी गणना आधुनिक प्राकृतिक चिकित्सा-प्रणाली के महारथियों में की जाती है। पूना के 'हेरालड आफ हेल्थ' में आपका उपर्युक्त शीर्षक लेख प्रकाशित हुआ था, जिसका संक्षिप्त अनुवाद महात्मा गांधी के 'हरिजन सेवक' नाम से यहां पर उद्धृत किया गया है। आशा है 'जीवन रक्षा' के पाठक इससे लाभ उठावेंगे और यह देखेंगे शरीर में नाना प्रकार के रोगों का कारण बनने वाले अम्ल-तत्वों को वे किस प्रकार न्यून कर सकते हैं।—सं०]

आपकी प्रकृति आम्ल है, यह कहने का क्या अर्थ है? सारी प्रकृति आम्ल हो जाय तब तो मनुष्य जीवित ही न रहे। रोग-रहित स्वस्थ शरीर ही विशेषकर क्षारमय होता है। शरीर में रासायनिक रीति से ८० प्रतिशत क्षारमय और २० प्रतिशत आम्ल-तत्त्व होने चाहिये। इस क्षार और एक के प्रमाण के सुरक्षित रखने का अर्थ है आरोग्य की रक्षा करना और दीर्घजीवी होना।

हमारा रहन सहन, हमारा संयम-असंयम, आहार-विहार इस क्षार और एक की मात्रा को न्यून या अधिक कर देता है। तो भी आम्ल और क्षारप्रकृति की रचना में मुख्य रीति से भाग लेनेवाले तत्त्व हमारे खान-पान से बनते हैं; जिसमें फास्फोरस, सल्फर (गंधक), क्लोरीन, आयोडीन, आर्सेनिक, ब्रोमाइन हो वह आम्लपोषक, और जिसमें पोटेशियम, सोडियम (सोडा), कैलशियम (चूना), लोहा, तांबा आदि हो वह क्षारपोषक है। इससे तो साधारण मनुष्य के ज्ञान में बहुत वृद्धि नहीं होती, पर ये तत्त्व हमारे आहार के पदार्थों में जिस रीति से विभक्त हैं उसे ध्यान में रख कर आम्लपोषक और क्षारपोषक आहारों और पीने की वस्तुओं की सूची नीचे दी जाती है :—

आम्लपोषक	क्षारपोषक
मछली	फूल गोभी
पशु-पक्षी का मांस	करमकल्ला, गाजर, चुकंदर
अंडा	सेलरी नामक साग
पनीर	चिचेंडा
अनाज गेहूँ,चावल,मकई आदि)	जैतून (पके हुए)
रोटी	प्याज
दालें	हरा मटर
सूखा मेवा	आलू
सफेद खांड	लौकी, कद्दू
मिठाई मात्र	मूली, चौराई पालक, मेंथी
चाकलेट	आदि भाजियाँ
चाय-काफी	टमाटर सलगम
मुरब्बे	लगभग तमाम फल
तली हुई चीजें	सेब, जरदालू या खुबानी
नशे की चीजें	पूरी तरह से पके हुए केले
उबाला हुआ दूध	खजूर, अंगूर, अंजीर, मुनक्का
खीर	नींबू, संतरे, मोसंबी आदि का
	रस आड़ू नासपाती, आलूचा
	कच्चा दूध
	छाछ

अब अगर आपको यह देखना हो कि आपकी प्रकृति क्षार है या आम्ल तो नीचे के प्रश्नों के उत्तर दीजिए। प्रत्येक प्रश्न के 'हां' के जवाब के १० अंक रखिए, और और फिर उन्हें जोड़ डालिए। इससे यह मालूम हो जायगा कि आप मुख्य रीति से आम्ल प्रकृतिवाले हैं या क्षार प्रकृतिवाले।

आम्लपोषक	क्षारपोषक
दांतों आदि में कोई खराबी है ?	दांत, नाक, गला आदि साफ है न ?
तमाखू पीते हो ?	तमाखू आदि का व्यसन तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

	नहीं है न ?
दारू आदि पीते हो ?	दारू ताड़ी से मुक्त हो न ?
रोज पांच तोला से अधिक दाल, मछली, मांस, अंडा खाते हो ?	पांच तोला से अधिक दाल मछली, मांस आदि नहीं खाते हो न ?
चावल, अनाज, रोटी आदि अधिक स्टार्चवाले पदार्थ खूब खाते हो ?	स्टॉर्चवाले पदार्थ कम खाते हो न ? (जैसे कि चावल, गेहूँ आदि)
घी तेल में तले हुए पदार्थ खाते हो ?	तले हुए पदार्थों का त्याग किया है न ?
ताजा फलों से दूर भागते हो ?	रोज एक बार फलाहार करते हो न ?
कच्चे हरे सागों से दूर भागते हो ?	हरे साग (पकाये हुए और कच्चे) अच्छी तरह खाते हो?
पानी कम पीते हो ?	पानी अच्छी तरह पीते हो ?
कोष्ठबद्धता है क्या ?	दो-तीन बार शौच जाते हो ?
एस्पीरीन-जैसी औषधियों का उपयोग करते हो ?	एस्पीरीन-जैसी औषधियों को जहर समझते हो न ?
चिन्ता, क्रोध बारबार करते हो?	चिंतामुक्त और प्रसन्न रहते हो न ?
घर में पड़े रहते हो ?	बाहर खुली हवा में खूब कसरत करते हो ?
रतजगा करते रहते हो क्या ?	जल्दी सोकर खूब गाढ़ी नींद लेते हो न ?

शरीर में आम्ल क्रिया किस प्रकार चल रही है, इसका विचार यह देखकर किया जा सकता है कि कितने निरर्थक आम्ल पदार्थ शरीर से निकला करते हैं। हमारे फेफड़े प्रति घंटा ३० क्वार्ट कार्बोनिक एसिड हवा बाहर निकालते हैं। इतनी सब हवा शकर, स्टार्च, चर्बी और प्रोटीनवाले आहार जो पचाने पड़ते हैं उसके परिणाम स्वरूप निकलती है। यदि आहार में इन पदार्थों की विशेषता हो तो गैस काफी बाहर निकालना पड़ता है। हाथ पर हाथ धरे बैठे रहें और भोजन खूब डटकर करें, तो इसका परिणाम यह होगा कि हमारा शरीर आम्लप्रधान प्रकृति का बन जायगा।

शरीर के आम्ल मलों का तीसरा भाग तो फेफड़ों के द्वारा निकलता है और शेष दो-तृतीयांश भाग मल-मूत्र और पसीने द्वारा निकलता है।

अगर यह मालूम पड़ जाय कि मूत्र में आम्ल की कितनी मात्रा है तो यह मालूम हो जाय कि शरीर में आम्ल का कितना प्रमाण है। आरोग्य की जांच कराने के लिए बारबार यह परीक्षा होनी चाहिए। साधरणतया मूत्र थोड़ा आम्ल तो होता ही है। जिसमें अधिक आम्ल हो उसमें रुधिर की अपेक्षा १०० से १००० गुना आम्ल-मूत्र होना चाहिए। इतनी मात्रा में मूत्र-पिण्ड (kidney) को आम्ल-विसर्जन करना पड़े, और इतना अधिक उस पर जोर पड़े तो वह अवयवों को रोगी बना देगा। इस अनारोग्य से इन अवयवों की रक्षा करने के लिए प्रकृति यह करेगी: साधरणतया आम्ल पदार्थ शुद्ध रीति से शरीर में से नहीं निकलते, इससे उन्हें निकालने को वह तैयार हो जाती है या तुरन्त उन्हें क्षार पदार्थों से बाँध लेती है, या ऐसा करती है कि जिससे वह शरीर में से कम-से-कम नुकसान करके निकलें। जब शरीर में आहार की चीजें बहुत क्षार पदार्थोंवाली नहीं होतीं तब प्रकृति रुधिर और शरीर के अन्य तंतुओं में से क्षार खींचती है। दांत और हड्डे इन क्षारों से भरे हुए होते हैं। इनमें से चूना इस तरह खिंचता जाता है कि दांत और हड्डे निर्बल पड़ते जाते हैं। फिर निस्सत्व अवयवों में से इस कमी की पूर्ति होती जाती है। इन अवयवों में से क्षार खिंचता जाता है तब ये अवयव दुखते हैं, सूजन आ जाती है, और यह इसका परिणाम होता है कि गठिया और बात के अनेक प्रकार शरीर में घर कर बैठते हैं।

आम्ल पदार्थों की थोड़ी मात्रा स्नायु और मज्जा की रचना के लिए आवश्यक है। पाँच तोले मांस से अथवा एक बड़े अंडे से या पांच तोले दही और उसके साथ डबल रोटी के दो टुकड़ों से अथवा बिना छने हाथ के पिसे आटे की एक छटांक रोटी से यह मात्रा प्राप्त होती रहती है। इससे अधिक आम्ल पदार्थों के लेने से भी आम्ल-प्रकृति बढ़ती है।

यह तो ऊपर बता ही दिया है कि क्षार किस प्रकार से सागों और फलों से प्राप्त होते रहते हैं। इन क्षारों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से आम्ल पदार्थों को यथेष्ट रीति से मारना ही समतोल आहार का उपाय है। एक प्रसिद्ध डॉक्टर लिखता है—"कोई प्राकृतिक मौत नहीं होती। प्राकृतिक कारणों से होनेवाली जो मौतें कही जाती हैं वे सब शरीर में आम्ल की अधिकता से ही होती हैं।"

इस अधिकता को रोकने के लिए आम्ल पदार्थों को बाँधनेवाले क्षार पदार्थ प्रकृति को पूरे पड़ते जाने चाहिए, और क्षार-पोषक रहन-सहन और आदतें डालते जानी चाहिए।

ऊपर जो जमा और नामे की बाजू में प्रश्न दिये गये हैं उनके जबाब देकर आप सहज ही यह निर्णय कर सकते हैं कि आपकी जमा वाली बाजू खाली है या भरी हुई। इसलिए यदि आपको अपने स्वास्थ्य की रक्षा करनी है तो आपको यह समझ लेना चाहिए किन आहारों को तो हमें बढ़ाना है और क्या-क्या आदतें छोड़नी हैं और कौन-कौन-सी आदतें डालनी हैं। इतना तो बार-बार समझ लेना चाहिए कि हरी साग-भाजियाँ ही स्वास्थ्य की प्रथम रक्षक हैं। इसलिए हमें अपने आहार में एक भाग अन्न तो चार भाग फल और हरी पत्तियाँ या हरे साग लेने की प्रतिज्ञा कर लेनी चाहिए। स्वास्थ्य का यह प्रथम और अन्तिम नियम है।

क्या आप जानते हैं ?

हम सभी जाति के लड़कों और लड़कियों, अविवाहितों (कुँवारों) कुमारियों, विधुरों और विधवाओं के, चाहे वे धनी हों या गरीब, समस्त भारत, सीलोन (लंका) और अफ्रीका में अच्छे से अच्छे विवाह का प्रबन्ध कराते हैं। पूरा विवरण सेक्रेटरी के द्वारा मालूम कीजिए।

पताः—इन्टर नेशनल मैरेज ब्यूरो नं० ६, पन्नागंज, अलीगढ़, यू० पी०

प्रतिमास ५००) कमाइये

डाक्टर, वैद्य, हकीम होमियोपैथ बनकर। आयुर्वेदिक; यूनानी, प्राकृतिक चिकित्सा दन्त-चिकित्सा, बायोकेमिक और सूर्य-किरण चिकित्सा (क्रोमोपैथी) की शिक्षा सुगम शर्तों के साथ दी जाती है। प्रिन्सिपल को लिखकर विवरण-पत्र मुफ्त मगाइए।

पताः—इन्टर नेशनल इंस्टट्यूट नं० ६ पन्नागंज अलीगढ़, यू० पी०

आश्चर्यजनक आविष्कार !

उभरे हुए अक्षरों में नाम अंकित करने की मशीन—नाम मोनोग्राम या संक्षिप्त हस्ताक्षर (इनीशियल) कागज पर उभरे हुए अक्षरों में अंकित कर सकती है। उभरे हुए अक्षरों में अंकन छपाई से भी अधिक सुन्दर होते हैं। मूल्य ५)

चोरों से बचाने वाला ताला—आश्चर्यजनक कलपुरजों का बड़ा ताला। मालिक के सिवाय और कोई इसे खोल नहीं सकता। यह चार चाभियों से खुलता और बन्द होता है। मूल्य १०)

गोली बनाने की मशीन—सूखे या गीले पाउडर को १ से १० ग्रेन तक की २०० से लेकर ४०० गोली तक प्रति घंटा तैयार कर सकती है। मूल्य २५)

पीतल के अक्षरों में नाम का प्लेट—गृह को आकर्षक ढंग से सुसज्जित करता है और जो यह प्रकट करता है कि आप घर में हैं या कहीं बाहर गये हैं। मूल्य ५)

इस पते से लिखिए:—आजाद एण्ड कं० (रजिस्टर्ड) नं० ६, पन्नागंज, अलीगढ़, यू० पी०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय

सद्गुण

मनुष्य सामाजिक प्राणी हैं; बिना समाज के उसका कोई अस्तित्व नहीं। पर सच तो यह है कि संसार के प्राणी मात्र का एक विशिष्ट समाज है। पशु-पक्षियों, कीट-पतंगों का भी समाज होता है। पशु-समाज और मानव-समाज में जो हम महान अन्तर देखते हैं उसका एक मात्र कारण यही है कि मनुष्य को बुद्धि मिली है और पशु को नहीं। और इसीलिए सृष्टि के समस्त जीव-वर्गों में मनुष्य को सर्वोच्च स्थान प्राप्त हुआ है।

मनुष्य चिन्तनशील प्राणी है। वह विकासशील है। वह अनुभव करता है, अपने कार्यों का तुलनात्मक विवेचन करता है, और अपनी त्रुटियों को दूर कर अपना विकास करने की चेष्टा करता रहता है। यह उसका स्वाभाविक गुण है। यदि वह ऐसा नहीं करता तो समझना चाहिए कि ऐच्छिक अथवा अनैच्छिक रूप से उसकी जानकारी या गैरजानकारी में उसमें कुछ ऐसे दोष आ गए हैं जिससे उसकी चिन्तन-बुद्धि मन्द पड़ गई है। बहुधा लोगों में किसी कुटेव के आ जाने अथवा आत्म-नियंत्रण अथवा इन्द्रिय-निग्रह का अभाव होने के ही कारण विचार-शक्ति का अभाव या लोप हो जाता है। कभी-कभी अज्ञान भी इस विचार-विमूढ़ता का कारण बनता है। ऐसा होने पर वह अपने को समाज के सब से निम्न-स्तर में पाता है। सद्गुण वही है जो मनुष्य को हीन स्थिति से ऊपर उठाकर समाज में उस स्थित पर प्रतिष्ठित करदे, जो सराहनीय तथा अनुकरणीय हो।

किन्तु यह तो सद्गुण की सैद्धांतिक व्याख्या मात्र हुई। व्यावहारिक अर्थों में सद्गुण किसे कह सकते हैं, यह संसार के मनुष्य मात्र के लिए समान रूप से बताना यदि असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य ही है।

फिर भी इस दिशा में हमारे विचारकों का ध्यान तो सदा खिंचा ही रहा है। प्रायः सभी धर्मों के प्रवर्त्तकों के उपदेशों में ऐसी बहुत सी बातें मिलती हैं जो सभी जाति और धर्म के व्यक्तियों के लिए सद्गुण समझी जा सकती हैं। किन्तु यदि हम धार्मिक दृष्टि से इस प्रश्न पर विचार न करके केवल व्यावहारिक दृष्टि से ही विचार करें तो भी बहुत सी ऐसी बातें पाई जा सकती हैं जिन्हें हम संसार के सभी मनुष्यों के लिए सद्गुण की संज्ञा दे सकते हैं।

डा० एच० ए० मेस ने इस प्रश्न पर इसी व्यावहारिक दृष्टि से अपने कुछ विचार प्रकट किये हैं जिन पर सभी एक मत होंगे। हम यह नहीं कहते कि मनुष्य जीवन के सफल संचालन के लिए केवल इतने ही गुण होने चाहिए, परन्तु इसमें कोई संदेह नहीं अगर इन सद्गुणों को अपना लिया जाय तो निश्चय ही जीवन की धारा बदल सकती है।

वह मनुष्य का सब से पहला सद्गुण साहस बताते हैं। सम्भव है कि विभिन्न समाज में परिस्थितियों और आवश्यकताओं के अनुसार इसके स्वरूप में अन्तर पाया जाय किन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं हम ऐसे किसी समाज या संसार की कल्पना भी नहीं कर सकते जिसमें साहस की आवश्यकता या महत्व न हो।

मनुष्य का दूसरा सद्गुण वह आत्म-संयम बताते हैं। चाहे कोई पुरुष हो या स्त्री उसे अपने को प्रबल मनोभावनाओं की धारा में सूखे पत्तों की भाँति तिरोहित न होने देना चाहिए और बाह्य आकर्षणों के ही वशीभूत हो जाना न चाहिए।

तीसरा सद्गुण है सचाई। मनुष्य का मनुष्य के प्रति सचाई का बर्ताव—निष्कपट बर्ताव—सचमुच एक बहुत बड़ा गुण है। लेकिन इस सद्गुण को अपनाना आसान नहीं है। स्वार्थपरता की आंच को यह तनिक भी सहन नहीं कर सकता। अतः इसकी साधना के वही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधिकारी हो सकते हैं जो अपने हृदय को इस तरह के कुविचारों से रहित बना लें।

उन्होंने चौथा सद्‌गुण बताया है मैत्री भाव को। यदि कोई संसार के सभी व्यक्तियों के साथ मैत्रीभाव न रख सकता हो तो कम से कम वह जिस दायरे या समाज में रहता है उसके वातावरण को मैत्री भाव के परिमल से सुरभित बनाए रखना ही चाहिए। एक दूसरे के प्रति सच्चा होना और मैत्रीपूर्ण बर्ताव करना सभी देश, काल और समाज में एक उत्तम गुण माना गया है। इस इस प्रकार साहस, आत्म-संयम, सचाई और मैत्री भाव ये ऐसे सद्‌गुण हैं जो सभी मनुष्यों के लिए अनिवार्य रूप से आवश्यक हैं और जिनकी अपेक्षा सभी देश-काल और समाज में की जा सकती है, इसमें किसी प्रकार का मतभेद अथवा साम्प्रदायिक अथवा धार्मिक बन्धन बाधक नहीं हो सकता।

अपने पाठकों से

'जीवन सखा' के प्रकाशन में असाधरण विलम्ब तथा अनियमिता के लिए हमें अपने पाठकों से अब तक कई बार क्षमा प्रार्थना करनी पड़ी है। इस कठिनाई का प्रधान कारण कागज का अभाव ही रहा है। किन्तु अब सन्तोष की बात है कि इस संयुक्त अंक बाद के अगले मास से 'जीवन-सखा' हर महीने के अन्तिम सप्ताह तक निकल जाया करेगा। इस बीच 'जीवन-सखा' के प्रकाशन में विलम्ब होने के सम्बन्ध में हमारे पाठकों ने जिस धैर्य और सहिष्णुता का परिचय दिया है उसके लिए हम अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते हैं।

—बालेश्वरप्रसाद सिंह

जीवन-सखा के ग्राहकों से निवेदन

हमारे पास 'जीवन-सखा' के ग्राहकों के ऐसे अनेक पत्र आते हैं जिनमें ग्राहक-संख्या नहीं दी रहती। इस कारण उनके पत्र का उत्तर देने में आसाधारण रूप से विलम्ब हो जाया करता है और कभी तो हम इच्छा रखते हुए भी उनके पत्रों का उत्तर देने में असमर्थ हो जाते हैं। इस लिए पत्र-व्यवहार के समय अपना ग्राहक-नम्बर अवश्य लिखें। साथ ही अपना नाम और पता भी हिन्दी या अंग्रेजी में साफ-साफ अक्षरों में लिखें जिसमें पढ़ने में कोई दिक्कत न हो। इससे पत्र-व्यवहार में बड़ी सहूलियत होगी और हम पत्रों के उत्तर भी अपेक्षाकृत शीघ्र दे सकेंगे।

मैनेजर,

प्राकृतिक स्वास्थ्यगृह, ११ लूकरगंज, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रश्नोत्तर

[इस स्तम्भ में जिज्ञासु के पाठकों के प्रश्नों का उत्तर दिया जाता है। पाठकों को चाहिये कि वे दो से अधिक प्रश्न एक बार न पूछें और जहां तक हो सके अपने प्रश्न संक्षेप में लिखें। प्रश्न के साथ प्रश्नोत्तर कूपन आने पर ही जवाब दिया जायगा जो कवर के तीसरे पेज पर छपा है।—सं०]

प्रश्न—रोग के सम्बन्ध में प्राकृतिक चिकित्सा का सिद्धान्त यह है कि शरीर के भीतर की गन्दगी निकालने के लिए बीमार होना स्वाभाविक और आवश्यक है। अगर यही बात है तो फिर रोगावस्था में इलाज करने-कराने की आवश्यकता ही क्या है? कृपया उत्तर दें।

रामशरण नाथ, 'कल्पवृक्ष कार्यालय उज्जैन।

उत्तर—मनुष्य अपने कर्म के अनुसार सुख और दुख भोगता है। यदि कोई बीमार पड़ता है तो उसका अर्थ यही है कि उसने प्रकृति के नियमों का उल्लंघन किया है, शरीर के अन्दर गन्दगी जमा होना ही इसका साक्षी है। यह सत्य है कि गन्दगी का शरीर से बाहर निकलना ही रोग कहलाता है। प्राकृतिक चिकित्सा इस गन्दगी को बाहर निकालने में सहायता पहुँचाती है और मनुष्य को प्रकृति के उन अटूट नियमों का ज्ञान प्राप्त कराती है। इस दृष्टि से निस्सन्देह रोग की अवस्था में—शरीर के मल अथवा विजातीय द्रव्य को बाहर निकाल फेंकने में—प्राकृतिक चिकित्सा की सहायता लेना आवश्यक हो जाता है। रोग एक आवश्यक पहलू होते हुए भी महान् परिवर्तनकारी होता है। ऐसी अवस्था में यदि प्रकृति के साथ रोग की एक रूपता या सामंजस्य न स्थापित की जाय तो उससे भारी अनिष्ट होने की आशंका हो सकती है। इसलिए भी रोग की अवस्था में प्राकृतिक उपचार करना आवश्यक है। इसके अलावा एक बात यह भी है कि प्राकृतिक चिकित्सा रोग को दबाती नहीं बल्कि रोग को—शरीर में एकत्र हुए दूषित विकार को—सहज और स्वाभाविक ढङ्ग से बाहर निकालने का ही कार्य करती है। इन बातों को ध्यान में रखते हुए अब आप स्वयं यह समझ सकते हैं कि यद्यपि रोग का होना स्वाभाविक है फिर भी उसे दूर करने के लिए उपाय करना क्यों आवश्यक है।

प्रश्न—मैंने देखा है कि कुछ लोग हमेशा आहार-सम्बन्धी नियमों का कठोरता पूर्वक पालन करते रहने पर भी साधारण स्वास्थ्य के कोसों दूर बने रहते हैं, जब कि इसके विपरीत ऐसे लोग भी हैं जो स्वास्थ्य और आहार सम्बन्धी नियमों का कुछ भी पालन न करते हुए भी स्वस्थ और नीरोग बने रहते हैं। इसका क्या रहस्य है?

रामशरण नाथ, 'कल्पवृक्ष' कार्यालय, उज्जैन।

उत्तर—आपका यह प्रश्न बहुत अच्छा है। मैं समझता हूँ कि स्वास्थ्य के सम्बन्ध में इसी तरह के प्रश्न अन्य लोगों के भी मन में उठते होंगे। आप यह तो देखते हैं कि अमुक व्यक्ति रात-दिन आहार और स्वास्थ्य के ही चक्कर में पड़ा रहकर भी साधारण स्वास्थ्य प्राप्त करने से वञ्चित ही बना रहता है, किन्तु आप इस बात पर भी ध्यान क्यों नहीं देते कि उसने अपना यह क्रम कितनी अधिक शारीरिक शक्ति का ह्रास हो चुकने के बाद आरम्भ किया है। यह निर्माण-कार्य साध्य होते हुए भी शीघ्र पूरा नहीं होता, कुछ ही समय के प्रयोग से आप इसको को सफल होते नहीं देख सकते। ऐसा होने में समय लगना अनिवार्य है, इसके साथ ही आप यह भी निश्चित समझें कि वह व्यक्ति इन नियमों का कठोरता के साथ पालन करने के ही फल-स्वरूप अपना दैनिक कार्य और जीवन-निर्वाह करने में समर्थ बना है, यदि वह ऐसा करता तो उसकी क्या अवस्था होती यह विचारणीय है। अब इस प्रश्न के दूसरे पहलू पर भी ध्यान दीजिये। मनुष्य भी प्राण शक्ति बहुत कुछ (Vilatity) पैतृक होती है। स्वस्थ पूर्वजों के स्वस्थ्य सन्तानें होना स्वाभाविक ही है। इस प्रकार जिस व्यक्ति ने पैतृक सम्पत्ति यह शक्ति प्राप्त की है वह अपने आहार-विहार में अनियमित रह कर भी साधारण तौर से स्वस्थ बना रहता है। किन्तु उसकी इस अनियमितता का उसके स्वास्थ्य पर कभी प्रवाह ही नहीं पड़ेगा, ऐसी बात नहीं है। ऐसा देखा गया है, इसी प्रकार का अनियमित जीवन व्यतीत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करने वाले व्यक्ति ४० साल की अवस्था के बाद, शारीरिक शक्ति शिथिल पड़ने पर नाना प्रकार के रोगों से ग्रसित होते हैं। और यदि यह मान लिया कि वृद्धावस्था भी उनके लिए दुखदायिनी नहीं होती तो कम से कम यह तो दावा कदापि नहीं किया जा सकता कि उनकी सन्तानें भी पैतृक सम्पति के रूप में प्राण-शक्ति की वही अनमोल निधि प्राप्त कर सकेंगी, जैसा कि उन्होंने अपने पूर्वजों से प्राप्त किया था। इन दोनों पहलुओं पर विचार करने से, मैं समझता हूं, आपकी शंका का समाधान हो जायगा।

प्रश्न—(१) क्या प्राकृतिक चिकित्सा सभी रोगों के लिए साध्य है ?

(२) क्या जीर्ण रोग योग-चिकित्सा के द्वारा अच्छे किए जा सकते हैं ?

—चितरंजन, काशी

उत्तर—(१) जी हां, प्राकृतिक चिकित्सा सभी रोगों को दूर भगाने में सफल हो सकती है बशर्ते रोगी में प्राण-शक्ति मौजूद हो। किन्तु जिस रोगी में प्राण-शक्ति ही नहीं रह गई है उसे संसार की कोई भी चिकित्सा-प्रणाली लाभ नहीं पहुंचा सकती।

(२) योग-चिकित्सा खास तौर से जीर्ण रोगों के ही निवारण के लिए है। अतः इससे प्रायः सभी प्रकार के जीर्ण रोगी समान रूप से लाभ उठा सकते हैं। तीव्र रोगों के लिए प्राकृतिक चिकित्सा और जीर्ण रोगों में योग-चिकित्सा विशेष लाभ दायक होती है, इसमें सन्देह नहीं।

बालेश्वरप्रसाद सिंह

कब्ज या कोष्ठबद्धता

लेखक—डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह, सम्पादक 'जीवन सखा'

इस छोटी सी, पर अमूल्य पुस्तक में डा० बालेश्वरप्रसाद जी ने यह दिखलाया है कि मलावरोध ही सब रोगों की जड़ है। इस एक खराबी से ही सब तरह के रोग होते हैं। इसको हटाने तथा इससे बचने के उपाय बड़े विस्तार से दिये गये हैं। इससे इसकी महत्ता और भी बढ़ जाती है। इस पुस्तक का आर्डर अभी ही कर दीजिये। मूल्य ॥।)

पता—मैनेजर, स्वास्थ्य ग्रंथ-भण्डार, ११ लूकरगंज, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पढ़िये ! लाभ उठाइये !!

सुन्दर, स्वस्थ और सुखी जीवन के इच्छुकों को ये पुस्तकें पढ़नी चाहिए

(१) रोगों की अचूक चिकित्सा (तृतीय संस्करण): श्री जानकीशरण वर्मा, बी० ए०		३)
(२) सरल शरीर विज्ञान: श्री जानकीशरण वर्मा, बी० ए०	... ...	१॥)
(३) प्राकृतिक चिकित्सा : श्री केदारनाथ गुप्त, एम० ए०	... ...	२।)
(४) मठा उसके गुण तथा उपयोग (परिवर्द्धित संस्करण) : श्री महेन्द्रनाथ पांडेय	...	॥)
(५) दूध ही अमृत है : श्री हनुमान प्रसाद गोयल	... ...	१॥)
(६) स्वास्थ्य के नुस्खे : 'जीवन-सखा' कार्यालय	... ...	≡)
(७) क्या और कैसे खायें : डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह	... ...	।=)
(८) ब्रह्मचर्य ही जीवन है : श्री स्वामी शिवानन्द	... ...	१)
(९) सचित्र हठयोग : श्री स्वामी शिवानन्द	... ...	१।)
(१०) कब्ज या कोष्ठबद्धता : डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह	... ...	॥।)
(११) फलाहार और जल-चिकित्सा : श्री नारायण प्रसाद अरोड़ा	... ...	१।)
(१२) आँखों का अचूक इलाज : श्री महेन्द्रनाथ पाण्डेय	... ...	२)
(१३) आरोग्य साधन : महात्मा गाँधी	... ...	॥)
(१४) नवीन चिकित्सा विज्ञान (जल-चिकित्सा) : श्री लुई कूने	... ...	३॥)
(१५) बच्चों की रक्षा : श्री लुई कूने	... ...	।=)
(१६) मैं निरोग हूँ या रोगी : श्री लुई कूने	... ...	।=)
(१७) उपवास-चिकित्सा : बरनर मैकफेडन	... ...	१=)
(१८) स्वास्थ्य के लिए शाक-तरकारियाँ : श्री महेन्द्रनाथ पांडेय	... ...	१॥)
(१९) हम सौ वर्ष कैसे जीवें : केदारनाथ गुप्त, एम० ए०	... ...	१!
(२०) सूर्य-नमस्कार : श्री भगवती प्रसाद पांडे, बी० ए०	... ...	१)
(२१) शाक और उनके गुण : श्री नारायणप्रसाद अरोड़ा	... ...	॥।'
(२२) स्वास्थ्य और जल-चिकित्सा : प्रिन्सपल केदारनाथ जी गुप्त	... ...	१॥)
(२३) आहार ही औषध है : डा० एल० एन० रतरा ...	... ...	१)
(२४) फलाहार चिकित्सा : श्री महेन्द्रनाथ पाण्डेय	... ...	२।)
(२५) Nature Cure by H. Lindlahr, M. D.	... 6	0
(२६) Practical Nature Cure by Dr. K.L. Sharma, N. D.	... 5	0
(२७) Fasting Cure by Dr. L. Sharma, N. D.	... 0	6
(२८) Drugles Healing by Dr. L. Kameshwar Sharma, M. A., N. D.	0	8
(२९) Food-de-Medicine by Dr. L. N. Ratra, H.M B.	... 2	0

स्वास्थ्य संबन्धी पुस्तकें मिलने का पता :—

मैनेजर, स्वास्थ्य ग्रन्थ-भंडार, ११ लूकरगंज, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Reg. No. A.172.

उत्तरी भारत में प्राकृतिक चिकित्सा का प्रमुख केन्द्र

'प्राकृतिक स्वास्थ्य गृह' प्रयाग

जहाँ अब तक न जाने कितने तथाकथित असाध्य रोगों से पीड़ित होने वाले रोगियों ने पहुँच कर अपने को नीरोग और स्वस्थ बना लिया। यही कारण है, जो यह चिकित्सा-केन्द्र लगातार उन्नति करता जा रहा है।

यदि आप—किसी भयानक रोग से पीड़ित हो रहे हैं, डाक्टरों और वैद्यों की दवा से निराश हो चुके हैं, तो आप फौरन यहाँ पधारें या पत्र दे कर चिकित्सा के सम्बन्ध में विवरण प्राप्त करें।

यहां निम्न रोगों की सफलतापूर्वक चिकित्सा होती है— साधरण दुर्बलता, स्नायु दौर्बल्य, सभी तरह के चर्म रोग रक्ताभाव, पुराना जुकाम खाँसी, कब्ज प्लुरिसी, अनिद्रा, दमा, मृगी रक्त-चाप, मधुमेह मुटापा, मंदाग्नि, संग्रहणी, गठिया, स्नायु-शूल (scitica) उदर-शूल (colic pain), पथरी (gallstone troubles), गुर्दे की बीमारी विषाक्त फोड़ा, नासूर, भगंदर, तथा विभिन्न प्रकार के स्त्री रोग जैसे—मासिक स्राव न होना या बहुत अधिक होना, स्राव के समय दर्द होना, प्रदर—इत्यादि इत्यादि।

यहां जिस चिकित्सा विधि से रोगी का इलाज किया जाता है उनमें योगिक क्रियायें, आसन, प्राणायाम, मालिश, सूर्य-रश्मि-चिकित्सा, जल-चिकित्सा, मिट्टी तथा वाष्प-चिकित्सा, आहार-चिकित्सा, उपवास, मानसोपचार आदि सम्मिलित हैं।

स्वास्थ्य गृह में भरती होने के नियम—(१) इस स्वास्थ्य गृह में स्त्री और पुरुष दोनों तरह के रोगी भर्ती किये जाते हैं। किन्तु संक्रामक रोगों से पीड़ित होने वाले तथा चारपाई छोड़ने में असमर्थ रोगियों के रखने का प्रबन्ध नहीं है। (२) रोगियों के रहने उपचार तथा सेवा-शुश्रूषा का प्रबन्ध संस्था की ओर से किया गया है। (३) रोगियों से चिकित्सा फीस ४०) प्रति मास ली जाती है, जिसमें मकान का किराया और इलाज की फीस दोनों शामिल हैं।

विशेष जानकारी के लिए नीचे लिखे पते से पत्र-व्यवहार करें :—

संचालक,

प्राकृतिक स्वास्थ्य गृह,

११, लूकरगंज, इलाहाबाद।

Printed by Pandit Bishamdhar Nath Bajpai, at the Onkar Press, Allahabad.
Published by Svt Baleshwar Prasad Sinha, 11, Lookerganj. Allahabad.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन सखा

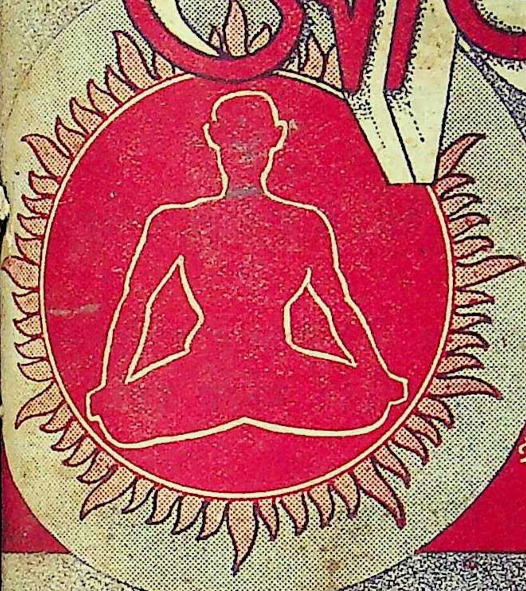

शारीरिक, मानसिक और नैतिक स्वास्थ्य का
पथ-प्रदर्शक

संयुक्त प्रान्त, मध्य प्रान्त तथा बिहार के शिक्षा विभागों द्वारा स्वीकृ

इस अंक में पढ़िये

१—'कृपा कर बताइए ?'—श्रीयुत जानकीसरण वर्मा ... ...
२—भोजन सबंधी मेरे अनुभव डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह ... ...
३—स्त्रियां और व्यायाम—श्रीयुत व्रजमोहन मिहर ... ...
४—तत्व-चिकित्सा का आदि इतिहास—श्रीयुत गंगा प्रसाद गौड़ 'नाहर' ... ...
५—सूर्य रश्मि-चिकित्सा बानम प्राकृतिक चित्किसा—श्रीकृष्ण शर्मा ... ...
६—मनुष्य का आहार—श्री प्रो० भवानी प्रसाद स्वाभाविक स्वास्थ्य शास्त्रोपाध्याय, कांगड़ी गुड़कुल विश्वविद्यालय ... ...
७—प्रश्नोत्तर ... ...
८—सब रोगों पर प्राकृतिक कल्प ... ...
९—वीर्य रक्षा ही जीवन है—श्रीयुत शशि ... ...
१०—चेचक या महामारी—गणेश प्रसाद द्विवेदी, एम० ए० एल० एल० बी० ...
११—सम्पादकीय ... ...

मार्च-अप्रैल
१९४४

संपादक

डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

वार्षिक मूल्य

प्रति अंक

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'जीवन-सखा' के नियम

(१) 'जीवन-सखा' प्रति मास इक्कीसवीं तारीख को प्रकाशित होता है।

(२) इसका वार्षिक मूल्य ४) तथा एक प्रति का ।≈) है।

(३) सज्जन-गण जनवरी या जुलाई से ही ग्राहक बनें; यों किसी महीने से भी ग्राहक बनाया जा सकता है।

(४) मास के अन्त तक 'जीवन-सखा' का अंक न मिले तो १५ दिन के अन्दर इसकी सूचना पोस्ट आफिस से प्राप्त उत्तर के साथ कार्यालय को दे देनी चाहिए। अन्यथा मुफ्त में वह अंक फिर न मिलेगा।

(५) पत्र भेजते समय अपनी ग्राहक-संख्या, नाम और पूरा पता साफ साफ अक्षरों में लिखना चाहिए। उत्तर के लिए टिकट भेजना आवश्यक है।

(६) प्रकाशनार्थ भेजे जाने वाले लेख कागज के एक तरफ हाशिया छोड़ कर साफ अक्षरों में लिखे जाने चाहिए। लेख सम्बन्धी चित्र भी भेजे जा सकते हैं।

(७) नमूने की प्रति के लिए ।≈) का टिकट भेजना जरूरी है।

पता—मैनेजर, 'जीवन-सखा' कार्यालय, ११ लूकरगंज, इलाहाबाद

अनुपम अवसर !

पाठकों को यह जान कर हर्ष होगा कि श्रीमान धर्मचन्द्र सरावगी की उदारता के फलस्वरूप १५० पुस्तकालयों के लिए १॥) वार्षिक चन्दे पर 'जीवन सखा' एक साल तक पहुंचाते रहने की योजना की गई है। अतः सार्वजनिक पुस्तकालयों को इस अनुपम अवसर से लाभ उठाना चाहिए। १॥) में 'जीवन-सखा' प्राप्त करने के लिए आज ही लिखें।

—मैनेजर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन सखा

वर्ष ९ | मार्च-अप्रैल, १९४४ | अङ्क ३-४

'कृपा कर बताइए ?'

[श्रीयुत जानकीशरण वर्मा]

श्रीयुत वर्मा जी से जीवन सखा के पाठक पूर्ण परिचित हैं। उनके विचार, गम्भीर, पुष्ठ साथ ही सरल हैं। इस लेख में श्री वर्मा जी ने पाठकों के सामने रोगों को दूर करने के सरल परन्तु अचूक इलाज वताये हैं साथ ही झिलमिल यकीन प्रकृति-प्रेमियों को सरल रास्ता भी बताया है। —सं०

"महाशय जी, मैं १० साल से बीमार हूँ, जीवन भार हो रहा है, भूख नहीं लगती। बहुत हल्का खाना सिर्फ़ चावल, दाल रोटी, तरकारी, दही—खाता हूँ, पर यह भी नहीं पचता। मुझे प्राकृतिक चिकित्सा में पूरा विश्वास है, सात साल पहले आपकी पुस्तक, 'अचूक चिकित्सा,' पढ़ी थी, तभी से मैं प्रकृति का भक्त हूँ। कृपाकर बताइए कि मैं क्या करूँ, जिससे अपने दुखों से छुटकारा पा जाऊँ। मुझे तीन साल पहले बवासीर हुआ, सभी तरह की चिकित्साएं कीं, फिर चीरा लगवाया—तो भी बवासीर अब तक नहीं गया है। उसके बाद गठिया की शिकायत शुरू हुई। इसके लिये भी १० इन्जेकशन लिये, पर अभी भी जोड़ों में सख़्ती बनी रहती है। मुझ पर दया कीजिए और बताइए कि मैं जल्दी से जल्दी स्वस्थ हो जाऊँ। एक बात और। मैं बहुत ग़रीब आदमी हूँ। फलों पर पैसा ख़र्च नहीं कर सकता। मामूली रोटी-दाल खाने भर ही मेरी औकात है—इसका भी ख़याल रखिएगा। कृपाकर रोग को दूर भगाने का उपाय बताइए।"

ऊपर की पंक्तियाँ उन कई विचित्र पत्रों में से एक है, जो हर रोज़ मेरे पास आते हैं और जिनका उत्तर देना समय खराब करना है। सोचिए तो सही, सात साल पहले पत्र-लेखक ने 'अचूक चिकित्सा' पढ़ी, जिसके प्रत्येक पृष्ठ में यह बताने की चेष्टा की गई है कि (१) रोग आहार-विहार की गड़बड़ी से, मुख्यतया खान-पान की ख़राबी से, होते हैं; (२) किसी कष्ट के आरंभ होते ही उपवास, रसाहार और फलाहार का सहारा लेना चाहिए; (३) प्रति दिन के भोजन में क्षारमय पदार्थों का आधिक्य होना चाहिए; (४) औषधियों का व्यवहार बहुत सी हालतों में अनावश्यक और कुछ हालतों में हानिकर है; (५) चीरा लगाने से रोग जड़ से नहीं जाता बल्कि बाहरी लक्षण ही दबते हैं; (६) शरीर में वह शक्ति है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिससे वह अपनी ख़राबी आपही दूर कर सकता है, अगर उसकी राह में अड़चनें न डाली जायँ, इत्यादि इत्यादि। इन सिद्धान्तों को पढ़ने के बाद अगर पत्र-लेखक महोदय चीरा लगवाते हैं, इन्जेक्शन लेते हैं, बवासीर और गठिया जैसी बीमारी में भी दाल खाते हैं, और फिर भी अपने आपको 'प्रकृतिभक्त' बताते हैं, तो इसमें आश्चर्य ही क्या कि वह दुःख भोग रहे हैं। मैंने पत्र के उत्तर में यह निवेदन किया, 'कृपाकर आपही बताइए कि मैं किस तरह आपका दुःख दूर कर सकता हूँ?' आपने जान-बूझ कर अपना कष्ट बढ़ाया है और जो लक्षण ३-४ महीने में चले जाते उन्हें पुष्ट कर साल डेढ साल का मेहमान बना लिया है और कई नये लक्षण भी खड़े कर लिये हैं। कृपाकर अब भी बताइए कि आप उन सिद्धान्तों का पालन करने को तैयार हैं या नहीं। अगर तैयार हैं तो ३ दिन रसाहार करके रहिए, उसके बाद १० से १५ दिन सिर्फ फल खाइए—दिन में तीन बार और एक बार एक ही तरह का फल—शुरू से दस दिनों तक लगातार एनीमा (पानी न गर्म न ठंडा) लीजिए, फलों की अवधि के बाद सुबह-शाम फल और दोपहर में रोटी-तरकारी सादी पकी) खाकर तीन हफ़्ते और तब मुझसे फिर पूछिए कि आगे क्या करना चाहिए। यह सारी बातें मेरी पुस्तक में आपको मिलेंगी। अगर आप ऊपर के क्रम का पालन करेंगे तो उतने दिनों में ही आपकी तकलीफ़ आधी से ज्यादा दूर हो जायगी। बवासीर और गठिया दोनों हठी रोग हैं, पर लगे रहने से दोनों निर्मूल हो जायँगे। आपने अपने शरीर में जो विषैली औषधियाँ पैसे ख़र्च करके भरी हैं उनके निकलने में भी समय लगेगा। इस धैर्य के साथ अपनी चिकित्सा कीजिए। आप फलों के लिए ग़रीब हो जाते हैं, पर क्या इन्जेक्शन मुफ़्त में ही दिया गया होगा? क्या अमरूद, गाजर, ख़रबूजा, जामुन, ककड़ी, खीरा, नीबू बहुत महँगे फल हैं?

जब इन महाशय से साक्षात हुआ तो मालूम हुआ कि इन्जेक्शन की दवा और फ़ीस के लिए इन्होंने क़र्ज़ लिया था। यही महाशय फलों के लिए अपनी विवशता प्रकट कर रहे थे।

खेद की बात है कि बीमारी होते ही लोगों का सीधे-सादे प्राकृतिक उपचारों की तरफ़ ध्यान ही नहीं जाता। इससे भी ज्यादा खेद की बात है कि लोग यह जानते ही नहीं कि किस तरह रहने खाने-पीने कसरत और आराम करने से रोग होता ही नहीं। सबसे अधिक खेद की बात यह है कि आज-कल के वातावरण में अस्वाभाविकता ने स्वाभाविकता का रूप ग्रहण कर लिया है और अगर स्वाभाविकता की ओर हमारा ध्यान खींचा जाता है तो हम नाक-भौं सिकोड़ते हैं और सैकड़ों दलीलें पेश करते हैं। यह जानते हुए भी कि हमारे पूर्वज बहुत कम बीमार होते थे, आज भी गाँव वाले हम शहर वालों से कम बीमार होते हैं, पशु-पक्षियों में भी रोगों की वैसी भरमार नहीं है जैसी कि हम मनुष्यों में है हम अपनी समझ में ताला-कुंजी भरे रहते हैं और शारीरिक और मानसिक रोगों की ओर अपने क़दम बढ़ाते जा रहे हैं। समझ में नहीं आता कि हमारी शरीर-सम्पत्ति की रक्षा और वृद्धि कैसे होगी।

स्वास्थ्य रक्षा के सिद्धान्त बहुत ही सरल हैं। शरीर की आवश्यकता से कम खाना हानिकर है। पर यह उतना हानिकर नहीं है, जितनी कि आवश्यकता से अधिक खाना है। जो पर्याप्त मात्रा में किसी तरह का व्यायाम नियमित रूप से नित्यप्रति नहीं करता उसे बहुत ही कम खाना चाहिए। व्यायाम के साथ ही साथ आराम भी—रात में अच्छी तरह सोना—नितान्त आवश्यक है। अपने आपको विचारों का केन्द्र न बनाकर दूसरों के—जो कहने के लिए दूसरे पर वास्तव में अपने ही हैं—हित-साधन में लग जाना दिव्य स्वास्थ्य की कुंजी है।

(शेष ८८वें पेज पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भोजन संबंधी मेरे अनुभव

[डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह]

भोजन ही स्वास्थ्य का मूल है। कितना ही सुपच और उपयोगी भोजन हो यदि उसका समय ठीक न हो तो भोजन लाभ के बदले हानिकर हो जाता है। कुछ प्रसिद्ध चिकित्सकों ने इसका समय निर्धारित करने की गलत चेष्टा की है। इस लेख में भोजन का समय निश्चित किया गया है जो पाठकों के लिए बहुत ही उपयोगी है—सं०

क्या खाना चाहिए? क्या नहीं खाना चाहिए? इस विषय को हमारे कितने विद्वान लेखकों ने बहुत ही गम्भीरता पूर्वक लिखा है। अभी हम इस विषय को इस लेख में नहीं लाना चाहते। इस लेख का अभिप्राय भोजन के समय से है।

हम जीवन में बहुत सी गल्तियाँ करते हैं। और एक गल्ती असमय भोजन की भी करते हैं। पहली बात तो यह जानने की है कि भोजन हमको कब करना चाहिए, कितना करना चाहिए और कैसे क्या खाना चाहिए।

शरीर शास्त्र का यह नियम है कि जिस अंग से काम लिया जाता है वहाँ पर रक्त का संचार अधिक होता है। जब हम भोजन करते हैं तो रक्त का संचार पेट की ओर बड़ी तेजी के साथ होने लगता है। और यदि हम कोई कसरत करते हैं तो रक्त का संचार मांस-पेशियों की ओर होने लगता है। ऐसा देखा गया है कि यदि ऐच्छिक (Voluntary) और अनैच्छिक (involuntary) मांसपेशियाँ दोनों एक साथ काम करती हैं तो ऐच्छिक मांसपेशियों की ओर अनैच्छिक मांस-पेशियों से ज्यादा खून का दौरान होता है पेट और पाचन-यन्त्र की मांसपेशियां अनैच्छिक हैं इसलिए यदि हम खाना खाने के बाद तुरन्त ही काम करने लगते हैं तो जो रक्त पेट की ओर जाना चाहिए था वह पेट की ओर न जाकर मांसपेशियों की ओर जाने लगता है। इसलिए पेट में अन्न बहुत देर तक बिना हज़म हुए रखा रह जाता है। यह आदत यदि काफी दिनों तक रखी जाय तो आगे चलकर मंदाग्नि की शिकायत होती है और यहीं से अनेक बीमारियों की शुरुआत होती है। इस विषय के बड़े-बड़े डाक्टरों के अनेक अनुभव शरीर-शास्त्रों में मिलेंगे। यह तो निर्विवाद सिद्ध है कि दो काम एक साथ नहीं करना चाहिए।

हम जब के० एल० शर्मा पुदु कोटा की पुस्तक 'प्रैक्टिकल नेचर क्योर' और श्री जानकीशरण वर्म्मा, इलाहाबाद की पुस्तक 'रोगों की अचूक चिकित्सा' पढ़ते हैं तो तबियत खुश हो जाती है। इनकी भाषा अति ही रोचक है और पुस्तकें भी बड़ी महत्त्व की हैं। सचमुच ये पुस्तकें प्राकृतिक चिकित्सा जगत को बड़ा ही कल्याणकारी सिद्ध हो रही हैं। पर, हम जब सूक्ष्म दृष्टि से देखते हैं तो हम को कुछ त्रुटियां भी मिलती हैं। ऊपर के कहे गये अनुभव के आधार पर डा० के० एल० शर्म्मा ने अपनी पुस्तक प्रैक्टिकल नेचर क्योर में लिखा है—दो काम एक साथ नहीं करना चाहिए। और साथ-साथ यह भी लिखा है कि दिन के काम के खत्म होने के बाद ही मुख्य भोजन किया जाय। (The principal meal of the day should be postponed till the day's work is done, and the worker fully rested. (Vide Practical Nature cure, Page 132, sixth edition.)

डा० शर्म्मा ने डा० डीवी (Dewi) का उदाहरण दिया है। उन्होंने लिखा है कि १२ बजे तक उपवास करना चाहिए (Fast till noon) इसी मत को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री जानकी शरण जी वर्म्मा ने जीवन सखा में किसी पिछले साल समर्थन किया था। अब यह देखना है कि डा० डीवी, डा० शर्मा, और श्री जानकीशरण जी वर्म्मा के सिद्धांत कहाँ तक प्राकृतिक नियमों के आधार पर अवलम्बित हैं।

जल-चिकित्सा के प्रवर्तक और एक अनुभवी प्राकृतिक चिकित्सक जिन्होंने प्रकृति के नियमों को अच्छी तरह अध्ययन किया है लूई कूने साहब ने अपनी पुस्तक 'मुखाकृति-विज्ञान' (Science of Facial Expression) में इस प्रकार लिखा है—"The day is divided into two parts, an animating and tranquillizing period. The period of animation commences with the rising sun, which awakens the whole of nature to renewed activity" दिन को दो हिस्सों में बाँट सकते हैं। पहला हिस्सा – जागृति अवस्था है। इस हिस्से में प्रकृति की सारी चीजों में एक नया जीवन संचारित होता है। चिड़ियाँ चहकती हैं। सारा जगत चहल-पहल से भर जाता है। मनुष्य को इस जागृत अवस्था के साथ चलना चाहिए चाहे वह कितनी ही कोशिश करे पर उसे इस जागृत अवस्था के साथ चलना ही पड़ेगा। सुबह होते ही मनुष्य चारपाई छोड़कर बाहर मैदान में जाता है और आनन्द का अनुभव प्राप्त करता है।

दूसरा सुसुप्ति अवस्था है। यह दोपहर से शुरू होता है और मनुष्य को इस अवस्था के साथ चलना चाहिए। इस अवस्था में प्रकृति की सारी चीजों में शिथिलता आती जाती है और सूर्य्यास्त के होते होते सभी चीजों में शान्ति आ जाती है। शरीर में स्वभावतः थकावट आ जाती है और आराम करने की इच्छा होती है। इसका असर भोजन प्रणाली पर भी पड़ता है। सुबह भूख अच्छी लगती है और शाम को धीरे-धीरे भूख कमजोर पड़ती जाती है (During the period of animation, therefore, we are excited to activity, the body is strengthened invigorated. The tranquillizing period relaxes, the body becomes fatigued and there is a desire for rest. This extends also to the organs of digestion. In the morning digestion is better than in the afternoon, and towards evening it will become still weaker.)

इस नियम के अनुसार कूने साहब लिखते हैं—दिन का मुख्य भोजन सुबह ही करना चाहिये, या दिन के पहले भाग में। और दोपहर को या दोपहर के बाद हलका भोजन करना चाहिये जिसमें आसानी से हजम हो सके। इससे शक्ति को अपने काम में ला सकते हैं और अनेक बीमारियों से बच सकते हैं। और पुनः शक्ति प्राप्त कर सकते हैं (From this it follows that food should principally be eaten in the morning and early part of the day, and that in the afternoon only small quantities should be consumed. Invalids especially must observe this, for here they have a means of utilising their vitality as far as possible and of restoring it to the normal.)। डा० हौवर्ड हे भी इसी मत के समर्थक हैं। उनका कहना है कि पाचन क्रिया (Digestion) और समीकरण (Assimilation) दो भिन्न क्रियाएं हैं। पाचन क्रिया द्वारा भोजन पच कर भोजन से रस तैयार होता है। और भोजन का शेष भाग फुजला बन कर बाहर निकलने को तैयार हो जाता है। समीकरण से यह मतलब हुआ कि जो रस पच कर तैयार होता है वह यकृत से होकर हृदय में पहुंचता है और यहाँ आकर खून में मिल जाता है। फिर हृदय द्वारा अर्थात् धमनियों द्वारा शरीर के अन्य भागों में पहुंच जाता है। इससे सेल्स (Cells जिससे शरीर बना है) को भोजन मिलता है और ये पुष्ट होते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डा० हे कहते हैं – समीकरण जभी होने लगता है जब पाचन क्रिया का काम खतम होता है। समीकरण शिथिलता के समय जब मनुष्य आराम करता है तभी होता है अर्थात रात को सोते समय। यदि पाचन क्रिया भी रात को सोते समय होती रहे तो समीकरण में दिक्कत होगी। और ऊपर कहे गये शरीर शास्त्र के नियम द्वारा दो में से एक या दोनों कमजोर होंगे। इस कथन से यह सिद्ध हुआ कि मनुष्य का मुख्य भोजन शाम को नहीं होना चाहिए। कारण, पाचन-क्रिया में समय काफी लग जायगा और समीकरण के लिये समय नहीं रहेगा।

जो लोग रात को ठूस-ठूस कर भोजन करते हैं अकसर उन्हीं को रात के पिछले पहर में अजीर्ण होता है और कभी कभी वह हैजे का रूप धारण कर लेता है, अगर रात का भोजन बन्द रखा जाय तो यह रोग ही न हो।

इस नियम को बड़े-बड़े धर्म के प्रवर्तकों ने भी समझा है। खास कर बौद्ध धर्म्म और जैन धर्मावलम्बियों ने, बौद्ध भिक्षुओं का अभी भी यह नियम है कि वे १२ बजे के पहले ही भोजन करते हैं। १२ बजे के बाद कुछ लेते भी हैं तो पेय पदार्थ इसी तरह जैन धर्मावलम्बी भी सूर्यास्त के बाद भोजन नहीं करते हैं।

भोजन पचने में कुछ समय लगता है। भोजन जब पेट में जाता है तभी पेट का रस (Gastric juice) बनता है या बनना चाहिये। यदि पेट का रस भोजन नहीं रहने पर बनता है तो यह बीमारी का लक्षण है, और एसिड डिसपेप्सिया (मंदाग्नि) में यह शिकायत लोग खास कर अनुभव करते हैं। जब तक भोजन पेट में रहता है तब तक तो ज्यादा पित्त के रहने के कारण कोई तकलीफ नहीं मालूम होती है पर जब पेट में भोजन नहीं रहता है तो इसी कारण पेट में दर्द होता है और मिचली मालूम होती है और वह बहुत कष्ट भोगता है। यह देखा गया है कि शाम को भोजन ज्यादा कर लेते हैं तो सुबह पेट में पित्त जमा मिलता है। यह उनको अनुभव होता है जो धौती क्रिया करते हैं। यह योग की क्रिया है जिसके द्वारा पेट की सफाई की जाती है। यह अनेक प्रकार की होती है पर हम जल धौती और वस्त्र धौती की ही चर्चा यहां करते हैं। इस क्रिया से हमें पित्त का अनुभव हो जाता है। जब भोजन ठीक से पच जाता है तो पेट से पित्त नहीं निकलता और निकलना भी नहीं चाहिये। यह अपना अनुभव है। जब भोजन रात में अधिक कर लिया जाता है या देरी से किया जाता है तो प्रायः पेट से पित्त निकलता है। इसका अर्थ यह हुआ कि रात में खाने से या ज्यादा खाने से पाचन-क्रिया ठीक से नहीं होती है। इस अनुभव के आधार पर और शारीरिक नियमों को मद्दे नजर रख कर या पृथ्वी की चाल को ध्यान में रखकर जैसा कि लूई कूने साहब ने बतलाया है यह हर्गिज भी नहीं कहा जा सकता कि शाम का भोजन किसी भी हालत में लाभप्रद है। हाँ, एक बात और शर्म्मा जी बतलाते हैं कि सुबह भूख नहीं लगनी चाहिये और सुबह का भूख लगना अप्राकृतिक है। यह सिर्फ उन्हीं लोगों के लिये कहा जा सकता है जो शाम को खाना ठूँस-ठूँस कर खाते हैं। पर जो प्राकृतिक नियमों के अनुसार रहता है अर्थात् सुबह ही जिसका प्रधान भोजन होता है और शाम को नाम मात्र को होता है वह सुबह अवश्य भूख का अनुभव करेगा। हां, यह कहना ठीक है कि काम और भोजन एक साथ नहीं होना चाहिये। हमारे स्कूल या कालेज या दफ्तर का समय बेवक्त होता है जिसके कारण भोजन और काम में अंतर नहीं मिलता। इसके लिये हमें भोजन का समय बदलने से काम नहीं चलेगा। इससे धीरे-धीरे करके मनुष्य की जीवनी शक्ति कम होगी और कुछ दिनों के बाद आदमी कमजोर और दुर्बल नजर आएँगे। इस नियम का उल्लंघन करने से यह जरूरी बात है कि मनुष्य आगे चल कर मंदाग्नि के शिकार बनेंगे। इन परिस्थितियों में दफ्तर और स्कूल का समय बदलने के लिये बहुत जोरों का आंदोलन करना चाहिये जिससे मनुष्य मात्र का कल्याण हो। पर गलत रास्ते पर जाने से कल्याण के बजाय दुख ही होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्त्रियाँ और व्यायाम

[श्रीयुत व्रजमोहन मिहिर]

स्त्रियों की शिक्षा के साथ साथ उनके व्यायाम का प्रश्न भी इस समय साधारण चर्चा की चीज हो गया है। विचार-शील लेखक ने इस पहलू पर बड़ी बड़ी गम्भीरता और विवेक से विचार किया है। लेख की उपयोगिता पढ़ कर ही जानी जा सकती है। —सं०

स्त्रियों के लिये व्यायाम आज लोगों को कुछ नई बात मालूम हो रही है आधुनिक समय में लोगों का जीवन एक परिवर्तन से होकर गुजर रहा है। परिवर्तन काल में विचारों का असामंजस्य और जीवन का विश्रृङ्खल दशा में हो जाना कुछ अनहोनी बात नहीं है। प्राचीन इतिहास का अनुशीलन करने से मालूम होता है कि स्त्रियों की दशा उस समय आज जैसी नहीं थी। उन्हें पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त थी। साधारणतः स्त्रियाँ विदुषी होती थीं और नीरोग शरीर वाली, स्वस्थ होती थीं। अस्त्र-शस्त्र धारण करना और व्यायाम की प्रथा उनमें और बातों की ही तरह प्रचलित थी। पर इस समय उनके सम्बन्ध में समाज में आज विभिन्न अभिमत पाये जाते हैं।

व्यायाम के सम्बन्ध में एकमत होकर संसार के मनीषी पुरुष भी उनके लिये उन्नति की सामान्य बातें नहीं कह रहे हैं। शिक्षा के सम्बन्ध में कोई अपना मत यह प्रकट करता है कि पाश्चात्य प्रणाली पर शिक्षा क्रम उनके लिये हानिकर है, कोई कहता है आधुनिक सभ्यता के अनुसार ही उनकी शिक्षा का क्रम होना चाहिये। स्त्रियाँ भी अपने सम्बन्ध में एक होकर कुछ नहीं कह रही हैं। किसी को प्राचीन पद्धति, आज भी भली मालूम हो रही है और कोई उस प्रकार के जीवन के नितान्त विरुद्ध हैं।

यह बात तो स्पष्ट सत्य मालूम होती है कि स्त्रियों का समाज में आज वह स्थान नहीं है जो कि प्राचीन भारत में था। पहले भी सभी स्त्रियाँ कुछ, असाधारण विदुषी नहीं होती थीं। पर इस बात को वे भली प्रकार जानती थीं कि कौन कौन से गुण स्त्रियों में होने चाहिये जिससे जीवन की जिम्मेदारी को हाथ में लिया जा सके। उन्हें साधारणतः कई प्रकार की शिक्षा भी दी जाती थी जिसमें पढ़ने-लिखने का क्रम, स्वास्थ्य की बातें, कई प्रकार की कलायें आदि शामिल थीं। इन शिक्षाओं के बलपर उस समय स्त्रियों का समाज में पुरुष के समान ही स्थान था। आधुनिक समय में उन्नति को लक्ष्य करके उनके और पुरुषों के बीच कुछ स्पर्द्धा सी मालूम होती है! स्त्रियाँ अपने मन में यह समझने लगी हैं कि समाज में उनका स्थान पुरुषों की भाँति नहीं है। बाहरी शोर गुल ने उनकी इस इच्छा को और बलवती बना दिया है। सही बात तो इस समय यही मालूम हो रही है कि स्त्रियों को क्या होना चाहिये। यह अभी निश्चित रूप में न पुरुषों द्वारा और न स्त्रियों ही द्वारा कुछ निश्चय हो सका है।

मानसिक विकास और शारीरिक स्वास्थ्य— इन दोनों बातों में जीवन की पूर्णता है। इन दोनों के द्वारा ही स्त्रियों की उन्नति और उनके द्वारा समाज की उन्नति सम्भव है। शरीर और मन दोनों को सम दशा में रहने से जीवन स्वस्थ रहता है और उसकी पूर्णता सम्पादन होती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ वर्ष पहले स्त्रियों को व्यायाम करना चाहिये यह सुनकर ही लोग चिढ़ जाया करते थे। सबों के मन में तो आज भी यह बात नहीं आई है कि मानसिक विकास के लिये जैसे गम्भीर विचार, उचित प्रयास और सतत जागरण आवश्यक है वैसे ही शारीरिक स्वास्थ्य के लिये पोषण तत्वों से युक्त मित भोजन और साधारण व्यायाम आवश्यक है। कहीं कहीं से कानों में आज यह आवाज आने लगी है कि नहीं व्यायाम भी जैसे पुरुषों के लिये आवश्यक है वैसे ही स्त्रियों के लिये भी आवश्यक है। यही विषय विचारणीय है। शरीर रचना को देखते हुए मालूम होता है कि उनके लिये कठिन व्यायाम अनावश्यक है।

प्राचीन इतिहास पर गौर करने से हम सुगमता पूर्वक यह जान लेते हैं कि शिकार के समय स्त्रियाँ पुरुषों के साथ जङ्गल को जाती थीं, युद्ध में शामिल होती थीं और कई कठिन अवसरों पर वीरता का कार्य्य करके पुरुषों की सहायता की है। कई अवसरों पर तो उन्होंने स्वयं रण-क्षेत्र में जाकर नेतृत्व ग्रहण किया था। पर यह सब कार्य्य उनके अति व्यायाम पर अवलंबित नहीं थे। इसके अन्दर उनका साहस और मनोयोग ही अधिक कार्य्य करता था। यह तो निर्विवाद सिद्ध है कि पुरुषों की भांति स्त्रियों को भी अपने स्वास्थ्य को ठीक रखने के लिये व्यायाम के रूप में कुछ शारीरिक परिश्रम करना चाहिये। अलबत्ता प्रश्न यह हो सकता है कि स्त्रियाँ किस प्रकार का व्यायाम करें। चाहे पुरुष हो या स्त्री व्यायाम उतना ही करना चाहिये जिससे उनका स्वास्थ्य सदा ठीक रहे पर साथ ही शरीर की कोमलता भी नष्ट न होने पावे। किसी भी शारीरिक अभ्यास द्वारा मांस-पेशियों को गठीला कर के कड़ा बना लेना व्यायाम का उद्देश्य कदापि नहीं हो सकता बल्कि अच्छा व्यायाम तो वह है जिससे शरीर का लोच अधिक से अधिक समय तक कायम रह सके। शरीर में लोच के कायम रहने से किसी अंग में विजातीय द्रव्य एकत्रित नहीं होने पाता व्यायाम का यही उद्देश्य है। अंग में विजातीय द्रव्य के एकत्रित न होने पर सारे शरीर में स्फूर्ति बनी रहती है और वृद्धावस्था शीघ्र आरंभ नहीं होती। स्वस्थ शरीर तो वह है जो जीवन के अन्तिम दिन तक स्वाभाविक रह कर अपना कार्य्य करता रहे। अतः स्वाभाविक प्रश्न यह है कि इस प्रकार का स्वास्थ्य बनाये रखने के लिये स्त्री को या पुरुष को क्या करना चाहिये। आहार विहार में सचेत रहते हुये सब प्रकार का यदि थोड़ा व्यायाम किया जाय तो स्वस्थ शरीर रखना कोई मुश्किल बात नहीं है। मुख्य उद्देश्य के हेतु व्यायाम भी कई प्रकार का होता है और उनमें भी कुछ व्यायाम केवल पुरुषों के लिये ही विशेष हितकर हैं और कुछ स्त्रियों के लिये। इसलिये व्यायाम के सम्बन्ध में स्त्री और पुरुष दोनों को विशेष सावधान रहने की जरूरत है वर्ना लाभ के स्थान पर उससे हानि अधिक हो सकती है।

अनियमित जीवन होने से आज कल व्यायाम के ऊपर अधिक जोर दिया जा रहा है जोकि परिस्थिति को देखते हुए आवश्यक भी है। अब से कुछ समय पूर्व जब कि यन्त्र का युग नहीं था और लोगों को अपने सब कामों के लिये शारीरिक परिश्रम पर निर्भर करना पड़ता था तो रोज के कामों में ही उनका इतना व्यायाम हो जाता था कि उन्हें अलग से कोई व्यायाम करने की आवश्यकता नहीं होती थी। शरीर रचना के अनुसार पुरुष गृहस्थी का कठिन काम करते थे और स्त्रियां कोमलाङ्गी होने से कुछ कम कठिन काम करती थीं। लेकिन दोनों का काम इस प्रकार का था और ऐसे बँटा था कि दोनों को अपना अपना काम करने में काफी परिश्रम कर लेना पड़ता था। घर का कुल काम करना, गायों को दुहना, घर के खर्च के लिये नित्य दो चार सेर आटा पीस लेना सूत कातना इत्यादि उनका साधारण कार्य था। इन कामों को करते हुए स्त्रियों के सन्मुख कभी यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रश्न नहीं आता था कि अपने काम के अतिरिक्त उन्हें कुछ व्यायाम भी करना चाहिये। आज कल की सभ्यता में जैसा ऊंच नीच का भेदभाव है वैसा पहले कभी नहीं था। सभी स्त्रियों को यह सब काम करने पड़ते थे। आज दिन भी स्त्रियाँ अगर उन कामों को अपना लें तो उनके सामने यह प्रश्न नहीं आ सकता कि वे कौन कौन से व्यायाम करें।

यह तो हुई प्राचीन भारत की बातें किन्तु अब तो हमें स्त्रियों के व्यायाम के सम्बन्ध में आधुनिक परिस्थिति के अनुसार ही कुछ विचार करना है। आजकल का परिवार तीन भागों में विभक्त है। अमीर परिवार, औसत दर्जे का परिवार और गरीब परिवार। आधुनिक सभ्यता का प्रभाव तो इन तीनों परिवारों पर पड़ा है पर गरीब परिवार की स्त्रियों को फिर भी इतना काफी काम कर लेना पड़ता है कि उन्हें किसी और व्यायाम की आवश्यकता नहीं होती। शहर के इस विभाग की स्त्रियों से ग्रामीण स्त्रियों का स्वास्थ्य अच्छा होता है। उन्हें प्रायः अब भी उतना ही काम काज करना पड़ता है जितना कि प्राचीन भारत की स्त्रियों को करना पड़ता था। अपने यहां उत्पन्न की हुई चीजों को बेचने के लिये जैसे कच्चा चना, मटर की छीमी, दही, दूध, कंडा, साग घास इत्यादि उन्हें कई मील पैदल चलना पड़ता है। घर का काम करना पांच सात मील पैदल चलना इतना अधिक काम उनके लिये हो जाता है कि व्यायाम के तौर पर वे कुछ और करें इसकी उन्हें तनिक भी आवश्यकता नहीं होती। उनका भोजन भी शहर की स्त्रियों के भोजन की अपेक्षा कम कीमती होता है आज दिन भी जिस प्रकार उनका जीवन है यदि शहर की स्त्रियां उनका अनुकरण करें तो उन्हें भी किसी प्रकार के व्यायाम की आवश्यकता नहीं पड़ सकती। इस समय लड़कियों के लिये जितने स्कूल हैं उनमें, शारीरिक व्यायाम, वाद्य शिक्षा और गान विद्या का ज्ञान जरूर कराया जाता है। यह लड़कियाँ जब शिक्षा काल समाप्त करके बाहर आयेंगी तो उन्हें व्यायाम के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त कराने की आवश्यकता न रह जायगी। इस समय तो समाज में ऐसी स्त्रियाँ भी मौजूद हैं जिन्हें इस ढङ्ग की बातें कभी नहीं बताई गई हैं और शिक्षित स्त्रियाँ भी। स्त्रियों की दशा तो जो कुछ है सो हई है बहुत से पुरुष भी ऐसे हैं जो स्त्रियों के व्यायाम के पक्ष में नहीं हैं। उनका भी यही कहना है कि व्यायाम स्त्रियों के लिये नहीं है पर इस विचार के स्त्री पुरुषों की संख्या अब कम हो रही है।

जो स्त्रियाँ अपने हाथों घर का सब काम करती हैं। उन्हें और किसी प्रकार के व्यायाम की आवश्यकता नहीं है। घर के कामों में आटा पीसना और घर का सफाई का सब काम आ जाता है। पर बिगड़े हुए समाज में जिनके पास धन काफी है और वे इन कामों को पसन्द नहीं करती उनको अतिरिक्त व्यायाम बहुत ही आवश्यक है।

स्वास्थ्य के विचार से मुझे आवश्यक मालूम हो रहा है कि स्त्रियों के व्यायाम के बारे में कुछ बातें लिखी जायँ। आजकल पुरुष जितने प्रकार के व्यायाम करते हैं और खेल खेलते हैं उतने प्रकार के व्यायाम और खेलों का स्त्रियों को आवश्यकता नहीं है। पुरुषों के बीच आकर स्त्रियों को उनके साथ स्पर्द्धा करने की भी कोई बात नहीं है। उनको अपनी उन्नति अपने ही समाज में देखना है। शारीरिक रचना के हिसाब से स्त्रियाँ पुरुषों से कुछ भिन्न प्रकार की हैं अतएव उनका व्यायाम भी कुछ भिन्न प्रकार का ही होना चाहिये। साधारणतः पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों की टांगे कुछ छोटी होती हैं, और कम गठीली भी। उनके अन्दर चर्बी एकत्र करने वाले टिशू अधिक होते हैं, उनके हृदय और फेफड़े भी पुरुषों की अपेक्षा छोटे छोटे हैं, और उनके रक्त में कम आक्सीजन ग्रहण करने वाले जीवाणु होते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शारीरिक रचना के अनुसार पुरुषों की भाँति स्त्रियाँ कठिन व्यायाम करने में समर्थ नहीं होती हैं। उनका चलने का ढंग भी कुछ यन्त्रवत और मन के साथ सम्बन्ध रखने वाला होता है। उनके चलने की गति कुछ सीमित सी है। स्त्रियों के अन्दर पुरुष की अपेक्षा सहन शक्ति अधिक होती है। तैरने की कसरत स्त्रियाँ पुरुषों की अपेक्षा अच्छी कर सकती हैं।

व्यायाम दो प्रकार का होता है। शारीरिक व्यायाम और मानसिक व्यायाम। दोनों में से किसी की अवहेलना नहीं की जा सकती। शरीर के भिन्न-भिन्न अंगों में हरकत पैदा करने, उसके लोच को स्थायी बनाये रखने में शरीर का व्यायाम होता है। शरीर का जब कोई अंग कड़ा हो जाता है तो उस स्थान से लोच जाता रहता है। लोच के चले जाने से उसमें जड़ता आजाती है और वह अंग किसी भी बीमारी का केन्द्र बन सकता है। इसलिये व्यायाम इस प्रकार का करना चाहिये कि शरीर को मन चाहे ढंग से सब तरफ आसानी के साथ मोड़ा जा सके और वह किसी प्रकार से कड़ा भी न हो जाय। भिन्न भिन्न प्रकार के आसन इसके लिये अच्छे व्यायाम हैं जिनका जिक्र प्रायः जीवन सखा में किया जाता है। सांस की कसरतें मानसिक व्यायाम में आती है पर इससे शारीरिक स्वास्थ्य भी अच्छी दशा में रहता है। प्राणायाम का प्राचीन क्रम इस व्यायाम के लिये सब से अच्छा क्रम है। सब प्रकार की कसरत चाहे वे शरीर से सम्बन्ध रखने वाली हों या मन से, अच्छा यही है कि वे खुली हुई हवा में और सूर्य्य प्रकाश के सामने प्रातःकाल आठ बजे के अन्दर करली जायं इससे वायु स्नान और सूर्य्य स्नान भी हो जायगा।

प्राणायाम करने से मन को स्थिर, शान्त और एकाग्र करने में सहायता मिलती है। उचित प्रकार से किया गया प्राणायाम कई प्रकार की व्याधियों को भी हरण करता है। फेफड़े की बीमारी में यह विशेष रूप से हितकर है। प्राणायाम करने से चित्त प्रसन्न होता है

प्राणायाम के अतिरिक्त हमारा नित्य का कार्य्य ऐसा होना चाहिये कि उसकी कोई प्रतिक्रिया उत्पन्न होकर हमारे मन को उदास उद्विग्न और अशान्त न कर दे। इसके लिये मनुष्य को जागरित रह कर अपने छोटे छोटे कार्य्यों पर पूर्ण ध्यान देना चाहिये। जब हम अपने प्रत्येक कार्य्य पर ध्यान देंगे तो सम्भव है कि उचित प्रयास द्वारा हमसे ऐसा काम न बन पड़े? जिससे कि बाद में पछताना पड़े और उससे चित्त में क्षोभ का उद्रेक हो। स्वस्थ शरीर और प्रसन्न मन द्वारा ही जीवन का सभी और स्वाभाविक कार्य्य सम्पादन होता है। अतः उचित जीवन व्यतीत करने के लिये संयमित आहार, थोड़ा व्यायाम और मन की निरावलम्ब प्रसन्नता आवश्यक है। अतः स्त्रियों को इस प्रकार से मानसिक और हलके शारीरिक व्यायाम की आवश्यकता है।

स्त्रियों को कठिन शारीरिक व्यायाम जैसे दंड बैठक, फुटबाल, कुश्ती और बहुत चलना इत्यादि नहीं करना चाहिये। बल्कि व्यायाम में उनकी यह चेष्टा भी नहीं होनी चाहिये कि वे अद्वितीय निकलें। पहलवान बनना स्त्रियों का जीवन नहीं है। कूदना, दो चार मील प्रातःकाल या सायंकाल खुली हवा से घूमना, बैड मिंटन खेलना, टेनिस, थोड़ा दौड़ना या कूदना इत्यादि उनके लिये स्वाभाविक व्यायाम है। जिन स्त्रियों को क्षय रोग है उन्हें तो बहुत ही हलके ढंग का कोई व्यायाम करना चाहिये। साधारण गहरी सांस उनके लिये लाभदायक होगी।

स्त्रियों के लिये शरीर-विज्ञान और मनो विज्ञान की शिक्षा आवश्यक है। इनके जानने से उन्हें विशेष लाभ होगा क्योंकि स्त्रियाँ जगदम्बा रूपिणी हैं। प्रसन्न मन और स्वस्थ शरीर से वे ऐसी सन्तान प्रसव करेंगी जो संसार के लिये सब प्रकार से मंगलकारी होगी। उनका व्यायाम और रहन-सहन इस उद्देश्यपूर्ति का एक साधन मात्र है। शारीरिक और मानसिक व्यायाम युक्त ऐसा जीवन व्यतीत करने से वे सब प्रकार से प्रसन्न रहेंगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तत्त्व-चिकित्सा का आदि इतिहास

[श्रीयुत गंगा प्रसाद गौड 'नाहर']

[गताङ्क से आगे]

नाहर जी का इसी विषय का पहला लेख जनवरी के अंक में प्रकाशित हो चुका है। यह लेख तत्व चिकित्सा का प्राचीन इतिहास बताता है जो पाठकों को मनोरंजक होगा। लेखक का यह प्रयत्न सफल है। —सं०

हिपोक्रेट्स (Hippocrates) यद्यपि पश्चिमीय संसार का सर्व प्रथम औषधि-चिकित्सक माना जाता है, और कोई-कोई तो उसे ही औषधि-चिकित्सा-प्रणाली का जनक ख़्याल करते हैं। किन्तु औषधियों में विश्वास रखते हुए भी यह व्यक्ति प्राकृतिक नियमों के अनुसार रोगो प्रचार करने का ही पक्षपाती था। और सच पूछिये तो उसे जीवन पर्यन्त प्राकृतिक-पद्धतियों का अनुसरण करते रहने के ही कारण ख्याति मिली थी। इसका जन्म ईसा के जन्म से लगभग ४०० वर्ष पूर्व ग्रीस में हुआ था। हिपोक्रेट्स ही पहला व्यक्ति था जिसने रोग उपशम सङ्कट वा रोग की उभाड़ क्रिया (Law of curativce crisis) का अनुसन्धान किया था, जिसको प्राकृतिक चिकित्सकगण एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण, साथ-ही-साथ, नाज़ुक अवस्था समझते हैं। हिपोक्रेट्स एवं उसके अनुयायी चिकित्सकों को इस बात का सम्यक् ज्ञान था कि प्रकृति में ही रोग निवारण करने की शक्ति है, और यह भी कि, नये रोग स्वयं ही शरीर में प्राकृतिक तरीके से उभड़ कर, शरीर के उत्सर्ग मार्गों में से एक या एक से अधिक मार्गों द्वारा, रोग के कारणों (विजातीय द्रव्यों) को बाहर निकाल फेंकने में सफल होते हैं। हिपोक्रे ्स की लिखी पुस्तकों से पता चलता है कि यद्यपि वह और उसके शिष्य, रोग के लक्षणादि अन्य वैद्यक सम्बन्धी बा ` भली-भाँति न जानते थे, तो भी उन्हें प्राकृतिक उपचारों द्वारा, रोगों को अच्छा करने में तनिक भी अड़चन न होती थी। इसका एक कारण यह भी था कि वे, रोग के उभाड़ के समय का भविष्य-ज्ञान ठीक-ठीक करना जानते थे, और इस तरह से वे पहले ही से सतर्क हो जाते थे कि किस प्रकार प्राकृतिक युक्तियों का प्रयोग कर वे, रोग के कारणों के दूर करने में प्रकृति को सहायता पहुँचा सकेंगे।

उसी यूनान देश में कभी इस्पार्टन नाम की एक जाति बसी थी, जिनमें ठंडे स्नान क़ानूनी तौर पर जारी थे।

प्राचीन रोमियों में स्नान का बड़ा रिवाज था। रोम के राजे-महाराजे ऐसे सैकड़ों-स्नानागार बनवाये थे जिनमें हज़ारों मनुष्य एक साथ स्नान कर सकते थे। उनके खंडरात रोम और पोम्पियाई में आज भी देखे जा सकते हैं। उन स्नानागारों से ठंडे स्नान, गरम स्नान वाष्प-स्नान, उष्ण वायु-स्नान आदि सभी प्रकार के स्नान किये जाते थे। चिकित्सक इस्तलापेलास और उसका एक शिष्य वान्टोनीन मूसा इन स्नानों के अच्छे जानकार थे। वान्टोनीन मूसा ने क़ैसर आगस्टस का, जो नज़ला रोग से आक्रान्त थे, स्नानों द्वारा इलाज करके बड़ी ख्याति पायी थी जिसके बदले में खुश होकर उक्त क़ैसर ने एक मन्दिर में उसके पूरे क़द की एक प्रतिमा का निर्माण करवायी थी। इसी चिकित्सक ने उस ज़माने के विख्यात कवि होरेस को भी एक बड़ी जटिल बीमारी से मुक्त किया था। प्रसिद्ध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोमन इतिहास लेखक पलाबीनी लिखता है कि रोम में पाँच शताब्दियों तक जल-चिकित्सा की प्रधानता थी। सिलसस तथा अन्य रोमन वैद्यों ने अपनी पुस्तकों में स्नानों का अत्यधिक गुणगान किया है। इटालियन चिकित्सक ततराई ने अठारहवीं शताब्दि के आरम्भ में ज्वर के लिये पानी का इलाज लाभदायक बताया था। उस समय का हकीम अन्नाबरनार्ड जल-चिकित्सा का एक अच्छा चिकित्सक हो चुका है, जो सभी रोगों में ठंढे जल का प्रयोग लाभ के साथ दिया करता था।

अरबी वैद्यों द्वारा करूं और सत्ता में कभी ठंढे स्नानों का अत्यधिक प्रचार था। हकीम राज़ी ने लिखा है कि ज्वर की गर्मी कम करने के लिये रोगी को आध घंटा के अन्दर एक या डेढ़ बोतल बर्फ़ का पानी पीना चाहिये।

अमेरिका के शहर लाइन्स में एक डाकृर बदनामी हो गया है, जिसने सन् १६७५ ई० में बर्फ़ ओस, तथा जल के औषधि गुणों पर एक पत्र प्रकाशित कराया था, जिसमें इन मसलों पर काफ़ी चर्चा हुई थी। उस पत्र में वह एक जगह पर लिखता है कि इबरानी, पिघली हुई बर्फ़ को पीते थे और हवा में रखकर पानी सर्द किया करते थे। उक्त डाकृर ने ज्वर के लिये ठंढ़े जल को सर्वोत्तम औषधि कहा है।

चीनियों की एक पुरानी पुस्तक में लिखा है कि एक चीनी चिकित्सक ने एक स्त्री को, जा असह्य वेदना से मछली की भाँति तड़प रही थी, बर्फ़ के पानी के सौ स्नान दिये, और प्रत्येक स्नान के बाद उसे कपड़ों में अच्छी तरह लपेट दिया जाता था। इस तरकीब से वह स्त्री पूर्ण रूप से स्वस्थ हो गयी।

जापान देश में तो आठ शताब्दियों से सर्द स्नानों का रिवाज जारी है। वहाँ की देहातों में चिकित्सक, रोगियों को स्नान प्रायः देते हैं। लगभग तीन शताब्दी पूर्व, वहाँ के नाकागामी नाम के एक डाकृर ने ठंढे स्नानों की उपयोगिता पर एक पत्रिका ही निकाल रखी थी, जिसमें विशेष कर इस बात का प्रचार किया जाता था कि पागलपन, अपस्मार, दमा, और बच्चों के रोगों में ठढे स्नानों का प्रयोग लाभ के साथ किया जा सकता है।

इन सब बातों से यह निष्कर्ष निकलता है कि प्राचीन काल में न केवल भारत में ही, बलिक संसार के कोने-कोने में, प्राकृतिक-चिकित्सा का, किसी-न-किसी रूप में, प्रचार था, और अच्छा प्रचार था। किन्तु हमें अब यह देखना है कि उसके बाद किस प्रकार लोग चिकित्सा की इस उत्तम प्रणाली को एक दम भूल गये। (क्रमशः)

(सर्वाधिकार लेखक के अधीन)

स्वास्थ्य और आसन

लेखक :—डा० वालेश्वर प्रसाद सिंह।

यह पुस्तक छप रही है और बहुत जल्द प्रकाशित हो रही है।

इस पुस्तक में आसनों द्वारा रोगों से छुटकारा पाने की सरल तरकीबें बताई गई हैं। लग-भग ५० चित्रों से पुस्तक सुसज्जित है। हर एक स्वास्थ्य इच्छुकों को अपने साथ रखना आवश्य है। साथ-साथ आसन चार्ट भी प्रकाशित हो रहा है।

पुस्तक का मूल्य २)

चार्ट का मूल्य ।।)

जीवन सखा के जो ग्राहक २) ३० मई तक भेज देंगे उन्हें चार्ट मुफ़्त दिया जायगा।

पता :—मैनेजर जीवन सखा,

लूकरगंज, इलाहाबाद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूर्य-रश्मि-चिकित्सा बनाम प्राकृतिक चिकित्सा

[श्रीकृष्ण शर्मा]

सूर्य-रश्मि-चिकित्सा की ओर लोगों का ध्यान अधिकाधिक आकृष्ट हो रहा है। इसका प्रभाव भी प्रत्यक्ष दिखाई पड़ता है। प्राकृतिक-चिकित्सा के साथ सूर्य-रश्मि-चिकित्सा की तुलना करके इस चिकित्सा की सार्थकता और उपयोगिता सिद्ध करके लेखक ने इसकी प्रामाणिकता सिद्ध की है। लेख विवेक पूर्ण और उपयोगी है—सं०

मुझे उन दिनों रंगों की ही धुन सवार थी; मैं प्रकाश और रंग की ही दुनिया में रहा करता था। रात-दिन रंगों की चर्चा। एक दिन जब संयोग वश प्राकृतिक चिकित्सा के एक लब्ध-प्रतिष्ठ समर्थक से मेरा साक्षात्कार हुआ तो मैंने स्वभावतः उनसे सूर्य-रश्मि-चिकित्सा की चर्चा छेड़ दी। लेकिन उनके मुख से यह सुनकर मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा कि प्राकृतिक-चिकित्सा एक सर्वथा भिन्न और पृथक चिकित्सा पद्धति है। उसका प्राकृतिक चिकित्सा से कोई सम्बन्ध नहीं; यह तो जबर्दस्ती एक पत्थर-सा ठोंक दिया है। स्तब्ध रह गया मैं उनकी यह बात सुनकर! फिर भी मेरा जी न माना, मैंने उनसे पूछा, "क्या सूर्य-रश्मि चिकित्सा प्रकृति के सृजनात्मक सिद्धान्त (Constructive Principle) के अनुरूप नहीं है?"

"मेरी तो कुछ समझ में नहीं आता इसका सिद्धान्त। वे कहते हैं कि गठिया की बीमारी में लाल रंग की बोतल में तैयार किया गया तेल मालिश करने से नसों की जकड़न दूर हो जायगी और वह अच्छा हो जायगा। किन्तु उनके इस कथन को कैसे स्वीकार किया जा सकता है। अगर शरीर में विकार बना हुआ है तो तेल के प्रयोग से ही रोग दूर हो जायगा, यह, कम से कम प्राकृतिक चिकित्सा के अनुयायी स्वीकार नहीं कर सकते।

"गठिया (Rheumatism) में मालिश विशेष लाभदायक है, यह तो प्राकृतिक चिकित्सक भी मानते हैं। रही लाल तेल की बात तो क्या लाल तेल गुणकारी नहीं होता? यह बात दूसरी है कि सिर्फ लाल तेल के ही प्रयोग से रोग दूर हो और अगर हो भी तो रोग को जड़ से दूर करने की क्षमता न रखकर केवल अस्थायी लाभ पहुँचाने वाला ही सिद्ध हो। लेकिन सूर्य-रश्मि-चिकित्सा की परिमिति केवल लाल तेल के प्रयोग तक ही नहीं है इसमें भी शरीर के विकार को बाहर निकाल देने को उपयुक्त साधन विद्यमान हैं। रंगों के प्रयोग से त्वचा, गुर्दा, कोष्ठ आदि से शरीर की मल-विसर्जन क्रिया में प्रभावकारी सहायता प्राप्त होता है।"

यह कहने की आवश्यकता नहीं कि गठिया एक दुःसाध्य रोग है, उसकी गणना प्रायः जीर्ण रोगों में ही होती है। लेकिन यह देखा गया है कि पुराने से पुराने गठिया-रोगों में भी सूर्य-रश्मि चिकित्सा आश्चर्य-जनक लाभकारी सिद्ध होती है। लेकिन इसका श्रेय केवल लाल तेल को ही नहीं है। लाल तेल के अलावा लाल या नारंगी रंग की रोशनी के प्रयोग से रोगी को स्वेद-स्नान (Sweat Bath) कराया जाता है। इसके द्वारा न केवल पसीने के रूप में शरीर के भीतर जमा हुआ विकार बाहर निकलता है बल्कि इसके प्रयोग से रक्ताभिसरण क्रिया भी तीव्र हो उठती है। रग-रग में खून दौड़ जाता है। और गठिया के कारण जकड़ी हुई नसों तथा जोड़ों में से विकार आसानी के साथ निकल जाता है। ऐसे रोगियों को नारंगी-रंग की बोतल में तैयार किया गया जल पीने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के लिए और लाल तेल मालिश करने के लिए दिया जाता है। इसके अतिरिक्त गुर्दों में हरे-तेल की मालिश करायी जाती है, जिससे (Uric Acid) पेशाब के रास्ते अधिक परिमाण में निकलता है। खाने के लिए रोगी को नारंगी का रस विशेष रूप से दिया जाता है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि रोगों-प्रचार के सम्बन्ध में सूर्य-रश्मि-चिकित्सा का भी ठीक वही लक्ष्य है जो कि प्राकृतिक-चिकित्सा का होता है। दोनों ही शरीर से मल या विकार को बाहर निकालने का प्रयत्न करते हैं।

अच्छा अब हम प्राकृतिक चिकित्सा और सूर्य-रश्मि चिकित्सा के पारस्परिक सम्बन्ध पर विचार करें और यह देखें कि यह प्रकृति के नियमों के अनुरूप है या नहीं।

जल-चिकित्सा प्राकृतिक चिकित्सा का एक मुख्य अंग है। लेकिन अगर हम इसके तथा सूर्य-रश्मि-चिकित्सा के मूल सिद्धान्तों और साधनों पर विचार करें तो दोनों में बहुत अधिक अंशों में समानता देखने को मिलेगी। आज के प्रायः ६० वर्ष पूर्व जल-चिकित्सा के जनक लुई कुने उद्वेग के सिद्धान्त (Theory of Ferment-ation) का प्रतिपादन किया। उन्होंने रोग का कारण शरीर में विजातीय द्रव्य का संचय बताया है। लेकिन ये विजातीय द्रव्य ऐसे तत्वों से बने होते हैं जिनमें परिवर्तन या उद्वेग हो सकता है। ऐसी अवस्था में शरीर में कोई बाह्य जैसे ऋतु परिवर्तन आदि—अथवा मानसिक कारण—जैसे उत्तेजना—से यह उद्वेग क्रिया सतेज हो उठती है। यह क्रिया पेड़ू से आरम्भ होती है और कोई रुकावट होने से कमर की ओर या शरीर के किसी अन्य कमजोर भाग में फैल जाती है। और वह विजातीय द्रव्य की मात्रा तथा जीवन शक्ति के अपनी गति और मार्ग निश्चित करती है। उद्वेग से गरमी पैदा होती है। यह गरमी रक्त में पहुँच कर ज्वर की अवस्था उत्पन्न करती है। इस ताप से शरीर का जो अवयव ग्रसित होता है वहाँ पर प्रदाह उत्पन्न हो जाता है। इस प्रकार सब ज्वर युक्त अथवा प्रदाह युक्त (Febrile and inflam-matary conditions) अवस्थाएं इस उद्वेग कारक पदार्थों के रूपान्तरित होने के कारण उत्पन्न होती है।

अब आप सूर्य-रश्मि चिकित्सा के रोग के सिद्धान्त (Theory of disease) पर भी विचार करें। रंग-विशेषज्ञों का यह कहना है कि रोग रंग विशेष के आधिक्य अथवा अभाव के कारण होता है, अर्थात् रंग-सन्तुलन अथवा सामंजस्य के दोष युक्त अथवा अव्यवस्थित हो जाने से ही रोग उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार इस प्रणाली में भी प्राकृतिक चिकित्सा-प्रणाली की तरह रोग का कारण वाह्य नहीं वरन् आन्तरिक ही माना गया है। रोग कीटाणुओं के कारण नहीं बल्कि अन्दरूनी खराबी से ही पैदा होता है।

मूल रूप से रंग केवल दो ही हैं—लाल और नीला। लाल का गुण उष्ण (Thermal) और नीले का शीतल (Electric)। पहला उत्तेजक होता है-उष्णता की वृद्धि करता है। नीला शान्ति दायक (Soothing) होता है। और शीतलता पहुँचाता है। पहले को यदि हम मोटे तौर से अम्ल-कारक और दूसरे को क्षार-युक्त कहें तो इस में कोई अत्युक्ति नहीं होगी। यह सभी जानते हैं कि रोग इसी आन्तरिक सन्तुलन अथवा समता के न रह जाने के ही कारण उत्पन्न होता है। अर्थात् अम्लता अथवा क्षारता के अनुपात में व्यक्तिरेक अथवा न्यूनाधिक्य होने के ही करण मनुष्य के स्वास्थ्य में परिवर्तन हो जाता है। लेकिन प्रायः सभी रोग अम्लता के आधिक्य के ही कारण उत्पन्न होते हैं, जिसके फलस्वरूप शरीर में इतनी गरमी बढ़ जाती है कि शरीर की प्राण-धारक प्रक्रियाओं (Vital processes) में बाधा पड़ने लगती है। स्वस्थ कोष अपना काम तभी ठीक कर सकते हैं जब कि शरीर का तापमान सामान्य रहे। अन्दर की गरमी बढ़ जाने से कोष्ठों के स्वाभाविक लचीले पन का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुण नष्ट हो जाता है और वे जीवन शक्ति धारण करने की शक्ति खो बैठते हैं। और वे निर्जीव बीज-कोष (Cell) उत्पन्न करने लगते हैं।

शरीर में गरमी होना बहुत आवश्यक है, लेकिन वही गरमी आवश्यकता से अधिक बढ़ जाने पर जीवन के लिये खतरा पैदा हो जाता है। इसी तरह अम्लता (Acidity) भी शरीर के लिए आवश्यक लेकिन वही जब सामान्य अनुपात से अधिक हो जाती है तो रोग का कारण बन जाती है। यही बात उद्वेग-क्रिया के सम्बन्ध में भी कही जा सकती है। इसी प्रकार लाल रंग भी शरीर में उपयुक्त ताप को बनाए रखता है जो शरीर की महत्त्वपूर्ण क्रियाओं के लिए आवश्यक है लेकिन जब उसकी अधिकता होती है तो शरीर में गरमी भी बढ़ जाती है और शरीर की वही दशा हो जाती है जो कि लुई कुने के मतानुसार उद्वेग-क्रिया के बढ़ जाने के फलस्वरूप होती है।

अच्छा, अब हम एक रोग विशेष को लें और उसके सम्बन्ध में इन दोनों चिकित्सा-पद्धतियों के अनुसार रोगोपचार के क्रम का अध्ययन करें।

दृष्टान्त के लिए यहाँ पर हम हैजा को लेंगे। लुई कुने ने इस रोग का निदान तीव्र आन्तरिक ज्वर बताया है। इसके साथ ही साथ यह भी देखा जाता है कि यह रोग विशेषतः उन्हीं को होता है जिनकी पाचन-शक्ति बहुत पहले से कमजोर हो गई रहती है और जिन्हें अकसर कब्ज की भी शिकायत रहा करती है। हैजा होने के पहले रोगी को शरीर में बेचैनी और भारीपन का अनुभव होने लगता है जो विकृत-पदार्थों में उद्वेग आरम्भ होने का परिचायक होता है। विजातीय द्रव्य में जब किसी बाहरी आफत या मौसम की तबदीली ठंडक, भय अथवा मानसिक उत्तेजना आदि से उद्वेग शुरू हो जाता है तब वह अपनी असली जगह (पेड़ू) की तरफ को बड़े वेग के साथ वापस जाने लगता है, खास कर जब कि त्वचा अपना काम बिलकुल ठीक न कर रही हो। ताप-युक्त उद्वेग की दशा में, चाहे वह हैजा हो, या उससे कम घातक पेचिश हो, एक ऐसी विचित्र क्रिया होती है, जैसी और किसी रोग में उस शक्ल में नहीं देखी जाती भीतरी बुखार की सारी गरमी का जोर केवल हाजमे के अंगों में आजाता है। अतएव शरीर के भीतर अत्यन्त ताप होता है और बाहर ठण्ढ मालूम होती है।

भारतवर्ष के एक प्रमुख सूर्य-रश्मि-चिकित्सक (Chromopath) श्रीज्वालाप्रसादजी ने इसी विषय पर अच्छा प्रकाश डाला है। आप अपनी क्रोमोपैथी नामक पुस्तक में एक जगह लिखते हैं:—Cholera is the sudden increase of Red in the system, and this heat reaches the very source of life, the navel where Prana-Apana are knutted together to sustain life. By extraordinary heat this knot is atonce loosened and both these life currents are no longer controlled by each other and take their own course. The Prana tries to go up and produces vomitting and nausea, and the Apana tries to go down and produces purging. The pulse goes down atonce for the life point has been attacked by the the heat.

अर्थात् हैजे में शरीर के अन्दर एक दम लाल रंग की अधिकता हो जाती है और उसकी गरमी नाभि तक पहुँच जाती है, जो कि प्राण का केन्द्र स्थल है, जहाँ प्राण और अपान वायु की गाँठ जीवन को सुरक्षित रखती है। असाधारण गरमी से यह गाँठ टूट जाती है और ये दोनों प्राण धाराएं एक दूसरे को सम्हाल न सकने के कारण अपना स्वतंत्र मार्ग धारण कर लेती हैं। जब प्राण-वायु की ऊर्ध्व-गति हो जाती है तो वमन मचली पैदा करती है। और अपान-वायु की अधो-गति होने पर वह दस्त लाने लगती है। नाड़ी की गति अनायास मन्द पड़ जाती है क्योंकि प्राण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रोत पर ही गरमी का आघात पहुँचा है। सबल तथा सशक्त व्यक्ति के लिए इस रोग से ग्रसित होने का विशेष भय रहता है; क्योंकि उनके शरीर में लाल रंग स्वभावतः अधिक होता है।"

आपके समक्ष यहाँ पर दो अपनी अपनी प्रणाली के दो विशेषज्ञों के एक ही रोग के सम्बन्ध में अलग-अलग विचार उपस्थित किए गए हैं। हम देखते हैं कि दोनों ने ही इस रोग के जो कारण बताए हैं उनमें समानता है। दोनों ने ही यह स्वीकार किया है कि इस रोग का कारण शरीर के भीतर ताप की अधिकता है यदि लुई कुने इस बढ़ी हुई गरमी या ताप का कारण विजातीय द्रव्य-जनित उद्वेग का होना बताते हैं तो श्री ज्वालाप्रसाद इसका कारण लाल रंग की अधिकता, दोनों ही इस रोग का कारण आन्तरिक मानते हैं, उसे कीटाणु-जन्य नहीं मानते; रोग का मूल स्थान दोनों ही विशेषज्ञों ने पेड़ू को बताया है।

अतः यह स्पष्ट है कि इस रोग की वास्तविक चिकित्सा शरीर में असाधारण रूप से बढ़े हुए उस ताप को शमन करने के उद्देश्य से होनी चाहिए। इसका उपचार जल-चिकित्सा के अन्तर्गत शमनकारी (Alleviating) स्नानों, जैसे कटि-स्नान और मेहन-स्नान, के द्वारा बताया गया है जो उद्वेग-क्रिया का कम करके शरीर के भीतर बढ़ी हुई उष्णता को शान्त करता है। इसी लक्ष्य को सामने रखकर सूर्य-रश्मि चिकित्सा के अन्तर्गत भी रोग के उपचार की विधि बताई गई है। लाल रंग की गरमी को कम करने के लिए उसके विपरीत प्रभाव डालने वाले नीले रंग का प्रयोग किया जाता। नीले रंग का प्रयोग जल, प्रकाश और तेल के रूप में किया जाता है। हल्की नीली बोतल का पानी दस-दस मिनट के अन्तर से रोगी को दिया जाता है। उसी पानी की गीली पट्टी पेड़ू पर रक्खी जाती है और नीला प्रकाश नाभि पर केन्द्रित किया जाता है। इन उपचारों का प्रभाव शीतल स्नानों से किसी कदर कम नहीं होता। रोगी की तृष्णा शान्त हो जाती है. दस्त और वमन धीरे धीरे कम होकर बिलकुल बन्द हो जाते हैं, पेशाब खुलकर होने लगता है और जहाँ शरीर में रंग का सन्तुलन पुनः पूर्वावस्था पर आगया रोगी खतरे से बाहर हो जाता है और उसकी जान बच जाती है।

पथ्य

पथ्य के सम्बन्ध में भी इन दोनों प्रणालियों में कोई विशेष मतभेद नहीं मिलता। लुई कुने ने सादा स्वाभाविक और हलके पदार्थों का प्रयोग बताया है। श्री ज्वालाप्रसाद ने भी उत्तेजक, या उष्ण पदार्थों का निषेध किया है और तरकारी और फलों को उपयोगी बताया है।

वास्तव में अधिकांश तीव्र रोग लाल रंग की अधिकता से होते हैं और लाल रंग की अधिकता साधारणतः बालकों तथा युवकों में ही होती है, इसलिए उन्हें तीव्र रोगों का अधिक भय रहता है। उष्ण देशों में तीव्र व्याधियाँ पाई जाती हैं क्योंकि वहाँ के निवासियों में ठण्डे देश के निवासियों की अपेक्षा उद्वेग की अधिक सम्भावना रहती है जिसका प्रधान कारण उन देशों के निवासियों के ऊपर पड़नेवाली सूर्य की प्रखर किरणें ही होती है। लुई कुने साहब का भी कहना है कि उष्ण देशों के निवासियों में उद्वेग क्रिया शीघ्रता के साथ और उग्र रूप में होती है। हर प्रकार के ज्वर, दस्त, हैजा, सिर दर्द, प्लेग, चेचक, उन्माद, अनिद्रा इत्यादि लाल रंग की अधिकता और नीले रंग की कमी से पैदा होते हैं। इसीलिये सूर्य-रश्मि-चिकित्सा के एक प्रसिद्ध भारतीय प्रणेता श्री बापू जी टोंगू ने नीले रंग को प्रायः सभी रोगों में लाभकारी बताया है। लाल रंग का आन्तरिक प्रयोग बहुत कम होता है। जो कुछ इस का प्रयोग होता है वह केवल वाह्य उपचार के ही रूप में। प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली के अन्तर्गत तीव्र रोग का उपचार अधिकतर शोधक और शामक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(Sedative) होता है। इसी प्रकार तीव्र रोगों में सूर्य-रश्मि चिकित्सा के भी अन्तर्गत शामक उपचारों का विधान किया गया है। जैसे, ज्वर, दर्द, तृषा आदि तीव्र रोगों में नीले रंग का अधिक प्रयोग होता है। लेकिन जीर्ण रोगों में प्राकृतिक चिकित्सा की भाँति सूर्य-रश्मि चिकित्सा में भी उपचार उत्तेजक (Stimulative) होता है। गठिया, दमा, अपच, कब्ज, कुष्ठ आदि रोगों में पीले या नारंगी रंग का उपयोग किया जाता है।

कुष्ठ रोग में सूर्य रश्मि-चिकित्सा तो अद्भुत चमत्कार दिखाती है। इसमें हलके नरंगी या पीले रंग की उपयोगिता विशेष रूप से सिद्ध हो चुकी है। श्री ज्वालाप्रसाद ने पीले रंग का इस रोग में बहुत महत्त्व बताया है। दो या तीन सप्ताह तक पीले रंग का प्रयोग होने पर वह कोष्ठों में संचारित हो उठता है। और इसके फलस्वरूप रोगी को साफ दस्त होने लगते हैं, भूख बढ़ जाती है और शरीर में शुद्ध रक्त काफी मात्रा में तैयार होने लगता है। लुई कुने ने भी इस रोग का कारण पाचन-शक्ति का कमजोर होना बताया है। पीले रंग से पाचन-शक्ति बहुत सुधर जाती है और शरीर में संचित विकार गुदा-मार्ग से बाहर निकलने लगते हैं इसके साथ ही साथ रोगी के पथ्य में भी सुधार किया जाता है।

लेख लम्बा हो रहा है इसलिए अब मैं एक और उदाहरण देकर इसे समाप्त कर दूँगा। सूखी खाँसी, और कुकुर-खाँसी (Whooping cough) में कफ फेफड़े में सूख जाता है और वह बहुत कष्ट कारक बन जाता है। इस अवस्था में प्राकृतिक-चिकित्सक सीने पर ठण्ढी पट्टी (ChestPack) का प्रयोग करते हैं जिससे कफ ढीला होकर निकल जाय। यही काम सूर्य-रश्मि चिकित्सा से बड़ी सुविधा के साथ गहरे नीले रंग की बोतल के जल के प्रयोग से हो जाता है।

इस लेख में सूर्य-रश्मि चिकित्सा का प्राकृतिक चिकित्सा और उसके अन्तर्गत विशेष रूप में जल-चिकित्सा का सादृश्य दिखाया गया है। सम्भव है कि कुछ लोग इसे लेखक की कल्पना मात्र समझें। लेकिन मैं उस समय को कल्पना की आँखों स्पष्ट देख रहा हूँ जब जल-चिकित्सा और सूर्य-रश्मि-चिकित्सा दोनों आपस में मिल कर एक नवीन, समुचित, एवं परिपूर्ण प्रणाली का प्रादुर्भाव करेंगी। पाश्चात्य देशों में तो इसका प्रादुर्भाव हो भी चुका है, जो आज 'हाइड्रो-क्रोमोपैथी Hydro-Chromopathy के नाम से विख्यात हो रही है। पानी के फव्वारों में रंगों का समावेश होने से यह विचित्र प्रभाव होता है जो प्रत्यक्ष प्रयोगों के ही द्वारा सिद्ध किया जा सकेगा।

जीवन मधु ! क्या आप जानते हैं ? जीवन मधु !!

शहद स्वास्थ्य के लिये अत्यन्त आवश्यक है।

(१) एक छटांक शहद पानी में मिला कर रोज सबेरे पीने से कब्ज दूर होता है। (२) इसके प्रयोग से भूख बढ़ती है। (३) शरीर में ताकत आती है। (४) दूध में मिला कर शहद पीने से वीर्य-दोष दूर होता है और पुंसत्व बढ़ता है। (५) शरीर-चर्म सुन्दर और मुलायम होता है। (६) यदि दिल की कमजोरी की दुनिया में कोई भी दवा है तो वह शहद ही है। (७) शहद का इस्तेमाल रोटी, दूध और फलों के साथ किया जा सकता है। पर ये सब गुण शुद्ध शहद में ही होते हैं। पूरे लाभ के लिये जीवन-मधु का उपयोग कीजिए। इसके शतप्रतिशत शुद्ध होने की गारन्टी है।

मूल्य फी बोतल (एक सेर) २॥) सेर। बोतल और पैकिंग अलग ५ सेर से कम शहद बाहर नहीं भेजा जा सकता है। आर्डर भेजते समय कम से कम ५) पेशगी अवश्य भेजे।

मिलने का पता—प्राकृतिक स्वास्थ्य गृह,
९९, लूकरगंज, इलाहाबाद।

CC-0. In Public Domain: Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनुष्य का आहार

फल, शाक और दूध

[श्री प्रो० भवानी प्रसाद, स्वाभाविक स्वास्थ्य शास्त्रोपाध्याय, काँगड़ी गुरुकुल विश्वविद्यालय]

[प्रोफेसर भवानी प्रसाद जी स्वाथ्य विद्या के चोटी के विद्वान हैं। आप के विद्वत्ता पूर्ण लेख जीवन सखा में प्रकाशित होते ही रहते हैं। अतः पाठक आप से पूर्ण परिचित हैं। आहार सम्बन्धी यह लेख दूध से सम्बन्धित है और प्राच्य और पाश्चात्य मतों के संयुक्त अध्ययन के फल स्वरूप लिखा गया है जो प्रत्येक पाठक के लिए जानने योग्य है — सं०]

आजकल मनुष्य के आहार के विषय में कई धारणाएँ विद्यमान हैं। अधिकांश मनुष्य तो जिह्वा के स्वाद को ही आहार का निर्णायक वा पथप्रदर्शक मानते हैं, उनकी समझ में जिस पदार्थ में मनुष्य की रुचि हो, वही उसको हितकर स्वास्थ्यप्रद प्राकृतिक आहार है, उनकी बुद्धि में इस विचार का स्थान नहीं है कि मनुष्य का स्वाद अभ्यास जन्य दोष से कहाँ तक अप्राकृतिक वा विकृत दशा को पहुँच चुका है। इसके अतिरिक्त स्वाद और सौन्दर्य की भावनाएं मनोकल्पित वस्तुएं हैं। जो पदार्थ किसी एक मनुष्य की जिह्वा के लिए स्वादु और सरस है वही किसी अन्य मनुष्य के लिए स्वादरहित वा अरुचिकर हो सकता है। मजनू की दृष्टि में अन्धेरी रात की अन्वर्थ नाम धारिणी काली कलूटी लैला असीम परम सुन्दरी और उसकी परम प्रेयसी थी। मननशील मनुष्य ने तो अपनी मननशीलता के बल पर स्वाद और सौन्दर्य की विविध विलक्षण कल्पनाओं की सृष्टि कर रखी है। उन कल्पनाओं के वर्णन के लिए एक पृथक् निबंध चाहिए। इसलिए यहाँ इस प्रकरणान्तर प्रवेश के दोष से बचना ही अच्छा है। पर इस विषय में विधाता की सृष्टि के सर्वश्रेष्ठ प्राणी मनुष्य से तो पशु ही अच्छे हैं। वे अपनी सहजबुद्धि से ही आहार के चुनाव की प्रेरणा प्राप्त करते हैं और प्रकृति के प्रकृष्ट नियत पथ से कभी विचलित वा भ्रष्ट नहीं होते हैं। वे स्वाभाविक आहार से ही अपनी जीवन-यात्रा करते हैं। यह दूसरी बात है कि मनुष्य महाराज आहार विषय में उनको भी कुपथ मार्ग गामी बनाते हैं और उनको भी अपने स्वास्थ्य के संहारक मादक आदि द्रव्यों के सेवन का अभ्यासी बना देते हैं।

यह तो जन साधारण की प्रवृत्ति की बात हुई। अब उनसे ऊँचे उठे हुए सुशिक्षितों तथा विचारकों के आहार विषय में विचार विमर्श की कथा सुनिए द्रव्यों के गुण दोषों को वर्णन करनेवाले वैद्यक और यूनानी हिकमत के पुराने निघण्टुओं और मखजनों में तो आहार द्रव्यों की विवेचना पित्तप्रधान, कफकारक, वातकारी, सर्द, खुश्क और मातदिल के कथन मात्र से पूरी कर दी गई है, परन्तु आधुनिक पाश्चात्य आहार शास्त्रियों ने मानवदेह के वर्धन और पोषण की दृष्टि से आहारद्रव्यों का विश्लेषण किया है। किस आहारद्रव्य में कितना मांसपोषक (Protein), क्षारीय (Mineral Matter) अल्पाग्निवर्धक (Carbohydrates) (कर्बोज-शर्करा-श्वेतसार) महाग्निवर्धक (Hydrocarbonate) (घी, तेल वसारूप स्नेहद्रव्य) भोज्यौज (Vitamins) इत्यादि तत्त्व हैं, इसकी भले प्रकार विवेचना करके मनुष्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के आहार में क्या पदार्थ होने चाहिए, इस बात का निर्णय किया गया है।

यहाँ प्रधान पोषक तत्वों का कुछ संक्षिप्त विवरण दिया जाता है—

१ मांसपोषक तत्व—यह एक चिपचिपा लुआब (jelly) सा पदार्थ होता है और सजीव द्रव्यों से प्राप्त होता है। यह जीवन के लिए बहुत आवश्यक है। इसका उदाहरण अंडे के श्वेतिमा और दूध के फुटक हैं। मांसपोषक तत्व वाले पदार्थों में नत्रजन (Netrogen) तत्व प्रधान होता है। नत्रजन उन लाखों नवीन कोष्ठकों (cells) के निर्माणार्थ अपेक्षित मुख्य सामग्री है, जो देह की वृद्धिकाल में बनते रहते हैं। वह क्षीयमाण कोष्ठों के सतत नवीकरण के लिए भी अपेक्षित है। मांसपोषक तत्व देह की रचना सामग्री होने के अतिरिक्त दैहिक क्रियाशीलता का भी उत्तेजक है। मांसपोषक तत्व सारे सजीव द्रव्यों में विद्यमान रहता है और इसलिए हमारे आहार में प्रयुक्त समस्त जान्तव और वानस्पतिक पदार्थों में पाया जाता है। हमारे आहार के जान्तव भागों में विद्यमान मांसपोषक तत्व जान्तव पोषक तत्व कहलाता है और वानस्पतिक आहार में वह वानस्पतिक पोषक तत्व के नाम से प्रसिद्ध है। जान्तव मांसपोषक तत्व और वानस्पतिक मांसपोषक तत्व भिन्न-भिन्न होते हैं और मानवदेह का मांसपोषक तत्व इन दोनों से भी भिन्न होता है। ये सारे मांसपोषक तत्व नत्रजनीय अम्ल (Aminoacids) नामक किन्हीं १८ घटकों से मिलकर बने हुए हैं और अपने भिन्न भिन्न संयोगों के अनुसार एक दूसरे से उसी प्रकार भिन्न हैं, जिस प्रकार कि भिन्न भिन्न शब्द अपने भिन्न-भिन्न अक्षरों के संयोग के कारण भेद रखते हैं।

अतः जान्तव और वानस्पतिक मांसतत्व मानवीय मांसपोषक तत्व से भिन्न हैं, इसलिए मनुष्य देह का अङ्ग बनने के लिए मनुष्य के खाए हुए मांसपोषक तत्वों को मानवीय मांसपोषक तत्व के रूप में परिवर्तित होना पड़ता है। कुछ आहार द्रव्यों के मांसपोषक तत्वों में यह परिवर्तन सुगमता से हो जाता है और कुछ में वह सुगमतापूर्वक नहीं हो सकता। सुगमतापूर्वक परिवर्तित मांसपोषक तत्वों को मानवदेह समुचित मांसपोषक तत्व की संज्ञा दी गई है। और सुगमता पूर्वक न परिवर्तित होने वाले मांसपोषक तत्व न्यूनतर समुचित वा असमुचित मांसपोषक तत्व कहलाते हैं।

अब मानवदेह के वर्धनकाल में हमारे आहारों में मांस पोषक तत्व और विशेषतः समुचित मांसपोषक तत्व की पर्याप्त मात्रा होनी चाहिए। समुचित मांसपोषक तत्व वाले आहार द्रव्य दूध, दही, तक्र (मट्ठा), पनीर, अंडे जंतुओं वृक्क और यकृत स्थानीय मांस, मछली, हरितपत्र शाक तथा पालक, सलाद, लेटूस (Lettuce), जलहालों (Watercress), और खट्टा पालक आदि हैं। न्यूनतर समुचित मांसपोषक तत्वीय आहार समग्र गेहूँ का आटा, जई (Oatmeal), जौ, मटर, लोबिया, चना और गाजर, शलजम आदि शाक हैं। असमुचित मांसपोषक तत्व वाले आहार पालिश किए हुए चावल, श्वेत मैदा और मकई और साबूदाना हैं।

इस सब का सारांश यह है कि मांसपोषक तत्व जांतव और वानस्पतिक दो प्रकार के आहारीय पदार्थों से पाये जाते हैं और दूध तथा मांस जातवक मांसपोषक तत्व समुचित मांसपोषक तत्व श्रेणी के अंतर्गत हैं।

प्रस्तुत लेख में दुग्ध और मांस की मानव आहार के रूप में उपादेयता हमारा मुख्य समालोच्य विषय है। प्राकृतिक वा स्वाभाविक स्वास्थ्यशास्त्र की दृष्टि से मांस तो कदापि मनुष्य का आहार नहीं है। मनुष्य के पेषक (चर्वणक =grinder or molars) दाँतों की संख्या और रूप आमाशय और आँतों की रचना गोरीला शिम्पैंजी आदि वनस्पति आहारी अमांसभक्षक

GC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बंदरों की जाति से बिलकुल मिलती-जुलती है। मनुष्य की जीभ भी मुलायम और चिकनी होती है और मांस न खानेवाली बंदर जाति की सी है। उसकी उंगलियों और उनके नख भी बंदरों के ही समान हैं। यदि मनुष्य स्वभावतः मांसाहारी होता तो अपने आखेट को सिंह और अन्य मांसाहारी जन्तुओं के समान चीरने फाडने के लिए उसके भी पंजे होते। इस विषय के और भी बहुत से प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। वे विस्तार के भय से इस क्षुद्र लेख में यहाँ नहीं लिखे जाते हैं। इससे स्पष्ट है कि प्रकृति ने मनुष्य को मांसाहारी नहीं बनाया। इसके अतिरिक्त मांसाहार प्रायः समस्त रोगों के कारणीभूत मूत्राम्ल (Uric Acid) की उत्पत्ति का मुख्य उद्गम है। उसी से गठिया, बहुमूत्र, वृक्कप्रदाह (दर्द गुर्दा) आदि महा रोगों का आविर्भाव होता है। अतः स्वास्थ्य-रक्षा की दृष्टि से भी मांस मनुष्य का आहार नहीं होना चाहिए।

नैतिक दृष्टि से भी "एकस्य क्षणिका प्रीतिरेकः प्राणैर्वियुज्यते" अर्थात् खाने वाले की क्षण भर के लिए जिह्वा के स्वाद की तृप्ति होती है और एक खाए जाने वाले के प्राण चले जाते हैं। यह प्रसिद्ध वाक्य मांसाहार पर पूरा लागू होता है। इसलिए मांस तो कदापि मनुष्य का आहार नहीं है और न मनुष्य अपनी आदिम अवस्था में, जैसा कि बहुत से प्राणिशास्त्रियों और प्रागैतिहासिकों का भ्रम है, मांसाहारी था, प्रत्युत विकास सिद्धान्त के अनुसार वह भी अपनी पूर्वज बंदर जाति के समान फलों और उनकी गिरियों के आहार से ही अपना प्राकृतिक देह-पोषण करता था।

अब दूध और दूध से बने आहार के पदार्थों की बात विचारणीय है। दूध मानवदेह के मांसपोषक आदि तत्वों के विचार से मांसपोषक समुचित आहार की श्रेणी का संपूर्ण आहार कहा जा सकता और मनुष्य स्मरणातीत काल से उसका प्रयोग करता चला आ रहा है इसीलिए पुराने और आजकल के भी चिकित्साग्रंथों में उसकी गुण-गाथा मनोहर अतिशयोक्तिपूर्ण शब्दों में गाई गई है। दूध को 'सद्यः शुक्रकरः पयः' तुरंत वीर्योत्पादक कहा गया है और उसको भूलोक का अमृत माना गया है। परन्तु प्राकृतिक वा स्वाभाविक स्वास्थ्यशास्त्रियों का दृष्टिकोण उसके विषय में बहुत भिन्न है। वर्नर मेकफेडन को छोड़कर प्रायः सभी प्राकृतिक चिकित्सा शास्त्री दूध के प्रयोग को स्वास्थ्य के लिए हितकारक नहीं बतलाते हैं। प्राकृतिक चिकित्सा के कुछ प्रसिद्ध प्रकांड पंडितों, प्रथम प्रसारकों तथा उन्नायकों की, स्वयं उनके अपने ऊपर अनुभव के आधार पर स्थापित कुछ सम्मतियाँ यहा उद्धृत की जाती हैं।

जर्मनी निवासी डाक्टर आर्नाल्ड एहरेट (Dr. Arnold Ehret) ने, जो अमरीका में प्राकृतिक चिकित्सा के प्रचारक हुए हैं, बतलाया था कि केवल फलाहार में ही यह गुण है कि उससे शरीर में विकार की उत्पत्ति नहीं होती है। उनके शिर के बाल गिर गए थे। किन्तु दो वर्ष के लगातार फलाहार और बीच-बीच के उपवास से उन्होंने अपने सिर के न केवल बाल फिर से उगाए, प्रत्युत पूर्ण रूप से स्वास्थ्य लाभ भी किया। इनका कथन है कि दूध कफकारक (Mucus diet) आहार है और उससे नाना रोग उत्पन्न होते हैं। इन्होंने अपने शरीर में चाकू से एक क्षत (घाव) उत्पन्न करके उसके अच्छा होने की अवधि में आहारों का अनुभव किया था और दूध के कफकारक आहार को उक्त क्षत के अच्छा होने में बाधक बतलाया था।

डा० ओटो कार्क (Dr. Otto Corqu) ने इस विषय में जो लिखा है और उनके लेख के आशय को डा० कैलॉग ने (Dr. Kallog M. D., LL. D.) ने अपने प्रसिद्ध पठनीय ग्रन्थ The Living Temple में दोहराया है, उसका भाव निम्न लिखित है।

गौ का दूध उसके बछड़े के लिए अच्छा आहार हो सकता है, किन्तु मनुष्यों के लिए वह बहुत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुमोदनीय नहीं हो सकता। बछड़े के आमाशय की रचना बड़ी पेचीदा होती है। वस्तुतः वह चार आमाशयों से मिलकर बना होता है। इस रचना का उद्देश्य स्थूल और भारी पदार्थों, जैसे घास, भूसा और पत्तियों को पचाना है, गौ का दूध इस आमाशय के अनुकूल पड़ता है, क्योंकि बछड़े के आमाशय में पहुंचकर उसकी बड़ी बड़ी कठोर फुटक बन जाती हैं और वह बछड़े के आमाशय में। पर्याप्त सुगमता से पच जाती हैं, किन्तु मनुष्य के आमाशय में उनसे बहुधा बहुत से विकार उत्पन्न हो जाते हैं, क्योंकि मनुष्य के आमाशय की रचना बाल्य और वृद्धावस्था में इस प्रकार की होती है कि वह अधिक सुगमता से घुल सकनेवाले पदार्थों को ही पचा सकती है। इस प्रकार मनुष्य के शिशु के लिए प्रकृति द्वारा सृजा हुआ माता का दूध ही उपयोगी है क्योंकि माता के दूध की फुटक छोटी छोटी और मृदु होती हैं और वे पाचन रसों में शीघ्र घुल-मिल जाती हैं। प्रत्येक वर्ष हजारों शिशु गौ के दूध के अपच के कारण मर जाते हैं और हजारों ही मनुष्यों को, प्रायः आधे के लगभग प्रौढ़ पुरुषों को गौ के दूध से न्यूनाधिक हानि पहुँचती है, क्योंकि यह दुग्ध पित्तप्रकोप, शिरोवेदना, आँतों की क्रिया की मंदता और जीभ पर मैल के जमने को उत्पन्न करता है। इन सब रोगों का कारण आमाशय में दूध के फुटकों की कठोरता ही नहीं होती है किन्तु इनमें से बहुत से रोग पशु के दुग्ध में असंख्य कीटाणुओं के कारण भी होते हैं, जो आमाशय में पहुँचकर वृद्धि को प्राप्त होकर उफान और सड़ाय उत्पन्न करते हैं और उससे तभी बचाव हो सकता है जब कि दूध देने वाला पशु सर्वथा स्वस्थ हो। दूध के दुहे जाने के ठीक पश्चात् उसमें ९०० प्रति शत कीटाणु होते हैं। एक घण्टा पश्चात् उन कीटाणुओं की संख्या ३१७५० प्रति शत हो जाती है। ९ घंटे के पश्चात् वह १२०००० बढ़ जाती है और २४ घंटे पीछे वह ५६००००० हो जाती है, किन्तु इन कीटाणुओं से बचने के लिये यदि दूध को ६० अंश के ताप पर भी उबाला जाय तो उसकी अण्डश्वेतिमा (Albumin) जम जाती है और आमाशय में उसके फुटक बनने में विलंब लगती है और इसीलिए उसका पाचन भी बहुत विलंब से होता है। उबाले हुए दूध में खटिक (Calcium) की मात्रा घटकर ८० से ६६ मिलीग्राम हो जाती है। १००-११० तापमान पर स्फुर (फासफोरस) नष्ट हो जाता है। १०० तापमान पर उबाले हुए दूध के कीटाणु भी नष्ट नहीं होते हैं किन्तु दूध के स्वास्थ्यप्रद अंश को अनावश्यक हानि अवश्य पहुँच जाती है (Milk and its hygienic Relations, Ganet E. Lane Cloypon, M. D., D. Sc., (Lond.)

४ डा० एच कारिंगटन (Dr. Karrington) The Notural food of man में लिखते हैं। अतः दुग्ध जन्तुओं से ही प्राप्त होता है—वह भी जान्तव पदार्थ है, इसलिए उसके विषय में भी वही आक्षेप कुछ न मात्रा में उठते हैं, जोकि मांसभक्षण के विषय में हैं।

५ डा० डब्ल्यू डी० ईवेन्स (Dr. Chas W. D. Evans.) ने अपने ग्रन्थ How to prolong life में गौ के दुग्ध पर इस कारण आक्षेप किया है कि उसके प्रयोग से धमनियों में खटिक की मात्रा बढ़ जाने के समय से पूर्व बुढ़ापा आ जाता है, क्योंकि मानुषी के दुग्ध में खनिज द्रव्य की मात्रा है और गौ से दुग्ध में वह १.०७ है। अपनी माता १००१ गौ का दूध पीने वाला बछड़ा बड़ी जल्दी बढ़ता है और उसको अपनी बढ़वार २० वर्षों में पूरी करनी होती है। इस सवेग बढ़वार के लिए खटिक और दूसरे, खनिज द्रव्यों की अधिकतर मात्रा अपेक्षित है और वह गौ के दुग्ध में विद्यमान रहती है। अतः मानव-शिशु को गौ के बछड़े से ५ वा ६ गुनी मंद गति से बढ़ना पड़ता है और वह प्रायः २० वा २५ वर्ष की आयु में प्रौढ़ता को पहुँचता है और १०० वा १२० वर्ष में स्वमानव जीवन की अवधि को पूर्ण करता है और इस मंदता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्धन के लिए उसको खनिज द्रव्यों की न्यूनतर मात्रा अपेक्षित है और मानवी माता के दुग्ध में गोदुग्ध की अपेक्षा यह मात्रा न्यूनतर ही होती है, इसलिये संभव है कि माता के दुग्ध से पले हुए बच्चों की अस्थियाँ और पेशियाँ उतनी द्रुत गति से न बढ़ें, जितनी कि गौ के दूध से पले हुए बच्चे की बढ़ती हैं। गौ के दूध से पला हुआ बच्चा आकार में बड़ा होता है और शीघ्र बढ़ कर समय से पूर्व ही मर जाता है। कहा जाता है कि कोई जन्तु प्रौढ़ता को प्राप्त होने में जितनी अवधि लेता है, उससे ६ गुना वह जीवित रह सकता है। इसलिए द्रुतगति से बढ़वार का अर्थ नियत अवधि से पूर्व प्रौढ़ता की प्राप्ति और समय से पूर्व देह-त्याग है (Man's Food Unvealed By M. K. Pandu-raugam) इस लेख का कलेवर और अधिक उद्धरणों की आज्ञा नहीं देता है। इसलिए इतने ही पर बस किया जाता है।

एक ओर दुग्ध को अमृत बतलाने वाले उसके अति प्रशंसकों की पंक्ति खड़ी है और दूसरी ओर उसको विगर्हित करने वालों की भी कमी नहीं है। इस अवस्था में हमको भगवान् बुद्ध की "मध्यम-संपदा" का आश्रय लेकर समन्वय का मध्यमार्ग निकालने के अतिरिक्त कोई अन्य गति नहीं है। जैनों के स्याद्वाद सिद्धान्त के अनुसार प्रत्येक वस्तु के बहुपक्ष होते हैं और उनको विचार वा विमर्ष की दृष्टि से ओझल (तिरोहित) नहीं किया जा सकता। चन्डकौशिकम् की उक्ति "द्रव्यं किमपि लोकेऽस्मिन्न निर्दोषं न निर्गुणम्।" के अनुसार इस संसार का कोई भी पदार्थ भी निर्गुण वा निर्दोष नहीं है। दूध में भी गुण और दोष दोनों ही विद्यमान हैं। इसमें संदेह नहीं कि मनुष्य को प्राकृतिक वा स्वाभाविक स्वास्थ्यकर आहार फल और उनकी गिरियाँ ही हैं। जैसा कि ऊपर वर्णित है, मनुष्य अपनी आदिम अवस्था में इन्हीं से निर्वाह करता था।' अन्नों का आहार भी उसका पीछे का संप्राप्त अभ्यास है। स्वास्थ्य को अक्षुण्ण (स्थिर) रखने के लिये आहारों का जो विश्लेषण करके देखा गया है उसकी दृष्टि से उसका क्षारमय आहारों की आवश्यकता अम्लोत्पादक आहारों की अपेक्षा कहीं अधिक है और क्षारों की अनिवार्य आवश्यकता की पूर्ति फलाहार से ही हो सकती है। पत्रमय शाकों से भी इस उद्देश्य की सिद्धि होती है। इसलिए जहाँ तक भी बन पड़े मनुष्य फलाहार और शाकाहार द्वारा अपनी जीवन यात्रा कर सके तो स्वास्थ्य लिए सर्वोत्तम है। किन्तु यहाँ अर्थ-शास्त्रियों की प्राप्ति और माँग (Supply and Dmaond) का प्रश्न आड़े आता है। अर्थात् फलों और गिरियों की पर्याप्त मांग हो भी—मनुष्यों की वर्तमान आहार प्रवृत्ति बदल कर, उनकी मनोवृत्ति इतनी पर्याप्त सुधर जाय कि वे फलों को ही एक मात्र वा अधिकांश अपना आहार बनाने के लिए फलों की बहुत पर्याप्त माँग करने भी लग जायं—तो क्या यह संभव है कि भारत में फलोद्यानों की यथेष्ट विद्यमानता की न्यूनता की अवस्था में उसकी प्राप्ति वा पूर्ति हो सके और फल मर्यादित मूल्य में मिलने लगे। जहाँ हमको प्रचार आदि साधनों द्वारा मनुष्यों में फलाहार की प्रवृत्ति को बहुत बढ़ाना होगा, वहाँ साथ ही फलोद्यानों के आरोपण द्वारा फल प्राप्ति को भी बढ़ाना और सुलभ करना होगा। "आवश्यकता ही आविष्कार की जननी है।" क्या मनुष्य की शर्करा आदि मीठे की असीम माँग ने आदि में सरकंडे मात्र के जंगली रूप में रही हुई, ईख की लखोखा बीघे खेती और शक्कर बनाने के सहस्रों कारखानों को इतना अधिक नहीं बढ़ा दिया है कि एक लेखक को अमरीका वासियों के अति बढ़े हुए शर्करा के आहार को देखकर यह लिखना पड़ा था कि हम तो "शर्कराहारी शूकर" (Sugarhogs) बन गए हैं। ईश्वर वह दिन लाये जब कि हम शर्कराहार शूकर के बदले में सात्विक फलाहारी स्वस्थ श्रेष्ठ मानव बन जायँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब रही दुग्ध की बात। मनुष्य स्मरणातीत काल से दुग्ध का सेवन करता चला आ रहा है। वह उसका इतना अभ्यासी बन गया है कि उससे उसको छुड़ाना असंभवप्राय वा अति दुस्तर अवश्य है, किन्तु आजकल निकृष्ट दूध के सेवन की जो दुर्दशा है, उससे बचाने के लिए तो मन में यही भाव बलपूर्वक उदय होता है कि दूध के नाम से बाज़ारों और घोसियों से प्राप्तव्य स्वास्थ्य संहारक सफ़ेद पानी के पान को जनता त्याग ही देवे तो उनकी स्वास्थ्यसंरक्षा की दृष्टि से यही श्रेयस्कर है।

प्राचीन भारत में दूध के विक्रय की प्रथा न थी और "क्षीरविक्रय" महानिन्दित कर्म माना जाता था। घर-घर गोमाताएं विराजती थीं। कोई अभागा घर ही उनसे वंचित रहता था। प्रत्येक नगर के अभ्याश (Suler1) में गोचरभूमियों के वन होते थे। शूरसेन देश की राजधानी विख्यात महानगरी मथुरा के चारों ओर वृन्दावन विद्यमान था गोपाधिप श्रीनन्द के गोकुल के कारण ही मथुरा के आसपास के देश का नाम अन्वर्थ ब्रजमंडल (गौओं की निवासभूमि को संस्कृत में व्रज कहते हैं) पड़ गया था। प्राचीन भारत में घी दूध की नदियाँ बहने का जो वर्णन पुराने भारत पर्यटकों ने किया है, वह आलंकारिक भाषा में बिल्कुल ठीक था। सेमेटिक मतावलम्बियों के स्वर्ग (बहिश्त) की दूध की नदियाँ तो लोकोत्तर अदृष्ट की बातें हैं। विशुद्ध दूध और घृत का सेवन करने वाले भारतवासी दूध के सेवन के कुछ ऐसे अभ्यासी बन गए हैं कि उनको दूध के नाम से प्रचलित निकृष्ट से निकृष्ट पेय को पीने में कुछ भी आनाकानी नहीं रही है। उनमें बहुत से महोदय को प्रातःकाल खुलकर शौच आने के लिए रात को सोते समय किसी न किसी रूप में दूध अवश्य पीना चाहिये। शयन समय पृथक् दूध पीने की यह प्रथा स्वास्थ्यरक्षा की दृष्टि से अतीव हानिकारक है।

इस सारे लेख का उपसंहार यही है कि मनुष्य स्वभावतः प्राकृतिक रूपेण फलों, उनकी गिरियों और शाकों का आहार करने वाला प्राणी है। उसके आमाशयादि दृढ़ांगों की रचना इस बात को पूर्ण रूप से प्रमाणित कर रही है। सात्विक-सुपच विविध फल (सन्तरे, सेब, अनार आदि) उनकी गिरियाँ (बादाम अखरोट नारियल आदि उसका सर्व श्रेष्ठ तथा स्वास्थ्यावह आहार है शाक (टमाटर आदि) मध्य कोटि के आहार हैं। दुग्ध तथा अन्न उसका संप्राप्त अभ्यास जन्य आहार है। इस समय यह इससे छूटना असंभव सा है। दुग्ध पीना हो तो जंगल में चरने वाली पूर्ण स्वस्थ गौ, बकरी आदि घरेलू पशुओं वा श्रेष्ठ प्रबंध युक्त तथा सत्य व्यवहार वाली डेरियों से प्राप्त करके पीना चाहिए। निकृष्ट स्वास्थ्यसंहारक दूध के नाम से प्रचलित सफेद पानी का सेवन तो तुरंत छोड़ देना चाहिए। उसके स्थान में फलों गिरियों और शाकों के प्राकृतिक सात्विक आहार को प्रबल प्रोत्साहन मिलना चाहिए और उनकी माँग के अनुसार उनके उद्यानों के आरोपण को भी प्रेरणा मिलनी चाहिए। इन उद्यानों में मधुमक्षिकापालन का भी आयोजन और प्रचार किया जाय, तो उससे उत्तम फलों की वृद्धि में सहायता के साथ-साथ विशुद्ध और अहिंसा से प्राप्त मधु (शहद) की प्राप्ति के रूप में संप्रति अति महँगी और दुर्लभ श्वेत विषसमान सक्कर के बदले में प्राकृतिक मिष्ठ पदार्थ की प्राप्ति कीसमस्या भी सुलझ सकती है। परम पिता जनता को सुबुद्धि दे कि वह अपने प्राकृतिक, शुद्धसात्विक और स्वास्थ्यकर आहार को पहचानकर उसकी अभ्यासी बने। तथा पूर्ण स्वस्थ, सबल शरीर और मन को प्राप्त करे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रश्नोत्तर

प्रश्न—यह प्राय: देखा गया है कि सूजाक (Gonorrhoea) के रोगी अनेक प्रकार के उपचार करके थक जाते हैं फिर भी उनको स्थायी लाभ नहीं होता। इलाज करवाने के बाद वह फिर ज्यों का त्यों उभड़ आता है। रोगी जब फिर डाक्टरों की शरण में जाता है तो वे उसे असाध्य कह कर निराश कर देते हैं। क्या यह रोग वास्तव में असाध्य है? क्या इस रोग में प्राकृतिक चिकित्सा से लाभ हो सकता है? किन प्राकृतिक उपचारों से यह समूल नष्ट हो सकता है? क्या इसको भी आप छूत की बीमारी मानते हैं और इसकी उत्पत्ति कीटाणुओं ही से मानते हैं? कृपया इन प्रश्नों का उत्तर देकर कृतज्ञ कीजिये और मुझे आशा है कि आप की सलाह से जन-साधारण को भी लाभ होगा।

चतुर्भुज टोशनीवाल

उत्तर—आप का प्रश्न सुन्दर और गम्भीर है। यह रोग बहुत भयंकर और जटिल है। यह मानव जाति की तीन मूल बीमारियों में से एक है। वे महाव्याधियाँ है दाद-खाज (Psora), सूजाक (Gorrhoea), और गर्मी (Syphilis) इनमें से अधिकांश बीमारियाँ मनुष्य अपने पूर्वजों से परम्परागत लेता चला आया है। एक बात और विचारणीय है कि इनमें से दो मुख्य बीमारियाँ मनुष्य को छोड़ कर अन्य किसी श्रेणी के प्राणी में नहीं पाई जाती।

सूजाक भी शरीर के अंदर तीव्र शुद्धिक्रिया का—भीतर विद्यमान विष का बहिष्कार करना चाहती है और उसी का परिचायक है। अन्य रोगों की तरह यह रोगभी अपना समय लेकर चला जाता है। यह समय प्रदाह (Inflamaton) की पाँच स्वाभाविक अवस्थाओं के अंतर्गत लगता है जिसके दरमियान जीवन शक्ति शरीर में से दूषित द्रव्य निकाल कर शरीर को स्वच्छ कर देती है। उपरोक्त क्रिया की उपमा सिरके के रासायनिक परिवर्तन से दी जा सकती है। प्रदाह एक तरह का उद्वेग है जो एक निश्चित समय लेकर शांत हो जाता है।

शरीर के अन्दर अगर यह सफाई की क्रिया स्वाभाविक रूप से निर्विघ्नता से हो जाती है तो अन्त में मनुष्य नीरोग हो जाता है। सूजाक भी अगर अपने स्वतंत्र प्राकृतिक चिकित्सा मार्ग पर चलने दिया जाय और प्राकृतिक उपचारों से सफाई के काम में सहायता पहुंचाई जाय तो वह अच्छा हो सकता है। कोई रोग भी असाध्य नहीं है अगर शरीर की जीवनी शक्ति को अपने काम में बाधा न पहुंचा कर और सहायता दी जाय। रोग को दवाओं में दबाने में जीवनी शक्ति कमजोर हो जाती है जिससे शरीर की रोग निवारक शक्ति क्षीण हो जाती है और रोग जड़ पकड़ लेता है।

साधारणतः यह रोग ६ महीने से ९ महीने समय लेता है अगर वह प्राकृति के नियमों के अनुकूल बर्ता गया। इसके उपचार में व्यापक रूप से ऐसे सार्वजनिक विधान (General Treatment) का उपयोग होता है जिससे रक्त शुद्ध हो और विकार त्वचा, गुर्दों, कोष्ठ, फेफड़े आदि के द्वारा निकल जाय। भोजन सुधार, जल-चिकित्सा आदि मुख्य साधन हैं। इस रोग में उपवास भी किया जा सकता है लेकिन बहुत सावधानी की आवश्यकता होती है, बिना किसी अनुभवी चिकित्सक की सलाह और देख-रेख के उपवास कराना उचित नहीं।

प्रारम्भिक और तीव्र अवस्था में सूजाक साधारणतः बिना किसी कठिनाई के अच्छा हो जाता है। लेकिन पुराना सूजाक कुछ समय लेता है और उस में विशेष सावधानी की भी जरूरत होती है। ख़ास तौर से उस समय जब कि मूत्राशय की नली संकुचित या बन्द सी हो जाती हैं जिसे डाक्टर अंग्रेजी में Structure of urathra कहते हैं। यह अवस्था बहुत कष्टकारक होती है क्योंकि पेशाब करने में बहुत कठिनाई होती है और बूंद-बूंद गिरती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। ऐसी अवस्था जभी पैदा होती है जब रोग बहुत पुराना हो और तेज दवाओं से दबाया गया हो।

इस बात में जनता को उचित शिक्षा की जरूरत है क्योंकि इसके विषय में बहुत सी भ्रमपूर्ण धारणाएं प्रचलित हैं। चूंकि यह रोग पोशीद (गुप्त) होता है इसलिये लोग इससे शीघ्र ही मुक्ति चाहते हैं। वे यही चाहते हैं कि दो दिन में अच्छे हो जायं। स्वभावतः वे पेटेंट दवाइयों की ओर झुकते हैं और बहुत तेज और हानिकारक औषधियों का प्रयोग कर अपने रोग को तुरन्त दबा देते हैं। डाक्टर लोग ऐसे रोगों में पारे से तैयार औषधियों का बहुत प्रयोग करते हैं जिनका दुष्परिणाम रोगी के शरीर और मन दोनों पर पड़ता है। पारे के हानिकारक प्रभाव का वर्णन डाक्टर हेनरी लिंडलार ने अपनी पुस्तक (Irisdiagnosis) 'चक्षुनिदान' में किया है।

जब इन दवाओं से रोगकीट तंतुओं और हड्डी में चला जाता है तो रोगी की जीवनी शक्ति बहुत कम होती जाती है और उसका जीवन बहुत दुखमय हो जाता है। ऐसी दशा बहुत दयनीय हो जाती है। जन साधारण को ऐसे धोखे से सजग होना चाहिए। ऐसा इलाज जिससे विष रक्त से तंतु में आजाय और अन्त में स्नायुओं और हड्डियों को नष्ट करने लगे सदैव बचना चाहिए। पहले ही से अगर प्राकृतिक चिकित्सा की जाय तो पूर्ण लाभ हो सकता है रोगी उस भयानक मृत्यु से बच सकता है जो इंच इंच करके गला कर मारती है।

इसे छूत की बीमारी कह सकते हैं क्यों आधुनिक युग के दूषित वातावरण में रहकर हम ने अपना वास्तविक शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य खो दिया है जिसके फलस्वरूप हम शीघ्र ही रोग के शिकार हो जाते हैं। लेकिन यह जरूर है कि बिना अंदरूनी विकार के इसके कीटाणु स्वयं रोग नहीं उत्पन्न कर सकते, हम कीटाणुओं के अस्तित्व से इनकार नहीं करते लेकिन यह अवश्य विश्वास करते हैं कि स्वस्थ शरीर में यह कीटाणु जिन्दा नहीं रह सकते।

प्रश्न—मेरी भांजी जिसकी आयु लगभग ९ या १० वर्ष की है पुराने ज्वर से पीड़ित है। उसको सदैव हरारत रहती है। दो महीने पीछे उसे मलेरिया था ज्वर तो उतर गया लेकिन हरारत नहीं गयी है। चेहरा पीला और सुस्त रहता है। कृपया इसका उपचार बताइये।

उत्तर—आप उसको केवल फल रोटी सब्जी पर रखें। बुख़ार जब तेज़ हो तो केवल फलों के रस ही पर रखें और केवल हरारत की हालत में रोटी सब्जी ही दें। सुबह शाम मिट्टी की पट्टी पेड़ू पर दें और एक वक्त एनीमा। इसको दोनों वक्त ८ मिनट तक मेहन स्नान करवाइये और हफ्ते में एक बार पूरा वाष्प स्नान दें। वाष्प स्नान न हो सके तो केले के पत्ते से ढक कर सूर्य स्नान (Sun bath) दे सकते हैं।

प्रश्न—मुझे गत १९४१ साल में पेट में दर्द शुरू हुआ था जो मार्च में शुरू होकर जुलाई माह में होमियोपैथिक दवा से आराम हो गया। फिर १९४२ में पेचिश का रंग लेकर पाखाना ढीला होने लगा। कभी कभी दर्द भी हो जाया करता था जो छः माह तक जारी रहा और आयुर्वेदिक दवा से आराम हुआ। फिर १९४३ के अप्रैल माह से पेट में दर्द शुरू हुआ जो अब चला आरहा है। आयुर्वेदिक एक मरतबे करके छोड़ दिया, बराबर होमियोपैथिक दवा करता आरहा हूँ पर लाभ नहीं हो रहा है। दर्द का कोई ठीक नहीं रहता है कि कब शुरू होता है। पेट के बीच में ढोंढ़ी के ऊपर होता है। मेरा बदन पहले की अपेक्षा दुबला पतला हो गया है तो भी मैं अपनी नौकरी करता आरहा हूँ परिवार के भरण-पोषण के लिए। बराबर घूमने का ही मेरा काम रहता है। मैं धूम्रपान मादक पदार्थ या चाय कभी सेवन नहीं करता हूं। मैं पूरा शाकाहारी हूँ। मैं भोजन करने के बाद गर्म जल पीता हूँ। विशेष कर रोटी ही खा लेता हूँ और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आलू की तरकारी। मैं अपने रोग से एक तरह से ऊब गया हूँ ऐसा उपाय बतलाइये कि स्वाथ्य सुधर जाय और रोग भी दूर हो जाय। उपचार करने को जो भी लिखें वह समझा कर लिखें।

गगनदेव प्रसाद श्रीवास्तव, मोतीहारी

आप की आँतों में रोग है। दवा खाने से काम चलना सम्भव नहीं है। दर्द के समय आप पेट पर बोतल में गरम पानी भरकर फेरें। थोड़ा सा खाने का नामक खाकर गरम पानी पीलें। इसको जड़ से दूर करने के लिए आप मठे का कल्प करें। कल्प की विधि यों है—

'शुरू में एक दिन सन्तरे के रस पर रहें। दूसरे दिन एनिमा लेकर पेट साफ करें। और उसी दिन एनिमा लेने के दो घंटे बाद से हर आधे घंटे पर ३-३ छटाँक या आध पाव मठा पियें। बीच में दो सन्तरे का रस ले लिया करें। यह मठे का आहार एक महीने चलाइए। सुबह दोपहर शाम को दवा के रूप में नीली बोतल का पानी एक एक छटांक पीजिए। पानी बनाने की विधि इस प्रकार है-- नीले रंग की शीशी में आधे से कुछ ऊपर पानी भर दीजिए मुँह पर डाट लगाकर किसी लकड़ी के पीढ़े या स्टूल पर धूप में रख दें और २ घंटे धूप में पकने दें। शीशी जमीन पर न रखें लकड़ी पर रखें। जब मठे का कल्प तोड़ना हो तो ३ दिन तरकारियों का रस और फल वाली तरकारी दोपहर को खाइए। फिर तीन दिन तरकारी और मौसमी पके फल पर रहिए। बीच में मठा पीते रहिए। इसके बाद रोटी सब्जी पर आ जाइए। और कम से कम आध सेर मठा रोज़ लेते रहिए।

कल्प के समय में ४-५ सेर दूध तक का मठा आप पी सकते हैं।

यदि मठे के कब्ज के समय का रहे तो एनिमा लीजिए। एनिमा लेने की विधि बहुत बार जीवन सखा में छापी गई है।

प्रश्न—मेरी बुढ़िया माता जिसकी आयु इस समय लगभग ६४ साल की है। जिसको बराबर जोड़-जोड़ में दर्द करता रहता है सूज भी जाता है। बाहरी दवाओं का प्रयोग बहुत किया परन्तु कोई लाभ न हो सका। उसको युवा अवस्था में गठिया भी हो गया था। पेट में भी वायु का विकार बराबर रहता है। पाखाना भी कभी-कभी गड़बड़ हो जाया करता है। ये भी कोई धूम्रपान या मादक पदार्थ सेवन नहीं करती हैं। ये पूरा शाकाहारी हैं। इसका भी कोई सुन्दर उपचार लिखिए कि जिस में ये भी दर्द से मुक्त हो जायँ। स्वास्थ्य इसका अच्छा है।

गगनदेव प्रसाद, श्रीवास्तव, मोती हारी

आप अपनी माता जी को प्रति दिन एनिमा देकर पेट साफ रखें। दर्द की जगह पर पानी की भाप पहुँचावें। भाप रोज कम से कम एक बार दी जाय। यह पुरानी बीमारी है। देर में जायगी। शुरू में इसमें १५ दिन तक सन्तरे के जूस पर रखिए। इसके बाद दूध कल्प शुरू कराइए। यह दूध का कल्प कम से कम ४० दिन चलाइए। इसके बाद धीरे-धीरे फलों पर आइए इससे बहुत लाभ होगा। परन्तु यदि लाभ कम मालूम पड़े तो काफी लम्बे अरसे तक दूध के कल्प की आवश्यकता पड़ेगी।

म० ना० पा०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सब रोगों पर प्राकृतिक कल्प

[श्रीयुत जगदीश जी]

मनुष्य यदि प्रकृति के स्वाभाविक इशारों को समझने की योग्यता प्राप्त कर ले तो सन्देह नहीं कि वह अपने आपको सर्वथा रोग मुक्त रख सकता है ! रोग विशेष के आ जाने पर उससे सहज में छुटकारा पा सकता है।

रोगों का कारण बताते हुए-महर्षि कहते हैं—मिथ्या-आहार से ही आमाशय विकृत हो जाता है तभी सभी रोग उत्पन्न होते हैं। तब किसी प्रकार के रोग में अपने चलते हुए खान-पान रहन-सहन के क्रम को बदल देना ही चिकित्सा का मूलमन्त्र है। कल्पना करें एक मट्टी का ढेर जो कि पानी की एक नाली द्वारा आने वाले जल से गीला हो रहा है, उसे सुखाने के लिए चारों ओर आग का प्रबन्ध करना केवल भूल होगी। पहला प्रयत्न होना चाहिए नाली के पानी का बन्द करना उसके बन्द होने पर तो स्वाभाविक ही वह ढेर सूखने लगेगा। और कोई उपाय करें या न करें। ठीक वैसे ही रोग रूपी ढेर को सुखाने के लिए पहले उसके कारण को हटाना होगा तब सफलता आपके हाथ में रक्खी है।

आयुर्वेद ग्रन्थों में बताए कल्पों के भी यही प्रकार हैं प्रचलित दूषित रहन-सहन से हटकर कुछ शोधक क्रियाएं करते हुए सारयुक्त जीवन दायिनी प्राकृतिक जड़ी-बूटियों का निश्चित अवधि तक सेवन कराना।

इसी आधार को लेकर आप कल्प की एक ऐसी रूप-रेखा तैयार कर सकते हैं जिसे समय पर आसानी के साथ किया जा सकता है। प्रकृति की ओर से मानवजाति के लिए सभी फल विशेष रोगों को हरने की शक्ति लेकर औषधि रूप में प्रदान किए गए हैं। किसी प्रकार अप्राकृतिक बनावटी औषधों के प्रचड़ में पड़े बिना ही मनुष्य समय-समय पर मिलनेवाले फलों का उपयोग कर स्वास्थ्य लाभ कर सकता है।

कुछ थोड़ी विधि जान लेने पर तो वह शरीर मन एवं मस्तिष्क (दिमाग़) में ख़ासा परिवर्तन ला सकता है। मेरी बुद्धि ने जो एक दिव्य कल्प की रूप रेखा तैयार की वह यह है—

किसी भी सारयुक्त सामयिक फल का आहार करते हुए २१ दिन या एक मास अवधि को विशेष प्रकार की दिनचर्या बना पूरा कर लेना। जैसे—

१—प्रातःकाल ईश प्रार्थना १५ मिन्ट लगभग तथा किसी पवित्र ग्रन्थ की भावना पढ़ना।

२—उदर शुद्धि के लिए एनिमा या वस्ति क्रिया।

३—छाती शुद्धि के लिए धौति क्रिया-या ब्रह्मदातुन अथवा केवल नमक मिला गरम जल पी वमन करना।

४—कंधे से ऊपर के अंगों की शुद्धि के लिए नेति क्रिया, या जलनेति—नाक से जल खींच मुंह से निकालते जाना।

५—शरीर के अंग प्रत्यंग को लचीला दृढ़ एवं रोग रहित करने के लिए—सर्पासन, शलभासन, सर्वाङ्गासन, मत्स्यासन, पश्चिमोत्तानासनादि हठयोग के आसनों का प्रातःसायं अभ्यास।

६—अग्नि प्रज्वलित कर रोगों को भस्म करने के निमित्त, तथा फेफड़ा, छाती को बलशाली बनाने के लिए एवं शरीर को हलका स्फूर्ति युक्त प्राण शक्ति से भरपूर करने के लिए प्रातः सायं भस्त्रिका प्राणायाम।

७—सायंकाल पुनः ईशध्यान प्रार्थना। दिन में उत्तम ग्रन्थों का स्वाध्याय वा अपने प्रिय मन्त्र का यथाशक्ति जाप।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बस इन्हीं सात नियमों में मानव जीवन की पूर्णता भरी पड़ी है।

जैसे कल्पना करें कि आज कल संतरे का आहार करते हुए उक्त नियमानुसार कुछ समय बिता देना, शरीर मन दिमाग़ का कल्प कर लेना है।

सरल विषय है—इस प्रकार का हल्का आहार तो शरीर के पाचकादि मुख्य यन्त्रों को विश्राम देगा, एनिमा वस्ति-धौति नेति धोकर साफ़ करने का काम करेंगे। आसन उन्हें दृढ़ शक्ति शाली बनावेंगे प्राणायाम जीवन का सञ्चार करेगा।

मन्त्र जप वा ईश प्रार्थना से मानसिक शक्ति जागृत होगी उसका विकास होगा—कूपमण्डूकत्वं दूर होगा-वसुधैव कुटम्बकम् सारा विश्व मेरा कुटुम्ब है का भाव उत्पन्न होगा।

इस प्रकार तीनों प्रकार की शुद्धि एवं उन्नति अनिवार्य है। शरीर मन संबन्धी सभी रोग दूर हो सकेंगे जो लोग धौति, नेति, प्राणायाम से परिचित न हों वे अन्य नियमों का यथा सम्भव पालन कर काफ़ी लाभ उठा सकते हैं।

यह फलों द्वारा होनेवाले प्राकृतिक कल्प की सामान्य रूप-रेखा है, फलों का विशेष उपयोग किन किन फलों में कौन कौन रोग नष्ट करने की शक्ति है, उसकी सेवन विधि, ये विशेष रूप हैं जो समय पर बताए जा सकते हैं। जैसे आगे खरबूजे की फसल आनेवाली है सस्ता फल है मीठे खरबूजे के सेवन से अनेक लाभ प्राप्त किए जा सकते हैं। इस प्रकार मनुष्य फलों के सहारे रोग रहित हो सर्वाङ्गपूर्ण जीवन प्राप्त कर सकता है।

[५८ वें पेज से आगे]

रोग होते ही उपवास करना और शरीर को आराम देना न सिर्फ़ रोग को दूर करने का बल्कि शरीर को नये सिरे से सबल बनाने का श्रेष्ठ उपाय है। यह सिद्धान्त उतने ही पुराने हैं जितना कि अपना बुड्ढा हिमालय। यह उतने ही सरल भी हैं जितनी कि संसार की कोई भी सरल से सरल बात। पर, पाठकगण, कृपाकर आप ही बताइए कि जिस सरलता को हमने कठिन बना रखा है वह फिर से क्योंकर सरल होगी।

स्वास्थ्य के अर्थ सिर्फ़ यही नहीं है कि हम रोगों से बँचे रहें। स्वास्थ्य के अर्थ हैं शरीर और मस्तिष्क की पूरी पूरी शक्ति प्राप्त करना, भाव और विचार का सुन्दर होना और साथ ही साथ अलौकिक उत्साह, अदम्य साहस और उच्च कोटि की कार्य कुशलता। स्वास्थ्य के अर्थ हैं सजीला गठा हुआ शरीर, चमकता चेहरा, ज्योति से भरी आँखें, चमचमाते दाँत, स्वाभाविक मुसकान से खिले होंठ, लचीले जोड़, फुर्तीली चाल और पैनी छुरी की तरह तेज़ विचारों की धारा स्वास्थ्य का अर्थ है सभी तरह सुखमय जीवन। प्रिय पाठक महोदय कृपाकर बताइए कि क्या आप भी इस सुंदर स्वास्थ्य के रुचारु चित्र से आकर्षित होते हैं, क्या आप भी अपने शरीर को योग्यता की ऊँची से ऊँची चोटी पर पहुँचा कर दूसरों के लिए नमूना बनना चाहते हैं, क्या आप भी यह समझते हैं कि आदर्श स्वास्थ्य की प्राप्ति पर ही लोक और परलोक संबन्धी सफलताएँ निर्भर हैं? अगर आप भी ऐसा समझते हैं तो आइए हम-आप एक बार फिर से नई प्रतिज्ञाएँ करें और उनके पालन करने में दत्तचित्त हो जायँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वीर्य रक्षा ही जीवन है

लेखक—श्रीयुत शशि

न तपस्तप इत्याहु ब्रह्मचर्यं तपोत्तमम्।
ऊर्ध्वरेता भवेद् यस्तु सदेवो न तु मानुषः। ११

भगवान् शंकर कहते हैं ब्रह्मचर्य अर्थात् वीर्य धारण यह उत्कृष्ट तप है इससे बढ़कर तपश्चर्या तीनों लोकों में दूसरी कोई भी नहीं हो सकती। ऊर्ध्वरेता पुरुष अर्थात् अखण्ड वीर्य का धारण करने वाला पुरुष इस लोक में मनुष्य के रूप में साक्षात् देवता है। ब्रह्मचर्य ही यज्ञ और इष्ट रूप है जिससे मनुष्य आत्मा को प्राप्त होता है। योग शास्त्र का सिद्धान्त है कि मन, वायु और वीर्य तीनों एक सम्बन्ध से युक्त है इनमें एक के वशीभूत होने से शेष दोनों आप ही वश में हो जाते हैं। जिसका वीर्य वशीभूत हो जाता उसका मन भी वश में हो जाता है।

ब्रह्मचर्य प्रतिष्ठायां वीर्यलाभं

ब्रह्मचर्य की प्रतिष्ठा से परम शक्ति की प्राप्ति होती है। ब्रह्मचर्य के द्वारा दैवी शक्ती प्राप्त होने का ही फल है। संसार में जो बड़े बड़े कर्मवीर धर्मवीर अपनी शक्ती प्रताप से अलौकिक कार्य कर गये और करते हैं। अब यह देखना है कि यह कहां रहता है और कैसे बनता जो इसकी इतनी महिमा गाई जाती है।

मनुष्य जो कुछ भोजन करता है वह प्रथम मुख द्वारा पेट में आकर पचने लगता है और उसका रस बनता है उस रस का पांच दिन और ६ घड़ी तक पाचन होकर उससे रक्त पैदा होता है; रक्त का भी इतने ही समय में पाचन होकर उससे मांस बनता है। मांस की यह क्रिया बिलकुल भी बन्द नहीं होती, बलिक यह मशीन हमेशा काम करती है, एक को पचाकर दूसरा और दूसरे को पचाकर तीसरा और इसी तरह इससे सार पैदा होता है और प्रत्येक क्रिया में फिजूल चीजें मल, मूत्र और इनसब द्वारों के जरिए निकलते रहते हैं। इसी तरह पांच दिन के बाद मेदा से अस्थि और अस्थि से मज्जा और इससे आखिरी सारवीर्य बनता है और यह आगे पाया जा नहीं सकता, यह वीर्य कोई खास जगत पर नहीं रहता, यह शास्त्रों का सिद्धान्त है कि यह सम्पूर्ण शरीर में निवास करता है और दूध में मक्खन की भाँति विद्यमान है, यह वैज्ञानिकों ने निश्चय किया है कि वे ४० सेर खूराक से एक सेर खून और एक सेर खून से २ तोले वीर्य चालीस दिन में बन कर शरीर में तेज दिखाता है।

प्रकृति के तीन गुण है उनके सम रहने से शरीर और मन की स्वास्थ्य रक्षा होती है इन तीनों गुणों के अनुसार शरीर में पित्त, वायु और कफ की समता से शरीर निरोग और अन्तःकरण में भी शान्ति बनी रहती है। वीर्य के साथ वायु का सम्बन्ध होने से वीर्य की स्थिरता से वायु भी शान्त रहता है अन्तःकरण के शान्त रहने से मनुष्य परम सुखी और आनन्दमय रहता है इससे सिद्ध हुआ कि वीर्य रक्षा न करनेवाला किसी भी साधन में सिद्धि प्राप्त नहीं कर सकता।

शरीर के भीतर मनोवह नाम की एक नाली है जो मनुष्य के चित्त में कामभाव पैदा होते ही दूध को मथकर मक्खन निकालने की तरह शरीर और रक्त को मथकर वीर्य को निकालती है, मनोवहा नाड़ी के साथ शरीर की सब नाड़ियों का सम्बन्ध है इसलिये शुक्रनाश के समय शरीर की सब नाडियां कांप उठती हैं।

वीर्य नाश से मनुष्य की मृत्यु और वीर्य धारण से मनुष्य जीवन है। शरीर के समस्त यन्त्रों में से स्नायु, पाकस्थली को कठिन आघात पहुँचता है, काम का तुच्छ सुख केवल इन्द्रियों की स्नायुओं की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चंचलता से होता है, परन्तु बार बार चंचल होने से नसें दुर्बल हो जाती हैं और साथ ही शरीर के सब स्नायुओं में आघात लगने से वे सब भी दुर्बल हो जाते हैं। फल यह होता है कि उनके वीर्य धारण करने की शक्ति नष्ट हो जाती है, जिससे सामान्य काम संकल्प या चाञ्चल्य से ही वीर्य नष्ट होने लगता है और धातु दौर्बल्य, प्रमेह, स्वप्नमेह, मधुमेह आदि कठिन कठिन रोग हो जाते हैं शरीर के स्नायुओं पर अधिक धक्का लगने से मिर्गी और गठिया आदि कितने भीषण रोग हो जाते हैं।

दूसरी बात यह है कि प्राणवायु के साथ अपान वायु का और अपान वायु के साथ वीर्य का सम्बन्ध रहने से अपान वायु के खराब होने से वायु यन्त्र सम्बन्धी सब रोग हो जाते हैं जैसे समय पर शौच न आना, अधिक दस्त आना, दस्त बन्द होना, पेट में आंव होना आदि। जिस उष्णता के रहने से पेट में अन्न पचता है, वीर्य नाश से वह उष्णता जाती रहती है जिससे पित्त प्रकृति नष्ट होकर कफ प्रकृति होती है और पित्त दुर्बल होने से अजीर्ण होता है।

तीसरे वीर्य नाश के समय हृदय को बहुत धक्का पहुंचता है क्योंकि हृदय ही रक्त का मूलस्थान है जितनी बार वीर्य नष्ट होगा उतना ही वीर्य कमजोर होगा उतनी ही बार दुर्बल रक्त पुष्ट करने के लिये हृदय यन्त्र पर चोट लगेगी क्षय अथवा यक्ष्मा का होना अनिवार्य हो जाता है।

चौथी बात यह कि वीर्य नाश से मस्तिष्क को बहुत धक्का लगता है शरीर का सर्वोत्तम अंग यही है और मस्तिष्क ही समस्त स्नायुओं का भी केन्द्र स्थान है इसलिये वीर्य नाश से मस्तिष्क भी दुर्बल हो जाता है जिससे स्मृति, बुद्धि, प्रतिभा सब नष्ट हो जाती है, प्रकृति क्रोधी, रूखी, तथा भीरू हो जाती है आंख तथा अन्य इन्द्रियां भी दुर्बल पड़ जाती है वीर्य ही शरीर का राजा है इसे संभाल कर बड़ी सावधानी रखना चाहिए।

[८७ पृष्ट से आगे]

ही सीधा कुठाराघात करता है। और इसमें खर्च जो कुछ भी है वह फलों का, मिट्टी की पट्टी और ठण्डा जल बस यही दो दवा हैं जिन्हें प्रकृति ने सर्वत्र ही सुलभ बनाया है। और इसके चिकित्सक भी मानवता के कल्याण से प्रेरित हो कर ही व्याकुल से होकर जहाँ खबर पाते हैं पहुँच कर यथा शक्ति उद्योग करते हैं। दया और सहानुभूति ही है इसकी नीति न कि द्रव्योपार्जन।

पर लोग मुझसे पूछ सकते हैं कि तुम्हारा यह सब ज्ञान कहाँ चला गया था ? जानते तो सब हो पर—?। मैं लज्जानत मुख से सिर्फ एक उत्तर दे सकता हूँ—'नियति से पूछो। जब कुछ होना होता है तो ऐसा ही होता है अंग्रेज़ी में एक प्रसिद्ध कहावत है—'Live and learn.'*

* इन तीन शब्दों के ज़रा से वाक्य का ठीक अनुवाद मेरे लिये साध्य नहीं है।

[८८ पृष्ट से आगे]

शकरकन्द आदि का भोग लगाया जाता है तब तो रही सही जीवन शक्ति का ही अपमान किया जाता है और नीरोगता के बदले रोग को निमंत्रण दिया जाता है।

बसन्त सुखमय है सुख और आनन्द और नव जीवन का ही सन्देश सुनाने वह पदार्पण करता है हमको अपनी जड़ता त्यागकर उसके सन्देश का आशय समझकर अपने जीवन को सुखमय बनाना चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चेचक या 'महारानी'

[श्री गणेश प्रसाद द्विवेदी, एम० ए०, एल-एल० बी०]

अगर मुझसे अब कोई पूछे कि दुनिया में सब से ख़ौफ़नाक बीमारी कौन सी है तो मैं तुरत कह दूँगा चेचक या 'महारानी'। कैसे मनुष्य इसके भयानक कष्ट, भीषण गर्मी, असह्य वेदना को बर्दाश्त करता है यह वर्णनातीत है। लोग कहते हैं इसका कोई इलाज नहीं। ठीक है। और अगर कोई इलाज इसमें कुछ काम कर सकता तो वह है प्राकृतिक चिकित्सा यानी पानी, भाप वग़ैरह का इलाज। इसका मुझे पिछले महीने में व्यक्तिगत अनुभव हो गया। लोग आमतौर से इस महामारी को एक धार्मिक रूप देते हैं। और दाने निकलते ही कहने लगते हैं, महारानी ने कृपा की है'। और फिर तरह-तरह उपचार के पूजा, पाठ यंत्र मंत्र, टोटके, धार, देँहेड़ी, माली, सेवकिया, बस यही होता है। हमने भी यही किया, आंख मूद कर, और मेरा सबसे छोटा, सब से प्यारा डेढ़ बरस का बच्चा इसी मूर्खता में बलिदान हो गया। मैं अपनी इसी मूर्खता की कहानी इन पंक्तियों में कहना चाहता हूँ। उद्देश्य है और लोगों को सतर्क कर देना। हिन्दुस्तान अब भी अंधविश्वास और दकियानूसी संस्कारों की खान है। मुझे अपने ही को 'पढ़ा लिखा' आदमी कहने में लज्जा बोध होता है। मैं कैसे इस चक्कर में पड़ गया यह आश्चर्य है। पर पड़ तो गया ही, और कैसे सो सुनिए--

उस दिन दफ़्तर से लौटा तो सीधे बच्चे के कमरे में घुस रहा था कि बड़ी लड़की ने रोक दिया। बोली, उस कमरे में जाइये, अभी यहाँ न आइये, खूकू को महारानी निकल आई हैं। हम लोग उस बच्चे को 'खूकू' कहते थे, अच्छा नाम था विजय कुमार। ख़ैर मैं दूसरे कमरे में चला गया। थोड़ी देर बाद, कपड़े बदले, हाथ पैर धो शुद्ध हो उस कमरे में गया। इसके पहले दो दिन उसे बुखार था, जोरों का, १०४,१०५। उन्होंने कहा, कोई बात नहीं, अब तो महारानी आ ही गई हैं, अब जबतक पूजा न हो जाय तबतक 'नियम' से रहना चाहिये। नियम माने जबतक महारानी विदा न हो जायँ तबतक छौंक बघार बंद, कड़ाही चढ़नी बन्द, मसाले बन्द, आना जाना बन्द, दाढ़ी हजामत, तेल, साबुन, धुले कपड़े पहनना, पान खाना वगैरह सब बन्द। ख़ैर यह सब तो हुआ। कलस स्थापित हुआ, 'माली' आया। श्रीमती जी ने कहा, हमने कभी माली नहीं बुलवाया, हमारे यहाँ 'सहता' नहीं। पर ख़ैर अब तो वह आ ही पड़ा था उसे वापस कर देने से कहीं महारानी नाराज हो जायँ तो और भी आफत। ये माली, शीतला के पूजक होते हैं, डाली लगाते हैं। ख़ैर तो महादेव माली ने दोनों वक्त आना शुरू किया। उसने यह भी कह दिया कि कोई घबराने का काम नहीं है, सब ठीक हो जायगा, इसमें कोई दवा नहीं होती। खाने के लिये उसने कहा कि जो महारानी माँगे से दीजिए, रोटी भात, मिठाई, बिस्कुट, जो उनकी इच्छा हो।

तीन दिन ही चला। चौथे दिन से लड़के की हालत खराब हो चली। दाने सब भर गये, आँख बन्द, कफ सूख गया, बुखार १०६. माली ने संतरा या नीबू का पानी भी मना कर दिया। मैं एक वैद्य को भी बुला लाया। उन्होंने भी कहा, सब बहुत अच्छा है, कोई दवा मत दीजिये। मेरी भी मति कुछ ऐसी मारी गई थी कि सब के पास तो गया पर मेरे परम मित्र, देश प्रसिद्ध प्राकृतिक चिकित्सक तथा 'जीवन सखा' के संपादक बाबू बालेश्वर प्रसाद जी को खबर न दी। इसका एक मात्र कारण यही हो सकता है कि वह आते ही 'स्पीप-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाथ' हिपबाथ, एनीमा वगैरह शुरू करा देते और माली वाली को धता बताते। पर इसमें माली शायद अपना अपमान समझ कर महारानी को बिगाड़ देता। क्योंकि वे महारानी के प्रतिनिधि माने जाते हैं और इनको रुष्ट करना महारानी को ही रुष्ट करना था। बस यही हमारा काल हो गया। वह अबोध शिशु देखते देखते हमारी आँखों के सामने से निकल गया और हम बस देखते ही रहे। क्योंकि यह तो बड़ी भयानक परिस्थिति है। बिलबिला कर बच्चा दम तोड़ता जा रहा है और हम कुछ कर नहीं सकते। यह विज्ञान का युग है। चिकित्सा के अनेक मत और पथ प्रचलित हैं। और प्राकृतिक चिकित्सा का मैं स्वयं विश्वासी। घर के सब लड़के मेरी स्त्री और मैं स्वयं इस पद्धति से कई बार कठिन बीमारियों से छुटकारा पा चुका हूँ। मुझे अपने और अपने परिवार के स्वास्थ्य पर गर्व है। हम लोग कभी कोई दवा नहीं खाते। पर मेरे सब दावे और अनुभव पर मानों किसी ने पर्दा डाल दिया था। 'नियति का विधान' इसी को कहते हैं। (Fatalism) फैटलिज्म यही है।

अस्तु वह बालक हम लोगों को अथाह दुख समुद्र में डाल चल बसा, उसके जाने के तीन दिन बाद मेरे शेष तीनों बच्चों को भी बुख़ार आ गया। २० फरवरी ४४ को वह गया और २३ से २६ तक के अन्दर मुझे और मेरे ज्येष्ठ पुत्र को छोड़ शेष सब को बुखार और दाने निकल आये। यह आपत्ति का पहाड़ मानों फट पड़ा। मेरी गृहिणी को भी दाने निकल आये। पर मेरा हृदय अब काफी कठिन हो चुका था। बालेश्वर बाबू की अनुपस्थिति में उनके सहयोगी श्री ब्रजबिहारी दीक्षित को लाया। आप एक यशस्वी और होनहार प्राकृतिक चिकित्सक हैं। तुरत सबको स्टीम बाथ, और एनीमा द्वारा पेट की सफाई और संतरे के रस पर रखना शुरू हुआ। संतरे के आलावा बेदाना अनार, किसमिस का रस दूध फाड़कर बस यही दिया जा रहा है। आज करीब १५ दिन से यह क्रम चल रहा है। आठ रुपया १० रुपया रोज का फल लग रहा है पर कोई बात नहीं। दोनों लड़कियाँ करीब करीब अच्छी हो चुकी हैं। लड़का भी अच्छा हो रहा है। तीन दिन बाद बालेश्वर बाबू भी आये और नित्यप्रति सब व्यवस्था स्वयं देख जाते हैं। सब को दो-दो बार फुल स्टीम (भाप) दी गई और रोज दो दो हिप बाथ दो सिट्ज बाथ दे रहे हैं। बड़ी लड़की को खांसी भी थी, और गला सूख जाता था, अचेत पड़ी रहती थी। ब्रांको निमोनियां के पूरे लक्षण थे। पर स्टीम बाथ से ये उपसर्ग दूर हो गये और सब दाने साफ बाहर निकल आये। लड़के को संतरे के रस से चिढ़ है, उबाले हुये किसमिस के रस को वह महुए की शराब बतलाता है। सिर्फ पके हुये दूध का पानी ही ज्यादातर लेता है। इसी से उसे देर लग रही है।

फलों का रस ही अमृत तुल्य दवा है इस पद्धति में। क्योंकि इस पद्धति का मौलिक उद्देश्य है शरीर में अर्से से एकत्रित विजातीय द्रव्य या दूषित मल को बाहर निकाल फेंकना। सारी बीमारियाँ इसी से होती हैं और जब सब रोगों की जड़ एक है तो सभों की चिकित्सा भी एक होगी। बस इसी सिद्धान्त के अनुसार ही प्राकृतिक चिकित्सक सब उपचार करता है। एनीमा, चारों प्रकार के स्नान, उपवास फलाहार ये सभी शरीर में एकत्रित विष को दूर करने में सहायता देते हैं।

इसमें कोई केस शायद ही कभी बिगड़ता हो, यों भवितव्यता की बात दूसरी है। यदि शरीर में जीवनीशक्ति शेष है तो रोग निश्चय ही दूर हो जायगा, हां समय अधिक लग सकता है, कठोर संयम खाने पीने का परहेज, रहन सहन बदलना पड़ता है, पर आराम भी होता है। और cure यानी 'रोगमुक्ति' वास्तव में इसी पद्धति द्वारा संभव है। उपसर्ग या Symptom को दबाना ही इस पद्धति का उद्देश नहीं। यह तो सारे रोगों के मूल पर

[शेष ८५ पृष्ठ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय

बसन्त की सफाई

बसन्त का आगमन शुष्क वृक्ष और लताओं में नवपल्लव विकसित करके होता है। प्रकृति में सब कहीं उल्लास और आनन्द की मनभावनी झलक दृष्टिगत होती है। फूलों में सुन्दर पंखड़ियों के साथ-साथ सुवास का संचार होकर बसन्त के शुभागमन की सूचना मिलती है। प्रायः प्रत्येक प्राणधारी में नया उल्लास, नई उमंग, नया जोश देखाई देता है।

इधर तो यह परिवर्तन होता है उधर शिशर के अन्त के साथ ग्रीष्म का आगमन होता है। बसन्त को शीत और ग्रीष्म का सन्धि-काल समझना चाहिए। इसमें न तो बहुत गरमी ही रहती है और न शीतलता ही, इसी लिए यह समम यों ही सुहावना होता है परन्तु कमजोर स्वास्थ्य वालों के लिए आनन्द और सुख की जगह जुकाम, निमोनिया ब्रोंकाइटिस जैसे रोग उत्पन्न करनेवाला बनकर उनके उल्लास और सुख का अपहरण-कर्त्ता बन जाता है। इसमें ऋतु का उतना दोष नहीं है जितना अपने आचरण, खान-पान और रहन-सहन का। जिनका रक्त बलशाली होता है, जिनका आहार शरद और शीत ऋतु में उचित रूप का रहता है, उनके लिए बसन्त नवजीवन का सन्देश लाता है।

बसन्त ऋतु हमें यह सूचना भी देता है कि आगे बहुत खराब मौसिम—गरमी का मौसिम आने वाला है, उसमें मच्छड़ों का आक्रमण और गरमी का प्रकोप रात को नींद भर सोने न देगा। आप लोग सावधान हो जायँ। उसका सन्देश होता है कि जरा अपने अन्दर की सफाई कर लीजिए जिसमें आप को ऐसी शक्ति मिल जाय कि सुख पूर्वक आगे आनेवाले मौसिम में जीवन बिताया जा सके। कुछ असावधान लोगों में वह सफाई का काम स्वयं करके सावधान लोगों को अन्दरूनी सफाई के लिए सावधान कर देता है। प्रकृति की ओर से जो 'सफाई का काम होता है उसमें कुछ रोग या दुख झेलना ही पड़ता है। यदि मनुष्य चैतन्य हो जाय और अन्दर की सफाई अपने आप कर दे तो जीवन में आनन्द रहता है और सफाई के काम में भी कुछ कष्ट नहीं होता।

हमारे पुराने रीति-रिवाज और धार्मिक कृत्य भी स्वास्थ्य का ही सन्देश लेकर आते हैं और हमें अन्दरूनी सफाई का पाठ पढ़ा जाते हैं। बसन्त में नवरात्रि यही शुभ-सन्देश लाता है। नवरात्रि में नव दिन के व्रत का विधान है। यह नव-जीवन दायक विधान है। इस नवरात्र में शुरू में ३ दिनों का सन्तरे का रस जल और नीबू पर रह कर व्रत रख लिया जाय। प्रति दूसरे घंटे एक एक गिलाश हलका गरम जल दिया जाय और प्रति दिन एनीमा ले लिया जाय उसके बाद ३ दिन तरकारियाँ ली जाय और शेष तीन दिन कुछ सूखे मेवे जैसे खजूर किशमिश और कुछ दूध तथा सन्तरे पर बितावे। कुछ तरकारिया जैसे लौकी, पालक सलगम आदि उबाल कर ले। एनिमा प्रति दिन लेता रहे। इस व्रत में कोई कष्ट नही होता। हलका शारीरिक और मानसिक परिश्रम बराबर किया जा सकता है। व्रत काल में भी आनन्द रहता है, चित को शान्ति और प्रसन्नता मिलती है व्रत के बाद रक्त सबल और शक्तिशाली हो जाता है, शरीर की रोग निवारक शक्ति बढ़ जाती है। कम से कम छ मास तक तो इस सफाई का असर शरीर में अवश्य ही रह जाता है और ग्रीष्म की गरमी और बरसात की बरसाती हवा दुखदायक नहीं होती बल्कि एक मौसिम चीज बन जाती है। मस्तिक की जड़ता दूर होती है और चेतन्यता बढ़ती है।

इसी व्रत का जब नाटक किया जाता है अर्थात् दिखाया तो यह जाता है कि हम उपवास कर रहे है और ठूस ठूस कर सिंघाड़े का हलुआ, आलू,

[शेष ८५वें पृष्ठ में]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पढ़िये ! लाभ उठाइये !!

सुन्दर, स्वस्थ और सुखी जीवन के इच्छुकों को ये पुस्तकें पढ़नी चाहिए

(१) रोगों की अचूक चिकित्सा (तृतीय संस्करण) : श्री जानकीशरण वर्मा, बी० ए० ... ३)
(२) सरल शरीर विज्ञान : श्री जानकीशरण वर्मा, बी० ए० ... ... १।।)
(३) प्राकृतिक चिकित्सा : श्री केदारनाथ गुप्त, एम० ए० ... ... २।)
(४) मठा उसके गुण तथा उपयोग (परिवर्द्धित संस्करण) : श्री महेन्द्रनाथ पांडेय ... ।।)
(५) दूध ही अमृत है : श्री हनुमान प्रसाद गोयल ... ... १।।)
(६) स्वास्थ्य के नुस्खे : 'जीवन सखा' कार्यालय ... ... ≡)
(७) क्या और कैसे खायें : डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह ... ... ।=)
(८) ब्रह्मचर्य ही जीवन है : श्री स्वामी शिवानन्द ... ... १)
(९) सचित्र हठयोग : श्री स्वामी शिवानन्द ... ... १।)
(१०) कब्ज या कोष्ठबद्धता : डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह ... ... ।।)
(११) फलाहार और फल-चिकित्सा : श्री नारायण प्रसाद अरोड़ा ... ... १।)
(१२) आँखों का अचूक इलाज : श्री महेन्द्रनाथ पांडेय ... ... २)
(१३) आरोग्य साधन : महात्मा गाँधी ... ... ।।)
(१४) नवीन चिकित्सा विज्ञान (जल-चिकित्सा) श्री लूई कूने ... ... ३।।)
(१५) बच्चों की रक्षा : श्री लूई कूने ... ... ।=)
(१६) मैं निरोग हूं या रोगी : श्री लूई कूने ... ... ।=)
(१७) उपवास-चिकित्सा : बरनर मैकफ़ेडन ... ... १=)
(१८) स्वास्थ्य के लिये शाक तरकारियाँ : श्री महेन्द्रनाथ पांडेय ... ... १।।)
(१९) हम सौ वर्ष कैसे जीवें : केदार नाथ गुप्त, एम० ए० ... ... १)
(२०) सूर्य-नमस्कार : श्री भगवती प्रसाद पांडे, बी० ए० ... ... १)
(२१) शाक और उनके गुण : श्री नारायणप्रसाद अरोड़ा ... ... ।।।)
(२२) स्वास्थ्य और जल चिकित्सा : प्रिन्सपल केदारनाथ जी गुप्त ... ... १।।)
(२३) आहार ही औषध है : डा० एल० एन० रतरा ... ... १।)
(२४) फलाहार चिकित्सा : श्री महेन्द्रनाथ पांडेय ... ... २।)
(२५) Nature Cure by H. Lindlahr, M. D. ... 6 0
(२६) Practical Nature Cure by Dr. K.L. Sharma, N. D. ... 5 0
(२७) Fasting Cure by Dr. L. Sharma N. D. ... 0 6
(२८) Drugless Healing by L. Dr. Kameshwar Sharma, M.A., N.D. 0 8
(२९) Food-de-Medicine by Dr. L. N. Ratra, H.M.B. ... 2 0

स्वास्थ्य सम्बन्धी पुस्तकें मिलने का पता :—

मैनेजर, स्वास्थ्य ग्रन्थ-भंडार, लूकरगंज, इलाहाबाद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Reg. No. A-172

उत्तरी भारत में प्राकृतिक चिकित्सा का प्रमुख केन्द्र

'प्राकृतिक स्वास्थ्य गृह' प्रयाग

जहाँ अब तक न जाने कितने कथाकथित असाध्य रोगों से पीड़ित होने वाले रोगियों ने पहुँच कर अपने को नीरोग और स्वस्थ बना लिया। यही कारण है, जो यह चिकित्सा केन्द्र लगातार उन्नति करता जा रहा है।

यदि आप किसी भयानक रोग से पीड़ित हो रहे हैं, डाक्टरों और वैद्यों की दवा से निराश हो चुके हैं, तो आप फौरन यहाँ पधारें या पत्र देकर चिकित्सा के सम्बन्ध में विवरण प्राप्त करें।

यहाँ इन रोगों की सफलता पूर्वक चिकित्सा होती है—साधारण दुर्बलता, स्नायु दौर्बल्य, सभी तरह के चर्म रोग रक्ताभाव पुराना जुकाम, खाँसी, कब्ज, प्लुरिसी, अनिद्रा, दमा, मृगी, रक्त-चाप, मधुमेह मुटापा, मंदाग्नि, संग्रहणी, गठिया, स्नायु-शूल (scitica) उदर-शूल (colic pain), पथरी (gallstone troubles), गुर्दे की बीमारी विषाक्त फोड़ा नासूर, भगंदर, तथा विभिन्न प्रकार के स्त्री रोग जैसे—मासिक स्राव न होना या बहुत अधिक होना, स्राव के समय दर्द होना, प्रदर—इत्यादि इत्यादि।

यहाँ जिस चिकित्सा विधि से रोगी का इलाज किया जाता है उनमें यौगिक क्रियायें, आसन, प्राणायाम, मालिश, सूर्य-रश्मि-चिकित्सा, जल-चिकित्सा, मिट्टी तथा वाष्प-चिकित्सा, आहार चिकित्सा, उपवास, मानसोपचार आदि सम्मिलित हैं।

स्वास्थ्य गृह में भरती होने के नियम—(१) इस स्वास्थ्य गृह में स्त्री और पुरुष दोनों तरह के रोगी भर्ती किये जाते हैं। किन्तु संक्रामक रोगों से पीड़ित होने वाले तथा चारपाई छोड़ने में असमर्थ रोगियों के रखने का प्रबन्ध नहीं है। (२) रोगियों के रहने उपचार तथा सेवा-शुश्रूषा का प्रबन्ध संस्था की ओर से किया गया है (३) रोगियों से चिकित्सा फीस ५०) प्रति मास ली जाती है, जिसमें मकान का किराया और इलाज की फीस दोनों शामिल हैं।

विशेष जानकारी के लिए नीचे लिखे पते से पत्र व्यवहार करें :—

संचालक

प्राकृतिक स्वास्थ्य गृह

११, लूकरगंज, इलाहाबाद।

Printed at the Mission Press, Allahabad,
Published by Dr. Budh Ram ... 11, Lookerganj, Allahabad.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन सखा

शारीरिक, मानसिक और नैतिक स्वास्थ्य का पथ-प्रदर्शक

इस अंक के कुछ विशेष आकर्षण

१. बापू के साथ दो दिन—डा० कुलरंजन मुकर्जी
२. उकवत—डा० विट्ठलदास मोदी
३. सन्तानोत्पत्ति—डा० एस० सिंह
४. मैं प्राकृतिक चिकित्सक कैसे बना?—डा० जयशंकर नंदी

तथा अन्य उपयोगी लेखादि

जनवरी

नववर्षांक

वार्षिक चन्दा

इस प्रति का

तथा सम्पादक—डॉ० बालेश्वरप्रसाद सिं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

१—सूर्य-रश्मियों का मानव-शरीर पर प्रभाव १
२—औद्योगिक चिकित्सा (दस्तकारी से इलाज) में कताई की जगह—श्री प्यारेलाल २
३—उकवत (एक्जिमा)—डा० विट्ठल दास मोदी, संचालक आरोग्य मंदिर, गोरखपुर ३
४—मृत्यु को मार भगाने का एक उपाय—प्रोफेसर रामचरण महेन्द्र, एम० ए० ७
५—सन्तानोत्पत्ति—डा० एस० सिनहा एन० डी० डी० वाई० ६
६—आकर्षक व्यक्तित्व—श्रीधर पाठक बी० ए० एल० एल० बी० १२
७—स्वाभाविक सन्तति निरोध—श्री परमेश्वरी लाल गुप्त १४
८—बुढ़ापा न आने दीजिए—श्री केदारनाथ गुप्त, प्रिन्सिपल अग्रवाल विद्यालय, प्रयाग १७
९—एक रोगी की कहानी उसी की जबानी—श्री दौलत सिंह, छावड़ा गुजरात (पंजाब) १६
१०—मैं प्राकृतिक चिकित्सक कैसे बना ?—डा० जटाशंकर नन्दी एन० डी, एम० एन० एस० ए० २१
११—डायबिटीज—श्री महेन्द्रनाथ पाण्डेय, आयुर्वेदय विशारद् २६
१२—सूर्यामृत—श्री महेशेन्द्र कमलेश श्रीवास्तव बी० ए० ३८
१३—महात्मा गांधी के साथ दो दिन—डा० कुञ्जरंजन मुकर्जी, कलकत्ता ४२
१४—स्त्रियों के व्यायाम पर एक दृष्टि—श्री व्रजमोहन मिहिर ४४
१५—मांस-पेशियों का रासायनिक परिवर्तन—श्री लेखक कृष्णजीवन त्रिवेदी, तृतीय वर्ष, आयुर्वेदिक कालेज पटना ४६
१६—हम अँधकार में क्यों—श्री शारदा, प्रसाद गुप्त ५०
१७—सलाद—श्री गंगा प्रसाद गौड़ 'नाहर' ५२
१८—सर्वोत्तम चिकित्सा-प्रणाली कौन सी है ?—डा० युगलकिशोर चौधरी अग्रवाल एन० डी० ५४
१९—गर्भ की रक्षा—डा० इन्दुमती सिन्हा ५७
२०—एलोपैथिक हास्पिटल उर्फ 'कच्चो जेल'—श्री धूली लाल बोहरा, हेडमास्टर, गवर्नमेन्ट स्कूल, चौथ का बरवाड़ा, जयपुर स्टेट ५६
२१—टहलना—श्री जानकी शरण वर्मा ६१
२२—सम्पादकीय ६४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Reg. No. A-172

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्

NATURE ONLY HEALS

जीवन सखा

सम्पादक

डा० वालेश्वरप्रसाद सिंह

वर्ष १२]   जनवरी १९४७   [अङ्क १

सूर्य-रश्मियों का मानव-शरीर पर प्रभाव

धूप-स्नान से शरीर के रक्त में होमोग्लोबिन (लौह) की मात्रा २ प्रतिशत बढ़ जायगी । इसके लिए आपको लौह-प्रधान पदार्थ या अन्य, प्रकार के भोजन की आवश्यकता न पड़ेगी । यह चमत्कार एलोपैथी-प्रणाली या अन्य किसी चिकित्सा-प्रणाली के अन्तर्गत कोई दवा नहीं दिखा सकती ।

धूप-स्नान से शरीर में एक इतना प्रभावोत्पादक कृमि-नाशक गुण उत्पन्न होता है, जो कि औषधि-प्रणाली के लिए सर्वथा अज्ञात ही है—उसकी किसी भी कृमि-नाशक दवा में इतना प्रभावोत्पादक गुण कभी नहीं पाया जा सकता । फिर इसके लिए दवाइयों की शीशियाँ, बोतलें क्यों खाली की जायं ?

त्वचा के नीचे जो तत्व पहले से ही विद्यमान है उसे सूर्य की किरणें तत्काल विटामिन 'डी' में परिणत कर देती हैं । फिर पैसे खर्च करके विटामिन की टिकिया खाने की क्या जरूरत ? शरीर में चूने की कमी के कारण होने वाले रोगों का इलाज करने में एलोपैथ चिकित्सक असफल होते हैं क्योंकि वे गोलियों के सहारे शरीर में चूना (कैलशियम) पहुँचाने का प्रयत्न करते हैं । यह तो कीलें निगल कर शरीर में लोहे की कमी की पूर्ति करने के समान है ! डाक्टर लोग सूर्य-रश्मियों के गुण को जानते ही नहीं या जानते भी हैं तो रोगों का इलाज करने में उसे भूल जाते हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

औद्योगिक चिकित्सा (दस्तकारी से इलाज) में कताई की जगह

श्री प्यारेलाल

कताई के कई फायदे हैं। औद्योगिक चिकित्सा में भी इसका फायदा काफी दिलचस्प है। इसकी एक मिसाल एक भाई देते हैं, जो खुद बीमार हैं और गवर्नमेण्ट अस्पताल, मदुरा, के आर्थोपेडिक वार्ड में रीढ़ की हड्डी की तकलीफ का इलाज करवा रहे हैं। वे लिखते हैं :—

"कौमी हफ्ते (राष्ट्रीय सप्ताह) में मैं बिस्तर पर पड़ा था, तो भी मैंने यज्ञ के तौरपर तकली पर कातना शुरू किया। दो और बीमार भी खिंच आये। और जो तकलियाँ हमारे पास थीं, उनपर हमने बारी-बारी से काता। पिछले साल भी जब मैं आयुर्वेदिक आश्रम में इलाज करवा रहा था, तो कौमी हफ्ते और गांधी-जयन्ती के हफ्ते में मैंने यही सब किया था। उस वक्त भी कुछ बीमार साधु और आश्रम के कुछ लोग यज्ञ में शामिल हुये थे। हम कुल १७ के करीब थे। और ज्यादातर लोगों के पास तकलियाँ थी। वे उसी वक्त बनाई गई थीं। जो सूत काता गया; वह हमने बतौर चन्दे के कस्तूरबा-फण्ड में भेज दिया। इससे मेरा हौंसला बढ़ा। जब मैंने देखा कि इस दफा हमें देखकर दिन-ब-दिन ज्यादा मरीज कातने की तरफ खिंच रहे हैं, तो मैंने बाँस और ठीकरीसे तकलियाँ बनानी शुरू कर दीं। मई, सन् '४६ में तकरीबन् १२ मरीजों ने, जो टूटी टाँगों और रीढ़ की हड्डियों की वजह से बिस्तर पर पड़े थे, ३ गुण्डियाँ कातीं। दूसरे हफ्ते के खतम होते-होते कुल ३० तकलियाँ चलने लगीं और दोनों हफ्तों को मिला कर कुल २४ गुण्डियाँ काती गई। वे मैंने अखिल भारतीय चरखासंघ को उन चार लोगों की मेम्बरी की फीस के रूप में भेज दीं, जिन्होंने सबसे ज्यादा काता था।

"यह एक सरकारी अस्पताल है, जिसमें ८०० बीमार हैं। इसमें से मेरे वार्ड में ७५ बीमार हैं। यह आर्थोपेडिक वार्ड है, जिसमें टूटी हुई हड्डियों और हड्डियों के तपेदिक वगैरह का इलाज किया जाता है और बीमारों को महीनों तक कई दफा बरसों तक, बिस्तर पर रहना पड़ा रहता है। आजकल के कातने वालों में से तिहाई हिस्सा बच्चे हैं। ऐसा पाया गया है कि दूसरी चीजों के सिवा कताई में मरीज को चंगा करने की भी शक्ति है। बीमारों को एक ऐसा काम मिल जाता है, जो उन्हें अच्छा लगता है। वे अपना दर्द और फिक्र भूल जाते हैं। इतनी बात का ध्यान जरूर रखता हूँ कि बीमार जोश में आकर कहीं अपनी ताकत से ज्यादा काम न कर लें। हाल ही में आँखों के वार्ड का एक मरीज हमारे साथ इस काम में शामिल हो गया है।"

आखिर में लेखक पूछते हैं कि क्या इस किस्म के काम को एक अस्पताल में प्रोत्साहन देना ठीक होगा? और जो सूत निकले उसका अच्छे से अच्छा इस्तेमाल क्या हो सकता है?

पश्चिम में डाक्टर लोग इस बात को आम मानने लगे हैं कि औद्योगिक चिकित्सा मरीज के अच्छे होने में बड़ी मदद देती है, और कुछ अस्पतालों में, खास कर अमेरिका में, यह इलाज का एक जरूरी हिस्सा बन गई है। हिन्दुस्तान में अभी तक इसको अपनाया नहीं गया। जो भला करने वाली मजलिसें बीमारों के फायदे में दिलचस्पी लेती हैं, उन्हें इसको ज्यादा रिवाज देना चाहिये और अस्पताल चलाने वालों को भी इस इलाज के तरीके को बढ़ावा देना चाहिये। ये लोग कपास, कातने, तुनाई करने वगैरा के साधन और हुनर की तालीम देने के जरिये मुहैया करने में मदद दे सकते हैं। जितना सूत काता जाय, वह खैरात की संदूकची में डाल दिया जाय। इससे या तो अस्पताल के लिये सच्ची खादी खरीदी जाय और अगर सूत काफी है, तो अस्पताल के लिये कपड़ा बुनवा लिया जाय। अगर बीमार अपने उत्साह का असर अपने रिश्तेदारों और अपनी सेवा करनेवालों पर भी डाल सकें, तो वे यह महसूस करेंगे कि बीमारी से अच्छा होने का समय बेकार नहीं गया, बल्कि एक कीमती सेवा में लगा है।

('हरिजन' से)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उकवत (एक्जिमा)

डा० विट्ठल दास मोदी, संचालक, आरोग्य मंदिर, गोरखपुर

श्री मदनलाल जी जब अपने रोगों की कहानी कह चुके तो मैंने उनके उकवत (एक्जिमा) की ओर इशारा करके कहा—"इसे क्यों पाले हुए हैं, इसपर कोई मरहम लगा लेते तो अच्छा हो जाता।" मदनलाल जी जैसे इस सवाल के जवाब के लिए तैयार ही बैठे थे। छूटते ही बोले, "मरहम क्या लगता यदि किसी को मरहम ने लाभ किया हो तब तो लगाऊं। आज से दस वर्ष पहले मैं बम्बई में दलालो का काम करता था और मुझे लखपतियों, करोड़पतियों के यहां बराबर आना जाना पड़ता था। उनमें से कितनों ही के एक्जिमा था। आपने अभी जो मुझसे प्रश्न किया है ठीक वही प्रश्न मैं भी उनसे करता था। उनमें से अधिकांश का यही जवाब होता कि अमुक चर्म विशेषज्ञों की दवा तो महीनों खा-लगा चुका हूं। रुपये दो चार दस हजार भी लगें तो कोई बात नहीं, तुम्हीं कोई ऐसा उपाय बताओ कि यह रोग चला जाय। उनका यह जवाब सुनकर एवं उनके मुख की करुणा देखकर मैं चुप रह जाता। समझ जाता कि जब रुपये खर्चने वाले का यह रोग नहीं जा रहा है तो मुझ कौड़ी वाले का यह रोग कैसे जायगा? और मैं इस रोग को दवा के जरिये अच्छा करने का दावा करने वालों के जाल से सदा बचता रहा।"

पाठक, यह बात नहीं है कि दवा से किसी का उकवत अच्छा नहीं होता। होता है पर महज कुछ समय के लिए। महीने दो महीने अथवा साल दो साल पर वह फिर मुंह दिखाता है और फिर किसी दवा का दबाव पाकर अंदर चला जाता है? फिर आने के लिए। ऐसा क्यों है? आप आगे बढ़ते चलिए आपको स्वयं ज्ञात हो जायगा।

उकवत के लक्षण

विषय पर और आगे बढ़ें। आपको उकवत से परिचित कराने से पहले उसके लक्षण को बता देना जरूरी आप जानते भी हों तो भी लक्षण दुहरा देने में कोई हर्ज है। नहीं है। आयुर्वेद में उकवत को कुष्ट के अंतर्गत माना है। पर इससे घबराने की बात नहीं है क्योंकि आयुर्वेद में त्वचा के और भी अनेक छोटे-छोटे रोगों को इसी श्रेणी में रखा गया है। उकवत अधिकतर कानों के पास, गरदन पर, तथा अंगुलियों में होता है पर यह शरीर के किसी भी अंग में, अनेक अंगों में मूंग की दाल बराबर से लेकर इंचों जगह घेर सकता है। उकवत में त्वचा जरा लाल सी रह सकती है और कड़ी रुखड़ी हो सकती है एवं सूज जा सकती है। रोग की उग्रता में रोग के स्थान पर जलन एवं खाज हो जाती है। कभी-कभी वहाँ से कुछ द्रव से भी सरने लगता है अन्यथा उकवत सूखा ही होता है, चमड़ी छिलती रहती है और पर्त उधड़ उधड़ कर गिरती रहती है।

मल-मार्गों में त्वचा का स्थान

प्रकृति द्वारा प्रदत्त हमारे शरीर के मल निष्कासन के जो मार्ग हैं—मल-मार्ग, मूत्र-मार्ग, श्वास-मार्ग, एवं त्वचा—उनमें त्वचा मुख्य है। यह पसीने द्वारा शरीर की गंदगी दूर करने में हर समय लगी रहती है। गर्मी के दिनों में इसका कार्य अधिक तीव्र हो जाता है पर जाड़े के दिनों में भी रुका नहीं रहता और जिसकी त्वचा को आवश्यकता से अधिक काम नहीं करना पड़ता उनकी त्वचा स्वच्छ, चिकनी, एवं ओज पूर्ण रहती है। कई चिकित्सकों को तो त्वचा का इतना अच्छा ज्ञान होता है कि उसे देखकर वे शरीर के अंदर की हालत का पता लगा लेते हैं। संसार-प्रसिद्ध प्राकृतिक-चिकित्सक फादर नीप के पास जब कोई रोगी आता तो वे केवल त्वचा को देख कर रोग का निदान करते थे, कह देते कि "बेटे खुदा के दिये कोट से तुमने बहुत काम लिया है, तुम्हारा रोग जाने में कुछ दिन लगेंगे।" अथवा वे त्वचा देखकर समझ जाते कि अमुक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोगी शीघ्र स्वस्थ होगा। वस्तुतः कई बार हम अन्य मल-मार्गों का कार्य भी त्वचा से लेते हैं। यही कारण है कि कइयों के पसीने से बहुत बुरी और कभी कभी पेशाब की सी बू आती है।

सचमुच यदि अन्य मल-मार्गों से ठीक काम लिया जाय अर्थात् यदि पेट ठीक तरह साफ होता रहे, पानी उचित मात्रा में पिया जाय जिससे कि पेशाब साफ होता रहे, घंटे दो घंटे शुद्ध वायु में टहलकर यदि फेफड़े को ठीक काम करने की सुविधा दी जाय तो त्वचा का काम हलका हो जाय तथा पसीने की बदबू चली जाय एवं त्वचा पर कोई रोग न हो।

रोग की जड़ ?

शरीर में इकट्ठी अतिरिक्त गंदगी को जब त्वचा पसीने द्वारा नहीं निकाल पाती तो उस पर अनेक रोग होते हैं। त्वचा द्वारा निकलता हुआ विष त्वचा पर जलन, ददोरे, दाद, सेहुआ, मुहांसे, उकवत आदि अनेक रोग पैदा करता है जिनमें उकवत तभी पैदा होता है जब शरीर में गंदगी पुरानी होती है एवं उसकी जड़ गहरी होती है। रोग की जड़ गहरी तो रोग गहरा। अतः गहराई से बैठा हुआ उकवत कठनाई से ही जाता है और केवल मरहम द्वारा उकवत अच्छा करने की कोशिश करने वाले सज्जन पेड़ को खतम करने के लिए पेड़ की जड़ को छोड़ कर पेड़ के पत्ते काटने वाले की तरह उपहासास्पद बनते हैं। और यदि वे उकवत को ऊपर से बंद करने, शरीर की गंदगी को निकालने से रोकने, में सफल भी हो जाते हैं तो शरीर अपनी गंदगी निकलने का यह मार्ग छोड़कर दूसरा मार्ग पकड़ता है और शरीर के अपनी गंदगी निकलने की इस नई रीति का नाम फिर कोई दूसरा रोग ही पड़ता है। फिर इस दूसरे रोग की चिकित्सा होती है और उसको दबा देने के बाद वही गंदगी किसी तीसरे रोग के रूप में प्रकट होती है।

रक्त को स्वच्छ कीजिये

अतः उकवत से मुक्ति पाने अथवा किसी भी रोग से मुक्ति पाने का उपाय है, शरीर की सफाई, रक्त की सफाई, यदि रक्त की गंदगी निकाल दी जाय तो चाहे कोई भी रोग क्यों न हो, वह कितना ही जीर्ण क्यों न हो जरूर जायगा और यदि रक्त शुद्ध रखा जाय तो फिर किसी भी रोग के होने का डर नहीं रहेगा। यहां मैं रक्त को साफ रखने की नहीं रक्त साफ करने की विधि बताऊंगा और आप दोनों की विधि जान जायगे।

वायु का उपयोग

तो रक्त-शुद्धि के लिए आवश्यक है कि हमारे मल मार्ग ठीक काम करें। तब हम अपने शरीर में नित्य पैदा होने वाली गंदगी निकाल सकेंगे पर पुरानी गंदगी निकालने के लिए हमें इन मार्गों को उचित सहारा देना होगा। उचित सहारे का मतलब यह है कि हम अधिक से अधिक शुद्ध वायु में रहें। जिनके सारे शरीर पर उकवत हो रहा है है अथवा जिनके शरीर पर बड़े-बड़े चकत्ते पड़ गये हैं, अथवा जिनका उकवत बह बहकर उन्हें कष्ट दे रहा है, उन्हें तो कुछ दिन के लिए शहर की दूषित गंदी नालियों एवं धुयें की बदबू भरी हवा से दूर ही, शहर के बाहर अथवा किसी साफ सुथरे गांव में रहना चाहिए एवं कपड़ों का उपयोग कम से कम करना चाहिए। यदि कपड़े पहने जायं तो जाड़े के बचाव के लिए ही। मोजे, कोट, पैंट, नेकटाई की अँधेरी कोठरी में अपने को बंद करके उकवत से मुक्ति पाने की उम्मीद करना व्यर्थ है।

जल का उचित प्रयोग कीजिये

पानी ढाई-तीन सेर रोज जरूर पीना चाहिए जिससे कि पेशाब साफ होता रहे और पानी का उपयोग शरीर को साफ करने के लिए भी खुलकर करना चाहिए। गरमी में दिन में दो तीन बार नहाना चाहिए। और नहाने के बाद पहले खुले हाथ से रगड़ रगड़कर शरीर को खूब गरम बना लेना चाहिए और नहाने के बाद शरीर को तौलिये से पोंछकर शरीर का पानी स्वयं सूखने देना चाहिए। जाड़े के दिनों में साधारण स्नान के अलावा सूर्योदय के पहले ही शौचादि से निवृत्त होकर शरीर के एक एक अंग को ठंडे पानी से धोना चाहिए। इसके लिए पहले एक पैर को थोड़े पानी से धोकर फिर उसे इतना रगड़ना चाहिए कि पानी बिल्कुल सूख जाय फिर दूसरा पैर इस तरह साफ करना चाहिए। फिर दोनों हाथ तब पेट और छाती फिर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पीठ। पीठ के लिए तौलिया का उपयोग हो सकता है। अंत में सिर, मुंह को पानी से धोकर सिर को तौलिये से पोंछकर एवं मुंह को हाथों से रगड़ कर पानी सुखा लेना चाहिए। केवल इस एक विधि के प्रयोग से मुहांसे, सेहुआं, एवं खाज चली जायगी। एक्जिमा के रोगी शरीर पर जहां एक्जिमा हो उसे रगड़ने से बचावें।

नदी, तालाब के निकट रहने वालों को स्नान की एक बढ़िया विधि बताई जा सकती है। वह यह है कि धूप निकलने पर तालाब में खूब नहाकर बाहर रेती में जाकर लेटना या टहलना चाहिए और शरीर पर का पानी सूखने एवं उस पर धूप लगने देनी चाहिए। बदन गरम हो जाने पर फिर कुछ ही देर स्नान करना चाहिए। और फिर धूप लेनी चाहिए। इस प्रकार तीन चार बार जल स्नान एवं धूप-स्नान किया जाय। यह स्नान रोज नहीं तो सप्ताह में दो तीन बार भी किया जा सके तो लाभ बहुत शीघ्र हो। जब कभी उकवत में जलन हो उस नारियल का तेल लगाना चाहिए। इससे त्वचा मुलायम रहेगी।

पेट साफ रखिये

पेट हमेशा साफ रहना चाहिए। इसके लिए अधिक फल एवं तरकारियों का प्रयोग करना चाहिए। इस पर भी यदि काम न चले तो एनिमा का प्रयोग करना चाहिए। कुछ दिन के एनिमा के प्रयोग से जब पुराना मल साफ हो जायगा तो आंतें स्वयं काम करने लगेंगी। इस बीच आंतों को सबल बनाने के लिए कोई कसरत करनी चाहिए। टहलना आंतों को सबल बनाने वाली बढ़िया कसरत है। इससे आंतें सबल होने के साथ-साथ शरीर के बाहरी एवं भीतरी सभी अंगों की हलकी हलकी एवं बढ़िया कसरत होती है। अतः उकवत के रोगी को शक्ति के अनुसार चार से आठ मील तक घंटे में चार मील की रफ्तार से नित्य अवश्य टहलना चाहिए।

भोजन

हमारा रक्त क्षार प्रधान है। उसमें अम्लता का भाग अति न्यून है। यदि हमारा भोजन क्षार प्रधान रहे तो रक्त का यह संतुलन बना रहे एवं उसमें अम्लता बढ़ने की, उसके गंदे होने की, नौबत ही न आवे। सभी तरह की तरकारियां, सभी फल एवं ताजा कच्चा दूध, क्षार कारक हैं। हरी पत्तीदार भाजियां एवं ठोस के बजाय रसीले फल क्षारमय हैं। सभी अन्न, चीनी, घी, तेल, उबाला दूध एवं दूध से बने पदार्थ अम्लकारक हैं। सभी मसाले एवं नमक प्रदाह कारक हैं। इनका उपयोग होने पर इनका कुछ भाग त्वचा द्वारा निकलता है जिससे इनके निकालते समय त्वचा में जलन उत्पन्न होती है। एवं उकवत में खाज चलती एवं बढ़ती है। अतः मसाला सर्वथा त्याज्य है। प्याज, अदरक, लहसुन, मूली जैसी तेज चीज का उपयोग भी इसी कारण उकवत के रोगी को न करना चाहिए अतः उकवत के रोगी को पहले कुछ दिन केवल क्षार कारक खाद्यों अर्थात् फल, तरकारियों पर ही रहना चाहिए। तीन से सात दिन रोगी केवल फल तरकारियाँ ले। दिन में केवल तीन बार खाय एवं एक बार में केवल एक ही चीज खाय। इस विधि से अधिक खाने की बुरी आदत से बचा जा सकेगा एवं जो खाय जायगा वह आसानी से पचेगा। फल-तरकारियों के बाद फल, दूध पर रहा जाय। तभी दूध लिया जाय जब दूध शुद्ध मिलने की आशा हो अन्यथा सबेरे फल एवं दोपहर, और शाम को चोकर सहित आटे की रोटी एवं बिना नमक की उबली हुई तरकारियाँ ली जायँ। पाठकों को बिना नमक की तरकारियाँ और रोटी खाने की बात कुछ कठिन सी प्रतीत होगी पर फलाहार एवं एनिमा के बाद जब पेट साफ हो जाता है, भूख जग जाती है एवं जिह्वा की मैल जब छुट जाती है तो यही भोजन अपने स्वाभाविक रूप में बहुत प्रिय एवं तृप्तिकारक प्रतीत होता है। आगे चल कर दोपहर एवं शाम को दो दो तोले शुद्ध नारियल का तेल अथवा चार चार तोले सूखे नारियल की गिरी ली जा सकती है। घी के मुकाबले में नारियल का तेल इसलिए अच्छा है कि वह क्षारकारक है एवं वेजीटेबुल की कृपा से घी मिलना असंभव भी हो गया है।

रोटी, सब्जी, नारियल एवं फल पर हफ्तों क्या महीनों रहा जा सकता है। कई लोग तो स्वयं इस भोजन को छोड़ना नहीं चाहेंगे। आगे इस भोजन में दूध, दही जोड़कर इसे संतुलित बनाया जा सकता है। जिन्हें दूध, दही की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुविधा नहीं है वे थोड़ी दाल ले सकते हैं। अथवा अच्छा हो कि वे कुछ मेवे लें।

कुछ कल्प

उकवत में गाजर एवं खरबूजे का कल्प विशेष लाभ करता है। इसके लिए गाजर अथवा खरबूजा दिन में तीन चार बार खाना चाहिए। और नित्य एनिमा लेकर पेट साफ करते रहना चाहिए। एक डेढ़ सप्ताह बाद केवल तीन या दो बार ही गाजर अथवा खरबूजा लिया जाय और उसके साथ पाव-पाव भर गाय का दूध। धीरे-धीरे बढ़ाकर दूध को मात्रा आधा सेर तक की जा सकती है। दूध सवेरे शाम कच्चा ही लेना चाहिए और दोपहर को गरम। दूध और गाजर अथवा खरबूजे का प्रयोग कई दिनों चल सकता है कोई हानि नहीं है। रोग जाने पर एवं जब इच्छा हो दोपहर को फल दूध के बदले रोटी-सब्जी ली जा सकती है एवं धीरे-धीरे साधारण संतुलित भोजन पर आया जा सकता है। खरबूजे के साथ दूध के प्रयोग पर कई लोगों को आपत्ति हो सकती है। मैं कितने ही रोगियों को खरबूजे के साथ दूध का प्रयोग कराने से प्राप्त अनुभव के आधार पर कह सकता हूँ कि इस प्रयोग से सिवाय लाभ के किसी को भी किसी प्रकार की हानि होने की कोई संभावना नहीं है।

धूप का प्रयोग

जल स्नान के साथ साथ धूप का प्रयोग बतलाया गया है। जो वह स्नान न लेते हों अथवा जो लेते हों वे भी धूप का प्रयोग नित्य करें। सूर्य सभी जीवों का प्राणदाता है एवं वह शरीर से गन्दगी निकालने में भी मदद करता है। धूप से पूरा फायदा उठाने के लिए नित्य पंद्रह बीस मिनट या आध घंटे प्रातः कालिक धूप में रहना चाहिए एवं सप्ताह में एक दो बार दिन के ग्यारह बजे से तीन बजे के अन्दर धूप में आध घंटे के करीब नंगे बदन रहना चाहिए जिससे कि शरीर से पसीना बह चले। इस समय सिर पर ठंडे पानी से भीगा तौलिया रखना चाहिए एवं बीच में थोड़ा गरम पानी पीते रहना चाहिए। पसीना बह चलने पर ठंडे पानी से खूब अच्छी तरह नहाना चाहिए। इस नहाने के बाद एक विशेष ताजगी एवं स्वच्छता का अनुभव होता है एवं दिमाग से उलझाव दूर होने का। इसे कोई साधारण स्वस्थ आदमी भी करके देख सकता है।

यह साधारण सा चिकित्सा-क्रम है और सस्ता भी जिस पर चल कर कोई भी अपने को उकवत से मुक्त कर सकता है। सस्ता पैसे के हिसाब से है पर मानसिक बल और दृढ़ता की तो जरूरत है ही, जिसके न होने की शिकायत गरीब अमीर किसी को न होनी चाहिए।

मिट्टी का प्रयोग

उकवत में मिट्टी का प्रयोग बहुत लाभकर साबित हुआ है। जिनको किसी खास जगह या एक दो जगह उकवत हो वे कोई भी साफ स्वच्छ मिट्टी ठंडे पानी में भिगोकर एवं लप्सी सी गीली करके आध इंच मोटी रोटी सी बनाकर उस स्थान पर किसी कपड़े की सहायता से बाँध दें। वह पट्टी एक घंटे तक उकवत पर रह सकती है और दिन में तीन चार बार बाँधी जा सकती है। रात को सोते समय बाँधी जाय तो घंटों अथवा रात भर बंधी रख सकते हैं। जिनके सारे शरीर पर भी जगह-जगह उकवत हो वे मिट्टी को खूब गीली करके सारे शरीर में लगा कर तथा धूप में रह कर सुखा लें। एवं मिट्टी सूख जाने के बाद अच्छी तरह स्नान कर शरीर साफ करलें। मिट्टी रोग के जहर को खींचती तथा जलन और खाज को तुरन्त बन्द करती है।

पर कुछ लोगों का उकवत इतना गहरा होता है, उसका विष इतना जड़ जमाये होता है कि इस चिकित्सा क्रम में महीनों लगे रहने पर ही वह जाता है। इस समय को कम या बहुत कम करने का साधन है—उपवास। ऊपर बतायें चिकित्सा क्रम के साथ यदि प्रति सप्ताह एक दिन का उपवास केवल जल पीकर किया जाय तो यह समय कम हो सकता है पर शीघ्र लाभ के लिए एक से तीन सप्ताह के उपवास की जरूरत हो सकती है। प्रायः इस लम्बे उपवास काल में ही उकवत चला जाता है और जिनका उकवत कष्टकर होता है वे तो उपवास की ओर विशेष आकर्षित होते हैं। उपवास आरंभ करते ही उकवत की खाज और जलन जानी शुरू हो जाती है पर लम्बा उपवास किसी उपवास विशेषज्ञ की देख रेख में ही करना चाहिए।

(शेष पृष्ठ ८ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मृत्यु को मार भगाने का एक उपाय

प्रोफेसर रामचरण महेन्द्र, एम० ए०

मनुष्य अपनी स्वाभाविक मौत से नहीं मरता, स्वयं अपनी अज्ञानता तथा मूर्खता से मरता है। प्रकृति की यह इच्छा कदापि नहीं कि संसार रोगों से पीड़ित रहे तथा मनुष्य दिन रात आधि व्याधि के चिंता सागर में डूबते उतराते रहें। हम स्वयं ही अपनी अज्ञानता के कारण अनेक रोगों के जन्म-दाता हैं। हम स्वयं ही अपने भूलों द्वारा अपने दिव्य स्वरूप को, उत्तम आरोग्य को और सुडौल शरीर को बिगाड़ डालते हैं। दुनियाँ में कोई भी ऐसी ताकत नहीं जो मनुष्य को उसकी इच्छा के विरुद्ध रोगी या निरोगी बना सकती हो।

अतः यदि हम अपनी आदतें सुधार कर नव-निर्माण का कार्य हाथ में लें, तो पुनः उत्फुल्ल कमल की भांति विकसित हो सकते हैं।

हम में से नब्बे प्रतिशत ऐसे व्यक्ति हैं जो प्रकृति के नियमों की अवहेलना कर रहे हैं। मौजूदा जीवन नकली बनता जा रहा है। हमारी आदतें अप्राकृतिक तथा दुराचार की ओर हैं। जीवन में जितनी ही कृत्रिमता आयेगी और जितना ही हम प्रकृति से दूर भागेंगे, उतनी ही सज़ा हमें मिलेगी। प्रकृति का अनुशासन कठोर भी है और सहजस्नेह-स्निग्ध भी। न्याय में वह क्षमा कभी नहीं करती, रियायत करना उसने नहीं सीखा है। जो जैसा, उसके साथ वैसा ही उसका व्यवहार है। यही कारण है कि सदाचारियों को वह परम प्यारी माता तथा दुराचारियों को पूरी राक्षसी जंचती है। प्रकृति का दण्ड हमें सुधारने के निमित्त है, और यदि हम उसका यह पवित्र हेतु समझ लें, तो पूर्ण स्वस्थ रहें और दीर्घजीवन के सुख लूटें। जिस जिस ने प्रकृति के नियमों की उपेक्षा की है, पछताया है और सज़ा भुगतता रहा है। जो अब भी अवहेलना कर रहे हैं, वे यौवन में ही मुर्दे बने हैं।

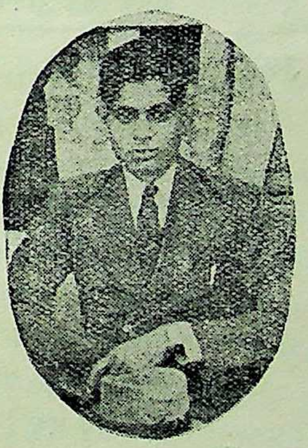

लेखक

प्रकृति ने मनुष्य को शिकारी बनाया था। अन्य जीवों की भांति वह दौड़ता भागता और अन्य पशुओं का आखेट करता था। उसके हाथ-पाँव रोजाना दस बारह घन्टे कार्य करते थे। उसे भागने के लिए पाँवों में शक्ति रखनी पड़ती थी, पशुओं से संघर्ष करने के लिये हाथों में ताक़त रखनी होती थी। जो व्यक्ति ऐसा न कर पाते थे, उन्हें मृत्यु के रूप में सजा मिलती थी। इधर उधर भागना, दौड़ना, चलना, फिरना, अपने आखेट की तलाश करना, फिर उसके पीछे मीलों तक दौड़े चले जाना—यह था मनुष्य का नित्य-क्रम। फिर, वर्षों पर वर्ष व्यतीत हुए। हम सभ्य बने। सुन्दर सुन्दर नगर बने और हम आज की स्थिति में पहुँच गए। आज हम पांवों से कितना कम कार्य लेते हैं यह सर्व विदित है। साइकिल ने तो हमारे पाँवों में जैसे बेड़ियाँ ही डाल दी हैं। दूकानों पर, आफिसों में, घर में हम बैठे रहते हैं और फिर बुरे स्वास्थ्य की शिकायत करते हैं। हमने प्रकृति से जैसे लड़ाई ठान ली है।

यदि आप अपने खोये हुए स्वास्थ्य, शक्ति, सौंदर्य को पुनः वापस लाना चाहते हैं, पेट के पुराने रोगों से पीड़ित हैं, बुढ़ापे को रोकना चाहते हैं, या मौत को मार कर दूर भगाना चाहते हैं तो थोड़ा सा टहलना शुरू कीजिए। चलना, फिरना, घूमना पाँवों से काम लेना, प्रारंभ कीजिए। चाहे दूसरे व्यायाम आप भले ही छोड़ दें, किन्तु इस व्यायाम—अर्थात् टहलने—को कदापि न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छोड़िये। आप चाहे जो व्यवसाय करते हों, चाहे पूरा दिन दूकान पर बैठे बैठे बिना हिले डुले व्यतीत कर देते हों, या अपने शरीर के किसी अंग विशेष के विकास के लिए चाहे जो दूसरी कसरत करते हों, पर चौबीस घंटे में कम से कम दो घंटे टहलने का नियम अवश्य रखिये।

मैं इस बात को स्वीकार करता हूँ कि अनेक ऐसे व्यायाम हैं, जो स्वास्थ्य तथा शक्ति के लिए अत्यन्त लाभदायक हैं किन्तु टहलने की बात ही निराली है। मैकफैडन साहब की राय है कि जो व्यक्ति स्त्री या पुरुष २४ घंटों में कम-से कम एक घंटा नहीं टहलता, या चलता फिरता वह पूर्ण स्वस्थ हो ही नहीं सकता।

बात यह है कि टहलने से मनुष्य के शरीर के प्रत्येक अंग (जिसमें आन्तरिक अवयव प्रमुख हैं) का थोड़ा बहुत हलका सा व्यायाम हो जाता है। उदर, हृदय तथा फेफड़ों पर टहलने का सबसे अधिक प्रभाव पड़ता है। जब मनुष्य शिकारी था, उसका पेट सबसे सशक्त था। उसमें पत्थर तक, हड्डियाँ तक हजम कर जाने की शक्ति विद्यमान थीं। अपने इस जङ्गली जीवन में ही उसने सब से अधिक आयु प्राप्त की थी।

चलने, फिरने से रक्त प्रवाहक यंत्रों में स्वास्थ्यप्रद गति उत्पन्न हो जाती है, रक्त साफ़, पुष्ट और तरोताजा हो जाता है। रंग रूप निखर आता है, मांस-पेशियाँ मज़बूत हो जाती है; हृदय की अच्छी कसरत हो जाती है; साफ़ रक्त से फेफड़े भी ताज़ा हो जाते हैं और शरीर के प्रत्येक अंग में स्फूर्ति और नवीन शक्ति का संचार हो जाता है।

बल, सौंदर्य, तथा स्वास्थ्य मुझे जीवन में सबसे प्रिय रहे हैं। इनकी प्राप्ति के नियमों को सोचते सोचते मुझे अनुभव हुआ है कि प्रातःकाल का टहलना ही सुन्दर बनने का सर्वोत्तम उपाय है। जो व्यक्ति स्वास्थ्य, बल, सौंदर्य प्राप्त करना चाहते हैं और मृत्यु को मार भगाना चाहते हैं उनसे मैं कहूँगा की हृदय में दृढ़ विश्वास रखकर टहलना प्रारंभ कीजिए।*

*प्रोफेसर महेन्द्र जी की "दीर्घ जीवन के रहस्य" नामक अप्रकाशित पुस्तक से। —सम्पादक

उकवत (एक्जिमा)

पृष्ट ६ का शेषांश

उपवास काल में उपवास के अनेक खतरे पैदा होते हैं अतः वह जानकार के सामने ही होना चाहिए पर तीन दिन का उपवास कहीं भी किया जा सकता है और तीन दिन का उपवास उकवत का तीव्र कष्ट कम करने के लिए काफी है।

उकवत के अन्य कारण

उकवत अग्निमांद्य, गठिया, मधुमेह, के उपसर्ग रूप में भी होता है। ऐसी दशा में उकवत उन रोगों के जाने के बाद ही पूरी तौर से जाता है। जिन बच्चों को मां का दूध कम मिलता है और जिन्हें बोतल का अथवा अस्त्र दूध पिलया जाता है उन्हें भी अकसर उकवत हो जाता है। ऐसे बच्चों के दूध की मात्रा कम करने तथा साथ में कुछ फल का रस अथवा फल खिलाने से उनका उकवत आसानी से चला जाता है।

श्री मदनलाल जी की की अधूरी कहानी पूरी सुनने को बहुत से लोग उत्सुक होंगे। मदनलाल जी को मंद ज्वर, पुराना आंव तथा उकवत भी। इन रोगों ने उनके शरीर को बहुत जीर्ण बना दिया था जिससे उनका वजन घटकर केवल एक मन दो सेर रह गया था। वे पहले दो रोगों की ही चिकित्सा कराने 'आरोग्य मन्दिर' (गोरखपुर) में आये थे। प्राकृतिक चिकित्सा में तो माना जाता है कि सभी रोग एक हैं और उन सबकी चिकित्सा भी एक है, अतः इन रोगों के जाने के साथ साथ उनका उकवत भी चला गया और उनका वजन १ मन दो सेर से बढ़कर एक मन बाइस सेर हो गया।

इसके अलावा प्राकृतिक जीवन उनके लिए स्वाभाविक हो गया है। इसकी सहायता से वे आगे बढ़ रहे हैं उनका एक पत्र देखिये।

"मेरा स्वास्थ्य उन्नत कर रहा है और मैं अनुभव कर रहा हूँ कि मैं अपने लक्ष्य के नजदीक पहुँच रहा हूँ।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन्तानोत्पत्ति

डा० एस० सिनहा, एन० डी०, डी० वाई

प्रत्येक व्यक्ति अपने माता-पिता से ही अस्तित्व ग्रहण करता है। 'जननी' और 'जनक' माता-पिता के ये दो पर्यायवाची शब्द इसी तथ्य के संकेतक हैं। जनन अथवा सन्तानोत्पत्ति की महत्व-पूर्ण क्रिया पर सृष्टि का रचना-क्रम अवलम्बित है। व्यक्तिगत अस्तित्व को कायम रखने के लिए पोषण तत्व अत्यन्त आवश्यक है। क्योंकि शरीर के समस्त महत्वपूर्ण परिवर्तन शरीर के अवयवों अथवा तन्तुओं का छीजन अनिवार्य रूप से होता है। इस छीजन की पूर्ति पोषण-तत्व से ही होती है। इस प्रकार हम सोचते हैं कि शरीर के समस्त अंगों अथवा अवयवों को परिपुष्ट, शक्तिसम्पन्न बनाए रखने, लम्बी आयु प्राप्त करने और स्वस्थ तथा नीरोग बने रहने के लिए पोषण-तत्व कितना आवश्यक है। हम यह भी देखते हैं कि यद्यपि किसी व्यक्ति विशेष का अवस्थानुसार शारीरिक शक्ति का ह्रास होने लगता और एक दिन ऐसा भी आता है जब कि उसकी आयु समाप्त हो जाती है—उसका जीवन-प्रदीप बुझ जाता है, फिर भी उस जाति कि शृंखला अटूट बनी रहती है—एक जाता है तो दूसरा आता है। समय रूपी सागर के तट पर जीवन की लहर उठती और गिरती रहती है लेकिन सन्तानोत्पत्ति की लड़ी सुदृढ़ तथा अटूट बनी ही रहती है। इस प्रकार व्यक्ति का अन्त हो जाने पर भी उस जाति का अन्त नहीं हो जाता। युग-युग से सृष्टि का यह कार्य इसी प्रकार अनवरत चलता आ रहा है।

सन्तानोत्पत्ति के कार्य को जारी रखने के लिए उत्तेजना (Stimuli) और ग्रहणशीलता (Susceptibility) की आवश्यकता होती है। इस क्रिया को पूर्णता प्रदान करने के लिए दो अन्य बातें भी आवश्यक हैं। इनमें से पहला तो है वीर्य (Sperm) जो सन्तानोत्पत्ति का कार्य सम्पादित करता है। और दूसरा है रजाणु जो शुक्राणु को ग्रहण करता और डिम्ब के विकास के लिए आवश्यक अवस्थाएं प्रस्तुत करता है। डिम्बाणु के जीवन का बीजारोपण करना नर का कार्य है और उसका पालन तथा पोषण करना नारी का। इनमें से पहला तो इच्छा और धारणशक्ति का प्रतीक है और दूसरा सजीवता तथा मनोवेग का। पिता संचालन तथा नियंत्रण करता है और माता उसे पालित तथा अनुप्राणित करती है; पिता उसे सज्ञान बनाता, सावधान करता है, और माता उसे फुसलाती और उसका लाड़ प्यार करती है। पति-पत्नी का पुनीत सम्बन्ध इन्हीं तत्वों—प्राण-शक्ति तथा कार्य-शक्ति, प्रणय तथा विवेक—के गठबंधन का प्रतीक है और यही तत्व जीवन संचरण के अविभाज्य अंग हैं—सन्तानोत्पत्ति के यही आधार-स्तम्भ हैं।

मानव-जाति के सर्वांग पूर्ण विकास के लिए मानसिक तथा शारीरिक शुचिता अनिवार्य रूप से आवश्यक है। स्वास्थ्य का यह तकाजा है कि अनुचित संयम या सहवास से अपने को रोक रक्खा जाय। इसलिए बच्चों को अश्लील या गन्दे विचार उत्पन्न करने वाली पुस्तकें आदि कदापि न पढ़ने देना चाहिए। नियम-विरुद्ध सुख-सहवास से पूर्णतया बचे रहने में ही नैतिक सुरक्षा तथा स्वास्थ्य निहित है। पूर्णता, (Integrity) शान्ति और सुख, ये सद्गुण अथवा सदाचार के वरदान हैं। अपावनता अधोगामिनी होती है यह अमिताचार अथवा असंयम एवं लम्पटता की जननी है। इसके सहयोगी सांसर्गिक रोग पतन तथा असामयिक मृत्यु के कारण बनते हैं कामुकता, व्यभिचार, और अनियमित विलासपूर्ण जीवन रोग-शोक, दुख दैन्य एवं नैराश्य से परिपूर्ण बन जाता है। शुचिता के नियम का अतिक्रमण अथवा उल्लंघन करने का दण्ड बहुत भयानक और छिन्न होता है।

विवाह के रूप में नर और नारी का पुनीत सम्बन्ध प्रकृति का एक नियम है जिसकी श्रेष्ठता नै

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कानूनी दोनों दृष्टियों से स्वीकार की गयी है। मनुष्य की तो बात ही अलग रही कुछ निम्न-वर्ग के जीवधारी भी प्रकृति के इस नियम का अपने जीवन में पालन करते हैं। वे नर और मादे के इस पुनीत सम्बन्ध का इतनी उत्तम रीति से पालन करते हैं कि उसे देख कर अपेक्षाकृत उच्चवर्ग के जीवधारी लज्जित हो सकते हैं। इस विषय पर विचार करना तथा हमें अपनी सामाजिक बुराइयों को समझना तथा इन्द्रियता जब अपने अप्राकृतिक इच्छाओं पर अंकुश रखना अत्यन्त आवश्यक है, ऐसा न होने पर ये हमें पतन के गर्त में घसीट ले जाने वाले हैं। कामेच्छा की भावना सभी में विद्यमान रहती हैं किन्तु इसका उपयोग नियम-विहित उद्देश्य से ही होना चाहिए। इसलिए माता-पिता का यह कर्त्तव्य है कि वे अपनी सन्तानों को नैतिक तथा बौद्धिक पहलुओं को सुदृढ़ तथा उन्नत बनाने, शरीर को स्वस्थ रखने के महत्व को समझावें। मस्तिष्क और शरीर को परिश्रमपूर्ण कार्य में संलग्न बनाए रखना कामेच्छाओं की अनावश्यक उत्तेजना बचाव का एक अचूक उपाय है। इस प्रकार मानव-जाति के मानसिक तथा बौद्धिक विकास के लिए शारीरिक स्वास्थ्य का महत्व एवं उपयोगिता सर्वथा स्पष्ट है।

शरीर की आवश्यकताओं को समुचित रीति से समझने के लिए मानसिक तथा नैतिक अनुशासन आवश्यक है। शारीरिक स्वास्थ्य को दुरुस्त बनाए रखने से मनुष्य में आत्म-संयम की शक्ति की वृद्धि होती है। अनवरत सतर्कता ही स्वास्थ्य का मूल्य है जिसे चुका कर हम उत्तम-कोटि का स्वास्थ्य प्राप्त कर सकते हैं।

शरीर-विज्ञान सम्बन्धी यह एक दिलचस्पी की बात है कि जब तक किसी स्त्री या पुरुष का शारीरिक विकास लगातार होता रहता है तबतक सन्तानोत्पत्ति की शक्ति या क्षमता प्रायः निष्क्रिय अथवा शून्य ही बनी रहती है। और यह कि सन्तानोत्पत्ति की अवस्था का आरम्भ न केवल शारीरिक विकास रुक जाने की द्योतक होती है बल्कि वह इसमें सहायक भी बन जाती है। बाल्यकाल से लेकर युवावस्था तक शरीर तथा उसके अंग-प्रत्यंग का, आकृति तथा कार्य-क्षमता दोनों दृष्टियों से लगातार विकास ही होता रहता है। आमतौर से २५ साल की अवस्था तक बल्कि भारत जैसे गरम देशों में २० या २२ साल की ही अवस्था तक शारीरिक वृद्धि या बढ़ोतरी होती है। फिर यह सहज ही अनुमान किया जा सकता है कि जबतक शरीर का यह विकास क्रम अपनी पूर्णता पर नहीं पहुंच जाता, तबतक शारीरिक कार्य-प्रणाली को भी पूर्णता नहीं प्राप्त होती। पुरुष-शरीर दृढ़ता और शक्ति का प्रतीक है और नारी सौन्दर्य तथा सुषमा की प्रतिमूर्ति; पुरुष का प्रशस्त स्कन्ध शारीरिक शक्ति और अधिकार का परिचायक है और नारी का वक्षस्थल प्रणय तथा पोषण का प्रतीक; पिता पारिवारिक कठिनाइय, मुसीबतों और खतरों का वीरता और साहस-पूर्वक सामना करता हुआ अपने कुटुम्ब की रक्षा करता है और ममतामयी माता शिशु के अभावों की पूर्ति करती, उसका लाड़-प्यार, पालन-पोषण करती और उसे हर तरह से सुख-सुविधा पहुँचाने का प्रयत्न करती है।

पुरुष और नारी के शारीरिक बनावट सम्बन्धी अन्तर का उनकी मनःस्थिति पर गहरा प्रभाव पड़ता है। उनके शरीर का विकास जननेन्द्रियों के अनुरूप ही होता है। अगर सन्तानोत्पत्ति सम्बन्धी इन्द्रियों अथवा अवयवों में कोई खराबी या दोष उत्पन्न हो गया तो उसके फलस्वरूप पति-पत्नी की आदर्श जोड़ी को भारी आघात पहुंचता है और और दाम्पत्य-जीवन की परिपूर्णता डाँवाडोल हो उठती है। यह स्पष्ट है कि प्रकृति ने पुरुष और नारी का शारीरिक संगठन ही इस प्रकार से किया है जिससे प्रकट हो जाता है कि इन दोनों को अपने जीवन में अलग-अलग कार्य करने हैं।

इसी प्रकार प्रकृति प्रजनन सम्बन्धी इन्द्रियों के द्वारा सन्तानोत्पत्ति की इच्छा को अभिव्यक्त करती है। जननेन्द्रियों में प्रकृति ने इस उद्देश्य से पर्याप्त संवेदना निहित कर दी है जिसका समुचित उपयोग करने पर पुरुष और स्त्री दोनों के लिए समान रूप से लाभदायक और सुखमय हो सकता है। अत्यधिक इन्द्रिय-चालन से न केवल स्नायु-प्रणाली आक्रान्त हो जाती है, शरीर शक्ति हीन हो जाता है, और रक्त के जीवन-तत्वों का शोषण हो जाता है, बल्कि यह बौद्धिक, नैतिक और आध्यात्मिक विकास के भी प्रतिकूल पड़ता है। इन्द्रिय चालन विषयक शारीरिक सुख इतनी भावुकता-प्रधान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होते हैं कि वे जीवन की इस पावनता को, उसके आदर्श को अपने वशीभूत कर लेते हैं। मनुष्य अपने क्षणिक शारीरिक सुख के सामने सब कुछ भूल जाता है। मनुष्य की यह सबसे बड़ी गलती है। यहीं पर उसे सावधानी से काम लेने की जरूरत है।

अतः ऐन्द्रिकता अथवा कामेच्छा का परितृप्ति सम्यक् तथा समुचित रीति से ही होनी चाहिए; उसके प्रवाह में अपने को कदापि न बहा देना चाहिए, इन्द्रिय-परिचालन पर कुछ-विवेक और संकल्प का अंकुश होना और वह स्वास्थ्य की मर्यादा के भीतर ही होना चाहिए। इन्द्रिय चालन इस हद तक पहुंचा देना, जो कि स्त्री और पुरुष इन दोनों में से किसी एक के लिए भी घातक या अनिष्टकारी सिद्ध होता हो, एक महान नैतिक अपराध है, जिसे प्रकृति कभी क्षमा नहीं कर सकती। जो व्यक्ति इस नियम का कठोरता पूर्वक पालन नहीं करता वह सन्तान-वृद्धि करनेकी समुचित स्थिति में कदापि नहीं रह सकता। प्रेम और न्याय के साथ-साथ आत्म-संयम और आत्म-त्याग सतत् नैतिक सद्गुण माना गया है। यदि वैवाहिक जीवन व्यतीत करने के सम्बन्ध में आत्म संयम से काम लिया जाय तो आत्म-निग्रह का सिद्धान्त हमारे लिए जीवन की प्रत्येक दिशा में स्वास्थ्य-शक्ति एवं नैतिकता की अभिवृद्धि ही करने वाला होगा।

हमारी सलाह मानिए

घर, बाजार और जंगल में सुगमता से मिलनेवाली सस्ती और सरल चीज़ों से

अपना इलाज आप

कीजिये। इसके लिए श्री रामेश वेदी आयुर्वेदालङ्कार द्वारा लिखी हुई निम्नलिखित पुस्तकें सदा आप के घर में रहनी चाहिए।

तुलसी—	मूल्य २)
त्रिफला—दूसरा परिवर्द्धित संस्करण	मूल्य २)
देहाती इलाज—	मूल्य १)
सोंठ—	मूल्य ॥)
अंजीर—	मूल्य ॥)
डाक खर्च	॥-)

इन पुस्तकों की उपयोगिता इस बात से स्पष्ट है कि अखिल भारतीय आयुर्वेद महामण्डल ने लेखक को २५०) के स्वर्ण पदक द्वारा सम्मानित किया है।

आज ही मंगा लीजिये।

पता—हिमालय हर्बल इंस्टिट्यूट, बादामी बाग़, लाहौर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आकर्षक व्यक्तित्व

श्रीधर पाठक बी. ए. एल. एल. बी.

'नाटिलस' के सुप्रसिद्ध लेखक श्री क्लो० एम० बक्लर ने आकर्षक व्यक्तित्व के सम्बन्ध में अपने कुछ अनुभव प्रकाशित किए हैं। उन्होंने आकर्षक व्यक्तित्व के विकास एवं वृद्धि के लिए नियम बताए हैं। इस लेख के लेखक स्वयं भी व्यक्तित्व-विकास के अध्यापक हैं। उन्होंने इसका वर्षों तक स्वयं अभ्यास किया है और अपने व्यक्तित्व को आकर्षक बना लिया है। आपका यह लेख हम सहयोगी 'कल्प-वृक्ष' से अपने पाठकों के लाभार्थ प्रस्तुत करते हैं।

—सं०

मैं प्रगति के विभिन्न मार्गों में जाते हुए अधिकांश लोगों को, आनन्ददायक व्यक्तित्व के विकास के निमित्त, सद्भावना से सहायता के लिए इच्छुक पाता हूँ। वे इस योग्य होना चाहते हैं कि मित्रों को अपनी ओर आकर्षित कर सकें। वे व्यावसायिक रीति से जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में मित्र बनाने में समर्थ होना चाहते हैं।

निम्न-लिखित मेरे सात नियम हैं जिनका अभ्यास मैंने उक्त उद्देश्य के निमित्त अधिक काल तक किया है।

नियम नं० १—जिन लोगों के सम्पर्क में आप आवें उनमें से प्रत्येक के प्रति आप सद्भावना-युक्त व्यवहार करें एवं सद्भावना पूर्वक वार्तालाप करें। सद्भावना एक प्रभावशाली सद्गुण है और प्रयोग में लाने में अत्यन्त सरल है। इससे बड़े लाभ होते हैं और किसी को भी इसे अपने दैनिक जीवन से अलग नहीं करना चाहिये।

नियम नं. २—आप लोगों की प्रशंसा और अभिवादन करना सीखें। इस प्रकार के व्यक्तित्व वाले मनुष्य के लिये सब लोग अनुकूल होते हैं।

लोगों में जो उत्तम बातें हैं उन्हें प्रगट रूप में लाने के लिए यदि आप इस प्रकार के लोगों से सर्वदा कुछ न कुछ कहते रहें तो वे बदले में आपकी ओर आकर्षित होंगे। प्रत्येक व्यक्ति को प्रगति करने के लिये प्रोत्साहित कीजिये। सम्भव है कि जब किसी समय उनका साहस टूट रहा हो उस दशा में आप उन्हें सहायता कर सकें और इस सहायता के कारण वे आपके प्रति आकर्षित हों।

नियम ३.—लोग जब आपसे वार्तालाप करें तो आप अपनी बात कहने के बदले उन्हें अपने विषय में बोलने दीजिये। आप उन्हें उनकी दिलचस्पी की वस्तुओं के विषय में तथा उनकी आशा और महत्वाकांक्षा के विषय में वार्तालाप करने के लिये प्रोत्साहित कीजिए। आप उन्हें कहने का अवसर दीजिये कि वे कैसे व्यवसाय कुशल हैं तथा अपने व्यावसाय में कैसे अच्छे सौदे पटा सकते हैं। उन्हें कहने दीजिए कि उनके बच्चे कैसे चुस्त व स्वस्थ हैं। आप उनकी ऐसी बातें ध्यान से सुनें जिनको सुनने के लिये सम्भव है अन्य व्यक्तियों के पास पर्याप्त समय या धैर्य न हो। आप उनकी बातों को बड़े ध्यान से उत्सुकता से एवं दिलचस्पी के साथ सुनें मानों वास्तव में आप उससे भी अधिक बातें सुनने की प्रतीक्षा कर रहे थे। इस प्रकार आप निश्चयात्मक रूप से मित्रता प्राप्त कर सकेंगे।

नियम नं. ४—किसी व्यक्ति के विषय में कभी भी व्यर्थ की चर्चा, आलोचना अथवा दोषारोपण न कीजिये। यदि आप करते हैं तो आप एक आकर्षक और आनन्ददायक व्यक्तित्व की प्राप्ति की कभी आशा नहीं कर सकते। यही एक दुर्गुण, यदि आप इसमें रत रहे तो, अप्रिय एवं आकर्षक रहित बनाने को पर्याप्त होगा।

नियम नं. ५—आप सभी व्यक्तियों में सद्भावना-पूर्ण एवं प्रीतियुक्त दिलचस्पी लें, चाहे वे युवा हों या वृद्ध, श्रीमान् हों या निर्धन। क्या आपने कभी किसी के विषय में में ऐसा कहते सुना है "वह कितना सद्भावना-पूर्ण व्यक्ति है।" उन्होंने उसके विषय में ऐसा क्यों कहा। इस नियम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का प्रयोग कीजिए और आप शीघ्र उस बात को जान जायँगे।

नियम नं. ६—जब तक कि आपके पास अपने से मिलने वाले व्यक्तियों से मैत्रीपूर्ण वार्तालाप के लिये अवकाश न हो; व्यर्थ की दौड़ धूप एवं जल्दबाजी न कीजिये। प्रत्येक के साथ वार्तालाप के लिये समय निकालिये और अपनी दिलचस्पी को ऐसे स्थान पर अपने निज के लिए कार्य करने दीजिये। जब आप मैत्री स्थापित करने में अपने निज के समय का उपयोग करते हैं, आप वास्तव में मित्रता की खोज करते हैं।

नियम नं. ७—चिन्ता करना त्यागिये और सुखी होने का प्रयत्न कीजिये। केवल सुख का स्पर्श ही नहीं किन्तु उस आनन्द की वृद्धि कीजिये जो आप में में से छलक कर बाहर आकर फैल जावे। आनन्द संक्रामक है अर्थात् दूसरों के सम्पर्क में आने से फैलता है। उस आनन्द से प्रत्येक व्यक्ति को परिप्लावित कर दीजिये जो कि आपके प्रीतियुक्त हृदय में उमड़ता है और बाहर बहकर उस संसार को शान्ति प्रदान करता है जिसे कदाचित ही कभी एक वास्तविक सुखी व्यक्ति को देखने का आनन्द प्राप्त होता है। ये अपने स्वयं के अनुभव से आपको एक वास्तविक आकर्षक व्यक्ति बनने में सहायता करेंगे। आपका कर्त्तव्य है कि आप इन नियमों का प्रतिदिन और प्रत्येक स्थान पर जहां आप जावें अभ्यास करें, इन पर अमल करें।

बच्चों का पालन पोषण

लेखक—ब्रजमोहन मिहिर

हिन्दी साहित्य में इस विषय पर अच्छा प्रकाश डालने वाली यह पहली पुस्तक है। पुस्तक में उचित भोजन और पालन-पोषण द्वारा बच्चों के स्वास्थ्य को ठीक रखने का सरल साधन बतलाया गया है जिससे उनकी शारीरिक और मानसिक वृद्धि में स्वाभाविक उन्नति होती रहे। बच्चों के प्रति माता के कर्त्तव्य पर भी आवश्यक बातों का उल्लेख किया गया है जिनके पालन करने से माता और शिशु दोनों का लाभ है। पुस्तक सब प्रकार से उपादेय है। लाभ का ख्याल करते हुए यह न सोचना चाहिए कि पुस्तक खरीदने में पैसे का व्यय है। कुछ पुस्तकें ऐसी हैं जिनका मूल्य उनके लाभ को देखते हुए कुछ नहीं है। बच्चों का पालन-पोषण अपने विषय का ऐसी ही एक आवश्यक पुस्तक है लेकिन आलस और अज्ञानवश लोगों में इस पर उचित ध्यान नहीं दिया है और भ्रम वश समझा करता है कि बच्चों को पालना आसान बात है ऐसी धारणा उनका भूल है। इसकी अवहेलना से हानि अधिक है। अतः इस सम्बन्ध में हारी हानि से बचने के लिए प्रत्येक गृहस्थ को इसकी एक प्रति अपने यहां रखनी चाहिए। २१७ पृष्ठों की इस सुन्दर पुस्तक का मूल्य २।) अधिक नहीं है।

पुस्तक के लिए आज ही आर्डर दें—

मैनेजर, स्वास्थ्य ग्रंथ भण्डार, जीवन सखा कार्यालय,
बादशाही मन्डी, इलाहाबाद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वाभाविक सन्तति निरोध

श्री परमेश्वरी लाल गुप्त

सन्तान का सच्चा सुख तभी प्राप्त हो सकता है जब कि सन्तानों की संख्या माता पिता के स्वास्थ्य, और आर्थिक तथा सामाजिक स्थिति के ही अनुसार हो। सन्तान उत्पन्न कर देना एक बात है किन्तु उसका समुचित पालन-पोषण करना दूसरी बात। कहना न होगा कि भारत की वर्तमान आर्थिक स्थिति में यह समस्या बहुत ही चिन्तनीय बन गई है। इस प्रश्न की उपेक्षा नहीं की जा सकती।

लेखक ने यहाँ पर सन्तति-निरोध के प्राकृतिक साधन पर प्रकाश डाला है जिससे समुचित लाभ उठाया जा सकता है।

—सं

अनेक कारणों से, जिनमें आर्थिक और सामाजिक कारण प्रधान हैं लोगों की प्रवृत्ति कम से कम सन्तान पैदा करने अथवा न पैदा करने की हो रही है। इसके लिये आज तरह-तरह के साधनों का प्रयोग किया जाता है, जिनमें कुछ यन्त्र हैं और कुछ दवायें हैं। इन दवाओं और यन्त्रों के उपयोग से लोगों को जहाँ सन्तति-निरोध या बर्थ-कन्ट्रोल करने में सफलता मिलती है वहीं उसके अनेक दुष्परिणाम भी देखने में आते हैं। यन्त्रों के उपयोग से संभोग के आनन्द में बाधा पड़ती है, यह सभी स्वीकार करते हैं। उसके साथ ही स्वास्थ्य पर भी उसका अच्छा प्रभाव नहीं पड़ता। उसके प्रयोग में भी कठिनाई होती है और अक्सर स्त्रियाँ उसके प्रयोग में संकोच करती हैं। अतः इस बात की आवश्यकता का अनुभव किया जाता रहा है कि सन्तति-निरोध का कोई स्वाभाविक ढङ्ग निकाला जाय। इस ओर भी लोगों ने ध्यान दिया और संभोग के कुछ ऐसे आसन बताये हैं जिनमें संभोग के समय रज और वीर्य के संयोग की सम्भावना कम है। पर यह उपाय सर्वथा सफल नहीं है और यदि सफल भी हो तो आसन कष्टकर और आनन्ददायक नहीं है।

हिन्दू कामशास्त्र की यह धारणा रही है कि मासिक धर्म के पश्चात् के कुछ दिनों के भीतर संभोग करने से गर्भस्थिति की सम्भावना रहती है। उसके बाद उसकी सम्भावना नहीं रहती। इसी कारण उसके रजस्वला होने के बाद ही सन्तानोत्पत्ति के लिये संभोग का विधान रक्खा है। यह लोगों की धारणा मात्र थी, उसका अभी तक वैज्ञानिक विवेचन नहीं हुआ था। अभी हाल में जो अनुसंधान हुए हैं उनसे ज्ञात होता है कि यह धारणा एकदम गलत ही नहीं थी वरन् तथ्य के विपरीत भी थी।

स्त्रियों में मासिक-स्राव का एक नियमित चक्र चलता रहता है और उसके साथ ही एक जीवकोष (ओवम) ग्रेफियन फोलिकिल्स से निकल कर गर्भाशय में प्रवेश करता है। यह प्रक्रिया निश्चित रूप से कब होती है, इसका अनुसंधान जापान में डा० ओजिनों और आस्ट्रिया में डा० नास (Knaus) ने स्वतन्त्र रूप से किया। दोनों में किसी को एक दूसरे के अनुसंधान कार्य का पता न था। पर जब दोनों आदमियों ने अपने-अपने अनुसंधान के परिणाम प्रकाशित किये तो एक से निकले। उन लोगों ने अपने प्रयोग कुत्ते, खरगोश, सुअर, घोड़ा, गाय, बन्दर आदि विभिन्न पशुओं पर किये। बन्दर पर किया जाने वाला प्रयोग अधिक सफल रहा क्योंकि वह मनुष्य के अन्यतम निकट है। उन्होंने स्त्रियों पर भी अपने प्रयोग किये। कुछ समय तक उनके यौन जीवन (सैक्सुअल लाइफ) को संयत करके तथ्य एकत्र किये। इस प्रकार तथा अन्य साधनों से प्राप्त तथ्यों के आधार पर वे अपने निष्कर्ष पर पहुँचे। उन्होंने अपना प्रयोग किस प्रकार किया, इसका विवेचन करने की न तो यहाँ आवश्यकता है और न प्रयोजन। इतना कह देना पर्याप्त होगा कि वे लोग इस तथ्य पर पहुँचे कि अगले मासिक-स्राव से पूर्व पन्द्रहवें दिन जीवकोष गर्भाशय में प्रवेश करता है। यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथ्य सन्तति निरोध की दृष्टि से बड़े महत्व का है।

गर्भ-स्थिति

जीवकोष और शुक्रकीट के संभोग से होती है। जब तक जीवकोष गर्भाशय में नहीं होगा, शुक्रकीट के प्रवेश होने पर भी गर्भ-स्थित नहीं होगा। इस तथ्य के साथ ही हमारे सामने पहले से ही दो तथ्य मौजूद हैं। (१) शुक्रकीट में, नारी योनि में प्रवेश होने के बाद, केवल ४८ घण्टे तक ही उर्वर करने की शक्ति रहती है। वह कितने ही दिन तक जीवित भले ही रहे पर अनेक कारणों से उसकी उर्वरा शक्ति ४८ घण्टे के भीतर समाप्त हो जाती है। (२) इसी प्रकार जीवकोष की उर्वर होने की शक्ति गर्भाशय में प्रवेश होने के बाद केवल २४ घण्टे तक ही रहती है उसके बाद वह नष्ट हो जाती है।

तात्पर्य यह है कि योनि में शुक्र प्रवेश होने के ४८ घंटे बाद उसकी उर्वरा शक्ति नष्ट हो जाती है और वह किसी जीवकोष को उर्वर नहीं कर सकता। यदि जीवकोष शुक्र प्रवेश के ४८ घण्टे के भीतर ही गर्भाशय में प्रवेश करे तो गर्भ-स्थिर हो सकता है, यदि उसके बाद करे तो गर्भ-स्थिति की सम्भावना नहीं होगी। इसी प्रकार यदि जीवकोष के गर्भाशय में प्रवेश करने के २४ घन्टे के भीतर ही शुक्र योनि में प्रवेश करे तो शुक्र कीट और जीवकोष का संयोग सफल हो सकता है अन्यथा बाद में होने पर जीवकोष के उर्वर होने की शक्ति नष्ट हो जाने के कारण गर्भ स्थिर नहीं होगा। अतः यदि जीवकोष के गर्भाशय-प्रवेश के समय को बचाकर संभोग किया जाय तो कभी गर्भ की स्थापना न होगी।

स्राव का मासिक चक्र

ऊपर दिए गए तीनों तथ्यों को स्वीकार करते हुए विचार किया जाय तो स्त्री के स्राव के मासिक चक्र को हम दो भागों में बाँट सकते हैं—(१) उर्वर, जब वह गर्भवती हो सकती है; (२) अनुर्वर जब वह गर्भवती नहीं हो सकती। अतः यदि अनुर्वरकाल में सम्भोग किया जाय तो वह कभी भी गर्भवती न होगी। इसे यदि ध्यान में रखा जाय तो स्वाभाविक रूप से सन्ततिनिरोध हो सकता है। और उसमें न तो कुछ व्यय हो; न किसी प्रकार का शारीरिक और मानसिक कष्ट और न किसी प्रकार संभोग के आनन्द में व्यवधान।

अनुर्वर और उर्वर काल

की गणना के लिए हमें थोड़ी गणित की सहायता लेनी पड़ेगी। सामान्यतः २८ दिनों के अन्तर पर नियमित रूप से मासिक स्राव हुआ करता है। किसी-किसी स्त्री के २९ और ३० दिन या २६ और २७ दिन के अन्तर पर भी हुआ करता है अतः इस स्वाभाविक सन्तति-निरोध के बरतने के पूर्व आवश्यकता इस बात की है कि स्त्री के मासिक स्राव का अन्तर मालूम किया जाय। हम यहाँ २८ दिन का अन्तर लेकर काल-निर्णय करेंगे। मान लीजिये स्त्री को पहली तारीख को स्राव आरम्भ होता है। दिन की गणना स्राव के दिन के आधी रात से करना चाहिये और स्राव का आरम्भ कुछ बूँदों के निकलने पर ही मान लेना चाहिये। दूसरी बार स्राव का आरम्भ २९ तारीख को होगा। अब जीवकोष का गर्भ में प्रवेश २९ तारीख से पूर्व, १५ वें दिन होगा अर्थात् १४ तारीख को होगा। स्राव आरम्भ का समय प्रायः निश्चित नहीं हो पाता अतः एक दिन आगे-पीछे भी लेना चाहिये। इस प्रकार १३, १४ और १५ तारीख को पूर्व शुक्र जीवकोष गर्भ में प्रवेश करेगा। जीव-कोष के गर्भ से दो दिन योनि में प्रविष्ट हुआ है तो गर्भ स्थिर हो जाने की सम्भावना है अतः उससे बचने के लिये दो दिन रखिये। इस प्रकार ११ और १२ हुआ इसी प्रकार यदि जीव कोष के गर्भ-प्रवेश के बाद २४ घण्टे के भीतर शुक्र-कीट का संयोग हो जायेगा तो गर्भ रह जायेगा इसलिए एक दिन उसके लिए रखिये। इस प्रकार १६ तारीख हुई। अधिक-बचत के लिए एक दिन आगे और एक दिन पीछे और ले लेना चाहिये। इस प्रकार १० से १७ तारीख के के भीतर के ८ दिनों में ही यदि संयोग किया जाय तो गर्भ स्थिति की सम्भावना होगी। उसके बाद नहीं। अर्थात् मासिक-स्राव आरम्भ से प्रथम ९ दिन अनुर्वर और उसके बाद के ८ दिन उर्वर और उसके बाद के ११ दिन अनुर्वर होंगे। दूसरे शब्दों में मासिक-स्राव आरम्भ होने से ११ दिन पूर्व से ९ दिन अनुर्वर हैं। उस अवधि के बीच संभोग करने से गर्भ नहीं होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गर्भ-स्थिति की संभावना

२८ दिन के नियमित चक्र में गर्भ स्थिति की संभावना चक्र के केवल १२ वें, १३ वें, १४ वें या १५ वें दिन ही होती है। अतः १० वाँ और १७ वाँ तथा १२ वाँ और १६ वाँ दिन बचत के निमित्त रखा गया है। इस प्रकार का बचत का दिन इसलिए रखना आवश्यक है कि हमारा शरीर घड़ी की तरह तो नियमित काम नहीं करता। कभी-कभी उसमें किसी न किसी कारण व्यतिक्रम हो ही जाता है, इसलिए अधिक से अधिक बचत की गुंजाइश रखना आवश्यक है। अतः स्राव के १० वें दिन से १७ वें दिन तक संभोग न करना ही अधिक उचित होगा।

गर्भ के लिये अनुर्वर दिन

इसी सिद्धान्त पर २६ से ३० दिन के चक्र के अनुर्वर दिन इस प्रकार होंगे :—

चक्रवार	स्राव से पूर्व	स्राव के बाद
२६	११ दिन	७ दिन
२७	११ दिन	८ ,,
२८	११ दिन	९ ,,
२९	११ दिन	१० ,,
३०	११ दिन	११ दिन

अनेक स्त्रियाँ ऐसी होती हैं कि उन्हें २६ से ३० दिन के भीतर स्राव आरम्भ हो जाता है। इस प्रकार के अनियमित स्राव वाली स्त्री के लिए तनिक अधिक सतर्कता की जरूरत होगी। उसके लिए उर्वर दिन १२ अनुमान करना पड़ेगा। वैसी अवस्था में अनुर्वर दिन स्राव के बाद ७ दिन ही मानने चाहिये और उसके बाद के १२ दिन को उर्वर समझकर फिर अनुर्वर काल समझना चाहिये। इसी प्रकार यदि स्राव २८ से ३० दिन के भीतर होता हो तो स्राव के प्रथम ६ दिन अनुर्वर उसके बाद के १० दिन उर्वर मानने चाहिये।

मासिक स्राव मे व्यतिक्रम

मासिक-स्राव का चक्र प्रत्येक स्त्री में एक सा रहता हो यह आवश्यक नहीं है। समय-समय पर उसमें परिवर्तन होता रहता है। इसलिए उर्वर और अनुर्वर दिनों का निर्णय प्रति मास स्राव के चक्र के अनुसार कर लेना सन्तति-निरोध की सफलता में अधिक सहायक होगा। किन्तु यह सिद्धान्त उस स्थिति में बिल्कुल भी लागू न हो सकेगा जहाँ स्राव के क्रम में अनिश्चित व्यतिक्रम हो गया हो, जो बहुधा यौन रोगों के कारण हो जाया करता है। इस प्रकार का व्यतिक्रम निरोधात्मक दवाओं और यन्त्रों के प्रयोग से भी हो जाया करता है। बच्चे को जन्म देने के बाद भी चक्र में कुछ काल तक अव्यवस्था हो जाती है। ऐसी अव्यवस्थाओं में स्राव का दिन निश्चित करना बहुत ही कठिन होता है।

कभी-कभी अचानक स्राव-चक्र २८ या ३० दिन से घटकर २३ दिन हो जाता है यह स्राव समय से पूर्व कहा जाता है। इसका कारण जलवायु का परिवर्तन, ऊंचा पहाड़ी स्थान या शीत हो सकता है। ऐसी स्थिति में यदि कारण ज्ञात हो जाय तो दिन की गणना उस दिन से करनी चाहिये जिस दिन उसे आरम्भ हुआ न कि जिस दिन उसे आरम्भ होना चाहिये और बचत के लिए उर्वर दिनों के आरम्भ में दो दिन और जोड़ लेने चाहिये। यदि स्राव अधिक विलम्ब के हो तो उस अवस्था में उर्वर दिनों के अन्त में २-३ दिन और जोड़ लेना चाहिए। अधिक व्यतिक्रम के लिए कोई सिद्धांत निश्चित करना कठिन है, किन्तु मोटे तौर पर मासिक स्राव के आरम्भ के ७-८ दिन अनुर्वर और बाद के १४-१५ दिन उर्वर और उसके बाद के ७-८ दिन अनुर्वर माने जा सकते हैं।

सूचना

जीवन सखा २॥) में पुस्तकालयों को रियायती मूल्य पर देने की जो विज्ञप्ति हम अभी तक प्रकाशित कर रहे थे, उसकी अवधि अब समाप्त हो गई है, अस्तु अब जीवन-सखा ३) में ही ग्राहकों को साल भर तक उपलब्ध हो सकेगा।

—व्यवस्थापक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बुढ़ापा न आने दीजिए

श्री केदारनाथ गुप्त, प्रिंन्सिपल अग्रवाल विद्यालय, प्रयाग

प्रिन्सिपल केदारनाथ गुप्त, हमारे उन पुराने सहयोगियों में हैं, जिन्होंने 'जीवन सखा' तथा प्राकृतिक स्वास्थ्य गृह को अपने पथ पर अग्रसर करके उसे अधिकाधिक, सफल, समुन्नत बनाने में विशेष सहायता पहुँचाई है। 'जीवन सखा' परिवार के प्रति आपकी सेवाएँ कभी भूली नहीं जा सकतीं। एक लम्बे अरसे के बाद आपका यह लेख प्रकाशित करने में हमें विशेष प्रसन्नता हुई है। —सं०

स्वर्गीय राय बहादुर डाक्टर लक्ष्मीनारायण चौधरी ने क्या ही सच कहा है—"बुढ़ापा एक प्रकार का रोग है। शरीर की भीतरी गड़बड़ी से रोग पैदा होता है। इस गड़बड़ी को रोकिये, बुढ़ापा न आवेगा।"

हमारा जीवन हमारे स्नायु-संस्थान पर निर्भर है। जिस प्रकार मशीन को चलाने के लिये बराबर बैटरी भरने की आवश्यकता पड़ती है उसी प्रकार यदि शरीर के भीतर स्नायु-तन्तुओं में बिजली भरी जाय तो मनुष्य कभी बूढ़ा न हो।

हमारे इस शरीर को एक उचित अनुपात में कुछ मुख्य-मुख्य खाद्य-पदार्थों की आवश्यकता रहती है जिससे इस शरीर की मशीन चलती है। इस अनुपात में एक सीमा तक एक पदार्थ के स्थान में दूसरा पदार्थ खाया जा सकता है किन्तु यदि इस हेर-फेर में मनमानी अंधाधुन्धी हुई तो शरीर के भीतर गड़बड़ी उत्पन्न होने लगती है और धीरे-धीरे वह रोगग्रसित हो जाता है।

खान-पान की गड़बड़ी

खान-पान की इस गड़बड़ी का अनुभव मनुष्य को एक दिन में नहीं होता। उससे उत्पन्न विष शनैःशनैः संचित होता रहता है, जिसकी परवाह प्रारम्भ में वह करता भी नहीं है। एक दिन ऐसा आता है जब उसके अवयव ढीले पड़ जाते हैं और उसे विवश होकर चारपाई की शरण लेनी पड़ती है।

जब वह बीमार पड़ता है तो वह कभी नहीं कहता कि मेरी बीमारी भोजन की गड़बड़ी से उत्पन्न हुई है। वह यही समझता है कि बाहरी परिस्थितियाँ उससे कुछ ऐसी प्रतिकूल हो गई हैं जिससे उसे बीमार होना पड़ा है। एक उदाहरण लीजिये। यदि किसी पुरुष को लकवा मार जाय तो वह कहता है कि "कल मुझे ज्वर आ गया था। उसी ज्वर में जब मैं शौच के लिये बाहर गया तो सर्दी लग गई और इसी से मुझे लकवा मार गया।"—

वास्तव में यह बात नहीं है। भोजन की खराबी से उत्पन्न विष उसके शरीर के भीतर पहिले से ही जमा हो रहा था और वह खून की नलियों का लचीलापन नष्ट कर रहा था। ज्वर के कारण मस्तिष्क की एक नली फट गई और उसे लकवा मार गया।

ऐसी बीमारियों का सम्बन्ध वास्तव में खुली हवा में घूमने या सरदी लगने से नहीं होता, किन्तु उस विष से होता है जो अनुचित भोजन या भोजन के अतिरेक से उत्पन्न होता है। बुद्धिमानों को चाहिये कि जीवन के प्रारम्भ से ही उचित अनुपात में भोजन के भिन्न-भिन्न पदार्थों के खाने का अभ्यास डालें और अपने को बुढ़ापे से बचावें।

भोजन का वर्गीकरण

चतुर चिकित्सकों ने भोजन का विभाजन इस प्रकार किया है—(१) 'प्रोटीन्स' (मांसवर्द्धक-पदार्थ), जैसे दाल, मांस और दूध। इनसे शरीर पुष्ट होता है। (२) 'कार्बो-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हाइड्रेट्स' (श्वेतसार), जैसे सब प्रकार के अन्न। इनसे शरीर को गरमी मिलती है। (३) 'फैट्स' (चिकनाई के पदार्थ,) जैसे घी, तेल इत्यादि। इनसे शरीर में, गरमी और स्फूर्ति आती है। (४) 'विटामिन्स' जैसे हर प्रकार के शाक और फल। इनसे खून की सफाई होती है और शरीर पुष्ट होता है।

इस वर्गीकरण को सामने रखते हुये भोजन का चुनाव होना चाहिये। यदि कोई केवल दाल खाकर स्वस्थ रहना चाहे तो नहीं रह सकता। उसी प्रकार यदि कोई कहे कि हम केवल रोटी खाकर स्वस्थ रहें तो भी ऐसा नहीं हो सकता। मनुष्य यदि केवल हलुआ खाकर स्वस्थ रहना चाहे तो भी असम्भव है। जब इन सब पदार्थों को मिला कर 'मेलदार' भोजन करेगा तो वह अवश्य स्वस्थ रहेगा।

खटाई और खारापन

उपरोक्त वर्गीकरण के अतिरिक्त भोजन का एक वर्गीकरण और है। जो भोजन हम करते हैं वे खटाई और खारापन पैदा करने वाले होते हैं। खटाई पैदा करने वाले पदार्थ खून को विकृत करते हैं और खारापन पैदा करने वाले पदार्थ स्वच्छ। सब प्रकार के मांस, मछली, मैदे की रोटी, पूरी, पकवान, छिलका निकाली हुई दाल, मिठाई, सफेद चीनी, चाय आदि खटाई पैदा करने वाले पदार्थ हैं। चोकरदार आटा, दूध, मक्खन, छिलकेदार दाल, सब प्रकार के फल और तरकारियाँ खारापन पैदा करने वाले पदार्थ हैं।

भोजन के चुनाव के समय खटाई और खारापन उत्पन्न करने वाले पदार्थों का भी ख्याल रखना चाहिये। हमारा खून खारापन लिये होता है, इसलिये जो भोजन हम चुनें उसे शत-प्रतिशत खारापन पैदा करने वाला होना चाहिये। यदि इतना समय न हो सके तो खारापन और खटाई पैदा करने वाले पदार्थों का अनुपात ८० और २० होना ही चाहिये।

शराब और चाय के अवगुण

शराब, चाय और कहवा का व्यवहार तो हमें एकदम परित्याग करना चाहिए। खटाई की मात्रा इनमें सबसे अधिक होती है। इनसे अंतड़ियाँ विकृत होती है और अजीर्ण रोग होता है। चाय में 'थीन' और 'कैफीन' नाम के दो विषैले पदार्थ होते हैं जो स्नायुओं को विकृत और झिल्लियों को मोटा कर देते हैं, जिससे चमड़ा सिकुड़ जाता है और युवावस्था में ही बुढ़ापे के चिन्ह दिखलाई पड़ने लगते हैं।

शराब, चाय और कहवे का प्रयोग हमारे देश में बड़े वेग से बढ़ रहा है। आजकल के कहलाने वाले सभ्य समाज में जब कोई मेहमान आता है तो उसका स्वागत चाय से किया जाता है। स्मरण रखिये कि तीनों पदार्थ जिगर, गुर्दे और अँतड़ियों को विकृत करते हैं और अनपच का रोग पैदा करते हैं, जिसे विद्वान चिकित्सकों ने 'रोग का नगड़दादा' कहा है।

मांसाहार

दो शब्द मांसाहार के विषय में भी कहना आवश्यक है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि मांस शक्तिवर्द्धक है, किन्तु उसमें हानियाँ अधिक है और उसका काम हम दूध और मलाई से ले सकते हैं। मांस में कुछ कीड़े ऐसे होते हैं जो उबालने पर भी नहीं मरते और वे बीमारी पैदा करते हैं। दूसरी हानि यह है कि जब जानवर मारा जाता है तो उसमें बड़ी घबराहट पैदा होती है जिससे उसके मांस में बड़ा भयंकर विष पैदा हो जाता है। सुअर और मुर्गियों की तरह कुछ जानवर ऐसे होते हैं जो गलीज़ खाते हैं जिससे उसका मांस खाने योग्य नहीं रह जाता। तीसरी हानि यह है कि मांस शरीर के बाहर और भीतर बहुत जल्द सड़ता है। चौथे यह कि पचने के बाद मांस का फुजला शाक-पात या फल के फुजले की अपेक्षा बड़ी कठिनता से निकलता है। इसके अतिरिक्त मांस को देखने से भी बड़ी घृणा पैदा होती है। नाना प्रकार के मसाले डाल कर उसे किसी प्रकार खाद्य पदार्थ बना लेते हैं। वास्तव में जिससे घृणा उत्पन्न हो वह वस्तु खाने की नहीं है।

फल और सब्जियाँ

आजकल भोजन में एक भूल और होती है जिससे हमारा बुढ़ापा जल्द आता है, और वह है फलों और हरी

(शेष पृष्ठ २० पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक रोगी की कहानी उसी की जबानी

श्री दौलत सिंह, छावड़ा गुजरात (पंजाब)

स्कूल में विद्याध्ययन के समय, मुझे बायें नेत्र से गोल गोल रंग-बिरंगे दृश्य दिखाई देते थे। एक एलोपैथ डाक्टर ने इस रोग के उपचार के तौर पर 'न्यूसलवरसन' के दो साप्ताहिक इन्जेक्शन दिए। इससे नेत्र रोग तो दूर हो गया लेकिन सारे बदन (गला और ऊपरी हिस्सा छोड़ कर) पर—पैरों के तलवे में भी—फुन्सिया हो गए। फुन्सियां सफेद रंग की और खाल के ऊपरी भाग में (त्वचा की गहराई में नहीं) २४ घन्टे के अन्दर दो-तीन सौ छोटी-छोटी फुन्सियाँ निकल आतीं और पानी (स्राव) की छूत से बढ़ती जाती। किसी वस्तु का दबाव पड़ने पर अर्थात् हाथ से कोई मेहनत का काम करने या पैरों के नीचे पत्थर के रोड़े या कंकरी पड़ जाने से जो दबाव पड़ता उससे नीले रंग की फुन्सियाँ हो जातीं। बदन की खाल मामूली से मामूली वस्तु की रगड़ लग जाने (यहाँ तक कि एक बार कपड़े की रगड़ से भी) उबले हुए आलू के छिलके की तरह छिल जाती। यह रोग मुझे साल के बारहों महीने सताता रहता।

असफल प्रयत्न

इस रोग के उपचार के लिए मैंने कोई ५ साल पहले यूनानी चिकित्सा कराई, कोई २०० जुलाब लिए, १० मन अनार खाए। जलवायु परिवर्तन के लिए २ महीने काश्मीर रहा। लेकिन सब कुछ व्यर्थ हुआ; रोग न गया। तब एलोपैथिक इलाज शुरू हुआ। चार बार खून की जांच करायी। हकीम-डाक्टर का कहना था कि रक्त में कोई विकार नहीं। मैं भारत में चर्म रोगों के उपचार के सबसे बड़े केन्द्र—ट्रापिकल स्कूल आफ इण्डिया—में, जो कलकत्ते में है, पहुंचा। वहां के डाक्टरों ने केवल मरहम लगाने को दिया (वह पुरजा मेरे पास मौजूद है) और कहा कि हमारे पास इसकी कोई दवा नहीं है। अपनी फुन्सियों की पीब से तैयार किए इन्जेक्शन—आटो वैक्सीन—भी लिए और इससे भी कोई फायदा न होने पर और भी तरह-तरह के इलाज कराए।

रोग होने के ११ साल बाद मैंने होमियोपैथिक चिकित्सा आरम्भ की। इससे मुझे ११ महीने तक आराम रहा। मेरे दाहिने पैर पर, इत्तिफाक से एक बार हारमोनियम गिर पड़ा। मैंने वही दवा खा ली और मेरी पुरानी बीमारी फिर शुरू हो गयी। यह होमियोपैथी के सिद्धान्त के अनुरूप ही हुआ। होमियोपैथी का असूल है कि जिस रोग में जो दवा आराम कर सकती है, वही दवा नीरोग अवस्था में खाने पर बीमारी भी पैदा कर सकती है।

उसके कोई ६ महीने बाद ठेके पर चिकित्सा आरम्भ हुई—उपचार का अब यही एक उपाय बाकी रह गया था। उसमें फोड़े तो चार-पाँच दिन में ही बिलकुल सूख गए लेकिन अब पेशाब के साथ धातु गिरने लगा।

माता प्रकृति की शरण में

अब मैं औषधोपचार से बिल्कुल निराश हो गया। एक रोग के इलाज मुझे बवासीर, पायरिया, कानों में चौबीसों घन्टे साँय-सांय की आवाज, शरीर की दुर्बलता आदि न जानें कितनी व्याधियां मोल ले लेना पड़ी। हलद्वानी (नैनीताल) में सौभाग्य से डाक्टर किशोरीलाल, एल. डी. एस-सी, एन. डी. डी. वाई. (जो आजकल प्रयाग में रहते हैं) से मेरा परिचय हुआ। उनकी कृपा से मुझे प्राकृतिक-चिकित्सा सम्बन्धी कुछ पुस्तकें पढ़ने को मिलीं। इन पुस्तकों की सहायता से मुझे मालूम हुआ कि मेरा रोग था आंत्र-ज्वर (आँतों का बुखार)।

उपचार

मेरे इस रोग का प्राकृतिक उपचार इस प्रकार आरम्भ हुआ। पहले एक सप्ताह तक सुबह-शाम दोनों वक्त कटि स्नान या हिप-बाथ। दूसरे सप्ताह एक समय उपस्थ या मेहन-स्नान और दूसरे समय कटिस्नान। तीसरे सप्ताह प्रतिदिन दो बार सिट्ज-बाथ, तीन बार हिप-बाथ और एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बार मिट्टी-स्नान। साप्ताहिक एनिमा और वाष्प-स्नान, गीली चादर की पट्टी और धूप-नहान। २ मास के बाद योगासन तथा योगिक क्रियाएं (जलधौति, वस्त्र धौति, जलनेति और सूत्रनेति) भी आरम्भ कीं। जलधौति साप्ताहिक करता था। चिकित्सा के ७ मास पश्चात् मैंने प्राकृतिक स्वास्थ्य गृह में रहकर प्राकृतिक-चिकित्सा की ट्रेनिंग लेना भी आरम्भ कर दिया।

चिकित्सा के आरम्भिक दिनों में मैं केवल कच्चा ताजा दूध और उबला हुआ कद्दू लेता था। इसके पश्चात् लपसी और मुनक्का, और कभी उबली, हल्की कब्जकुशा साग-भाजी (जिसमें नमक, मिर्च, मसाला, घी आदि कुछ न डाला जाता था) और पपीता लेना शुरू किया। इसके अलावा २५ दिन तक मैंने टमाटर का कल्प भी किया था। बाद में दूसरे ताजे रसदार फल (केला नहीं) मेवे और दलिया मेरे भोजन में शामिल हो गए।

होमियोपैथिक-चिकित्सा के दिनों में ६ महीने तक अपने घरवालों को (पंजाब में) अपनी बीमारी के बारे में कोई खबर ही नहीं दी। लेकिन पंजाब पहुँचने पर मेरी हालत सभी को मालूम होगयी थी। सबने मेरी हालत देख ली थी। मुझे स्थायी स्वाथ्य लाभ करने की कोई आशा ही नहीं रही गयी थी। लेकिन प्राकृतिक-चिकित्सा ने अपना चमत्कार दिखाया। इस उपचार क्रम से ११ मास पश्चात मैं पूर्णतया स्वस्थ और नीरोग होगया। मैं प्राकृतिक स्वास्थ्य गृह में भर्ती हुआ था रोगी बनकर और निकला वहाँ से 'डाक्टर' बनकर!

(१८ पृष्ठ का शेषांश)

तरकारियों का सेवन न करना। मैंने बड़े-बड़े घरों की दावतों में देखा है कि मिठाई, नमकीन, चाट और नाना प्रकार के कचरकूट भोजनों की रकाबियाँ तो मेज पर लगाई जाती हैं, लेकिन फलों की रकाबियाँ बहुत कम देखने को मिलती हैं। ऐसी दावतों में मुझे बड़ी लज्जा के साथ फलों को खाने के लिये माँगना पड़ता है।

इंगलैण्ड के वीर अन्वेषक कर्नल कुक के समय में १०० माझियां जलयात्रा से लोटते लोटते ५० मांझी मर जाया करते थे। उन्होंने इसकी खोज की और मृत्यु क कारण तरकारी और फलों का अभाव सिद्ध किया। वे एक बार नींबू और ऐसे फल, जो जल्द खराब न होते थे, लेकर समुद्रयात्रा के लिए निकले और दो मास के पश्चात् जब लौटे तो उनका एक मांझी भी न मरा और सब मांझी स्वस्थ रहे।

फलों और तरकारियों के खाने का शौक पैदा करना चाहिए। लोगों को चाट अच्छी लगती है, लेकिन सेब संतरे अच्छे नहीं लगते। अप्राकृतिक भोजन करते-करते स्वाद ऐसा विकृत हो जाता है कि जिह्वा का असली स्वरूप नष्ट ऐसा हो गया है। यह कोई आवश्यक नहीं है कि कीमती फल खाये जायं। अपने गांव या शहर में जो फल और तरकारियाँ हर मौसम में उत्पन्न होती है, उन्हीं को खाना चाहिए। ककड़ी; खीरा, आम, अमरूद, नाशपाती, ये सब सस्ते फल है और अपने-अपने समय में मिलते रहते हैं। उसी प्रकार लौकी, नेनुआ, तरोई, भिण्डी, सब प्रकार के शाक इत्यादि तरकारियाँ भी वर्ष के भिन्न-भिन्न महीनों में मिलती रही है। इन्हें खूब खाना चाहिए। ये खून को साफ करके शरीर को स्वस्थ रखते हैं।

'विटैमिन्स', जिनकी चर्चा आजकल सर्वत्र हो रही है, इन्हीं फल और तरकारियों में विशेष रूप से मिलते हैं। ये 'विटैमिन्स' बिना किसी औषधि के रोगों की अच्छा करते रहते हैं।

सारी बीमारियों को दूर करने की औषधि प्रकृति ने फल और तरकारियों में कूट-कूट कर भरी है। केवल पहिचान कर उन्हें खाने से रोग दूर करने के लिए फिर औषधियों के खाने की आवश्यकता नहीं रह जाती।

इस प्रकार भोजनमें भिन्न-भिन्न पदार्थों को अनुपात से यदि हम खायें, खटाई मिश्रित पदार्थों को छोड़ कर खारा पन मिश्रित भोजन करें, फल और तरकारियों को अधिक मात्रा में खायं, और चाय शराब, और नशे की चीज़ों से परहेज़ करें तो हम हमेशा जवान रह सकते हैं और बुढ़ापा हमारे पास आ नहीं सकता। ८० वर्ष की आयु में हम उसी उत्साह और फुर्ती से काम कर सकते हैं जिस उत्साह और फुर्ती से एक २० वर्ष का नवयुवक अपना काम करता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं प्राकृतिक चिकित्सक कैसे बना ?

डा० जटाशंकर नंदी भारत प्रसिद्ध प्राकृतिक चिकित्सक हैं। यहाँ पर आपने उस अन्तः प्रेरणा का मार्मिक विवेचन किया है, जिससे उन्हें प्राकृतिक-चिकित्सा का मार्ग ग्रहण किया। आपने यहाँ पर जो कुछ कहा है यद्यपि वह हैं तो आपके व्यक्तिगत विचार-भाव और उनके जीवन के संबंध में, किन्तु आपकी यह भावाभिव्यक्ति प्रायः समूचे प्राकृतिक-चिकित्सक वर्ग के विचारों की प्रतीक बन गयी है। जो बात उनके लिये सत्य है, वही हमारे देश के सभी प्राकृतिक चिकित्सकों के लिये सत्य है। हमें आशा है आपके इस लेख से प्राकृतिक चिकित्सा के अनुयायियों के हृदय में एक नये उत्साह का समावेश होगा। —सं

डा० जटाशंकर नन्दी एन. डी, एम. एन. एस. ए.

Courage brother do not stumble
Though thy path be dark as night
There is a star to guide the humble
Trust in God and do the right.
Let the road be rough and dreary
And its end far out of sight
Foot it bravely strong and weary
Trust in God and do the right.

कवि का उपर्युक्त कथन कितना यर्थाथ है! वह कहता है—"भाई, साहस करो, लड़खड़ाओ मत। तुम्हारे पथ पर अंधकार अंधेरी रात सा छाया है तो इससे क्या? दुर्बलों का पथ-प्रदर्शन करने वाला ध्रुवतारा तो वहाँ मौजूद ही है। ईश्वर में विश्वास रक्खो और सत्कार्य करो। यदि तुम्हारा मार्ग दुस्तर, भयानक और सुनसान है और उसका अन्त दृष्टि की सीमा से बहुत दूर है, तो होने दो, उसकी कोई परवाह मत करो। तुम बहादुरी के साथ अपने पथ पर आगे बढ़ो, चाहे तुम शक्तिशाली हो या चाहे शक्ति क्षीण और क्लान्त उसकी कोई परवाह मत करो—ईश्वर में विश्वास रक्खो और सत्कार्य करो!"

'ईश्वर में विश्वास रक्खो और सत्कार्य करो'—निस्सन्देह यह एक ऐसा आर्ष वाक्य है जिस पर हमें अपना ध्यान विशेष-रूप से आकृष्ट करना चाहिए। प्रारम्भ में हमें यह समझ लेना चाहिए कि एक प्राकृतिक-चिकित्सक किस बात को सत्य समझता है उसकी दृष्टि में क्या सत्य है? एक प्राकृतिक-चिकित्सक का दृढ़ विश्वास है—

(१) मनुष्य जिस प्रकार का जीवन व्यतीत करता है ठीक उसी के अनुसार और उसी अनुपात में वह सुखी या दुखी, स्वस्थ या अस्वस्थ, रोगी या रोग-रहित रहता है।

(२) रोग शरीर के भीतर जमा हुए विसदृश पदार्थ या मल को बाहर निकाल देने का कार्य करता है। रोगका यह एक मैत्रीपूर्ण का कार्य है; रोग हमारा शत्रु नहीं मित्र है। वह हमारी भलाई के लिए शरीर में प्रकट होकर विजातीय द्रव्य तथा मल का नाश करता है।

(३) खान-पान और जीवन के रहन-सहन के सम्बन्ध में प्रकृति के बताए नियमों का उल्लंघन करने या स्वास्थ्य विषय के आवश्यक बातों की बिलकुल गैर जानकारी अथवा भारी अज्ञान के कारण लोगों को नित नयी-नया अनगिनती बीमारियों; रोग-व्याधियों का शिकार होना पड़ता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(४) हमें सताने वाले विभिन्न प्रकार के रोगों में एकरूपता है—वे अनेक होते हुये भी वास्तुतः एक ही हैं। अर्थात् रोगोत्पत्ति का कारण वस्तुतः एक ही होता है। सभी रोगों का निवारण किया जा सकता है, हमारे देश में आए दिन होने वाली असामयिक मृत्यु-संख्याने इतना भीषण रूप धारण कर लिया है कि उसे देख कर स्तब्ध रह जाना पड़ता है। आजकल भारतीयों की औसत आयु घटकर केवल २३ वर्ष रह गयी है, जब कि प्रकृति के नियमानुसार मनुष्य के जीवन की अवधि, उस पूर्ण आयु, १२५ वर्ष होनी चाहिए। संसार के अन्य देशों से तुलना करने पर भारतीयों की यह औसत आयु सब से निम्न कोटि की है। रोगोपचार—रोग का इलाज करने से--रोग-निवारण --रोग को होने ही न देना—कहीं अच्छा है। एक प्राकृतिक-चिकित्सक जनता को उत्पीड़ित करने, उसे सताने वाले इस अज्ञान को—जो सचमुच जीवन की सबसे दुःखद बात है—दूर कर देना अपना परम पुनीत कर्त्तव्य समझता है। अपने देश की हित-कामना करने वाले प्रत्येक भारतीय देश-भक्त के हृदय को सन्ताप से भर देने वाले जीवन के समस्त अन्धकार पूर्ण पहलुओं का यही मूल स्रोत है।

(५) हमारे देश में, जो शारीरिक स्वास्थ्य की दृष्टि से अत्यन्त हीनावस्था में पहुँच गया है, रोगोपचार की आजकल जितनी भी प्रचलित पद्धतियां है उनमें प्राकृतिक-चिकित्सा प्रणाली सर्वोत्तम है, वह रोगोपचार-प्रणाली की दृष्टि से अन्य सभी प्रचालित चिकित्सा-पद्धतियों से कहीं अधिक श्रेष्ठ है। सर्व सुलभ, शहर से बहुत दूर गांवों में बसने वाले ग्रामीणों तक के लिए भी प्राप्य, सस्ती और अद्भुत उपचारात्मक गुण दिखाने वाली प्राकृतिक-चिकित्सा प्रणाली शरीर से रोग दूर कर देने के अलावा रोगी को ठीक तरह जीवन व्यतीत करने की भी शिक्षा देती है। इस प्रकार यह न केवल शरीर को किसी एक बीमारी से, जिसमें प्राकृतिक-चिकित्सा का सहारा लिया गया है, रोगी शरीर को छुटकारा दिला देती है, बल्कि वह उसे ऐसी अवस्था में ला देती है कि भविष्य में फिर कभी किसी रोग-व्याधि का शिकार बनने की सम्भावना ही रोगी के लिए नहीं रह जाती। वह उसे भविष्य में अन्य कई प्रकार के रोगों के चंगुल में फंसने से भी बचा लेती है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि प्राकृतिक-चिकित्सा की शरण में आने वाला रोगी, रोग से छुटकारा पा जाने के साथ-साथ अपना डाक्टर अपने आप बन जाता है, उसे तब अपने रोगोपचार के लिए किसी दूसरे डाक्टर या चिकित्सक के पास जाने की कोई आवश्यकता ही नहीं रह जाती।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि यदि वह सत्य में वस्तुतः दृढ़ विश्वास तथा आस्था रखता है—यदि वह दिल से समझता है कि उसे प्रकृति के मार्ग को ग्रहण करके सत्य कार्य करना चाहिए, और स्वयं प्राकृतिक जीवन व्यतीत करते हुए प्राकृतिक-चिकित्सा के सिद्धान्त से अपरिचित तथा अनभिज्ञ अपने देशवासियों के बीच स्वास्थ्य एवं दीर्घायुष्य का सन्देश प्रचारित करना चाहिए, तो उसका यह मार्ग, जिस पर वह अग्रसर होना चाहता है, चाहे उसे कितना ही अन्धकारपूर्ण तथा बीहड़ जान पड़ता हो, उसे लड़खड़ा न जाना चाहिए, बल्कि बहादुरी के साथ और दृढ़तापूर्वक आगे कदम बढ़ाना चाहिए और अपने हृदय में यह दृढ़-विश्वास धारण किए रहना चाहिए कि इस तमसाछन्न मार्ग में भी एक ऐसा ध्रुवतारा है जो उसका पथ-प्रदर्शन करेगा और इस प्रकार वह इस दुस्तर पथ को आसानी से पार कर जायगा।

सत्य का अनुसरण करने वाले सत्यव्रतियों के ऐसे अनेक ज्वलन्त उदाहरण हमारे प्राचीन इतिहास में मिलते हैं, जिनसे प्रकट होता है कि उन्हें सत्य का अनुसरण करने में कितने महान त्याग एवं कष्ट सहन करने पड़े हैं। इन्हीं सत्यव्रतियों में से कुछ के उदाहरण यहाँ प्रस्तुत किए जाते हैं।

(१) श्रीराम—यदि श्रीराम ने यह निर्णय किया होता कि राज्याभिषेक के ऐन मौके पर अपने पिता के अविचारपूर्ण आदेशों का पालन करना और राज्याधिकार अपने छोटे भाई भरत, जो राजसिंहासन के उत्तराधिकारी नहीं हो सकते, को सौंपकर स्वयं १४ वर्ष तक बनवास करना उचित नहीं है तो वे अपनी असाधारण शक्ति का उपयोग करते हुए अपने बूढ़े पिता को उसी प्रकार बन्दी बना कर राजसिंहासन पर बैठ सकते थे, जिस प्रकार औरंगजेब अपने पिता को जेलखाने में बन्द करके स्वयं सम्राट बन बैठा था। राम का यह खयाल उचित और सत्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था कि उनके पिता ने जो वचन दिए हैं वे पुनीत हैं, उसकी रक्षा होनी ही चाहिए। इस सत्य का पालन करने में उनके लिए बड़ा से बड़ा त्याग भी नगण्य या मामूली था। इस सत्य का पालन करने के लिए उन्होंने बनवास के कष्ट सहन किए और राजकीय सुख-सम्पदा तथा वैभव-विलास को ठुकरा दिया।

हरिश्चन्द्र—राजा हरिश्चन्द्र ने अपने वचन का पालन करने के लिए अपना सारा राजपाट महर्षि विश्वामित्र को समर्पित करके जीवन की घोरतम आपदाओं को सहन करना ही उचित समझा। सत्यपरायण हरिश्चन्द्र सत्य और त्याग के स्वयं प्रतीक बन गए।

प्रह्लाद—अपने पिता की भयानक धमकियों की कोई परवाह न करके प्रह्लाद जैसे बालक ने रामराम जपना बन्द नहीं किया, क्योंकि उसे हमें ठीक समझा था। इसके लिए उनके पिता ने उन्हें पर्वत के शिखर पर से नीचे फेंकवा दिया, हाथी के पैरों से कुचलवाया, आग में जलाया, लेकिन प्रह्लाद सत्य से तनिक भी विचलित नहीं हुए। वह ईश्वर में विश्वास रखते थे और ईश्वर ने उनकी रक्षा की।

(४) भीष्म-पितामह—कुरुक्षेत्र के सुप्रसिद्ध महारथी भीष्म-पितामह ने अपने पिता की ऐन्द्रिक लालसाओं की पूर्ति करना उचित समझा, हालांकि वृद्धावस्था में उनकी इस प्रकार की ऐन्द्रिकता सर्वथा अस्वाभाविक तथा अवांछित थी। भीष्म ने एक कर्त्तव्य परायण पुत्र की भांति प्रतिज्ञा की कि राजसिंहसन का उत्तराधिकारी वे न होंगे, उनका यह उत्तराधिकार उनके पिता की इच्छाओं की पूर्ति करने में बाधक न होगा। इतना ही नहीं उन्होंने यह भी प्रतिज्ञा की वे भविष्य में राजसिंहासन के लिए भविष्य में कोई झगड़ा न होने देने के लिए आजीवन अविवाहित रहेंगे—वे अपना विवाह भी न करेंगे। वह ईश्वर में विश्वास रखते थे, उन्होंने जो ठीक या उचित समझा वही किया।

आधुनिक समय में ऐसे भी अनेक ज्वलन्त उदाहरण मिल सकते हैं जब कि लोगों ने अपने जीवन को खतरे में डालकर अपने कर्त्तव्य का पालन किया है, जिसपर भारत गर्व कर सकता है। हम अपने इन महापुरुषों का अब भी स्मरण करके अपने को गौरवान्वित समझते हैं। इन महान् आत्माओं को विशेषतः हम इसलिए और भी आदर एवं श्रद्धा की दृष्टि से देखते हैं क्योंकि उनमें अपने दृढ़-विश्वास को चरितार्थ करने का महान साहस था। उन्होंने सत्य का अनुसरण करने में इतने महान त्याग और असाधारण कष्ट सहन किए हैं। जो किसी साधारण मनुष्य के बूते के बाहर की बात जान पड़ती है।

सम्भाव्य प्राकृतिक-चिकित्सक की मुख्य कठिनाई

यह कहने की आवश्यकता नहीं कि एक प्राकृतिक-चिकित्सक जिस मार्ग को ठीक समझता है उसका अनुसरण करने में उसे कोई इस तरह की कठनाइयों का सामना करने या कोई महान त्याग करने की आवश्यकता नहीं पड़ती। प्राकृतिक-चिकित्सा के मार्ग का अनुसरण करने के सम्बन्ध में उसकी सबसे बड़ी आशंका यही हो सकती है कि इस तरह का जीवन-यापन करना उसके लिये सम्भवतः बहुत जोखिम का काम होगा, मुमकिन है कि वह अपना गुजर-बसर के लिए काफी धन न कमा सके। लेकिन यदि वह जिस सिद्धान्त को सत्य समझता है उसमें उसकी सच्ची निष्ठा और भक्ति है तो वह इस तरह के विचारों से निराश या हतोत्साह नहीं हो सकता। प्राकृतिक जीवन व्यतीत करने में बहुत कम अभाव या आवश्यकताओं का अनुभव करना पड़ता है। और यदि इन अभावों या आवश्यकताओं की पूर्ति कर ली जाय तो इसमें सच्चे सुख संतोष का अनुभव होता है। यह कथन बिलकुल सत्य है कि आदमी का बड़प्पन उसके किसी बड़े—अधिक आमदनी वाले—कार्य में लगे रहने में नहीं है, उसका बड़प्पन इसमें नहीं है कि उसका जीवन बहुत ही वैभव पूर्ण हो, बल्कि वह इस बात में निहित है कि उसके जीवन में बहुत कम अभाव हों—वह आवश्यकताओं का गुलाम न हो। 'हितोपदेश' का कथन है कि 'हम इस पेट की भूख को तो वन्य फलों और शाक-पात से शान्त कर सकते हैं, तो फिर पेट के लिए भला कौन पाप करने या दूसरों की निःस्वार्थ सेवा करने के अवसर को गंवाने जाय? सुकरात् की भांति एक प्राकृतिक-चिकित्सक भी दूसरों के भड़कीले पोशाक और प्रचुर सम्पति को दूर से देखकर यह कह सकता है, "ओह, मैं ऐसी कितनी चीजें अपनी आँखों के सामने देखता हूँ जिनको न तो मैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहता हूँ और न जिनको प्राप्त करने के लिए मुझे परेशान होने की ही कोई जरूरत है"। यदि एक प्राकृतिक-चिकित्सक अपने मन में यह ध्रुव-धारणा जमा ले कि यदि परमात्मा प्रत्येक प्राणी को जीवन-दान देता है, यदि वह माता के गर्भ में रहने वाले शिशु को भी भोजन पहुंचाता है, जो सिंह, व्याघ्र, सर्प और बिच्छू जैसे हिंस्र और जहरीले जानवरों की भी सृष्टि करता है, जो हरे भरे उपवन को सहारा के सुनसान रेगिस्तान में परिणत कर सकता है तो वह उसे (प्राकृतिक-चिकित्सक को) कभी भूल नहीं सकता, खास करके ऐसी अवस्था में जब कि वह निस्वार्थ, सहानुभूति पूर्वक, अपने देशवासियों को सताने वाली भयानक रोग-व्याधियों तथा असामयिक मौतों से छुटकारा दिलाने के लिए प्रयत्नशील हो रहा है, जो उनका संहार करना नहीं बल्कि जो उनकी रक्षा करना, उन्हें स्वास्थ्य एवं आरोग्य प्रदान करना चाहता है, जो धन और स्वास्थ्य दोनों का अपहरण करने वाली रोग-व्याधियों के अन्धकार में भटकने वाले देशवासियों को प्रकृति का कल्याणकारी सन्देश सुनाना चाहता है, जो उन्हें स्वस्थ, सुखी, शक्ति-सम्पन्न तथा दीर्घजीवी होने की प्रबल उत्कण्ठा रखता है उसकी वह अवश्य सहायता करेगा। यदि प्रकृति के नियमों की, जिनसे संसार के असंख्य प्राणियों का जीवन संचालित हो रहा है, लोग अपेक्षा न करते, उनसे यदि वे अपने को सर्वथा अपरिचित न बनाए रहते तो वे आज इस तरह अस्वस्थ, रोग ग्रस्त तथा दुखी न बनते, इस प्रकार के प्रयत्न में उन्हें जितना श्रम करना पड़ता या जितनी परेशानियां उठानी पड़ती हैं उसके केवल आधे यत्न या परिश्रम से स्वस्थ, रोग-रहित होकर दीर्घायुष्य का उपभोग करते। प्राकृतिक-चिकित्सक का जीवन-क्रम तथा इस जीवन में तथा अगले जीवन में प्राप्त होने वाली हर प्रकार की सफलता का शिलाधार होता है। एक प्राकृतिक-चिकित्सक अपने रोग-व्याधि पीड़ित साथियों की बहुमूल्य सेवा करने में अनवरत लगा रहता है और इस प्रकार वह परमात्मा का महान आशीर्वाद प्राप्त करता है। निस्सन्देह परमात्मा के आशीर्वाद से वह अभावों से परे बना रहेगा। इसके अतिरिक्त लगातार दूसरों की भलाई में लगा रहकर वह स्वयं अपना भी भला करता है। क्योंकि दूसरों को प्राकृतिक जीवन व्यतीत करने का उपदेश करते हुए उसे स्वयं भी प्राकृतिक जीवन को अपनाना पड़ता है और प्राकृतिक जीवन को अपनाने के फलस्वरूप वह स्वास्थ्य, आरोग्य दीर्घायुष्य का बरदान प्राप्त करता है और इस प्रकार वह इस कथन को चरितार्थ करता है कि 'पुण्य मनुष्य के लिए स्वतः बरदान और पाप स्वतः अभिशाप या दण्ड है।' सत्य एवं ब्रह्मचर्य को अपना अभिन्न साथी बना कर वह अपने को जीवन की उन वैभव-विलासिताओं से विमुख बना लेता है जो बड़ी चतुराई के साथ उसकी प्राण-शक्ति का, जिसका अपव्यय कदापि न होना चाहिए, अनवरत शोषण करती रहती है। इस प्रकार वह 'सादा जीवन, उच्च विचार' के आदर्श को ग्रहण करता है। उसके अलावा दूसरों की भलाई में बराबर लगे रहने से वह आत्म-सन्तोष प्राप्त होता है जो कि मनुष्य के लिए शक्ति का अक्षय भण्डार है जो कि वह अमोघ अस्त्र है जिसके सामने उसे कोई अभाव सता ही नहीं सकता— जिसके द्वारा जीवन के अभावों का बड़ी आसानी से निवारण किया जा सकता है। वह क्रिया एवं प्रतिक्रिया के नियम को अच्छी तरह समझ जाता है जिससे उसे अपने सेवा कार्य को जारी रखने में आत्म-विश्वास हो जाता है। वह इस बात को हमेशा याद रखता है कि परमात्मा को प्राप्त करने का सब से सरल उपाय यही है कि दूसरों को स्वस्थ रहने और खोये हुए स्वास्थ्य को पुनः प्राप्त कर लेने का रास्ता बताये। थियासाफिस्टों का तो यही कहना है कि जो वस्तुतः सहायता के अधिकारी हैं उनकी सहायता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के लिए एक अदृष्ट शक्ति सदैव विद्यमान रहती है। यदि कोई प्राकृतिक चिकित्सक ईश्वर में विश्वास रखता है, सत्कार्य करता है और दूसरों को वही उपदेश देता है जिसे वह सत्य या ठीक मानता है, जो इस सत्य का प्रतिपादन करता है कि आत्म-विश्वासघाती मनुष्य न तो कभी सन्तुष्ट रह सकता है और न कभी सुखी, उसे अपने प्रयत्न में सफलता मिलनी आवश्यम्भावी है; उसे इस बात के लिए पश्चाताप करने का कोई कारण नहीं कि उसने अपने जीविकोपार्जन के साधन के रूप में प्राकृतिक-चिकित्सा को अपनाकर गलती की।

इस तरह के विचारों का मुझ पर विशेष रूप से प्रभाव पड़ा और एक प्राकृतिक चिकित्सक का जीवन व्यतीत करने का निश्चय करके मैंने वही किया जो कि मैंने सत्य या उचित समझा। मैंने ईश्वर में विश्वास रखकर वृद्धिंगत कानूनी पेशे का परित्याग कर दिया और प्राकृतिक चिकित्सा के पथ को अपनाया, यद्यपि रोगियों की रूढ़िवादी अथवा परिवर्तन विरोधी भावना को देखते हुए प्रकट रूप से मेरा पथ अन्धकार पूर्ण, बीहड़ भयानक जान पड़ता है, फिर भी मैंने संकल्प कर लिया है कि इस पथपर मैं साहसपूर्वक आगे बढ़ूँगा, क्योंकि मेरा दृढ़ विश्वास है कि इस तिमिराछन्न आकाश में वह ध्रुवतारा मौजूद है जो लघु तथा विनीत व्यक्तियों का अवश्य पथ-प्रदर्शन करेगा।

जीवन सखा के पंजाबी पाठकों के लिए शुभ-समाचार

जीवन सखा के पंजाबी पाठकों को यह जान कर अत्यन्त हर्ष होगा कि उनकी सेवा के लिये अमृतसर में एक प्राकृतिक चिकित्सालय खोल दिया गया है।

यहां पर हर तरह के पुराने व नये रोगों की चिकित्सा प्राकृतिक ढंग से की जाती है—जैसे दमा; गठिया, बवासीर, पेचिश, अधरंग, नपुंसकता, पुरानी खांसी, मलांत्र-प्रदाह (एपेन्डिसाइटिस) चर्मरोग, इत्यादि। पत्र-व्यवहार द्वारा भी चिकित्सा की जाती है। पत्र-व्यवहार कृपया निम्न पते पर करें:—

डा० जसवंत सिंह
नेचर क्योर हेल्थ होम रंजितपुरा
पो०—खालसा कालेज, अमृतसर
(पंजाब)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डायबिटीज़

श्री महेन्द्रनाथ पाण्डेय, आयुर्वेद विशारद

श्री महेन्द्रनाथ पाण्डेय जी के हमारे पाठक भली भांति परिचित हो चुके हैं। 'जीवन सखा' में अनेक उपयोगी लेखों के अलावा अबतक प्रायः एक दर्जन पुस्तकें भी प्रकाशित हो चुकी हैं, जिन्हें अपनी उपयोगिता के कारण काफी लोकप्रियता प्राप्त हुई है। आपकी नवीनतम कृति 'प्रमेह विवेचन' प्रेस में छप रही है। उसी का एक अंश यहाँ पर दिया जाता है। यह पुस्तक स्वास्थ्य प्रेमियों के लिए कितनी मूल्यवान होगी, उसका अन्दाज आप इस लेख से लगा सकते हैं। —सं०

प्रमेह को एलोपैथ डायबिटीज कहते हैं। डायबिटीज से प्रमेह सम्बन्धी सभी रोगों का बोध नहीं होता केवल बहुमूत्र और प्रमेह या मधुमेह का ही बोध होता है। यह डायबिटीज दो तरह का होता है, एक में पेशाब में चीनी आती है, दूसरे में चीनी नहीं आती। जिस डायबिटीज में चीनी आती है वह बहुत दुख दायी होता है और कठिनता से जाता है। डायबिटीज के नाम से अकसर उसी का बोध होता है।

जिस डायबिटीज में चीनी नहीं आती उसमें पेशाब का रङ्ग पानी की तरह होता है, पेशाब बहुत अधिक मात्रा में बार बार होता है अधिक शारीरिक परिश्रम के कारण यह रोग अक्सर हुआ करता है, परन्तु स्नायुओं की कमजोरी इस रोग की जननी है। मस्तिष्क और मेरुदण्ड के स्नायुओं की खराबी और कमजोरी के कारण ही यह रोग होता है। अधिक चिन्ता और मानसिक परिश्रम भी इस रोग के कारण बनते हैं।

इस रोग में पेशाब अधिक मात्रा में और बार बार होता है, पेशाब का रंग पानी जैसा होता है, उसमें चीनी वगैरह कुछ नहीं होती है। यह बहुमूत्र का रोग है, इसी को मूत्रातिसार भी कुछ लोग कहते हैं।

चिकित्सा

इस रोग को आराम करने के लिए शारीरिक और मानसिक दोनों प्रकार का विश्राम बहुत आवश्यक है। रोगी को एकदम आराम देना चाहिए। उसके मन की चिन्ताएं और फिक्र दूर करने का प्रयत्न करना चाहिए और उसे प्रसन्न रखना चाहिए। गहरी साँस लेने का अभ्यास करना चाहिए। गहरी साँस सदैव खुली हवा में लेना चाहिए और इसके लिए सब से उपयुक्त समय प्रातःकाल है। सूर्य-स्नान और वायु-स्नान बहुत ही आवश्यक होते हैं। सप्ताह में दो तीन दिन सूखी मालिश अथवा तेल की मालिश करनी चाहिए। प्रातःकाल और सायं काल खुली वायु में टहलना बहुत गुणकारी होता है।

आरम्भ में रोग की अवस्था देखकर ४ दिनों से लेकर १० दिनों तक के उपवास की आवश्यकता रहती है। उपवास में सन्तरे का रस या ऐसे ही पतले रस वाले फलों का रस लेना चाहिए। घंटे-घंटे भर पर गरम जल में नीबू का रस डाल कर पीना चाहिए। प्रतिदिन शाम को गरम पानी का एनिमा लेना चाहिए। उपवास का समय समाप्त होने पर फलाहार आरम्भ करना चाहिए। इस प्रमेह में केला शहद के साथ खाने से बड़ा लाभ रहता है। आँवले का रस शहद के साथ खाने से भी लाभ करता है। अतः फलों में केला और आँवले को प्रधानता दी जानी चाहिए। मोसमी फल खाये जा सकते हैं। नासपाती, सेब, दाख, सन्तरे नींबू, अमरूद ये सभी लाभदायक होंगे। किशमिश अंजीर, छुहारे में भी इस प्रमेह में लाभ पहुचाते हैं परन्तु इनको कम खाना चाहिए। परवल, करैला, गोभी, गाजर, टमाटर आदि तरकारियाँ उबालकर खानी चाहिए, फलहार करते समय एक बार एक ही फल खानी चाहिए और दिन भर में तीन बार से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधिक न खाना चाहिए । इस नियम का पालन कठोरता के साथ करने की आवश्यकता पड़ती है । फलाहार के समय कुछ दूध लिया जा सकता है । परन्तु स्टार्च और चीनी एकदम बन्द कर देने की आवश्यकता रहती है। फलहार करते समय भी गरम पानी का एनिमा लेते रहना चाहिए ।

१०-१५ दिन या जितने दिनों की आवश्यकता हो फलाहार करके रोटी आरम्भ करनी चाहिए । रोटी पर एकदम नहीं आ जाना चाहिए बल्कि धीरे धीरे आना चाहिए । रोटी जव की खानी चाहिए । जव की रोटी और ऊपर बताई हुई कोई तरकारी उबली हुई ली जा सकती है। तरकारी में किसी भी तरह का मसाला नहीं पड़ना चाहिए । जो लोग मसाले बिना न रह सके वे धनियाँ, जीरा, हल्दी नमक और बहुत ही कम काली मिर्च को कभी-कभी थोड़ी मात्रा में डाल सकते हैं। रोटी केवल दोपहर को खानी चाहिए और शाम को फलाहार करना चाहिए और थोड़ी मात्रा में दूध लेना चाहिए । प्रातःकाल यदि नाश्ते की आवश्यकता हो तो किसी मौसमी फल अथवा किशमिश और अंजीर आदि का ही नाश्ता करना चाहिए । यदि इच्छा हो तो जव में इसका आठवाँ हिस्सा चने का आटा भी मिलाया जा सकता है। रोटी का आहार लेते समय भी गरम पानी का एनिमा लेना आवश्यक होता है ।

एक मास तक रोटी और फल का आहार करने के बाद यदि रोग शेष रह गया हो तो फिर उपवास आरम्भ करना चाहिए और जो क्रम ऊपर बताया गया है उसे पूरा दुहरा देना चाहिए। रोग की अवस्था के अनुसार एक बार अथवा तीन बार इस पूरे क्रम को दुहराने की आवश्यकता पड़ती है। कभी-कभी किसी-किसी को और अधिक दिनों तक इस क्रम को दुहराना पड़ता है ।

प्रमेह में ब्रह्मचर्य व्रत की बड़ी आवश्यकता रहती है। हिपबाथ और सिट्जबाथ प्रायः प्रतिदिन लेना पड़ता है। ठंडे जल का स्नान प्रमेह मात्र के लिए उपयोगी है इसे न भूलना चाहिए। सप्ताह में कम से कम चार दिन सूखा घर्षण स्नान करने की जरूरत पड़ती है। सप्ताह में एक दिन या दो दिन गरम जल में एक चम्मच सेंधा नमक डाल कर उस जल से स्नान करना चाहिए।

खटाई, मिर्चा, मसाला, अचार और चटनी, सिरका, गरम पदार्थ और चीनी और स्टार्च वाली चीजें एकदम बन्द कर देनी चाहिए।

मधुमेह

जब भोजन आंतों में पच जाता है तब वह अन्तिम पाचन के लिए अथवा रक्त बनने के लिए एक नस द्वारा, जो इसी काम के लिए है लिवर या यकृत में भेज दिया जाता है, वहाँ रस रक्त बनता है। इसी बात को आयुर्वेद यों कहता है कि भोजन से जो रस बनता है वह यकृत में रंजक-पित्त द्वारा रंगा जाता है और रक्त बनता है।

जो कार्बोहाइड्रेट (स्टार्च और चीनी) हम अपने भोजन में लेते हैं उसका भी रस खिंच कर यकृत में जाता है क्योंकि यकृत में भोजन का सार अंश ही भेजा जाता है, उसकी सीठी तो आंतों में ही अलग हो जाती है। वह कार्बोहाईड्रेट हमारे रक्त में सीधे नहीं मिलता। उसको रक्त में मिलने लायक चीनी में बदलना पड़ता है। रक्त में मिलने लायक चीनी में बदलने का काम लिवर करता है और चूँकि रक्त लीवर ही में बनता है इसलिए जितनी चीनी की आवश्यकता रक्त में रहती है उतनी ही चीनी रक्त में मिलती है। जो चीनी रक्त में मिलती है वह घुलनशील होती है। जो चीनी रक्त में मिलने से फाजिल पड़ती है वह अनघुल चीनी में बदल दी जाती है, यह काम भी लिवर को ही करना पड़ता है। इस अनघुल चीनी को वैज्ञानिक भाषा में ग्लाइकोजेन (Glycogen) कहते हैं। यह ग्लाइकोजेन लिवर के कोषों में जमा हो जाता है। जब हमें भूख लगती है और हम भोजन नहीं करते अथवा उपवास के दिनों में शरीर की शक्ति कायम रखने के लिए शरीर को कार्बोहाइड्रेट की जरूरत पड़ती है तब वही ग्लाइकोजेन फिर घुलनशील चीनी बदल कर रक्त में लिवर मिला देता है और शरीर की शक्ति कायम रहती है।

जब लिवर कमजोर हो जाता है और अपना अच्छी तरह नहीं कर पाता तब इस कमजोरी के कारण रक्त में जितनी चीनी की जरूरत रहती है उससे ज्यादा चीनी मिल जाती है और जब यह रक्त गुरदे में छनने के लिए जाता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है तब फालतू चीनी अलग कर दी जाती है। यह चीनी ग्लूकोज होती है। इसलिए पेशाब में पाई जाने वाली चीनी भी ग्लूकोज होता है। इसीलिए डाक्टर लोग पेशाब में पाई जाने के रोग को ग्लूकोज यूरिया या ग्लूकोसूरिया भी कहते हैं।

पैनक्रिया का विकार

पैनक्रियाटिक रस या इनसूलिन का प्रभाव जब स्टार्च पर नहीं पड़ता और अनपची चीनी जब लीवर में भेज दी जाती है तब वह अपनी कमजोरी के कारण अनपची अवस्था में ही उसे रक्त में डाल देता है और वह चीनी में गुरदे से छन कर पेशाब में आ जाती है। वस्तुतः पैनक्रिया और लीवर दोनों ही यन्त्र जब खराब हो जाते हैं तभी मधुमेह या डायबिटीज नामक रोग होता है। साथ ही स्नायुओं की कमजोरी भी इस रोग के बढ़ाने में सहायक होती है।

डायबिटीज का रोगी जो कुछ स्टार्च या कार्बो हाइड्रेट खाता है, वह रक्त में मिलता नहीं बल्कि रक्त वहां नालियों में फेंक दिया जाता है। उसका कोई भी उपयोग शरीर नहीं कर पाता। इससे शरीर को कोई शक्ति नहीं मिलती। यही चीनी पेशाब में आ जाती है। कुछ लोगों की हालत यहाँ तक बिगड़ जाती है कि रोगी यदि स्टार्च खाना बन्द कर दे तो जो प्रोटीन या वसा वह खाता है उसी की चीनी बन जाती है और पेशाब में चीनी जाना जारी रहता है। यह जरूर है कि प्रोटीन से चीनी उतनी अधिक मात्रा में नहीं बनती जितनी स्टार्च से बनती है और एक निश्चित मात्रा तक ही सीमित रहती है। यह रोग की बढ़ी हुई दशा है।

दो प्रकार के रोगी

इस मर्ज के रोगी दो तरह के पाये जाते हैं। पहली श्रेणी में वे लोग हैं जिनको भूख अधिक नहीं लगती और प्यास की भी बेचैनी नहीं रहती। इनकी भूख और प्यास साधारण रहती है। इनके पेशाब में चीनी भी अधिक परिमाण में नहीं निकलती। यह अवस्था उन लोगों की होती है जिनको यह रोग अधेड़ अवस्था के बाद होता है।

दूसरी श्रेणी में जो लोग आते हैं उनको भूख बहुत लगती है, प्यास भी अधिक लगती है, खूब खाते हैं और इनके पेशाब में चीनी भी बहुत अधिक मात्रा में आती है। यह अवस्था उन लोगों की होती है जिनको युवावस्था में या इससे भी पहले यह रोग हो जाता है।

ऊपर जो दो भेद बताये गये हैं वे नियमानुकूल नहीं हैं और न यह कोई सिद्धान्त की बात है। पहली श्रेणी के रोग दूसरी श्रेणी में बदल जाते हैं। रोग साध्य से असाध्य भी हो जाता है।

जब प्यास कम रहती और अधिक नहीं लगती रोगी स्टार्च वाले भोजन बन्द कर देते हैं और प्रोटीन वाले भोजन और थोड़ी मात्रा में वसा जैसे मक्खन आदि खाते हैं तो उनके पेशाब में चीनी की मात्रा कम हो जाती है परन्तु दूसरी श्रेणी के रोगियों की दशा बड़ी शोचनीय होती है उनको प्रोटीन और वसा वाले भोजन करने से लाभ नहीं होता प्रोटीन और वसा खाने से भी उनके पेशाब में चीनी जाती है। हाँ, यह बात अवश्य होती है कि स्टार्च वाला भोजन बन्द कर देने से चीनी की मात्रा कुछ कम हो जाती है और एक सीमित मात्रा में निकलती है।

जब रोग पुराना पड़ने लगता है और बढ़ने नहीं लगता है तब रोग की पहली अवस्था खतम हो जाती है और उसकी दूसरी ही अवस्था आ जाती है और फिर प्रोटीन से भी चीनी की मात्रा कम नहीं होती। हृदय कमजोर हो जाता है और धड़कन बढ़ जाती है तथा पाँव में सूजन आ जाती है रक्त पतला पड़ जाता है।

इस रोग के लक्षण यह हैं कि रोगी का चमड़ा रूखा हो जाता है, मसूड़े पीले पड़ जाते है और ढीले हो जाते हैं, वजन बराबर घटता जाता है, प्यास बहुत अधिक लगती है गला सूखता है क्योंकि चीनी निकल जाने से कफ क्षीण होता जाता है और पित्त या गरमी बढ़ती जाती है हृदय कमजोर हो जाता है, उसकी धड़कन बढ़ जाती है इसके साथही और भी कोई लक्षण प्रगट हो जाते हैं जैसे पाँव में सूजन आ जाना।

आयुर्वेदीय मत

आयुर्वेद की दृष्टि से देखा जाय तो हम यह कहेंगे कि एलोपैथी में दोषों के घटने-बढ़ने का विचार नहीं रखा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाता। इसलिए यह गड़बड़ी रहती है कि असली कारण पर परदा पड़ा रहता है।

डाक्टरों ने मधुमेह के जो लक्षण बताये है उनमें कफ के भी लक्षण मौजूद हैं और वायु के भी। जब वायु की अधिकता होती है तभी रोगी का शरीर रूखा हो जाता है और रोगी जल्दी-जल्दी अधिक कमजोर होता है और जब कफ की अधिकता होती है तब रोगी अधिक कमजोर नहीं होता कफज प्रमेह भी पुराना पड़ जाने पर मधुमेह में बदल जाता है। क्योंकि वायु अधिक बिगड़ जाता है और तभी रोग असाध्य होता है।

चरक ने भी मधुमेह का कारण कफकारी भोजन भी माना है और धातुओं का क्षीण होना भी माना है। यह भी सम्भव है कि पहले कफकारी आहार-बिहार के कारण कफ बढ़कर कफ का प्रमेह उत्पन्न कर दे और बाद को धातुओं के क्षीण हो जाने से वायु बढ़ जाय और रोग असाध्य हो जाय।

आयुर्वेद में लिखा है—अपने कारणों से कुपित होकर जब वायु अपने रुक्ष और कषाय स्वभाव के कारण को खींच लेता है और मूत्राशय में ले जाकर पेशाब द्वारा निकालने लगता है तब मधुमेह नामक प्रमेह उत्पन्न होता है।

मधुमेह के जहाँ अनेक कारण और धातुओं का क्षय आदि बताया गया है वहां चरक ने कुछ विशेष कारण बताये हैं लिखा है—भारी, चिकने, खट्टे, और नमकीन पदार्थों के अधिक सेवन से नवीन अन्न खाने से बहुत जल अथवा मद्य के पीने से; बहुत सोने से, बहुत सुखपूर्वक बैठे रहने से, कसरत न करने से, बे फिकर रहने से, संशोधन कम लेने से, कफ, पित्त, मांस और मेदा बहुत बढ़ जाते हैं फिर उनसे आवृत होकर वायु ओज धातु को लेकर वस्ति स्थान में आ जाता है और असाध्य मधुमेह उत्पन्न करता है। कितना स्पष्ट वर्णन है। स्टार्चों और चीनी वाले पदार्थ अधिक खाने से जब यकृत उनका उपयोग नहीं कर सकता तब उस ग्लूकोज को जो ओज रूप है वायु वस्ति अर्थात् मूत्राशय में फेंक देता है। चीजों को एक जगह से दूसरी जगह सरकाने का काम वायु करता है। तभी मधुमेह उत्पन्न होता है। यह चरक का मत आधुनिक एलोपैथी के विचारों से कितना आगे है और इसका निर्णय कई हजार वर्ष पूर्व हो चुका था।

मधुमेह दो तरह के कारणों से होता है। एक तो धातुओं के क्षय होने और वायु के बढ़ जाने के कारण और दूसरा शरीर के स्रोतों या नसों के बन्द हो जाने से पेशाब में जो मधुरता होती है और मधु की तरह जो आदमी पेशाब करता है, पेशाब में मधुरता होने के कारण ये दोनों ही मधुमेह कहे जाते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि इक्षुमेह, शीत मेह आदि कफज प्रमेहों को भी पेशाब में मधुरता के कारण मधुमेह कहा जा सकता है। परन्तु दोषों का निश्चय हो जाने पर चिकित्सा में आसानी हो जाती है। कफज प्रमेह अच्छे हो जाते है और धातुओं के क्षीण होने से वायु के बढ़ने पर जो मधुमेह होता है वह प्रायः नहीं अच्छा होता।

इस रोग में बहुत से रोग उपद्रव स्वरूप भी खड़े हो जाते हैं। खास-खास रोग ये हैं, जो इस रोग में पैदा हो जाते हैं—

सन्यास या मूर्च्छा, फेफड़े के रोग, राजयक्ष्मा, शोष, स्नायु-दौर्बल्य, कारबंकिल आदि। कारबंकिल से अकसर मृत्यु तक हो जाती है। रोगी बहुत दुर्बल हो जाता है, बहुत से लोगों की आंखों में मोतियाबिन्द भी इसी रोग के कारण हो जाता है।

मधुमेह के शिकार

कुछ डाक्टरों का खयाल है कि यह रोग मुसलमानों की अपेक्षा हिन्दुओं को अधिक होता है क्योंकि हिन्दू लोग ज्यादातर स्टार्च-प्रधान भोजन ही करते हैं। मुसलमान लोग मांसाहारी होने के कारण प्रोटीन अधिक खाते हैं। स्मरण रखना चाहिए कि अधिक प्रोटीन भी रोग का कारण होता है। उससे कोई अन्य रोग हो सकता है। यहूदी लोगों को भी यह रोग अधिक होता है। क्योंकि धनी होने के कारण उनका भोजन भी सदोष होता है।

यह रोग अकसर अधेड़ उम्र के बाद होता है। बचपन में बहुत कम होता है। हिन्दुस्तान में जवान आदमियों को भी यह रोग बहुत कम होता है। परन्तु यूरोप आदि में अधिक लोगों को होता हैं यह तीव्र मधुमेह होता है। पुरुषों की अपेक्षा यह रोग स्त्रियों को कम होता है। परन्तु गर्भावस्था में स्त्रियों को अकसर मधुमेह हो जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धनी लोग जो दिमागी काम करते हैं, जो खाते बहुत अच्छा है, सोच-फिकर करते हैं, परन्तु शारीरिक परिश्रम बिलकुल नहीं करते उन्हीं को यह रोग अथवा प्रमेह का रोग होता हैं। डाक्टर, वैद्य, वकील, प्रोफेसर बड़े-बड़े सेठ साहूकार, पंडित, विद्वान आदि, जिनको शारीरिक परिश्रम नहीं करना पड़ता परन्तु खूब अच्छा भोजन मिलता है। इस रोग के शिकार अधिक होते हैं।

सामन्य लक्षण

इस रोग में पेशाब अधिक मात्रा में होता है। पेशाब की स्पेसेफिक ग्रेवेटी (आपेक्षिक गुरुत्व) बहुत बढ़ जाता है। शरीर की माँस-पेशियां दिन पर दिन कमजोर होती जाती है। रोगी चाहे जितना भी खाता है खाने की तृप्ति नहीं होती। परन्तु वह जितना ही खाय है किन्तु उसे कमजोर होता जाता है। रोगी को अक्सर अजीर्ण का रोग रहा करता है।

जीभ का रंग अजीब तरह का लाली लिए रहता है। वह सूखी मोटी और दरदरादार होती है। रोगी के थूक में शक्कर की मात्रा नहीं पाई जाती परन्तु मधुमेह वालों के मुँह में अक्सर घाव या छाले रहते हैं जो बहुत कष्ट देते हैं।

मधुमेह के रोगी के सिर में दर्द होता है और शरीर में सुस्ती रहती है। किसी के शरीर में कभी यहां कभी वहाँ दर्द होता रहता है।

जब रोग बढ़ जाता है और चरम सीमा पर पहुंचता है तब रोगी की नाड़ी क्षीण हो जाती है। और ऐसा प्रतीत होता है कि दम घुट रहा है उसे ताजी हवा की आवश्यकता प्रतीत होती है। ऐसे बढ़े हुए रोगी के मुँह के सांस में एक खास तरह की मीठी-मीठी बू या गन्ध निकलती है और वह ऐसी होती है जैसे पके सेब की गन्ध हो। इस बढ़ी हुई अवस्था में रोगी अक्सर बेहोश हो जाया करता है।

मधुमेह का रोगी मधुमेह से नहीं मरता। ऐसे रोगियों की मृत्यु अक्सर कारबंकिल या क्षय रोग अथवा निमोनिया या दस्त की बीमारी के कारण होती है इसको यों समझिए कि रोग के उपद्रव में मृत्यु अक्सर होती है।

अन्य रोग

यदि स्त्रियों को यह रोग होता और बढ़ जाता है तो मासिक-धर्म या तो रुक जाता है अथवा कम हो जाता है। पुरुष रोगियों की मैथुन-शक्ति या काम शक्ति एकदम नष्ट हो जाती है।

प्रमेह में मोतियाबिन्द अक्सर हो सकता है। कभी कभी लोग एक दम अचानक अन्धे हो जाते हैं। गुरदे में में सूजन आ जाने से भी आदमी अचानक अन्धा हो सकता है।

किसी-किसी रोगी में आंख के स्नायुओं का प्रदाह होता है तथा रेटिना में भी प्रदाह हो जाता है परन्तु ये दोनों रोग बहुत कम लोगों में होते हैं।

इस रोग में कान की झिल्ली अक्सर सूख जाती है जिसके कारण बहरापन हो जाता है तथा टाँगों में दर्द हुआ करता है।

रोगी अक्सर बेहोश हो जाता है। इस बेहोशी में भी अनेक लक्षण होते हैं। स्वांस ३० से ४० बार तक आने लगती है और नाड़ी की गति १३०-से लेकर १५० तक हो जाती है।

प्रमेह के उपद्रव स्वरूप किसी-किसी रोगी के गैंग्रीन अर्थात पाँव में घाव हो जाता है। और नाखून टूटते हैं।

यदि रोग हलका हो तो रोगी कई वर्ष तक जीवित रहते हैं। जब रोग तीव्र गति से बढ़ता है तब अक्सर क्षय रोग हो जाता है और मृत्यु का कारण हो जाता है। हमने ऐसे रोगियों को देखा है जो मधुमेह होने के बाद पचीसों वर्ष तक जीवित रहे और साधारणतया उनका सब काम ठीक ही रहा।

इस रोग में स्नायु सम्बन्धी परिवर्तन प्रायः नहीं पाया जाता, परन्तु वे कमजोर हो जाती हैं, दिमाग के परदे में अक्सर गिल्टी पाई जाती है अथवा वह पर्दा विकृत हो जाता है।

इस रोग में यकृत में सिरोसिस हो जाता है। कुछ रोगियों में पैनक्रियाएं सिकुड़ जाती है और भीतर की तरफ फैटी डिजेनरेशन पाया जाता है, इसी कारण चीनी का पाचन ठीक ढंग से नहीं हो पाता।

रक्त की परीक्षा करने पर उसमें ग्लाइकोजन (चीनी का अनघुल रूप) पाया जाता है। यह चीज स्वस्थावस्था में भविष्य के लिए जमा रखी जाती है, रोगावस्था

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में लिवर के खराब होने के कारण रक्त में फेंक दी जाती है।

शकर की मात्रा रक्त में बहुत अधिक पाई जाती है। और रक्त का क्षार भाग बहुत कम हो जाता है। रक्त में क्षार की मात्रा बढ़ाने से ही यह रोग दूर होता है। रक्त में चर्बी का अंश बढ़ जाता है। जब रक्त जमता है तब मलाई की तरह चर्बी ऊपर जमी हुई दिखाई देती है।

पेशाब की दशा

इस रोग में पेशाब की मात्रा बहुत अधिक बढ़ जाती है, प्रतिदिन साढ़े तीन या पौने चार सेर से लेकर ७-८ सेर तक पेशाब होता है। स्पेसिफिक ग्रेविटी या गुरुत्व १०२५ से १०४५ या इससे भी अधिक तक हो जाती है। एक औंस पेशाब में एक ग्रेन से लेकर ४० ग्रेन तक चीनी जाती है। किसी-किसी रोगी में प्रतिदिन २० औंस तक चीनी जाती हुई पाई जाती है। पेशाब में यूरिया और फासफेट दोनों बढ़ जाते हैं परन्तु यूरिक एसिड की मात्रा नहीं बढ़ती। रोग के बहुत बढ़ जाने पर पेशाब में एलब्यूमिन भी पाया जाता है।

उपद्रव के रूप में एक्जिमा हो जाता है। स्त्रियों की योनि पर अक्सर एक्जिमा हो जाता है और उसमें बहुत खुजली होती है।

अगर रोग हल्का हो तो रोगी को पेशाब की अधिकता और अजीर्ण के सिवा प्रायः और कष्ट नहीं होता और बहुत अधिक दिनों तक मामूली स्वास्थ्य कायम रहता है और रोगी साधारणतया अपनी जिन्दगी चलाता जाता है।

कुछ डाक्टरों का खयाल है कि मधुमेही की सन्तान को क्षय रोग होने की संभावना अधिक रहती है और क्षय रोगी की सन्तान को मधुमेह होने की।

चिकित्सा

पेशाब में चीनी आने का रोग डाक्टरों के लिए और अन्य विधि से चिकित्सा करने वाले सामान्य चिकित्सकों के लिए एक कठिन समस्या है। ये डाक्टर और चिकित्सक रोग के लक्षण को दबाने का प्रयत्न करते हैं। उसे जड़ से आराम करने के लिए उनके पास कोई उपाय ही नहीं है। डायबिटीज ही नहीं प्रायः सभी छोटे बड़े रोग ऐसे चिकित्सक दबाया करते हैं। जो रोग जड़ से अच्छा नहीं किया जाता, जिस रोग के कारण को दूर नहीं किया जाता है और केवल लक्षणों को दूर करने का प्रयत्न किया जाता है उसी चिकित्सा को शामक-चिकित्सा या 'सप्रेसव ट्रीटमेंट' कहते हैं।

एलोपैथ डाक्टरों ने डायबिटीज या मधुमेह को दूर करने के लिए इनसुलिन नामक औषधि का आविष्कार किया है। इस औषधि का इन्जेकशन देकर वे लोग पेशाब में चीनी आना एक दम बन्द कर देते हैं। जिस समय इस उपकारी औषधि का आविष्कार हुआ था इसकी प्रशंसा खूब लम्बी चौड़ी की गई थे परन्तु हम देखते हैं कि आज भी अनेक रोगी है जिनको इनसुलिन-चिकित्सा से कोई लाभ नहीं हुआ। और न तो इस चिकित्सा के फलस्वरूप मधुमेह रोगियों की संख्या ही घट सकी।

सैकड़ों लोगों ने हम को यह लिखा कि इन्जेकशन लेने के बाद भी उनका रोग नहीं गया। कोई-कोई सज्जन लिखते हैं कि पहली बार जब उनको यह रोग हुआ था तब इन्जेक्शन से आराम हो गया था अथवा दब गया था परन्तु अब उनको इन्जेक्शन से कोई लाभ नहीं होता और निराश होकर उनको और चिकित्सकों के पास जाना पड़ा क्योंकि डाक्टरों के पास इस चिकित्सा के अतिरिक्त और उपाय ही नहीं है। क्या ऐसे बयान इस चिकित्सा विधि के खोखलेपन को नहीं प्रकट करते।

इनसूलिन और कुछ नहीं है महज यह पैनकियास का रस है। इसे वैज्ञानिक लोग वैज्ञानिक विधि से पशुओं की 'पैनक्रियास' नामक ग्रन्थि से निकालते हैं और सुइयों द्वारा रक्त में पहुँचा कर चीनी की मात्रा कम करते हैं। यह औषधि मुंह द्वारा भी खलाई जाती है।

इस प्रकार की चिकित्सा से हाजमें में सुधार नहीं होता, लिवर की क्रिया ठीक नहीं होती, बिगड़ा हुआ पैनक्रिया नामक पत्र नहीं सुधरता। इसीलिए इन्जेक्शन का प्रभाव खतम होने पर दूने वेग से रोग बढ़ता है और फिर इन्सूलिन के रोके नहीं रुकता और जिन लोगों का अटूट विश्वास इनसूलिन में होता है उनके हृदय को बड़ा धक्का लगता है और इस औषधि पर से विश्वास उठ जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रमेह मात्र की प्रभावशाली चिकित्सा यही है कि शरीर के भीतरी अंगों के स्थित विष को बाहर कर दिया जाय और ऐसा भोजन ग्रहण किया जाय कि फिर विष इकट्ठा होकर विकार न पैदा करे। आयुर्वेद के शब्दों में कह सकते हैं कि इस रोग में सर्व प्रथम शोधन चिकित्सा करनी चाहिए। परन्तु बहुत से मूर्ख वैद्यों के समान शोधन का अर्थ केवल जुलाब ही न समझना चाहिए। शोधन होता है उपवास, एनिमा, फलाहार, शाकाहार आदि के द्वारा और धूपस्नान, वायु स्नान, आदि तथा गर्म जल का स्नान रोमकूपों द्वारा शरीर के विष को बाहर करते हैं।

चरक भगवान ने लिखा है

'दृष्ट्वा प्रमेह मधुरं सपिच्छं मधूपमेस्याद्विविधोपचारः यदि प्रमेह में पेशाब में मधुरता हो और वह शहद के समान पिच्छिल हों तो उसे मधुमेह कहते हैं। इस रोग की शान्ति के लिए अनेक प्रकार की चिकित्सा करनी पड़ती है।

चरक ने चिकित्सा का संकेत मात्र कर दिया है। योग्य चिकित्सक अपने अनुभव और योग्यता के अनुसार इस रोग की चिकित्सा करते हैं। इस रोग के इलाज में यह देखना पड़ता है कि किस रोग की प्रधानता है। मधुमेह में भी कफ की या वात की या पित्त की प्रधानता रहती है। जिस दोष की प्रधानता रहती है उसी दोष के अनुसार इलाज करने से लाभ होता है। अन्धाधुंध इलाज करने वाला चिकित्सक इस रोग के इलाज में सफलता नहीं पा सकता।

किसी-किसी को यह रोग जाड़े में बढ़ जाता है और गरमी में घट जाता है। इसमें समझ लेना चाहिए कि जाड़े में बढ़ने वाला रोग कफ की प्रधानता से है। गरमी में कफ स्वयं शान्त हो जाता है इसीलिए यह रोग भी दब जाता है। यदि किसी को यह रोग गरमी में बढ़े तो पित्त का समझना चाहिए। बरसात में बढ़ने वाला रोग अकसर वायु की अधिकता वाला होगा। इसके अलावा लक्षणों से दोष निश्चित कर लेना चाहिए। कफ की प्रधानता में पेशाब अकसर सफेद होगा। पित्त की अधिकता में लाल, नीला, काला, पीला आदि कोई रंग रहेगा। कफ की अधिकता में गरमी और प्यास कम मालूम होगी, पित्त की अधिकता में गले और तालू में जलन बहुत होगी, प्यास बहुत लगेगी। वायु की अधिकता में रोगी बहुत कमजोर हो जायगा। शरीर रूखा रहेगा।

कफ की अधिकता वाले मधुमेह में रोगी से खूब कसरत कराइए। तरह-तरह के व्यायाम, दण्ड, बैठक, आसन आदि कराइए, खूब टहलने के लिए कहिए, उपवास कराइए, गरम जल में स्नान कराइए जलावसेक कीजिए, जल चिकित्सा कीजिए। किंचित उष्ण जल में हिप बाथ कराइए। उपवास कराइए, फलाहार और भोजन सुधार कीजिए। धूप-चिकित्सा कीजिए। जौ या सामा अन्न खिलाइए। यदि पित्त की अधिकता हो तो ठंडे पानी से स्नान कराइए। हिप बाथ कराइए, सिट्ज-बाथ कराइए। गरम चीजों से परहेज कराइए। धूप से बचिए। मठे का प्रयोग कीजिए। मीठे फल जैसे अंगूर, किशमिश, अंजीर आदि का कल्प कीजिए। वात की प्रधानता में वात नाशक प्रयोग कीजिए चरक के उक्त संकेत की व्याख्या इसी तरह और वृहद रूप से भी की जा सकती है।

कब्ज दूर करने के लिए विशेष रूप से प्रयत्न करना चाहिए इसके लिए एनिमा लेना ही चाहिए। इसके अलावा पेट को साफ रखने के लिए हरड़ सबसे अच्छी चीज है। रात को त्रिफला शहद से चाटना चाहिए अथवा ४-५ हर्रें खा लेना चाहिए। हर्रें से दस्त भी साफ आता है और यह प्रमेह मात्र की औषधि भी है।

शरीर में तेल की मालिश, सूखी मालिश, सूर्य किरण चिकित्सा से चमड़े की क्रिया तेज होने लगती है। इसलिए इनका प्रयोग खूब अच्छी तरह करना चाहिए। गरम जल से खूब अच्छी तरह स्नान करना चाहिए। प्रातःकाल टहलना चाहिए। रक्त की अम्लता दूर करने के लिए फल और तरकारियों का खूब इस्तेमाल करना चाहिए।

डाक्टर लोग अम्लता दूर करने के लिए सोडाबाइकार्ब खिलाया करते परन्तु इसका प्रभाव स्थयी नहीं पड़ता। कुछ डाक्टरों की राय है कि पेशाब में चीनी की मात्रा कम करने के लिए आधे चावल की मात्रा में में अफीम दिन में तीन बार खिलाना चाहिए। परन्तु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह याद रखना चाहिए कि अफीम खाने से कब्ज बढ़ जाता है। कब्ज दूर करने के लिए सदैव प्रयत्न करना चाहिए। यह हम पहले ही लिख चुके हैं कि डाक्टर लोग इनसूलिन का इनजेक्शन इस रोग में देते हैं और उसी पर बहुत अधिक विश्वास रखते हैं। इनसूलिन से अधिक लाभ जामुन की गुठली का चूर्ण १५ रत्ती की मात्रा में दिन में तीन बार सेवन करने से होता है।

प्राकृतिक-चिकित्सा

मधुमेह अथवा पेशाब में चीनी जाने के रोग में सदैव अच्छी चिकित्सा करने की आवश्यकता है। साधारण ज्ञान और अनुभव वाले चिकित्सक उतना अच्छा काम नहीं कर पाते। फिर भी हम यहाँ पर अनुभूत चिकित्सा क्रम लिख रहे हैं जिसका सहारा लेने से रोग से मुक्ति मिल जाती है। प्राकृतिक आयुर्वेदीय चिकित्सा के सिद्धान्त के सम्बन्ध में हम ऊपर मत प्रगट कर चुके हैं। उसी को विस्तार के साथ यहाँ हम क्रम से कर रहे हैं—

रोग की अवस्था के अनुसार इस रोग में ४ दिन से लेकर १० दिनों तक उपवास करने की आवश्यकता पड़ती है। उपवास में केवल सन्तरे का रस दिया जाता है। पाव भर रस एक बार में देना चाहिए और इस तरह तीन बार पाव-पाव भर रस प्रतिदिन देना चाहिए। स्टार्च और प्रोटीन वाले भोजन एकदम बन्द कर देने की आवश्यकता पड़ती है। २-२ घंटे पर एक-एक गिलास जितनी इच्छा हो उसके अनुसार कुछ कम भी गरम पानी पीना चाहिए। उपवास के दिनों में शाम को गरम जल का एनिमा प्रति दिन लेना चाहिए। हल्के गरम जल में हिप बाथ वा सर्वांग स्नान करना चाहिए। प्रायः ५-७ या १० दिनों में पेशाब में चीनी आना बन्द हो जाता है। यदि चीनी १० दिनों के उपवास और ऊपर बताये नियमों के पालन से न बन्द हो कुछ कसर रह जाय तो और २-४ दिनों तक और उपवास करना चाहिए और ऊपर के नियमों का पालन करना चाहिए। जब चीनी एक दम बन्द हो जाय तब फलों का भोजन करना चाहिए।

यदि पेशाब में चींटें न लगे तो समझिए पेशाब में चीनी नहीं है। आप चाहें तो किसी डाक्टर से पेशाब की जाँच करा लीजिए।

फलाहार के समय सूखे मेवे जैसे मुनक्के, किशमिश, छुहारे, बादाम, नारियल, खूबानी आदि बन्द कर देना चाहिए। मौसमी फल जैसे अमरूद, नसपाती, सेव, नाख, पकी गूलर, सन्तरे, मोसम्बी ही लेना चाहिए। यथासम्भव केला आदि स्टार्च वाले फल बन्द रखना चाहिए। शाम को प्रति दिन आध सेर-दूध लिया जा सकता है। एनिमा गरम पानी से प्रतिदिन लेना चाहिए। हिपबाथ प्रतिदिन लेना चाहिए। शक्ति के अनुसार टहलना चाहिए। गहरी साँस लेनी चाहिए। प्रतिदिन १०-५ मिनट वायु स्नान करना चाहिए। सप्ताह में ३ दिन घर्षण स्नान करना चाहिए। सप्ताह मे दो दिन १५ मिनट से लेकर आधे घंटे तक धूप स्नान करना चाहिए। सप्ताह में एक दिन गरम जल में सेंधा नमक मिलाकर उससे स्नान करना चाहिए। १०-१५ दिन फलोंपर रहने के बाद रोटी सब्जी पर धीरे-धीरे आना चाहिए। एक समय जौ की रोटी और सब्जी भोजन करना चाहिए और दूसरे समय दूध और फल का भोजन करना चाहिए।

यदि कब्ज रहे तो एनिमा लेना चाहिये परन्तु बाथ आदि और उपयोगी नियमों का पालन प्रतिदिन करना चाहिए। तरकारियों में परवल, करैला, आदि सबसे अच्छे होते हैं। यदि पेशाब में चीनी बन्द हो गई तो भिण्डी, लौकी, नेनुआ फूल गोभी आदि ली जा सकती है। टमाटर फल के रूप में कच्चा भी खाया जा सकता है और तरकारी भी बना कर खा सकते हैं। तरकारी सादी उबली हुई ही खानी चाहिए। उसमें किसी तरह का मसाला नहीं डालना चाहिए। हाँ, यदि इच्छा हो तो हल्दी, धनिया, जीरा, नमक आदि थोड़ी मात्रा डाल सकते हैं। यह क्रम १५-दिन या एक महीना चलाना पड़ता है इतने से ही रोग से छुटकारा मिल जाता है।

यदि आवश्यकता हो और रोग कुछ शेष रह गया हो तो उपवास से लेकर फलाहार और रोटी वाले आहार तक पूरा क्रम एक बार और दोहरा देना चाहिए। और फिर सदैव ऐसा आहार रखना चाहिए जिसमें फिर रोग पैदा न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो जाय।-ऐसे भोजन के सम्बन्ध में यह याद रखना चाहिए कि जौ या गेहूँ की रोटी खाई जाय। उसमें थोड़ा चना अवश्य मिला या जाय। चावल प्रायः बन्द कर दिया जाय अथवा महीने में २-३ दिन अच्छा चावल खाया जाय। एक ही समय रोटी सब्जी खाई जाय और दूसरे समय ताजे मौसमी फल और दूध पर रहा जाय। दिन भर में दो बार से अधिक न भोजन किया जाय। चटपटे मसाले आदि बिलकुल बन्द किया जाय। कब्ज रहे तो तुरन्त एनिमा लेकर पेट साफ किया जाय। अथवा एनिमा प्रति सप्ताह लिया जाय आलू न खाया जाय। यदि आलू खाने की इच्छा हो तो जितना आलू आप खायँ उतनी रोटी कम कर दें। गेहूँ का बिना छना आटा काम में लाना चाहिए। आटे में यदि आध पाव चोकर प्रति सेर के हिसाब से मिला लिया जाय तो आटा और गुणकारी हो जाता है। परिश्रम पूर्वक जीवन व्यतीत किया जाय और प्रति दिन पैदल चला जाय और खूब स्नान किया जाय।

उपवास के बाद हमने फलाहार का क्रम ऊपर बताया है। फलाहार के बदले दूध कल्प करने से भी चीनी बन्द हो जाती है और शरीर पुष्ट हो जाता है। दूध के बदले में मट्ठे का कल्प भी चलता है। शेष क्रम वैसे ही चलते है जैसे ऊपर बताये गये हैं। दूध कल्प के सम्बन्ध में बहुत कुछ हमने अपनी पुस्तक दूध-चिकित्सा में लिखा है उसे देखिए।

मधुमेह में या पेशाब में चीनी जाने के रोग में पथ्य पालन की बहुत आवश्यकता पड़ती है। इस रोग में शारीरिक और मानसिक पूर्ण विश्राम की आवश्यकता पड़ती है। रोगी के लिए रोगावस्था में और रोग मुक्ति के बाद भी टहलने से बढ़ कर कोई व्यायाम नहीं हैं परन्तु टहलने में ध्यान इस बात का रखना चाहिए कि यदि शक्ति हो तो ४-५ मील या ६-८ मील तक टहला जाय। मील आधे मील के टहलने से लाभ नहीं होता। धूप-स्नान, घर्षण-स्नान हिपबाथ, गहरी सांस, वायु स्नान आदि जीवनी शक्ति बढ़ाने और रोग को निमूल करने के लिए अमोघ साधन हैं। उनको तो कभी भी नहीं बन्द करना चाहिए।

मानसिक चिन्ता, धन कमाने की फिकर, या और किसी तरह का परिश्रम एकदम बन्द कर देना चाहिए। सदैव प्रसन्न रहना चाहिए और रोग के सम्बन्ध में सोच कर घुलना नहीं चाहिए।

मधुमेह-चिकित्सा की एक और विधि

मधुमेह में एक सप्ताह तक पतले रस वाले फलों पर रहिए। इसके लिये सन्तरा, अंगूर, आम, जामुन, अनार आदि कोई भी फल चुन सकते हैं।

एक सप्ताह बाद प्रातःकाल फलों का रस और दोपहर को धीरे-धीरे एक वक्त चोकरदार आटे की रोटी पर आइए। अथवा गेहूँ या जौ की दलिया और उबली तरकारी खाइए और शाम को फलों का रस लीजिये। दिन में दो बजे १ गिलास मक्खन निकाला मठा लीजिए। रात को कुछ मत खाइए। भोजन का यह क्रम एक मास तक चलाइए और नीचे लिखी चिकित्सा कीजिए।

प्रातःकाल आधे घन्टे तक मिट्टी की पट्टी रखिये और ताजे पानी से एनिमा लीजिए। इसके बाद ७ मिनट से आरम्भ करके एक मिनट प्रतिदिन बढ़ाते हुये आधे घन्टे तक हिपबाथ। १५ मिनट का सिट्ज-बाथ। हिप-बाथ के लिये यदि रोगी अधिक कमजोर न हो तो ठंडा पानी लेना चाहिए अन्यथा थोड़ा गरम। इसके बाद टहलें। इसके बाद हलासन और मयूरासन करें।

शाम को २० मिनट तक मिट्टी की पट्टी और हिपबाथ। आवश्यकता हो तो मिट्टी की पट्टी के बाद एनिमा ले सकते हैं।

हाजमा बढ़ाने के लिये शुरू में १५ दिनों तक पीली बोतल का धूप में पकाया जल हर घन्टे १ औंस की खुराक में आठ बार लेना चाहिये। १५ दिन बाद नीली बोतल का जल प्रति घन्टे १ औंस की मात्रा में लेना चाहिये। पेड़ू पर नीले शीशे का प्रकाश धूप में १५ मिनट और रात में दीपक से १ घन्टे तक लेना चाहिये। इस चिकित्सा क्रम से प्रायः १५ दिनों में पेशाब में चीनी आना बन्द हो जाता है।

मधुमेह और उपवास

उपवास इस रोग को दूर करने के लिये अमोघ अस्त्र है। उपवास से प्रायः तीन-चार दिनों में ही चीनी की मात्रा घट जाती है। इसके बाद फलाहार करने और भोजन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुधार से स्थायी रूप से यह रोग चलाही जाता है। जब भोजन ग्रहण किया जाय तब भी उपवास के महत्व को ध्यान में रखना चाहिये और सदैव कुछ कम ही भोजन करना चाहिये जिसमें पाचन में कोई गड़बड़ी न हो।

घी और चिकनाई वाले फल—जैसे अखरोट, काजू, बादाम आदि—मधुमेह में बहुत हानिकर होते हैं। क्योंकि चिकनाई घी, तेल आदि पचाना बलवान पाचन-शक्ति का काम है। मधुमेह पाचन-शक्ति की खराबी से ही होता है। ऐसा कोई भी भोजन जो हाजमे को खराब करने वाला हो मधुमेह में अपथ्य होता है। हमारी राय में घी और चिकनाई वाली चीजें तथा अण्डा आदि एकदम बन्द कर देना चाहिये।

इस रोग में उपवास चिकित्सा ही अधिक कारगर होती है। डाक्टर एलेन ने भी इस रोग में उपवास को ही उपयोगी बताया है। उपवास चिकित्सा तो प्राकृतिक-चिकित्सा का खास अंग है। उपवास के बाद तरकारियों का आहार उसके बाद फलों का आहार फिर अन्त में दूध और फल लेना सर्वोत्तम इलाज है।

जब रोटी पर आया जाय तब चोकर की रोटी खाई जाय और चना दूध में भिगो कर शहद से खाया जाय, रोटी खूब सिकी हुई होनी चाहिए अथवा आधा जब और आधा चना की रोटी बना कर खाई जाय और शाक-तरकारियों की मात्रा रोटी से चौगुनी रखी जाय। रोग आराम होने पर भी वे ही शाक-तरकारियाँ खाई जायँ जो पथ्य होती है। अपथ्य चीजें न खाई जायँ तो रोग दुबारा न होगा।

मधुमेह में भोजन

कोई भी रोग हो उस पर भोजन का बड़ा भारी प्रभाव पड़ता है। भोजन उस रोग को जड़ से आराम भी कर सकता और उसे ऐसी अवस्था में भी पहुँचा सकता है कि रोग स्थायी हो जाय कभी आराम ही न हो। चिकित्सा के विज्ञान का यह खुला रहस्य यथातथ्य केवल आयुर्वेद ने ही समझा है। ऐलोपैथ इस विज्ञान से बहुत ही अनभिज्ञ है। इसी कारण वे दवाइयों पर ही विश्वास करते हैं, अन्धाधुन्ध दवाइयाँ और इन्जेकशन चलाए जाते हैं, खाने-पीने की ओर ध्यान नहीं जाता। डाक्टरों की देखा देखी वैद्य लोग भी अपनी प्राचीन परिपाटी का त्याग करते जा रहे हैं और रसों पर ही अधिक विश्वास करने लगे हैं। गलती-गलती ही है, चाहे वैद्य करें या डाक्टर कोई भी विवेकशील आदमी गलतियों की आलोचना किये बिना नहीं रह सकता।

हम यह बता चुके हैं कि जब रक्त में क्षार और अम्ल का अनुपात ठीक रहता है अर्थात् रक्त में ८० प्रतिशत क्षारता और २० प्रतिशत अम्लता रहती है तब हमारा स्वास्थ्य ठीक रहता है और जब अम्लता का अनुपात बढ़ जाता है तभी हम रोगी हो जाते हैं। इसीलिए स्वास्थ्या वस्था में भोजन में ८० प्रतिशत क्षार उत्पन्न करने वाले पदार्थ रखे जाते हैं और २० प्रतिशत अम्लोत्पादक पदार्थ रखे जाते हैं। दूसरे शब्दों में यों समझिए कि कुल भोजन के ४/५ भाग में ऐसे पदार्थ रखे जाते हैं और १/५ अम्ल उत्पन्न करने वाले। फलवाली ताजी भाजियां, पालक, बथुआ, मरसा, चौराई आदि शाक और फल जैसे अमरूद, रसभरी, टमाटर, जामुन, खीरा ककड़ी नाशपाती सेब, पपीता, धारोष्ण दूध, सेव, सन्तरे आदि फल क्षार उत्पन्न करते हैं, बासी भोजन, उबाला हुआ दूध, अण्डा, चावल, गेहूँ, मकई, बजरा और सभी तरह की दालें रक्त में अम्लता उत्पन्न करते हैं।

जब रोग शरीर में घर कर जाता है तब रक्त की अम्लता घटाने के लिये जिसमें रक्त की क्षारता ठीक अनुपात में आ जाय कुछ दिनों तक क्षारमय ही भोजन करने की व्यवस्था दीजाती है अर्थात् लौकी परवल, भिंडी, नेनुआ, गोभी, टमाटर, फालसा, खिन्नी, सेब, सन्तरे, पपीते आदि फल तथा धारोष्ण दूध और मठा आदि ही खाने की व्यवस्था दी जाती है। महीने दो महीने में जब रोग निर्मूल हो जाता है तब फिर धीरे-धीरे स्वस्थावस्था का भोजन दिया जाता है। फल और तरकारियों तथा दूध और मठा की व्यवस्था करते समय रोग और रोगी का विचार करना पड़ता है, देश, काल, बल, समय व्याधि अवस्था आदि का विचार करके व्यवस्था दी जाती है।

मधुमेह का रोग एक खास ढङ्ग का रोग है इसलिये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसमें भोजन की व्यवस्था भी खास ढङ्ग की दी जाती है। यह बात पहले ही बताई जा चुकी है कि जब खाया हुआ स्टार्च नहीं पचता और रक्त में नहीं मिल पाता तब वह गुर्दे द्वारा पेशाब के साथ बाहर कर दिया जाता है। इसी को मधुमेह कहते हैं। इसको सीधे सादे शब्दों में कहना चाहे तो यों कहना पड़ेगा कि मधुमेह खराब हाज़मे से उत्पन्न हुआ रोग है। अतः मधुमेह में ऐसा भोजन देने की आवश्यकता रहती है जिसमें स्टार्च बहुत ही कम मात्रा में हो और साथ ही वह भोजन ऐसा हो जो जल्दी पच जाय।

डाक्टर लोग यह समझते हैं कि स्टार्च का ठीक ठीक पाचन न होने से ही मधुमेह होता है अथवा पेशाब में चीनी आने लगती है। परन्तु भोजन विज्ञान या आहार शास्त्र का यथार्थ ज्ञान न होने के कारण वे अपने रोगियों को स्टार्च के बदले प्रोटीन या मांस बनाने वाली चीजें खिलाने लगते हैं। प्रोटीन देने से और स्टार्च कम कर देने से आरम्भ में ऐसा मालूम होने लगता है कि पेशाब में चीनी कम आ रही है या बिलकुल बन्द हो गई है। परन्तु असली रोग का ठीक-ठीक इलाज न होने के कारण रोग तो ज्यों का त्यों बना रहता है। कुछ दिनों बाद रोग पहले से अधिक उग्र रूप में प्रगट होता है। इसलिए हमारी राय में मधुमेह में प्रोटीन की मात्रा बढ़ाना अच्छा नहीं है। प्रोटीन बढ़ाने से रोग इसलिए अच्छा नहीं होता कि प्रोटीन अम्ल-वर्धक होता है। इसके अधिक खाने से रक्त की अम्लता बढ़ती है। जब तक रक्त में क्षार का अनुपात बढ़ कर ठीक नहीं हो जाता तब तक कोई भी रोग हो दूर नहीं हो सकता।

शाक-भाजियों में भी स्टार्च होता है किन्तु उनमें बहुत ही कम होता है। फलों में २० प्रतिशत तक स्टार्च होता है। इसलिए ऐसे फल जिनमें स्टार्च अधिक हो नहीं खाना चाहिए। किन्तु ऐसी शाक-तरकारियां जिनमें ५ प्रतिशत या १० प्रतिशत स्टार्च होता है खाने की राय दे दी जाती है। हमारा आयुर्वेद तो ऐसे ही भोजन की सलाह देता है जिनमें स्टार्च बहुत ही कम हो जैसे परवल या करैला और गूलर आयुर्वेद के मत से मधुमेह में उत्तम भोजन है।

आयुर्वेद के मत से भोजन की व्यवस्था देते समय रसों का विशेष ध्यान रखना पड़ता है। जैसे तीते और कसैले रस वाले फल और शाक-तरकारियां मधुमेह में पथ्य समझी जाती है। उदाहरण द्वारा यदि समझाना चाहे तो हम कह सकते हैं कि भिंडी में स्टार्च १० प्रतिशत से अधिक नहीं है परन्तु इसका रस मधुर है और यह कम स्टार्च रखते हुए भी आयुर्वेद के मत से मधुमेह में उतना अच्छा भोजन नहीं है जितना अच्छा जामुन है। पकी जामुन में १६.७ प्रतिशत स्टार्च होता है। परन्तु जामुन का रस कसैला है मधुर नहीं। अपने कसैलेपन के कारण ही जामुन पथ्य समझी जाती है।

नीचे हम ऐसे फल और शाक-तरकारियों का नामावली दे रहे हैं जिनमें स्टार्च की मात्रा २० प्रतिशत से कम है। इस सारिणी से पाठक आसानी से जान लेंगे कि कौन सी शाक तरकारियाँ उन्हें लेनी चाहिए।

५ प्रतिशत या कम स्टार्च वाले फल

तरबूजा, ताड़, टमाटर और पका,

६ प्रतिशत से १० प्रतिशत स्टार्च वाले फल

अंगूर बिलायती, चकोतरा बेदाना, अमरूद पहाड़ी, लुकाट, नारंगी, पपीता, आड़ू, अलूचा, चकोतरा, स्ट्राबेरी,

११ से २० प्रतिशत स्टार्च वाले फल

सेब, मकोय, अंजीर, अमरूद, जामुन, (१६.७) मीठा नींबू, पका आम, आम अकोला, नासपाती देशी, नासपाती बिलायती, अनन्नास, पहाड़ी केला (१८.०) अनार, खिही, कैथा।

५ प्रतिशत या कम स्टार्च वाले शाक

बथुआ, चौराई का डंठल, पेठा, करेला, घिया कद्दू, गोभी, पालक, सलाद, सहिजन, कद्दू, तरोइ, चिचिंडा, मूली, पालक का डंठल, टमाटर, सफेद कद्दू।

५ प्रतिशत से १० प्रतिशत स्टार्च वाले शाक

लाल चौराई, पात गोभी, साग गाजर, धनिया का पत्ता, अजवाइन का पत्ता, मेथी का साग, पुदीना, अगस्त, मकोय, गाजर, छोटा करैला, बैगन, सेम, गुआर की फली, भिण्डी, प्याज का साग, सलजम (हमारी राय में सेम, भिंडी और गुआर की फली कभी कभी और कम मात्रा में खानी चाहिए)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

११ प्रतिशत से २० प्रतिशत स्टार्च वाले शाक

सहिजन, प्याज बड़ी, प्याज छोटी, जमींकंद, रमकल्ला, प्याज, गाँठ गोभी, पात गोभी, आदि इस रोग में पथ्य हैं।

डाक्टर लोग कहते हैं कि बकरे का माँस, अंडे, पनीर मुर्गी का माँस और मछली रोगी को दी जा सकती है क्योंकि इनमें स्टार्च नहीं होता। ये प्रोटीन वाली चीजें हैं। प्राकृतिक-चिकित्सा के नियम के अनुसार यह गलत भोजन है और इलाज का गलत ढंग है।

अपथ्य

आलू, चावल, टैपिओका, मटर, गाजर, अखरोट, साबूदाना, सब तरह के मीठे फल जैसे खजूर, अंजीर, मुनक्के, किशमिश, खुबानी, शलजम, गाजर, घी, तेल, आदि अपथ्य हैं।

खाने-पीने की चीजें अवसर बन्द कराने पर रोगी बड़ी कठिनाई में पड़ जाता है क्योंकि जो चीजें उसे खाने को बताई जाती हैं वे बेस्वाद और बदमजा होती है। दूसरे खर्च भी बहुत होता है। इसलिये साधारण आमदनी के रोगी कठिनाई में पड़ जाते हैं।

सोयाबीन प्रोटीन प्रधान होता है इसलिए डाक्टर लोग इसे खाने की राय देते हैं परन्तु यह भी गलत भोजन है।

अधिक चीनी वाले पदार्थ जैसे मुनक्के, किशमिश, अंजीर आदि से मधुमेह में उपकार नहीं हो सकता क्योंकि ये चीजें पेशाब में चीनी की मात्रा को और भी बढ़ाते हैं। अंगूर का कल्प आश्चर्यजनक लाभ करता है क्योंकि उसमें मुनक्के की अपेक्षा कहीं कम चीनी होती है। पानी का अंश ही उसमें अधिक होता है।

दूध के कल्प से मधुमेह में आश्चर्यजनक लाभ होता है। दूध के कल्प की विधि हमारी पुस्तक दूध-चिकित्सा में खूब समझाकर लिखी गई है। मट्ठा भी इस रोग में अच्छा लाभदायक होता है। मट्ठे में जो खटास होती है वह रक्त की अम्लता बढ़ाने वाली नहीं होती। उसमें दुग्धाम्ल का लैक्टिक एसिड होता है। यह खटाई पाचन-शक्ति बढ़ाती है पाचन शक्ति बढ़ने से इस रोग में स्थाई रूप से लाभ होता है। क्योंकि यह रोग ही पाचन शक्ति की कमजोरी से होता है। जब पैन्क्रियास ग्रन्थि का रस समुचित भी निकलता है और यह अंग पूर्ण स्वस्थ रहता है और अपना कार्य ठीक ठीक करता रहता है तब स्टार्च पच जाता है। स्टार्च के पचने में यकृत भी सहायक होता है। मट्ठा इन दोनों यन्त्रों को पूर्ण स्वस्थ रखता हैं, आँतों को चैतन्य बनाता है इस कारण पाचक-रस कुछ दिनों में सघन हो जाता है और पूर्ण रूप से बढ़ने लगता हैं तथा स्टार्च पाचन ठीक तरह से होने लगता है।

हृदय की मालिश से मुर्दा जी उठा

लन्दन के एक अस्पताल में एक डाक्टर ने हृदय की मालिश करके १२ मिनट तक मृत अवस्था में पड़े हुए एक व्यक्ति को फिर जिला दिया।

इस डाक्टर का नाम है हैलिल्टन बेली। 'लेन्सेट' नामक पत्र में आपने यह कथा इस प्रकार बताई है—"मृत व्यक्ति की छाती में आपरेशन करके मैंने हाथ से उसका हृदय टटोला और दो मिनट तक उसकी मालिश की। इससे कुछ चेतना उत्पन्न हुई। अंत में कुछ देर और मालिश करने के बाद हृदय फिर धड़कने लगा। १७ घन्टे के बाद मृत व्यक्ति फिर होश में आ गया और अपनी नर्स से बातें करने लगा। उसे स्वप्न में भी यह विचार न था कि वह मर कर जिया है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूर्यामृत

(श्री महेशेन्द्र कमलेश श्रीवास्तव, बी० ए०)

सूर्य को विश्वात्मा कहा गया है—वह संसार के समस्त जड़-चेतन पदार्थों का प्रतिपालक है। अतः यदि रोगोपचार की दृष्टि से सूर्य की किरणों में अलौकिक गुण पाए जाते हों तो इसमें आश्चय की कौन सी बात ?

सूर्य-किरणों से अब अनेक प्रकार के भयानक रोगों के उपचार किए जाने लगे हैं और इसमें आशातीत सफलता भी प्राप्त हुई है। किन्तु मनुष्य स्वभावतः अनुकरण शील है मानव-मस्तिष्क ने सूर्य-किरणों का भी नकल किया है—कृत्रिम सूर्य-प्रकाश के रूप में, आरम्भ में कृत्रिम पराकासनी किरणों के अनुसन्धानकों ने इसका बड़ा गुणगान किया था, लेकिन जैसा कि पिछले मास के 'जीवन सखा' के सम्पादकीय स्तम्भ में हम अपने विचार प्रकट कर चुके हैं, इस कृत्रिम सूर्य-प्रकाश का खोखलापन अब अपने आप प्रकट होने लगा है। अतः हमारा तो निवेदन यही है कि हम असली वस्तु को छोड़ कर नकली को क्यों अपनाने जायँ ? क्यों न हम कृत्रिम 'अल्ट्रावायलेट' किरणों के बजाय सूय के वास्तविक प्रकाश से लाभ उठावें। 'अल्ट्रावायलेट' के हिमायतियों का कहना है कि सूय की ये किरणें सभी स्थानों पर सामान्य रूप से प्राप्त नहीं हैं। किन्तु यदि उनका तर्क सत्य भी हो तो भी इसका अर्थ यह तो कदापि नहीं निकाला जा सकता कि असली सूर्य-प्रकाश में सूर्य- किरणों के प्रकृति-प्रदत्त गुण लाए जा सकते हैं। अतः जहाँ तक कृत्रिम सूर्य-प्रकाश का सम्बन्ध है, उसमें हमारी कोई आस्था नहीं। इसके विपरीत हमारा विश्वास है कि हर हालत में हमें सूय की सुनहली-धूप से लाभ उठाना चाहिए—सूर्य की वास्तविक किरणें ही हमारा वास्तविक कल्याण कर सकती हैं।

—सं०

प्रकाश व्यक्तिगत अनुभव है। आलोक की किरणें शून्य में विद्युत की लहरों द्वारा कंपन को जन्म देती है। जिसका आभास नेत्रों द्वारा हमारे शरीर की सूक्ष्म नाड़ियों को होता है। प्रकाश वाह्य रूप में भौतिक होते हुये भी सूक्ष्म ही है। प्रकाश का उद्‌गमकेन्द्र एक छोटा सा दीपक भी हो सकता है, विद्युत के छोटे-बड़े लट्टू भी और जुगनू भी। परन्तु सूर्य प्रकाश का मूल उद्गम और मौलिक केन्द्र है।

प्रकाश प्रकृति का उत्साह है—प्राणी मात्र का जीवन है। प्रत्येक जीवाणु सूर्य-प्रकाश में ही जन्म लेकर पलता और प्रत्येक कुसुम सूर्य-प्रकाश से ही प्राण-शक्ति प्राप्त करता है। फिर मनुष्य रूपी कुसुम को तो सूर्य-प्रकाश की अत्यधिक आवश्यकता है। मनुष्य के लिये सूर्य-प्रकाश सर्वश्रेष्ठ और और सर्वगुणकारी है।

हमारी आत्मा पर सूर्य की हर्षोत्पादक किरणों का प्रभाव कितना विकास पूर्ण होता है इसे हम बहुधा अनुभव करते हैं। वर्षा ऋतुमें जब सूर्य कुछ दिनों के लिये मेघाच्छादित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आकाश में दृष्टिगोचर नहीं होता तो हमारा चित्त कितना चंचल हो उठता है और उसी के पश्चात् सूर्य के प्रकट होने पर ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे हृदय का बोझ उतर गया हो। एक अँधेरी संध्या में जब कि चारों ओर उदासी छाई हुई हो और उसी समय कोई चुपके से आकर दिया जलाकर उजाला करदे तो ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे हृदय की उदासी दिये के प्रकाश में विलीन हो गई हो—उजाले के साथ ही हृदय की खिन्नता दूर हो जाती हैं और चित्त प्रसन्न हो जाता है। बहुधा द्वेषपूर्ण और भयावने विचार हमारे मस्तिष्क में रात्रि के अंधकार ही में उठा करते हैं और प्रातः सूर्य को प्रथम किरणों के साथ ही हृदय निर्मल हो जाता है—अन्धकार के साथ ही साथ हृदय की कलुष भावनायें भी उच्छिन्न हो जाती है और भय के स्थान पर हृदय में साहस का संचार होने लगता है। निराशा भी रात्रि के सूने-सूने अंधकार में ही हम पर अपना अधिकार जमाती है किन्तु प्रातः होते ही निराशा के बादल हट जाते हैं और प्रकाश की प्रथम किरणों के साथ ही आशा की भी झलक हमें मिल जाती है। अंधकार यदि निराशा से पूर्ण है तो प्रकाश आशा के शुभ संदेश द्वारा हमें कर्मशील बने रहने की शिक्षा देता है। रोगोपचार के दृष्टिकोण से सूर्य-प्रकाश का रंजक प्रभाव अत्यन्त महत्वपूर्ण है, कारण रोगी के लिये इससे बढ़कर और क्या औषधि हो सकती है कि उसका चित्त प्रसन्न रहे, उसके हृदय में उत्साह बना रहे और वह स्वयं आशा-न्वित बना रहे।

हमारे शरीर पर प्रकाश का अत्यन्त स्फूर्तिदायक प्रभाव पड़ता है। प्रकाश का प्रभाव हमारे ऊपर उतना ही कम या अधिक पड़ता है जितना कम या अधिक प्रकाश में हमारे तन्तुओं को भेदने की शक्ति होती है। प्रकाश तन्तुओं को भेदकर हमारे रुधिर में समीकृत सा हो जाता है और इस प्रकार हमारा रुधिर शक्ति प्राप्त करता है। प्रकाश की लाल किरणों में तन्तुओं की वेधन-शक्ति सबसे अधिक होती है और परा कासनीं (अल्ट्रावायलेट) किरणों में सबसे कम। हमारे नेत्रों की ज्योति प्रधानतया प्रकाश की लाल किरणों द्वारा ही सम्भव है। कारण हमारे नेत्र के कठिन पर्दे को भेदना लाल किरणों का ही काम है। अल्ट्रावायलेट किरणों का प्रभाव विशेषकर शरीर के बाह्य भाग पर ही सीमित होता है और इन किरणों का विशेष उपयोग चर्मरोगों में अधिक गुणकारी होता है।

हमारे रक्त में इस प्रकार की शोषित प्रकाश-शक्ति क्या करती है? वैज्ञानिक अन्वेषणों से हमें ज्ञात हो सका है कि प्राण-पोषक वायु अपना कार्य प्रकाश में अधिक सुगमता से और शीघ्र ही सम्पादित करता है। रक्त के दोषों को आक्सीजन प्रकाश में अति सुगमता से नष्ट करती है और शरीर की तमाम नाड़ियों को प्रकाश में ही जीवन-शक्ति प्रदान करती है। अन्धकार में भी आक्सीजन का कार्य निरन्तर हुआ करता है परन्तु बहुत धीमी गति से और अपेक्षाकृत उतनी सुगमता से नहीं। वनस्पति प्रकाश द्वारा ही अपनी हरयाली को कायम रखता है और मनुष्य प्रकाश में ही अपने जीवन की हरियाली प्राप्त करता है। वनस्पति द्वारा कार्बनडीआक्साइड गैस के शोषण में भी प्रकाश महत्व-पूर्ण भाग लेता है। प्रकाश में ही वनस्पति कारबनडी-आक्साइड गैस से प्रतिक्रिया करती है और उसके कार्बन को स्वयं लेकर उसकी आक्सीजन को पुनः हवा में वापस लौटा देती है।

कीटाणुनाशक शक्ति भी सूर्य-प्रकाश में अधिक होती है। ऐसे ही गुणकारी और स्वास्थ्य दायक आधार पर सूर्य प्रकाश का घर के कमरों में प्रतिदिन पड़ना और ओढ़ने बिछाने के वस्त्रादि को कभी-कभी सूर्य को दिखाना अत्यन्त हितकारी है। जल की स्वच्छता भी अधिकतर सूर्य प्रकाश ही पर निर्भर है।

ऊपर सूर्य-प्रकाश के साधारण गुणों का वर्णन है। निम्नलिखित पंक्तियों में सूर्य प्रकाश के कुछ उपयोग विशेष असाधारण अवस्थाओं में क्या है? उनका वर्णन किया गया है। इस प्रकार—

(१) अनिद्रा और शरीर में रक्त की न्यूनता एनीमिया अनिद्रा साधारणतः किसी व्यक्ति में स्वभाव विशेष रूप में अनिद्रा को कोई विशेष महत्व नहीं दिया जाता, फिर भी रोग के रूप में इसका स्वरूप अत्यन्त भयानक सिद्ध हुआ है। इस रोग का प्रधान कारण शरीर में दूषित रक्त का एकत्र हो जाना या बनना है। कुछ अवस्थाओं में रक्त के दोष से शरीर पीला पड़ जाता है। अधिकतर यह रोग युवतियों को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होता है जिनमें यह रोग कई कारणों से बढ़ता है जैसे मासिक-धर्म का अनियमित रूप से आना, हृदय का तीव्र गति से धड़कना, पौष्टिक भोजन का न मिलना आदि। अधिक मानसिक परिश्रम करने वाला व्यक्ति भी बहुधा अनिद्रा का शिकार रहता है। ज्यादातर अंधेरे में रहने से भी कभी-कभी शरीर पीला पड़ जाता है। यदि समय रहते में इसका उचित उपचार नहीं किया गया तो अनिद्रा का रोग साधारण अवस्था से शुरू होकर क्षयरोग तक उत्पन्न कर सकता है। ऐसे रोगी के लिये सूर्य प्रकाश अमृत-तुल्य है, सूर्य प्रकाश के प्रभाव से रुधिर की प्राण-पोषक वायु—पोषक शक्ति-बढ़ जाती है जिसका फल यह होता है कि रुधिर की गति तीव्र हो जाती है। इस प्रकार के रक्त का शरीर में तीव्र संचार होने से शरीर का पीलापन दूर होने लगता है। प्रकाश का औषधि के रूप में उपयोग करने से प्राणपोषक वायु को भी शरीर का रक्त शुद्ध करने से यथेष्ट सहायता मिलती है और रक्त की शुद्धि के साथ-साथ शरीर में बल का संचार होने लगता है। प्रकाश में श्वाँस की क्रिया गहरी और धीमी हो जाती है जिसके फलस्वरूप रात्रि में अच्छी नींद आने लगती है। एनीमिया के रोगी "कृत्रिम सूर्य-प्रकाश" से भी अच्छे किये जाते हैं। और में इस प्रकार के उपचार की विधि "कृत्रिम सूर्य-प्रकाश" द्वारा सम्पादित की जाती है और इस प्रकार के उपचार में यथेष्ट सफलता भी प्राप्त हुई है।

एनीमिया के कुछ रोगी बहुधा सर दर्द से परेशान रहा करते हैं। ऐसी दशा में "कृत्रिम सूर्य-प्रकाश" का प्रकाश अधिक लाभकारी होता है कारण सूर्य की धूप से रोगी का सिर दर्द अधिकांश अवस्थाओं में बढ़ जाता है। "कृत्रिम सूर्य-प्रकाश से उपचार आरम्भ करने के तीन-चार सप्ताह में ही रोगी का सिर दर्द अच्छा हो जाता है।

(२) रक्त-चाप—सूर्य-प्रकाश का नियमित रूप से सेवन करने पर बढ़े हुये रक्त-चाप में कमी आ जाती है। स्वेद और मूत्र अधिक आने से जी कुछ हल्का हो जाता है। कुछ अवस्थाओं में शरीर का वजन भी बढ़ जाता है। स्वास गहरी होने से निद्रा अच्छी आने लगती है जिसके फलस्वरूप मष्तिस्क की गरमी भी कुछ कम होने लगती है। परन्तु रक्त-चाप की सभी अवस्थाओं में योग्य-चिकित्सक के आदेशानुसार ही सूर्य प्रकाश का सेवन आरम्भ करना चाहिए अन्यथा मनमाने ढंग से उपचार करने में हानि की अधिक सम्भावना रहती है।

(३) मांस के घाव—घावों को अच्छा करने में सूर्य-प्रकाश और कृत्रिम-प्रकाश अधिक और आश्चर्यजनक रूप में लाभकारी सिद्ध हुये हैं। सूर्य-प्रकाश में घाव के भरने का कार्य अति सुगमता से होने लगता है। क्यं कि रक्त की गति प्रकाश में तीव्र हो जाने से घाव में नया रक्त आने लगता है और घाव अच्छा होने लगता है। प्रकाश में घाव के दूषित कीटाणु भी नष्ट हो जाते हैं। यदि किसी आन्तरिक कारण से घावों के भरने में देर लग रही हो तो कृत्रिम प्रकाश में उस घाव को कुछ देर रोजाना रखना लाभदायक सिद्ध होगा। ऐसी अवस्था में रोगी को थोड़ी देर तक नियमित रूप से सर्वांग सूर्यस्नान भी लेना चाहिये ताकि शरीर की आन्तरिक शुद्धि भी होती जाय।

(४) क्षय—क्षय के रोगियों को जो आश्चर्यजनक लाभ सूर्य-प्रकाश से किये गये, नवीन प्रचार के उपचार की विधि से हुआ है। वह कुछ अविश्वसनीय सा प्रतीत होता है फिर भी जितनी सफलता सूर्य-प्रकाश के किये गये उपचार से मिली है उनका अनुभव हमें सिखाता है कि आगे आने वाले समय में क्षय रोग से पीड़ित मनुष्य अधिक आशावान बने रहेंगे। कृत्रिम प्रकाश का प्रयोग भी अधिक सफलतापूर्वक होने लगा है और इस प्रकार के उपचार का अनुभव भी संतोषप्रद ही रहा है।

सूर्य-प्रकाश की सहायता से उपचार करने पर बहुधा देखा गया है कि महीनों का बढ़ता हुआ तापमान कुछ ही समय पश्चात् घटने लगता है। शरीर में यदि किसी स्थान पर सूजन हुई तो वह भी दूर होने लगती है अधिकांश अवस्थाओं में शरीर का वजन बढ़ने लगता है और किसी किसी दशा में तो २० से ३० पौंड तक वजन में वृद्धि हो जाती है। सूर्य प्रकाश के प्रभाव से नया रक्त भी बनने लगता है और दूषित रक्त शुद्ध होने लगता है। साँस गहरी आने लगती है जिसके फलस्वरूप फेफड़ों की दशा सुधरने लगती है। निद्रा भी अच्छी प्रकार आने लगती है। सारांश में सूर्योपचार के आरम्भ के कुछ ही सप्ताह के भीतर रोगी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के शरीर की सारी अवस्था में संतोषजनक सुधार दृष्टिगोचर होने लगता है।

यद्यपि सूर्य-प्रकाश ही क्षय की एक मात्र महौषधि नहीं है—दूसरे उपचार के साधनों की तरह इसका भी एक निजी महत्वपूर्ण स्थान है—फिर भी अनुभव हमें सिखाता है कि आधुनिक क्षय रोग के चिकित्सकों के लिए सूर्य-प्रकाश की महत्ता समझना अनिवार्य हो गया है। हमारा ऐसा विश्वास है कि आधुनिक चिकित्सा भवन जहाँ क्षय के रोगियों के उपचार की व्यवस्था है उस समय तक अपूर्ण है जब तक कि वहां ऐसा प्रबन्ध नहीं होता कि प्रतिदिन कुछ समय के लिये रोगियों को सूर्य स्नान की सुविधा प्राप्त हो सके।

सूर्य-स्नान के विषय में इतनी चेतावनी दे देना अनावश्यक न होगा कि यदि हम सूर्य स्नानके सिद्धांतों से अनभिज्ञ हैं तो हमें क्षय की सभी अवस्थाओं में किसी योग्य चिकित्सक के आदेशानुसार ही कार्य करना चाहिए। बहुधा फेफड़े के अधिक खराब हो जाने पर अनियमित सूर्यस्नान से संकटापन्न अवस्था उत्पन्न हो जाती है। इसलिये उपचार का प्रबन्ध किसी योग्य चिकित्सक के हाथों में सौंप देना ही श्रेयस्कर होगा।

ऊपर कही गई पंक्तियों में हमारा उद्देश्य केवल इतना ही है कि क्षय के उपचार में हम सूर्य की महत्ता लोगों को समझायें और सूर्य प्रकाश का क्षय के उपचार में व्यवहार करना उनको सिखलायें। वर्तमान अन्वेषणों ने सिद्ध कर दिया है कि जहाँ क्षय रोग के उपचार के बहुत से साधन हैं वहाँ सूर्य प्रकाश भी एक अत्यन्त महत्वशाली सहायक साधन है और क्षय रोग के चिकित्सकों के लिये सूर्य-प्रकाश का भी सहारा लेना अनिवार्य हो गया है।

उपरोक्त बात से हमारा यह तात्पर्य कदापि नहीं कि हम मनमाने ढंग से और सब उपचार के साधनों का बहिष्कार कर सूर्य स्नान ही लेने लग जाँय। वरन हमारा तात्पर्य यह यह है कि सूर्य-प्रकाश से रोगोपचार का भी एक सहायक साधन है जिसकी सफलता की भी एक सीमा है। इस सीमा का उचित ध्यान रखते हुये हमें सूर्य-प्रकाश को अधिक से अधिक व्यवहार में लाना चाहिए। हाँ कुछ अवस्था विशेष में इस पद्धति के विशेषज्ञों की सम्मति ले लेना आवश्यक हो जाता है। सूर्य-प्रकाश प्रकृति की बिना मूल्य की फिर भी अमूल्य और अनुपम देन है जिसका उपयोग हमें लाभदायक रूप में अधिक से अधिक करना चाहिए। घर के छोटे-छोटे बच्चों को नित्य प्रति कुछ देर धूप में खेलने दिया जाय और विशेष कर शीत काल में। गोद के बच्चों को भी थोड़ी देर के वास्ते धूप में लिटा देना चाहिए ताकि धूप और हवा में उनके हाथ पैर दृढ़ हों रोगियों के लिये तो सूर्य-प्रकाश औषधि से भी बढ़ कर है।

लेखकों से नम्र निवेदन

'जीवन सखा' के लिये जो लेख भेजें वे सरल, सुबोध शैली और साफ अक्षरों में होने चाहिये। जहाँ तक हो सके अपने विचारों को स्पष्ट किन्तु संक्षेप में प्रकट करें। लेख को अनावश्यक रूप से लम्बा बनाने की प्रवृत्ति की सर्वथा उपेक्षा की जानी चाहिये। लेख की पंक्तियाँ घनी न होनी चाहिये। इससे सम्पादन में बड़ी असुविधा होती है। लेख के आदि अथवा अन्त में लेखक का नाम अवश्य लिखा होना चाहिये, पर साथ ही उस पर अपना पता भी लिख दें तो वह हमारे लिये और भी सुविधाजनक होगा।

—सम्पादक।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महात्मा गांधी के साथ दो दिन

डा० कुलरंजन मुकर्जी, कलकत्ता

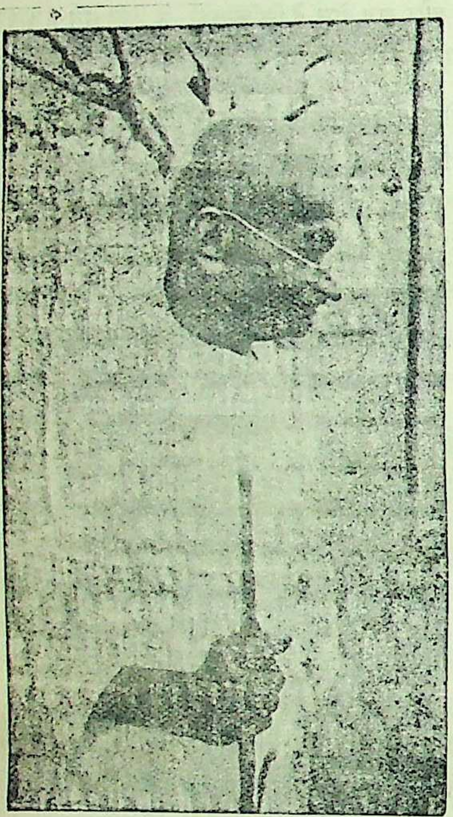

नोआखाली के शरणार्थियों के बीच सेवा कार्य के लिए मारवाड़ी रिलीफ सोसाइटी की ओर से खोले गए अस्पताल के प्राकृतिक-चिकित्सा-विभाग के इंचार्ज डा० कुलरंजन मुकर्जी को अभी हाल ही में महात्मा जी ने भेंट करनेके लिये बुलाया था। इस छोटे से लेख में आपने महात्मा जी से हुई उसी भेंट की चर्चा की है। इसमें आपको महात्मा जी के भोजन तथा उनकी दिनचर्या की भी एक झांकी मिलेगी। महात्मा जी ने इस लेख में स्वयं संशोधन करके इसे प्रकाशनार्थ भेज दिये हैं। यह लेख हमें तब प्राप्त हुआ जब कि 'जीवन सखा' के इस नव-वर्षाङ्क के ५ फार्म छप चुके हैं। अतः इस लेख को हम समुचित स्थान न दे सके, इसका हमें खेद है। इसे आगे के अंक के लिये रोक रखना भी हमारे लिए असम्भव था। आशा है, हमारे पाठक इस लेख को बड़ी दिलचस्पी के साथ पढ़ेंगे। —सं०

मारवाड़ी रिलीफ सोसाइटी के जनरल सेक्रेटरी, डा० करमचन्द सरावगी अभी कुछ दिनों पूर्व नोआखाली जिले में सोसाइटी की ओर से आयोजित सहायता कार्य के सिलसिले में नोआखाली गए थे। वहाँ पर मारवाड़ी रिलीफ सोसाइटी अस्पताल में प्राकृतिक-चिकित्सा की आश्चर्यजनक सफलता के सम्बन्ध में उन्होंने एक रिपोर्ट तैयार कर के महात्मा जी को दी। उस अस्पताल के प्राकृतिक-चिकित्सा-विभाग का इञ्चार्ज होने की वजह से मुझसे मिलने के लिए महात्मा जी ने अपनी इच्छा प्रकट की और उन्होंने मुझे बुला भेजा।

१७ दिसम्बर १९४६ को मैं नोआखाली की तीर्थयात्रा के लिए रवाना हुआ और २० दिसम्बर को अपने महान नेता के अस्थायी आश्रम में पहुँच गया। महात्मा जी मुझसे बहुत उदारतापूर्वक मिले और दो दिनों के बीच ३-३ घन्टे के लिए मुझसे २ बार मुलाकात करना मंजूर किया। यह सर्व विदित है कि उपचार-काल में प्राकृतिक चिकित्सक हमेशा फलाहार पर जोर देते हैं। किन्तु महात्मा जी ने अपना यह विचार प्रकट किया कि फलाहार अक्सर बहुत मंहगा पड़ता है और अधिकांश रोगी इस खर्च को बरदाश्त नहीं कर सकते। महात्मा जी ने यह भी कहा कि अगर उन्हें यह मालूम हो जाय कि शाक भाजियों का रस भी उतना ही प्रभावकारी होता जितना कि फलों का रस तो वे फलों का रस लेना बन्द कर देंगे। मैंने यह अनुभव किया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि महात्मा जी सभी मामलों में—यहाँ तक कि रोगोपचार के भी मामले में—हमेशा अधिक से अधिक परिमाण में अधिक से अधिक लाभ की बात सोचते हैं।

प्राकृतिक-चिकित्सा की शिक्षा के प्रति गांधी का रुख प्राकृतिक-चिकित्सक जो अक्सर रोगियों को हरा-कच्चा भोजन करने की सलाह देते हैं, उसके बारे में महात्मा जी की क्या राय है, मैंने इस अवसर का लाभ उठाते हुए यह जानने का प्रयत्न किया। महात्मा जी ने अ-मिश्रित कच्चे भोजन के बारे में अपनी ना पसन्दगी जाहिर की। उन्होंने कहा—मैंने बहुत दिनों तक कच्चे भोजन पर रह कर प्रयोग किया है और वह मुझे सतोषजनक नहीं लगा है।

प्राकृतिक-चिकित्सा की शिक्षा के प्रति गाँधी जी का रुख

महात्मा जी ने अभी तक नेचुरोपैथिक विश्व-विद्यालय खोले जाने के पक्ष में राय नहीं प्रकट की है। इस सम्बन्ध में जब मैंने गांधी जी से पूछा तो उन्होंने अपनी पूर्व सम्मति को दुहराते हुए कहा कि 'नेचुरोपैथिक विश्व-विद्यालय स्थापित किए जाने का तो कोई प्रश्न ही नहीं उठता। हम तो एक कालेज भी नहीं खोल सकते।' किन्तु गांधी जी ने इस सुझाव का हार्दिक समर्थन किया कि प्राकृतिक-चिकित्सा के स्कूल खोले जायँ, जहां पर विद्यार्थियों को प्रारम्भिक शरीर रचना शास्त्र (एनाटमी) और शरीर-विज्ञान (फिजियालोजी), जल-चिकित्सा, सूर्य-रश्मि-चिकित्सा, मालिश, मिट्टी-चिकित्सा, रोगोपचारात्मक व्यायाम, शिथिलीकरण और आहार-चिकित्सा, जिसमें दुग्ध-चिकित्सा भी शामिल है, की शिक्षा दी जाय। महात्मा जी ने अपनी यह राय प्रकट की कि इस तरह के स्कूलों में जो शिक्षा दी जाय उसका कोर्स दो साल से कम का न होना चाहिए।

प्राकृतिक-चिकित्सक की योग्यता

मैंने महात्मा जी से पूछा कि क्या नए प्राकृतिक चिकित्सकों को 'स्टेथोस्कोप' (हृदय और फेफड़ों की परीक्षा करने का यंत्र), और 'ब्लडप्रेशर' का माप करने वाले यन्त्र का इस्तेमाल करने की शिक्षा दी जानी चाहिए? इसके जवाब में गांधी जी ने जो बातें कहीं उनसे मैं इसी निष्कर्ष पर पहुँचा कि यद्यपि वे चाहते हैं कि प्राकृतिक-चिकित्सा गृह-चिकित्सा का स्थान ग्रहण करे फिर भी उनका यह मंशा हरगिज नहीं कि प्राकृतिक-चिकित्सकों को कुछ अनिवार्य डाक्टरी यन्त्रों का प्रयोग न सीखना चाहिए। मैंने सुझाया कि नए प्राकृतिक-चिकित्सकों को एक जूनियर (छोटे) डाक्टर की सी योग्यता प्राप्त करनी चाहिए। इस पर गांधी जी ने कहा "जूनियरडाक्टर की योग्यता क्यों? मैं तो चाहता हूं कि वे सीनियरडाक्टरों की सी शिक्षा एवं योग्यता प्राप्त—करें।" यह कह गाँधी जी खिलखिला कर हँस पड़े। फिर भी आपने इस विचार का विरोध किया कि प्राकृतिक-चिकित्सा-गृहों में महज मरीजों को आकर्षित करने के लिए बहुत से डाक्टरी यंत्र रक्खे जायँ। महात्मा जी ने रुपए कमाने की इस तरह की चालों को नापसंन्द किया। मैंने देखा कि महात्मा जी के विचार और भाव हमेशा वही है जो कि पहले थे। वे सदैव गरीबों और जनसाधारण की हितकामना में लगे रहते हैं, उनकी भलाई चाहते हैं। महात्मा जी की इच्छा है कि प्राकृतिक-चिकित्सा का रूप-निर्धारण साधारण जनता की आवश्यकताओं के अनुरूप होना चाहिए।

गाँधी जी का भोजन

उस बातचीत के दौरान में गांधी जी ने मुझे बताया कि इन दिनों वे क्या भोजन करते हैं। गांधी जी के मौजूदा भोजन-क्रम, उनके रहन-सहन का ब्यौरा मुझे उनके स्थानापन्न सेक्रेटरी प्रो० निर्मलचन्द्र बोस से प्राप्त हुआ। उन्होंने मुझे बताया कि महात्मा जी सबेरे ४ बजे सोकर उठ जाते हैं और हाथ-मुँह धोकर एक गिलास पानी में दो चाय के चम्मच बराबर शहद डाल कर पीते हैं। सबेरे ५॥ बजे वे एक गिलास फल का रस लेते हैं इसके लिए ज्यादातर नारंगी, मीठा नीबू, या अनन्नास का प्रयोग करते हैं। दिन के ११ बजे वे छटांक उबली हुई साग-भाजियों, ५ औंस गेहूँ का आटा, ५ ग्रेन सोडा और थोड़ा नमक डालकर बनायी गई रोटी खाते हैं। ये चीजे एक गरम चूल्हे में रखकर इस प्रकार सेंकी जाती हैं जिससे कि बिस्कुट जैसी बन जाती हैं। इसके अलावा वे उबली हुई साग-भाजी के साथ ८ औंस दूध भी लेते हैं। इसका जायका बुरा नहीं होता लेकिन उबली हुई भाजियों में मिला देने से दूध का स्वाद नहीं रह जाता। इस भोजन के अन्त में वे थोड़े ग्लूकोज के साथ एक माल्टा खाते हैं। दिन में १ बजे वे एक गिलास नारियल का पानी पीते हैं। पानी पीने के बाद वे उसका गूँदा खाते हैं। शाम

(शेष पृष्ठ ४६ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्त्रियों के व्यायाम पर एक दृष्टि

श्री व्रजमोहन मिहिर

शरीर को स्वस्थ रखने और उससे यथोचित कार्य लेने के लिये जैसे स्वच्छ वायु, शुद्ध जल, शीघ्र पचने वाले पौष्टिक भोजन की आवश्यकता होती है वैसे ही व्यायाम की भी। इनमें से किसी एक के अभाव में शरीर अपना कार्य भली प्रकार सम्पादित नहीं करता। शरीर और मन से उचित कार्य लेने के लिये हमें इनमें से प्रत्येक पर आवश्यक ध्यान देना चाहिये। किन्तु मनुष्य कुछ ऐसा दीर्घ सूत्री है कि जब तक उसके सामने कोई समस्या प्रकट नहीं होती वह किसी बात पर ध्यान नहीं देता। जीवन के लिए भोजन अनिवार्य है। और उसमें बहुत कुछ रुचि होते हुये भी, मनुष्य यह विचार नहीं करता कि उसे क्या भोजन करना चाहिए प्रत्युत वह इस पर बिना कुछ विचार किये हुए जो उसे अच्छा लगता है खा लेता है। प्रायः मनुष्य हानिकर चीजों का व्यवहार करता है और बाद में फल स्वरूप कष्ट भोगता है। शुद्ध वायु और स्वच्छ जल के प्रति भी मनुष्य ऐसा ही अन्यमनस्क है। इन सब चीजों में अशुद्धता के कारण कष्ट की उत्पत्ति कभी-कभी मनुष्य का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करती है। कष्ट के अधिक बढ़ जाने पर मनुष्य अपने प्राचीन उन्माद को तिलांजलि देने के लिए विवश हो जाता है। विवश होकर आहार क्रिया, वायु और जल सम्बन्ध में तो मनुष्य कभी विचार कर भी लेता है लेकिन व्यायाम एक ऐसी बात है जिसपर उसका ध्यान मुश्किल से आकृष्ट होता है। फिर स्त्रियां तो व्यायाम के बारे में कभी ध्यान देती ही नहीं। व्यायाम स्त्रियों के लिये भी उतना ही आवश्यक है जितना कि पुरुषों के लिये। अब प्रश्न यह है कि स्त्रियों को कैसा व्यायाम करना चाहिये। स्त्री और पुरुष के स्वभाव और शरीर में बहुत कुछ अन्तर है। पुरुष के लिये जो बात उचित और लाभप्रद है स्त्रियों के लिये भी वही बात उचित और लाभप्रद न होगी। पुरुष शरीर की मांस-पेशियां कुछ कड़ी होती हैं क्योंकि कठोर कार्य के लिये प्रकृति ने उनका वैसा निर्माण किया है। स्त्रियों का स्वभाव और शरीर दोनों ही पुरुष की तुलना में कोमल है और उनके लिये प्रकृति ने वैसे ही कार्य भी निर्धारित किए है। फिर चाहे पुरुष हो या स्त्री व्यायाम का अर्थ शरीर को और अधिक कठोर बनाना नहीं है।

पुरुष ऐसे कड़े व्यायाम करता है जिससे उसके शरीर का सौन्दर्य और कोमलता नष्ट हो जाती है। मैंने आज तक किसी भी पहलवान को सुन्दर आकृति और कुशाग्र बुद्धि का नहीं देखा है। अधिक व्यायाम करने से वे अवश्य दीर्घकाय हो जाते हैं लेकिन उनका बदन देखने में बहुत ही भद्दा हो जाता है। उनका सिर कठोर बहुत ही छोटा हो जाता है। ऐसा मालूम पड़ता है कि किसी मटके पर एक छोटी सी हाड़ी रख दी गई है। पहलवान किसी एक विषय पर न मनन कर सकता है और न बात ही कर सकता है। बहुत से प्रश्नों के सम्बन्ध में उसका केवल एक ही उत्तर होगा कि वह कुछ नही जानता। व्यायाम का अर्थ है सब प्रकार की शारीरिक और मानसिक उन्नति का विकासोन्मुख उन्नति की अवहेलना कर देने से व्यायाम बिल्कुल व्यर्थ की वस्तु बन जाती है। आज से १०० वर्ष पूर्व लोग इस प्रकार का व्यायाम नहीं करते थे और न वे व्यायाम के पीछे इतने दीवाने थे। प्रत्येक का जीवन इस प्रकार की स्वाभाविक था कि उनकी जो दिनचर्या थी उसमें उनका काफी शारीरिक परिश्रम हो जाता था। आज भी जो लोग खेत या बाग में काम करते हैं या जिन्हें अन्य किसी प्रकार का कठिन परिश्रम पूर्ण कार्य करना पड़ता है उनके लिए अन्य किसो प्रकार के व्यायाम की आवश्यकता नही है दिन काम का जिन लोगों को काफी थका सकता है उनके लिये दूसरा व्यायाम अनावश्यक हैं। लेकिन जिन के पास ऐसा कोई काम नहीं है उनके लिये उछलना, कूदना, दौड़ना पेड़ पर चढ़ना, तैरना आदि अच्छे व्यायाम है। टहलना भी अच्छा है। इसके अतिरिक्त यदि और व्यायाम की आवश्य-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कता जान पड़े तो योगासन अच्छे व्यायाम हैं। इससे शरीर का सौन्दर्य बनता है और शरीर की कोमलता भी भी नष्ट नहीं होती। जिसके शरीर में जितना अधिक लोच रहता है उसपर वृद्धावस्था का उतना कम असर होता है। शरीर की कठोरता ही वृद्धावस्था है।

संसार के अन्य पेशों की भांति अगर कोई व्यक्ति व्यायाम की हानियों को समझता बूझता हुआ उसे अपना पेशा बनाना चाहता है तो यह दूसरी बात है फिर भी यह तो कहना ही पड़ता है कि यह कोई अच्छा पेशा नहीं है। इनमें लाभ कम है और हानि अधिक। पहलवानों का शरीर कभी स्वस्थ नहीं होता। आवश्यकता से अधिक वे अपनी मांस-पेशियों और पुट्ठों से काम लेते हैं। अधिक परिश्रम करने से शरीर के कोमल अणुओं का ह्रास अधिक होता है। उनके पुनः निर्माण के लिए शरीर की क्षति बचाने के लिये अधिक भोजन की आवश्यकता होती है। एक तरफ तो अधिक परिश्रम किया और दूसरी तरफ अधिक भोजन किया। इससे शरीर भारी पड़ जाता है। पाचन-प्रणाली को अधिक कार्य करना पड़ता है। पहलवान के भारी शरीर को देखकर प्रायः लोग उसकी प्रशंसा करते हैं और कहते हैं कि उसका शरीर कितना स्वस्थ है। किन्तु यह उनका भ्रम है। शरीर का अधिक ठोस और भारी होना स्वास्थ्य का कोई चिन्ह नहीं हैं। शायद ही कोई ऐसा पहलवान मिलेगा जो किसी न किसी रोग से ग्रसित न हो। अधिक व्यायाम और अधिक भोजन ही उनके रोग का कारण है। स्वास्थ्य वह निधि है जिससे मनुष्य निरोग, प्रसन्न, स्फूर्तिवान और कार्य में रुचि रखने वाला बना रहे। जो व्यायाम इस उद्देश्य की पूर्ति करे वास्तव में वही व्यायाम है। कठोर व्यायाम करने वाले शीघ्र वृद्धावस्था को प्राप्त होते हैं।

व्यायाम के इस दृष्टि-कोण से अब विचार करना है करना है कि स्त्रियों के लिये कौन सा व्यायाम सुलभ, स्वाभाविक और स्वास्थ्य-वर्द्धक है। इस समय तो हमारे रहन-सहन का ढंग ही निराला और गलत है। जैसे पुरुषों के कार्यों में शारीरिक परिश्रम रहता है वैसे ही स्त्रियों के कार्यों में भी उसका समावेश रहता था। व्यायाम के रूप में लोगों को किसी प्रकार का विशेष आयास नहीं करना पड़ता था। घर में स्त्रियों के पास इतना अधिक कार्य था कि उनको करते हुए उनके सन्मुख किसी व्यायाम का प्रश्न नहीं उपस्थित होता था। घर का सभी काम—घर की सफाई से लेकर कुँए से पानी भरने तक—उन्हें अपने हाथों करना पड़ता था। किन्तु अब तो स्त्रियों का जीवन कुछ दूसरे ही प्रकार का है। गाँव की स्त्रियों की दशा इस सम्बन्ध में शहर की स्त्रियों से अब भी बहुत अच्छी है। वे घर का सारा काम स्वयं करती हैं। घर के काम के अतिरिक्त उन्हें पशुओं के चारे के लिये भी बाहर जाना पड़ता है बहुत सी स्त्रियों को तो अपनी जीविका केलिये भी बाहर किसी न किसी प्रकार का काम करना पड़ता है। इन्हीं कारणों से उनका स्वास्थ्य शहर की स्त्रियों के स्वास्थ्य से कहीं अच्छा है। वे बहुत कम बीमार पड़ती हैं।

शहर की बिगड़ी हुई दशा में भी यहाँ की स्त्रियों को क्या करना चाहिए। साधारण परिवार स्त्रियों को यथाशक्ति घर का सब काम स्वयं करना चाहिये। इससे वे अपने खर्च में कुछ बचत करेंगी और स्वास्थ्य भी ऊँचा रहेगा। यदि हो सके तो प्रायः सभी स्त्रियाँ खाने के लिए आटा अपने हाथ पीसें, इसको वे पवित्र और सम्मानप्रद कार्य समझें। इससे उनका स्वास्थ्य ऊँचा रहेगा और घर के सब प्राणियों को बलप्रदायक शुद्ध, ताजा आटा मिलेगा। पनचक्की के पिसे हुए आटे और घर में जांते से पीसे हुए आटे में बहुत अन्तर है। जांते के पिसे हुए आटे की रोटी स्वादिष्ट होती है और इस आटे में पोषण-तत्व भी विशेष होता है। जांते के पिसे हुए बिना छने आटे का रोटी खाने से कोष्टबद्धता नहीं होती।

जैसे गाँधी जी कहते हैं कि प्रत्येक को घर पर सूत कातना चाहिये वैसे ही प्रत्येक के लिये हाथ से आटा पीसना भी आवश्यक है। बहुत से नौकरी के होते हुए भी इस पवित्र कार्य को अपनाना स्त्रियों के हित की दृष्टि से अति उत्तम है। स्वास्थ्य का महत्व मनुष्य के लिए सर्वोपरि है। जिसका स्वास्थ्य ठीक नहीं है उसके जीवन की कोई भी बात ठीक नहीं हो सकती। स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ विचार का उदय होता है। स्वस्थ का आधार सात्विक भोजन है। ऐसे भोजन से जीवन का आचार-विचार भी अच्छा रहता है और मनुष्य अपने चरित्र को अच्छा बनाये रखने में समर्थ होता है। स्वस्थ ही सच्चाई और ईमानदारी को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पालन करने में समर्थ होते हैं। इन सब आवश्यकताओं को दृष्टि में रखते हुए मनुष्य को अपने भोजन और व्यायाम पर उचित ध्यान देना चाहिये।

आजकल सम्पन्न परिवार की स्त्रियाँ अपने हाथ से काम करना शान के खिलाफ समझती हैं। यह उनका निरा भ्रम है। संसार के उस व्यक्ति या देश ने ही उन्नति की है जहाँ के लोग अपने हाथ से कार्य करने का अभ्यास डाला। घर में दास-दासियों के होते हुए भी प्रत्येक को अपने हाथ से कुछ न कुछ काम करना ही चहिये। जो अपने हाथ से किसी भी कारण वश काम नहीं करना चाहती उन्हें उसके स्थान पर किसी अन्य प्रकार का व्यायाम अवश्य ही करना चाहिए। पुरुषों के लिए भी व्यायाम उनके मानसिक और शारीरिक कार्य तथा परिश्रम के अनुसार निर्धारित किया जाता है। जो मनुष्य अपनी परिस्थिति कार्य और आहार का कुछ विचार न करके व्यायाम करता है उसको लाभ के स्थान पर हानि अधिक होती है। व्यायाम के मामले में स्त्रियों को पुरुषों के प्रतियोगिता में न आना चाहिये। प्रत्येक के लिये व्यायाम अलग-अलग हैं। बच्चे के लिये जो व्यायाम और आहार आवश्यक है वही युवक, वृद्ध और स्त्रियों के लिये नहीं।

स्त्रियों की उत्पत्ति प्रकृति ने विशेष उद्देश्य की पूर्ति के लिये की है। उसका प्रधान कर्त्तव्य है सन्तानोत्पत्ति इसके साथ ही साथ इस कर्त्तव्य को पूरा करने के लिये उसे कुछ अन्य कोमल भावों का भी सम्पादन करना पड़ता है। गर्भ धारण उनका महत्वपूर्ण एवं पुनीत कर्त्तव्य है। अतः इस पवित्र कार्य को दृष्टि में रखते हुए उनके आहार विहार और व्यायाम का स्वरूप निर्धारित किया गया है। स्त्रियों के प्रश्न पर उनके कर्त्तव्यानुसार ही विचार करना चाहिये।

श्रोणि प्रदेश, कटिस्नायु तथा वहाँ की वाह्य तथा आन्तरिक पेशियाँ स्त्रियों के लिये विशेष महत्व रखने वाले अवयव हैं। इन अवयवों को स्वस्थ और रोग रहित रखने के लिये थे तथा उनके विकास में सहायता पहुँचाने वाले व्यायाम युक्ति संगत और समुपयुक्त होंगे।

उड्डियान, सर्वांगासन, विपरीतकरणी-अश्विनी आदि यौगिक क्रियायें स्त्रियों के लिये अत्यन्त लाभदायक हुई हैं। इन क्रियाओं से श्रोणीय अवयवों में रुधिर का संचार से विशेष सम्बन्ध होता है। उन पेशियों में लचीलेपन का गुण होना ही उनके आरोग्य का सूचक है। ऊपर बतलाये हुए अन्य आसन उनके स्वास्थ्य को ठीक हालत में रखते हैं।

अतः स्त्रियों की खास आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए उनके लिये जिस प्रकार के व्यायाम आवश्यक जान पड़ते है उनकी पूर्ति केवल योगिक क्रियाओं द्वारा ही हो सकती है। यह अत्यन्त सुलभ व्यायाम हैं।

गलत प्रकार के व्यायाम करने से स्त्रियाँ अनेक प्रकार की कठिनता में पड़ जाती हैं, उनका स्वास्थ्य बिगड़ जाता है और उन्हें प्रसव सम्बन्धी अनेक रोग हो जाते हैं। ऋतुकाल में आसन करना वर्जित है।

इन व्यायामों के अतिरिक्त घूमना भी अच्छा व्यायाम है। लेकिन व्यायाम के लिये जो घूमते हैं उन्हें ४ मील से कम न घूमना चाहिये। घूमने के समय रीढ़ की हड्डी सीधी, आँख सामने रखना चाहिये। घूमते समय श्वास की क्रिया ठीक रहती है। यदि नहीं तो चेष्टा करके गहरी सांस लेने का अभ्यास करना चाहिये।

शरीर के लोच को कायम रखना और शारीरिक स्फूर्ति बनाये रखना व्यायाम का मुख्य उद्देश्य हैं।

व्यायाम से लोच उत्पन्न करने का कार्य उत्तम रीति से होता है। उस प्रदेश में रुधिर का प्रवाह सम्यक रूप से होता है। पेशियों के आकुंचन और प्रसारण आदि के गुण में वृद्धि होती है। मुख्यतः गर्भाशय वहाँ के वाह्य स्नायुओं में लचीलापन जितना अधिक होगा। उनका कार्य भी उतना ही अधिक उत्तम होगा। यह गुण अश्विनी क्रिया द्वारा उत्पन्न किया जा सकता है। इन क्रियाओं से ऐसी भी बहुत सी स्त्रियों को लाभ पहुँचने के उदाहरण मिले हैं जिनके गर्भाशय चलित और स्थानान्तरित हो गए थे। इन क्रियाओं से गर्भ की शिकायत दूर हो जाती है।

पश्चिमोत्तान, योग मुद्रा, हलासन का अप्रत्यक्ष रूप से गर्भाशय पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ता है। कटि के वाह्य स्नायुओं और पेशियों का भी गर्भाशय के कार्य से विशेष सम्बन्ध होता है। उन पेशियों में लचीलेपन का गुण होना ही उनके आरोग्य का सूचक है। उपर्युक्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आसन स्त्रियों के स्वास्थ्य को सदैव अच्छा बनाये रखते हैं। स्त्रियों के लिये अपना स्वास्थ्य अच्छी दशा में रखना अत्यावश्यक है। मनुष्य का स्वास्थ्य यदि एक दफा अच्छा न रहे तो उसका परिणाम उसी तक सीमित है किन्तु यदि स्त्रियों का स्वास्थ्य अच्छा न हुआ तो समाज और देश दोनों को उससे क्षति पहुंचती है। स्त्रियों के शरीर की रचना और उनकी आवश्यकता को ध्यान में रखते हुये इस लेख में उनके लिये कुछ अनुभूत यौगिक क्रियाओं और घरेलू काम धन्धों का वर्णन किया गया है जिनकी सहायता से उनका स्वास्थ्य सदा अच्छा बना रह सकता है। स्त्रियों को जिस प्रकार के व्यायाम की आवश्यकता है उनकी पूर्ति केवल यौगिक आसनों द्वारा ही हो सकती है। आसनों को करना अपेक्षाकृत अन्य व्यायामों से आसान है। इसमें बाह्य किसी उपकरण या सामग्रियों की आवश्यकता नहीं है। केवल एक कम्बल और उसके ऊपर एक सूती बिछावन काफी है। इसके ऊपर बैठकर या लेट कर सब प्रकार की यौगिक क्रियायें की जा सकती हैं। यौगिक व्यायाम विशेष लाभकारी हैं और आसानी के साथ किये जा सकते हैं।

वर्तमान युग की सभ्यता का यह घातक परिणाम है कि कितनी ही मातायें प्रसूति काल में प्रसूत, यक्ष्मा आदि जैसे किसी संहारक रोगों के चंगुल में फँस जाती हैं या उनकी मृत्यु हो जाती है या किसी विकृत अवयव को ठीक करने के सम्बन्ध में तथा साधारण स्थिति में प्रत्येक अवयवों से ठीक काम लेने के सम्बन्ध में आमतौर से दो बातें आवश्यक होती हैं—पहली तो यह कि उन भागों को पर्याप्त विश्रान्ति मिलनी चाहिये जिससे कि वहाँ की धातु परिमार्जन क्रिया ठीक तरह से हो सके और दूसरी यह कि वहाँ पर बराबर शुद्ध रक्त का संचार और उस क्रमसे अशुद्ध अथवा दूषित रक्त का निष्कासन होता रहे।

सर्वांगासन या विपरीत करणी में यह बात बड़ी आसानी के साथ और उत्तम ढङ्ग से होती है। इस आसन के गर्भाशय तथा वहां के मांस रज्जुओं की पूरीतौर से विश्रान्ति मिलती है और उनके ऊपर पड़ने वाला मल का दबाव हलका हो जाता है। वहां के अणुओं को फिर अच्छी तरह काम करने लग जाने की क्षमता और स्फूर्ति प्राप्त होती है और गर्भाशय अपने मूल स्थान पर आ जाता है। अश्विनी क्रिया के द्वारा वहाँ पर विपुल मात्रा में रक्त का संचार कराया जा सकता है। उसके द्वारा गर्भाशय के मांस रज्जुओं के आकुंचन—प्रसरण का अभ्यास कराया जा सकता है जिसके फलस्वरूप उनकी ताकत बढ़ जाती है और वहाँ का प्रत्येक अणु विकसित और नये रुधिर से प्रफुल्लित हो जाता है। सर्वांगासन में गुरुत्वाकर्षण अनुकूल होने से मलापकर्षण तथा अशुद्ध रक्त का प्रवाह जारी होता है जो वहां के अणुओं को अधिक कार्यक्षम बनाने में सहायक होता है। इन सब क्रियाओं से वहाँ के अवयवों की शक्ति में वृद्धि होती है। यदि इन विकृतियों को दूर करने में उड्डियान तथा कपालभाति का भी यथायोग्य उपयोग किया जाय तो उसका फल और भी सुलभ तथा स्थायी होता है।

गर्भाशय सम्बन्धी इन विकृतियों को दूर करने में आसन और प्राणायाम का प्रयोग किया गया है और उनके अच्छे परिणाम भी स्पष्ट रूप से देखे गये हैं। हाँ, गर्भाशय तथा उसके द्वार के संकीर्ण होने की विकृति को दूर करने में इन क्रियाओं द्वारा अच्छी सफलता नहीं मिली है। परन्तु हमें इस बात का पूरा यकीन है कि अगर छोटी अवस्था से ही इन क्रियाओं का अभ्यास जारी रहे तो उनमें यह खराबियां बिल्कुल ही नहीं होने पायेंगी। प्रौढ़ावस्था में जब कि गर्भाशय की मांस पेशी तथा मांस-रज्जु बहुत कठोर हो जाते हैं इन क्रियाओं के सुपरिणाम मुश्किल से देखने को मिलते हैं। इसलिये यदि गर्भाशय की संकीर्णता की खराबी दूर करना हो तो जिन यौगिक क्रियाओं के सुपरिणाम उन अवयवों पर स्पष्ट दिखायी पड़ते हैं उन क्रियाओं को बचपन से ही आरम्भ कर देना चाहिये।

स्कूलों तथा छात्रावासों में यौगिक क्रियाओं का अभ्यास शुरू कर देना चाहिये क्या हमारे सभा, समाज की महिलायें इस पर ध्यान देंगी।

सब प्रकार की मासिक-धर्म की गड़बड़ी जैसे अत्यार्तव अनार्तव अथवा अल्पार्तव या बहुत देर से रजोदर्शन का होना आदि विकृतियाँ भी सर्वांगासन अश्विनी क्रिया, प्राणा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

याम तथा अन्य यौगिक क्रियाओं द्वारा अच्छा होती हुई पाई गई हैं। इन सब व्याधियों का कारण मनः शोक भी होता है। इसके अलावा पाचन-क्रिया की गड़बड़ी तथा कोष्ट बद्धता भी इसके कारण हैं। कुपचन अथवा पाचन-शक्ति की कमजोरी के कारण शरीर के भीतर वायु कुपित होती है जिसका दबाव गर्भाशय और उसके श्रोतों पर पड़ता है। कोष्ठबद्धता का भी उस पर इसी तरह का दबाव पड़ता है। इसका परिणाम यह होता है वहा पर धीरे-धीरे यह सञ्चय होने लगता है वहां के श्रोतों का मल, जिसे प्रतिक्षण रक्त प्रवाह के साथ निकलते रहना चाहिये निकल नहीं पाता और वहां पर रुक जाता है। यदि यह हालत बढ़ती रही तो वहां पर अशुद्ध रक्त का प्रवाह स्थगित या सा हो जाता है जिसके फलस्वरूप वहां के स्रोतस शिथिल तथा मल युक्त बन जाते है। प्रदर आदि भी स्त्रियों के भयानक रोग हैं। लेकिन इन सब रोगों में यौगिक क्रियाएं निस्सन्देह बहुत लाभकारी ही सिद्ध हुई हैं और इनके सुपरिणाम भी भी देखने को मिल चुके हैं। इन क्रियाओं से कुपचन तथा मलबद्धता भी जाते रहते हैं।

यदि रोग बहुत पुराना है तो इन क्रियाओं के साथ-साथ टबबाथ की भी आवश्यकता होती है। कष्ट के साथ होने वाले आर्तव अथवा नष्टार्तव में गरम जल के टबबाथ का उपयोग भी होगा अत्यार्तव अथवा प्रदर की हालत में सिट्ज-बाथ का उपयोग अधिक अच्छा होता है।

इन विकारों के उपचार में मालिश की भी बहुत उपयोगिता पाई जाती है। खास करके मेरु दण्ड की मालिश अत्यन्त लाभकारी प्रादीद के दोनों बाजुओं पर दोनों हाथों के अंगूठे रख कर ऊपर से नीचे की तरह आहिस्ता-आहिस्ता मालिश करनी चाहिए। इसका वहां के स्नायुओं पर बड़ा शामक प्रभाव पड़ता है। इन रोगों में केवल तेल मालिश अच्छा काम करती है।

जिन विकारों के सम्बन्ध में उल्लेख किया गया है उनमें योगिक व्यायाम, प्राकृतिक स्नान और मालिश इन तीनों उपचारों की विशेष उपयोगिता है। उनमें से प्रत्येक उपचार प्रभावकारी भी है। अतः आवश्यकतानुसार इनमें से प्रत्येक का प्रयोग निरापद किया जा सकता है। ये तीनों उपचार भी एक साथ भी चलाये जा सकते हैं।

गर्भाशय तथा मासिक-धर्म सम्बन्धी विकृतियों के लिए योग्यासनों की इस उपयोगिता को देखते हुए महिला वर्ग को इससे लाभ उठाना चाहिये। किन्तु इन क्रियाओं को यका यक और बिना सोचे समझे न आरम्भ कर देना चाहिये। इन क्रियाओं को शुरू करने के पहले अपने हृदय का डाक्टरी परीक्षा करालेनी चाहिए। यदि हृदय की गति सामान्य ही उसमें कोई दुर्बलता के लक्षण न प्रकट होते हों तो यौगित क्रियाएं आरम्भ की जा सकती हैं।

आसन करने की विधि लेख के बड़ा हो जाने से यहां पर नहीं लो जा रही है लेकिन जीवन सखा के पाठक इन सभी आसनों से भिज्ञ है क्योंकि 'जीवन सखा' में यह कई दफा सचित्र निकल चुके हैं।

गौर करने से पता चलता है कि आधुनिक अकाल में स्त्रियों के अधः पतन और उनके दुख का कारण उनका रूज्ञान है। दुःख के साथ कहना पड़ता है कि उन्हें यह पता नहीं है कि सही प्रकार का जीवन मिताहार-विहार और उचित व्यायाम सहित कैसे व्यतीत किया जाय उन्हें यदि अपने सम्बन्ध में आवश्यक बातों का और सम्यक व्यायाम का ज्ञान हो जाय तो उनका कष्ट बहुत कुछ कम हो सकता है। बहुत सी स्त्रियाँ तो किसी प्रकार का व्यायाम नहीं करती और यदि कुछ करती भी हैं तो गलत प्रकार का व्यायाम—यह दोनों उनकी भूल हैं। यदि वे यौगिक क्रियाओं जैसे कोमल व्यायाम किया करें प्रातःकाल टहलने जायं या घर के कुछ काम धन्धों को स्वयं करें तो वे अपने दुःख से छुटकारा पा सकती हैं।

रात में सोने के यदि आध घन्टा पहले नियमित रूप से एक गिलास गरम पानी पीया जाय; तो यह भयानक से भयानककब्ज या कोष्ठबद्धता के लिए रामबाण सिद्ध होगा। कब्ज दूर होने के साथ साथ इसका उदर और आमाशय पर भी बहुत शामक प्रभाव पड़ता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मांस पेशियों का रासायनिक परिवर्तन

श्री—कृष्णजीवन त्रिवेदी, तृतीय वर्ष, आयुर्वेदिक कालेज, पटना

मांसपेशी के अन्दर रासायनिक परिवर्तन Chemical changes होते रहते हैं। मांसपेशी के संकोच करने पर उसकी क्रियाओं में वृद्धि होती है। इस क्रिया के करने में उसे भोजन की आवश्यकता दीख पड़ती है जो उसे शर्करा के रूप में प्राप्त होता है, यह शर्करा यकृत में 'ग्लाइकोजन' के रूप में और मांस-पेशी में शर्करा के रूप में विद्यमान रहता है। पेशी को कार्य करते समय शर्करा की आवश्यकता होती है। जब उसका खजाना समाप्त हो जाता है तो वह यकृत से मांगता है वहां से 'ग्लाइकोजन' शर्करा के रूप में पेशी के पास आकर शक्ति प्रदान करती है।

इस प्रकार जब पेशियों में आकुंचन होता है तो एक अम्ल की उत्पत्ति होती है इसका नाम सारकोलैक्टिक अम्ल है। यह एक विष के समान है जो पेशियों की शक्ति को घटा देता है। यह अम्ल पेशियों के तन्तुओं के टूटने-फूटने से बनता है। पेशी इस क्षति की पूर्ति शर्करा द्वारा करती है जो उसे यकृत द्वारा प्राप्त होती है। इस प्रकार पेशी में शर्करा के जलने से या पेशी की क्रिया से उष्णता उत्पन्न होती है। यह उष्णता की गति या क्रिया को उत्पन्न करती है। उष्णता भी एक प्रकार की शक्ति है और गति भी एक प्रकार की शक्ति ही है।

पेशियों के अधिक आकुंचन से श्रम की उत्पत्ति होती है। इसका प्रधान कारण पेशियों में सारकोलैक्टिक अम्ल की उत्पत्ति ही है। यदि एक श्रमित मनुष्य के रक्त को भले चंगे मनुष्य के शरीर में प्रवेश करा दिया जाय तो चंगा मनुष्य भी श्रमित हो जायगा।

श्रम को दूर करने का सबसे उत्तम उपाय यह है कि शरीर की आवश्यकतानुसार विश्राम किया जाय। १० मिनट तक संकोचन करने पर उत्पन्न हुए श्रम में १५ मिनट विश्राम करने की आवश्यकता पड़ती है। श्रम आदत पर भी निर्भर करता है। कुछ मनुष्य मानसिक परिश्रम अधिक कर सकते हैं, कुछ शारीरिक परिश्रम अधिक कर सकते हैं। व्यायाम के द्वारा पेशियों में कार्य करने की आदत पड़ जाती है। धीरे-धीरे यह आदत बढ़ाई जा सकती है। व्यायाम के समय पेशियों में संकोचन होता है और मांस पेशियाँ फूल जाती हैं। रक्त का प्रवाह इनमें अधिक होता है जिनसे इनकी शक्ति बढ़ती है। मोटरकार में पेट्रोल के परमाणुओं की रासायनिक शक्ति को स्वतंत्र कर उसकी गति को बदल दिया जा सकता है। इस प्रकार ये शक्तियाँ भी एक दूसरे के रूप में परिवर्तित हो सकती हैं।

पृष्ठ ४३ का शेषांश

को ५ बजे महात्मा जी का भोजन करीब-करीब दोपहर के भोजन के ही समान होता है। यह भोजन दिन डूबने के पहिले ही समाप्त हो जाता है। दिन डूबने के बाद वे प्रायः कुछ नहीं लेते या कोई ऐसी चीज लेते हैं जो बहुत मामूली होती हैं, जिसका उल्लेख करने की कोई आवश्कता नहीं जान पड़ती।

हमारे युग पुरुष की दिनचर्या

हमारे युग के सबसे महान पुरुष अपना समय किस प्रकार व्यतीत करते हैं यह जानना भी मेरे लिए बड़ी दिलचस्पी की बात थी। बहुत तड़के चारपाई से उठते ही महात्मा जी ध्यान ईश्वर के तल्लीन हो जाते हैं। उसके बाद वे श्रीमद् भगवदगीता के दो अध्याय का पाठ सुनते हैं। सबेरा हो जाने पर वे टहलने निकलते हैं। टहल कर अपने आश्रम में लौटने पर महात्मा जी पत्र-व्यवहार में जुट जाते हैं। कुछ देर के बाद वे धूप-स्नान लेते हैं और तेल से बदन की मालिश कराते हैं। मालिश के बाद वे ठंडे जल से स्नान करते हैं। दोपहर के भोजन के बाद वे थोड़ी देर तक विश्राम करते हैं और इस बीच वे अक्सर पेडू पर मिट्टी की पट्टी लगा लेते हैं। इसके बाद वे फिर या तो पत्र व्यवहार के काम में लग जाते हैं या इसी प्रकार का कोई दूसरा कार्य करते हैं। वे ज्यादातर २ बजे से ५ बजे तक मुलाकातियों से भेंट करते हैं। दिन डूबने से पहले सायंकालीन प्रार्थना होती है और महात्मा जी टहलने निकलते हैं। रात में महात्मा जी जल्द सो जाना चाहते हैं और ज्यादातर ८ और ९ बजे के बीच सोने चले जाते हैं।

यह तो सर्व विदित है कि गांधी जी हमेशा कार्य-व्यस्त रहते हैं किन्तु यह देखकर आश्चर्य होता है कि जल्दबाजी या परेशानी का महात्मा जी की जीवन-चर्या में कोई स्थान नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम अंधकार में क्यों ?

श्री शारदाप्रसाद गुप्त

एक बार महात्मा गाँधी ने कहा था, "हमारे जीवन के जितने वर्ष असावधानता के कारण नष्ट हो गए उतने तो नष्ट ही हुए पर अब हम आगे के लिए चेत जायँ और उतने वर्ष अधिक जीने का हम प्रयत्न करें। जब हम जग जायँ तभी सवेरा समझें।"

लेखक ने महात्मा जी के इन्हीं मार्मिक बचनों का विवेचन इस छोटे से किन्तु सुन्दर लेख में किया है।

—सं०

आज का मानव-समाज अपने को भले ही सभ्य कह ले, ज्ञानी बन ले पर वास्तविकता से वह कोसों दूर है। बड़ी-बड़ी शिक्षण संस्थाओं से पढ़ कर लम्बी-लम्बी डिगरियाँ प्राप्त कर लेने वाले भी जीवन-कला (Art of living) का सर्वांश भी नहीं जानते और जानने का प्रयत्न भी तो नहीं करते। आखिर क्यों? क्या यह कोई रूखा विषय है? मेरी राय में विषय रूखा नहीं है। यदि इस विषय का स्वाद किसी को मिल जाय तो फिर देखिये वह दिन रात इसी में लीन रहता है।

वास्तव में हम अपना जीवन ईश्वर की एक देन समझते हैं और इसलिये इसे ईश्वर के भरोसे ही पर छोड़ देते हैं। यह ठीक भी है। परन्तु जब हम सहसा बीमार पड़ जाते हैं तो गली-गली डाक्टरों के पास क्यों दौड़ लगाते हैं? चाहिये तो यह कि हम कुछ न करें, चुपचाप बैठकर मृत्यु की प्रतीक्षा करें। पर उस समय मन नहीं मानता, दवा पर दवा और डाक्टर पर डाक्टर—यही हमारा कार्यक्रम रहता है। और 'मर्ज बढ़ता गया ज्यों-ज्यों दवा की'।

युग पुरुष महात्मा गांधी ने एक बार कहा था :— "हमारे जीवन के जितने वर्ष असावधानता के कारण नष्ट हो गये उतने तो नष्ट ही हुये पर अब हम आगे के लिये चेत जायँ और उतने वर्ष अधिक जीने का प्रयत्न करें। जब हम जग जायँ तभी सवेरा समझें।" उनके ये शब्द कितने सुन्दर हैं। और उन्होंने केवल कहा ही नहीं, करके भी दिखला रहे हैं। उनकी इच्छा पूर्णायु प्राप्त कर लेने की अर्थात् १२५ वर्ष जीने की है। और उनका दैनिक कार्यक्रम भी ऐसा है कि वे उतने वर्ष जी सकते हैं।

ईश्वर पर भरोसा करना बुरा नहीं परन्तु अपनी मदद आप भी करना चाहिये। कहावत है कि ईश्वर उन्हीं की मदद करता है जो अपनी मदद आप करते हैं। हम बीमार पड़ते हैं अपनी ही गलती के कारण और यदि उस गलती को हम समझ लें तो कोई कारण नहीं कि हम स्वस्थ न हो जायँ। प्रकृति के अटूट नियमों का पालन न करने से ही हम बीमार पड़ते हैं। रोग हमारे कल्याण के लिये ही आता है। यदि हम उसे अपना शत्रु न समझ कर अपना मित्र समझें और विषैली दवाओं से दबाने का प्रयत्न न कर उसके मूल कारणों को जाने और वैसा उपचार करें तो वही रोग मित्रवत् हमसे विदा हो जाता है और हमें अपनी गलतियों का प्रायश्चित करा जाता है।

आजकल हमारे भारतवर्ष में असंख्य दुधमुँहे बच्चे हमारी ही असावधानी के कारण काल के गाल चले जा रहे हैं। संसार के सभी देशों की औसत आयु लगभग ५० वर्ष की है जब कि भारत की औसत आयु २५ वर्ष की ही मानी गई है। यह क्यों? एक समय था जब विदेशी जातियाँ असभ्य थीं और हमारा भारतवर्ष कितना सभ्य था! उस समय लोग पूर्णायु का उपयोग करते थे। आज दिन भारत समय के थपेड़े में आकर अपना अस्तित्व खो बैठा है। आधुनिक सभ्यता में पड़कर दूसरों की नकल करना सीख गया है। अप्राकृतिक भोजन, कृत्रिम सजावट, अधिक कपड़े पहनना और व्यायाम से कोसों दूर रहना यही हमारा दैनिक कर्म हो गया है। यही कारण है, हमारा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वास्थ्य दिनों दिन गिरता चला जा रहा है और आश्चर्य है कि हमारे सिर पर जूँ तक नहीं रेंगती।

जीवन-यापन के लिये हम अपना अमूल्य समय और धन पढ़ने में बिताते हैं। हम वही चीज पढ़ते हैं उसी को अपना लक्ष्य बनाते हैं जिससे हमारी रोटी चलती है। ठीक भी है। पर क्या उस जीवन को सुखमय बनाने के लिये हम कुछ सोचते हैं? आज का समाज सुखी जीवन उसी का समझता है जिसके पास खूब पैसे हैं, जिसे संसार की सारी भोग सामग्री उसे प्राप्त है। परन्तु यदि तह तक पहुँचा जाय तो वह सुखी नहीं है। कहीं किसी का स्वास्थ्य खराब है तो कहीं किसी को संतान का अभाव है। यह क्यों हो रहा है इसका केवल एक ही उत्तर है वास्तविकता अर्थात् प्रकृति से दूर रहना। जो प्रकृति के गोद में खेल रहे हैं वे कभी दुखी नहीं होते। स्वास्थ्य ही हमारा धन है। यदि स्वास्थ्य अच्छा है तो संसार की सभी चीजें हमें अच्छी लगेंगी वर्ना हमारे लिये सब कुछ व्यर्थ है।

प्रत्येक व्यक्ति का यह कर्त्तव्य है कि वह अपने शरीर के विषय में कुछ जाने। शरीर रूपी घर के बिगड़ जाने पर वह उसकी मरम्मत कर सके। सच्चा ड्राइवर वही है जो अपने इन्जन के सारे कल-पुर्जों को भलीभाँति जानता हो। अभी हाल में सुना गया था कि एक ड्राइवर काठगोदाम में अपने चलते हुये इन्जन को आवश्यकतानुसार न रोक सका और इन्जन लगातार ढाल होने के कारण चलता ही गया और अन्त में दूसरे स्टेशन पर पहुँच कर दूसरे डिब्बों से टकरा गया। यह तो हुआ एक उदाहरण, हम नित्य ही देखते और सुनते हैं कि अमुक व्यक्ति जरा सी लापरवाही से मर गया। आजकल रोगों के अनेक भयानक नाम प्रचलित हैं। सीधा-सादा मनुष्य इन्हें सुनकर ही काँप जाता है। डाक्टरों के शरण में चला जाता है और अपने को उनके हाथों अर्पित कर अपनी जिम्मेदारी से बरी हो जाता है। यदि रोग मामूली हुआ तो कोई बात नहीं, वर्ना अनेकों डाक्टरों के हाथ आजमाने का मौका मिलता है और परिणाम क्या होता है किसी से छिपा नहीं।

आजकल न जाने कितनी स्वास्थ्य संस्थायें भारत में खुली हैं और अनेक बाधाओं के रहते हुये भी हमारी सेवा कर रही हैं। यदि घर-घर इसका प्रचार हो तो हमारा जीवन बड़ा सुखमय बन सकता है। मैं यूसुफपुर मोहम्दाबाद के मुंसिफ महोदय को नहीं भूल सकता जिनके कारण मैं आज अपने को अन्धकार से ढकेल कर प्रकाश में ला सका हूँ। वे 'जीवन सखा' के बड़े पुराने प्रेमी हैं। और उन्होंने ही मुझे इससे अवगत कराया। इसके पहले मेरा जीवन बिल्कुल अंधकारमय था। अज्ञानवश ही मैंने अपना सर्वप्रथम पुत्र एक ही साल की उम्र में खो बैठा। घर के सभी लोग, स्वयं मैं भी बीमार ही रहा करता था। अच्छी से अच्छी दवा कोई लाभ न पहुँचा सकी। प्रति मास कम से कम दस रुपये तो दवा के लिये अलग ही रखना पड़ता। परन्तु आज हमारा परिवार सुखी है। मालूम होता है हमें मनचाही वस्तु मिल गई हो। न दवा की और न डाक्टर की जरूरत पड़ती है। इसके लिये मुझे विशेष परिश्रम भी नहीं करना पड़ा। कुछ स्वास्थ्योपयोगी पुस्तकों का अध्ययन और 'जीवन सखा' का निरंतर प्रेम ही मेरे जीवन को सुखमय बनाने के लिये पर्याप्त थीं।

हाँ, कुछ त्याग अवश्य करना पड़ा। स्वादेन्द्रिय को अपने वश में करना पड़ा। मन की बागडोर कसनी पड़ी। चाट, पकौड़े, मिर्च-मसाले, मिठाई, पूरी-पकवान, अचार, चटनी इत्यादि वाहियात चीजों को सदा के लिये त्यागना पड़ा। ऐसा नहीं कि कभी ये चीजें खायें ही न! कभी-कभी त्यौहार पर खा लेने से कोई हानि नहीं। पर इनका आदी न होना चाहिये। प्रायः लोग कहा करते हैं कि इस जीवन में सब कुछ खा लेना चाहिए पता नहीं आगे क्या होगा। उनके लिये हम क्या कहें? वे तो जिन्दा रहते हुये भी मरे के समान हैं। स्वस्थ रहने के लिये अल्पाहार की भी आवश्यकता है। अधिक भोजन और बार-बार भोजन करने वाला मनुष्य कभी भी स्वस्थ नहीं रह सकता।

आजकल हमारे भोजन की व्यवस्था बड़ी ही विचित्र है। मैंने बड़े-बड़े घरानों में देखा है—अनेक पदार्थ एक साथ खाये जाते हैं। रोटी, दाल, चावल, साग, सब्जी भुरता, खीर, हलुवा, पापड़ ऐसे और भी कई चीजें एक साथ परसी जाती हैं। एक ही आलू के तरह-तरह के पदार्थ बनाये जाते हैं। यही नहीं, सारा भोजन कर चुकने पर एक गिलास दूध भी पिलाया जाता है। और जब

(शेष पृष्ठ ५३ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सलाद

श्री गंगाप्रसाद गौड़ 'नाहर'

भोजन में सलाद के रूप में हरी साग-सब्जियों का महत्व सर्वोपरि है, यह बताने की आवश्यकता नहीं। इस छोटे से एक लेख में सलाद बनाने की अनेक सुन्दर बिधियां बताई गई हैं। पाठकों को इन बिधियों से लाभ उठाना चाहिए।
—सं०

सलाद का व्यवहार कच्ची साग-भाजियों के खाने का एक उत्कृष्ट तरीका है। यह शब्द अंग्रेजी भाषा का है, इसका अर्थ, कच्चा साग, कच्चा अचार, या ताजा अचार लगाया जा सकता है। सलाद को यदि ठीक तौर पर, उचित मिश्रण से बनाया जाय तो इतना स्वादिष्ट बनता है कि उसके आगे स्वादिष्ट-से-स्वादिष्ट भोजन भी फीका पड़ जाता है। भोजन करते समय सलाद को सर्वप्रथम खाना चाहिये, और यदि सलाद में खटाई नहीं मिलाई गई हो तो उसे रोटी के साथ भी खा सकते हैं! इसकी मात्रा एक व्यक्ति के लिए तीन-चार छटांक, या सारे भोजन का एक तिहाई भाग होना चाहिए। एक रकाबी सभी खाद्योजों एवं खनिज-लवणों की खान होता है, जिसके लाभ लिख कर नहीं बताये जा सकते। वे तो प्रयोग करके ही भली-भांति जाने जा सकते हैं। हर रोज नियमपूर्वक सलाद का सेवन करना क्या है, मानो जीवन-धारा—रक्त—का बीमा करा लेना है। सलाद से रक्त शुद्ध, परिष्कृत एवं क्षारयुक्त बनता है। यह भोजन के रूप में शरीर को आवश्यक औषधियां देने वाला, नीरोग रखने वाला, एवं स्वास्थ्यवर्द्धक होता है। सलाद में निम्न तत्व रहते हैं—चूना, जो हड्डियों को बनाता और ठीक रखता है, और फेफड़ों को भी अच्छी हालत में रखता है; क्लोरीन जो पाचक-रस का एक तत्व है; सोडियम जो शरीर में खटाई की मात्रा का संतुलन करता है, मैगनेशियम जो दांतों को पुष्ट करता है, लोहा, जो रक्त को विकृत होने से बचाता है; खाद्योज-समूह जो जीवन-मूल हैं, स्फोक, जो मलावरोध को मिटाकर आंतों को परिष्कृत रखता है। इनके अतिरिक्त अन्य कई जीवनोपयोगी तत्वों का वह खजाना होता है, जिनसे वंचित रह कर हम भूल से अपने स्वास्थ्य का दिवाला निकाल लेते हैं।

सलाद का उपयोग करते रहने वालों को खाद्योजों एवं खनिज-लवणों की कमी से होने वाले रोग कभी नहीं सताते सलाद का उपयोग करने वाले की तृषा कम सताती है। इससे शरीर की अनावश्यक गर्मी शांत होती है और तरावट आती है। सलाद के इस्तेमाल से अव्वल तो कब्ज होता ही नहीं, और यदि रहा तो जड़मूल से नष्ट हो जाता है। सलाद से पेट साफ होता है यह गुर्दे के रोग में लाभकारी है, पेशाब खुल कर लाता है, तथा तबियत को ताजगी देता है।

सलाद के कई प्रकार हैं, जिनमें से कुछ नीचे दिये जाते हैं:—

हरी पत्तियों का सलाद

मौसिमी साग, जैसे, पालक, बथुआ, सरसों, चना, मटर, चौराई, कुल्फा, लेट्यूस आदि में से दो-एक या अधिक प्रकार के सागों की नरम नरम पत्तियों को चुनकर साफ कर लें, और उन्हें पानी से धोकर किसी चीनी, शीशे या पत्थर के बर्तन में खूब महीन-महीन काट लें। ऊपर से थोड़ा मीठा दही डालें, और ढक कर रख दें। पाँच मिनट बाद सलाद का मजा लें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ताजी तरकारियों का सलाद

मौसिमी तरकारियाँ, जैसे गोभी, मूली, टमाटर, भिण्डी, फूट, खीरा, आदि में से दो एक या कई तरकारियों को लेकर साफ करें और कद्दूकस द्वारा उनके बारीक-बारीक टुकड़े कर लें और एक रकाबी में रखें। ऊपर से कागजी नींबू का रस अन्दाज से निचोड़ दें, तथा कुछ अदरक के टुकड़े कुछ प्याज के कतरे, जी चाहे तो हरे मिर्चों के दो-चार टुकड़े, दो चार बूंद सरसों का तेल या जैतून का तेल भी डाल दें, और ढक कर रख दें। पाँच मिनट बाद स्वाद ले-लेकर खावें।

ताजे फलों का सलाद

मौसिमी फल, जैसे, पका केला, पका पपीता, अमरूद, आम, सेब, नाशपाती आदि में से कुछ को लेकर और काट कर तरीके से मिलावें। ऊपर से शहद, दूध, दही, मक्खन, क्रीम या मलाई उचित परिमाण में डालकर भोजन का आनन्द लें।

सूखे मेवों का सलाद

मेवों के सलाद का मिश्रण यदि ठीक से बन पड़े तो मुँह से नहीं छूटता। मुनक्का, किशमिश, छोहारा, पिण्ड-खजूर, आदि मेवों को थोड़ा-थोड़ा लेकर उनके बीज आदि निकाल कर बारीक टुकड़े कर लें। फिर घी, शहद, (घी और शहद बराबर-बराबर न हो) मलाई, क्रीम, दूध या दही डालकर स्वाद ले-लेकर चखें।

मिश्रित सलाद

यह सर्वोत्तम सलाद है। इसे बनाने के लिए उपर्युक्त प्रत्येक सलाद की वस्तुओं में से दो-एक को सभी में से, जो समय पर मिल सकें, चुन लेना चाहिये। जैसे, पत्तियों वाले दो-चार प्रकार के साग, दो-एक तरकारियाँ, कोई एक फल, कुछ सूखे मेवे आदि। और फिर एक साथ ही सबको साफ करके पतला-पतला काट कर मिला लें। ऊपर से अपनी रुचि के अनुसार, दही, कागजी नींबू का रस, क्रीम, मलाई, मक्खन, घी, नमक, तेल, या शहद डालकर खायें।

इनके अतिरिक्त और भी कई तरह के सलाद होते हैं, जैसे सूखे अन्नों का सलाद, हरे अन्नों का सलाद, भीगे अन्नों का सलाद, ताजी तरकारियों के रायते आदि।

पृष्ठ ५१ का शेषांश

शरीर में विकार संचय होने लगता है तो महाशय भी घबड़ाते नहीं। तोंद निकलना, गाल सामान्य से अधिक फूल जाना, पोता बढ़ जाना इत्यादि तो ऐसे लोगों का खानदानी रोग है। पर जब यह विषम रूप धारण कर लेता है तो चिन्ता होती है। रुपया पानी की तरह बहाया जाता है और भी अनेकों दुष्परिणाम उठाने पड़ते हैं। ऐसे ही लोगों के घर स्त्रियाँ नाना दुख पाती हैं। कोई बंध्या है तो कोई किसी रोग में पीड़ित है अथवा किसी के बच्चे जीते ही नहीं। क्या ये लोग 'जीवन सखा' की पुकार को सुनेंगे। आज समय आ गया है कि हम ऐसे लोगों के पास इस सुखमय संदेशको पहुंचावें और उन्हें अँधकार से निकाल कर प्रकाश में लाने का प्रयत्न करें।

स्वस्थ रह कर जीवन बिताना भी एक कला है और इसे सीखने की जरूरत पड़ती है। अभ्यास करना पड़ता है। प्रकृति के अटूट नियमों का पालन कीजिए, जल, धूप, मिट्टी, वायु और प्राकृतिक-भोजन को ही अपनी अमोघ औषधि बनाइये, शरीर की आंतरिक सफाई रखिये, कभी-कभी एनिमा का प्रयोग कीजिए, नित्य कोई व्यायाम कीजिये और यह न हो सके तो दो चार मील तेजी से टहल आइये, बनावटी चीजों का जैसे सफेद चीनी, मैदा' मिठाई, पूरी, हलवा, चाय काफी, धूम्रपान, इत्यादि का बहिष्कार कीजिये, भोजन में हो सके तो कम से कम आधा हिस्सा कच्चे और पके साग सब्जियों का रखिये, कुछ मौसिमी ताजे फल सेवन कीजिये और अपने जीवन को सुखमय बनाकर इस संसार में अपना कर्म कीजिये और पूर्णायु प्राप्त कीजिए। कभी-कभी उपवास करना न भूलिये। अपना नियम बना लीजिए। कठिन से कठिन रोग भी उपवास करने से दूर भाग जाता है। उपवास के नियमों को किसी अच्छी पुस्तक का अध्ययन कर आप जान सकते हैं। जब एक बार इन नियमों का पालन करना आरम्भ कर देंगे तब आपको विदित होगा कि हम कितने अँधकार में थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्वोत्तम चिकित्सा प्रणाली-कौन सी है ?

डा० युगलकिशोर चौधरी अग्रवाल एन० डी०

डा० युगलकिशोर चौधरी ने प्रश्नोत्तर के रूप में यहाँ पर रोगों के मूल स्वरूप, उनके कारण तथा निवारण के साधनों पर प्रकाश डालते हुए प्राकृतिक-चिकित्सा की श्रेष्ठता प्रतिपादित की है। इसी ढंग की आपकी एक पुस्तक 'प्राकृतिक-चिकित्सा प्रश्नोत्तरी' भी प्रकाशित हो चुकी है जो नैसर्गिक उपचार में आस्था रखने वाले व्यक्तियों के लिये 'हैंण्डबुक' का काम दे सकती है। अपने विचारों को प्रभावोत्पादक ढंग से व्यक्त करने का आपका यह प्रयत्न बहुत सफल हुआ है। पाठक, इस लेख को एक बार अवश्य पढ़ें। —सं

प्रश्न—आपकी सम्मति में सर्वश्रेष्ठ चिकित्सा-प्रणाली कौन सी है ? एलौपैथी-होमियोपैथी-हिकमत आयुर्वेद अथवा प्राकृतिक-चिकित्सा ?

उत्तर—आपके प्रश्न के उत्तर में यह कहना पड़ेगा कि सबसे सस्ती, कभी विफल न जाने वाली, उपयोगी चिकित्सा-प्रणाली तो प्राकृतिक-चिकित्सा ही है क्योंकि इस प्रणाली में न कोई दवा खानी पड़ती है न चीर-फाड़ होती है।

प्रश्न—क्या लंघन से सब रोग दूर हो सकते हैं ? आपके पास क्या प्रमाण हैं ?

उत्तर—कुछ रोगों को छोड़कर लगभग रोग व पीड़ाएं, विकार आदि विधिपूर्वक उपवास करने से अवश्य नष्ट हो जाते हैं क्योंकि लंघन से रोग का कारण शरीर स्थित विजातीय-द्रव्य सरलता से बाहर निकलता है और पाचक-अंगों को विश्राम व बल प्राप्त होता है। जानवर लंघन करके अपने रोग व पीड़ाएं दूर करते हैं यह प्रत्यक्ष देखा गया है।

प्रश्न—रोगों का मूल कारण क्या है ?

उत्तर—रोगों का मूल कारण प्रकृति विरुद्ध आग से पका विकृत भोजन है।

प्रश्न—रोगों के कारण प्रकृति विरुद्ध भोजन के सिवा और क्या-क्या है।

उत्तर—खराब बनावटी भोजन के सिवा रोगों के उत्पन्न होने के कारण यह है; कपड़े अधिक पहनना, भारी तंग जूते पहनना, गंदे अंधेरे तंग मकानों में रहना, अत्यधिक परिश्रम करके जागना, नशा करना और औषधि सेवन करना!

प्रश्न—क्षय, दमा, बवासीर, गठिया आदि पुराने रोगों का कारण क्या है ?

उत्तर—पुराने रोगों की उत्पत्ति नए रोगों से होती है और नए रोग खराब प्रकृति विरुद्ध आग से पके भोजन से उत्पन्न होते हैं। नए तीव्र रोग यदि प्राकृतिक ढंग से ठीक किए जायं और दवा के जरिए दबाया न जायं तो पुराने रोग उत्पन्न होते नहीं हो सकते नए रोग बुखार, जुकाम, दस्त, चेचक, फोड़ा आदि को दवा इन्जेक्शन, टीका या चीर-फाड़ के द्वारा दबाने से ही जहरीले पदार्थ अन्दर रह जाते हैं और शीघ्र पुराने रोग उत्पन्न हो जाते हैं—

प्रश्न—रोगों के मूल कारण विस्तार से समझाइए ताकि अच्छी तरह ध्यान में आ जायं।

उत्तर—प्रकृति विरुद्ध भोजन भलीभांति नहीं पचता और उसका बहुत थोड़ा भाग शरीर के काम आता है शेष के मल पदार्थ बन जाते हैं जो पूरी तरह बाहर नहीं निकलते और अन्दर सड़ते रहते हैं और उससे रक्त-वाहिनी नालिकाएं-छोटी बड़ी धमनियाँ व नाड़ी आदि सब में विष या कचरा भर जाता है—वह मल पदार्थ या विजातीय-द्रव्य शरीर में रह कर भारी सड़न उत्पन्न करता है—उससे गरमी पैदा होती है और शरीर उसे बाहर निकालने का यत्न करता है। इसी प्रयत्न को तीव्र रोग कहते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह विष बाहर निकालने के लिए शरीर बराबर यत्न करता है और उसी से बुखार, जुकाम, खांसी, दस्त, फोड़े, हैजा आदि रोग उत्पन्न होते हैं—अधिक मात्रा में अधिक समय तक विजातीय-द्रव्य शरीर में रह जाने से उसमें कीटाणु (Germs) पैदा हो जाते हैं जैसे गोबर पड़ा रहने से उसमें लटें पड़ जाती है।

डाक्टरों का यह ख्याल बिल्कुल झूठा और बेबुनियाद है कि कीटाणुओं से रोग उत्पन्न होता है क्योंकि कीटाणु तो मल पदार्थों से उत्पन्न होते हैं। इसलिए रोगोत्पति मल पदार्थों से संभव है कीटाणुओं से नहीं—धीरे-धीरे यह कीटाणु मल पदार्थों के साथ-साथ शरीर को भी खाने लगते हैं और शरीर नाना प्रकार की बीमारियों का शिकार हो जाता है। उदाहरणार्थ मलेरिया मच्छरों से पैदा नहीं होता होवा और न बेचारे निर्दोष मच्छरों को मारने से देश से मलेरिया चला ही जायगा। मलेरिया तो गरिष्ठ पदार्थ खाने से, कब्ज होकर रक्त दूषित हो जाने से होता है और इसी प्रकार क्षय रोग भी कीटाणुओं से उत्पन्न न होकर खराब भोजन, गन्दगी में रहने तथा तीव्र रोगों को दवा के द्वारा दबाने से होता है—थोड़ा ध्यान दें और सब बातें समझ में आ जायंगी।

प्रश्न—लंघन क्यों रोग-निवारक है? समझाकर बताइए।

उत्तर—लंघन या उपवास आरोग्य प्राप्ति, दीर्घ-जीवन, भयानक तथा रोगों से छुटकारा पाने के लिए सर्वोत्तम अचूक नुस्खा है। कारण यह कि जब आप भोजन छोड़ते हैं उस समय पाचन-शक्ति को भोजन नहीं पचाना पड़ता और वह पूरी तरह शरीर स्थित दोषों को विजातीय-द्रव्य को पचाने में लग जाती है और इसीलिए लंघन रोग के मूल कारण मल पदार्थों को शरीर से निकाल कर पुनः शरीर को विकार रहित, नवीन व दीर्घजीवी बना देता है।

प्रश्न—प्रकृति विरुद्ध भोजन का अर्थ बताइए और क्यों वह रोग व अकाल मृत्यु का कारण है?

उत्तर—मांस-मदिरा घातक व घृणित वस्तुएं हैं यह तो शायद आप मानते ही होंगे और यह आहार तो अत्यन्त रोगकारक है और इनसे मनुष्य राक्षस बन जाता है किन्तु मैदा बारीक आटा व दूसरे अनाज भी यदि अच्छी तरह न पचें या बिना भूख खाए जाते हैं तो भी अत्यन्त रोगकारक व हानिकारक होते हैं। खासकर मिठाइयाँ, आचार, मुरब्बे, तली हुई चीजें, बारीक आटे की, चुपड़ी रोटी—वनस्पति घी व उससे बने पदार्थ—तेज मसाले वाले पदार्थ—चाय नशीली चीजें तथा पत्ते जड़ी-बूटी के सिवा अन्य तेज दवाइयाँ अत्यन्त हानिकारक व रोग उत्पन्न करने वाली वस्तुएं हैं और इन सार-रहित तेज गरिष्ठ वस्तुओं के सेवन से शरीर रूपी मशीन शीघ्र जर्जर होकर नष्ट-भ्रष्ट हो जाती है। संसार के समस्त भयानक रोग और अकाल मृत्यु उपरोक्त पदार्थों के खाने से होते हैं।

प्रश्न—फिर आपकी राय में मनुष्य का सर्वोत्तम स्वास्थ्यप्रद आहार कौन सा है?

उत्तर—मनुष्य का श्रेष्ठ, नैसर्गिक आहार हर प्रकार के ताजा फल, हर एक मेवा, हर एक सूखे फल, हरी तरकारियाँ, कंद मूल आदि तथा कच्चा दूध यही श्रेष्ठ आरोग्यदायक दीर्घ-जीवन देने वाले पदार्थ हैं—इनको खाने वाला कभी बीमार नहीं होता—और वह कभी बीमारी में उम्र से पहले नहीं मरता बहुत बड़ी उम्र पाता है।

प्रश्न—आप शहरों के दवाखानों, अस्पतालों आदि चिकित्सागृहों को अच्छा समझते हैं या जंगल, बाग में स्थित प्राकृतिक-चिकित्सा गृहों को? आदर्श चिकित्सालय का पूरा वर्णन कीजिए।

उत्तर—आज ९९ वे फीसदी अस्पताल दवाखाने शहरों में बने हुए हैं जहाँ लोग अपने इलाज के लिए जाते हैं किन्तु उनमें जाने से स्थायी लाभ न होकर क्षणिक लाभ होता है सच्चा आरोग्य तो जंगल या बाग में बने प्राकृतिक-चिकित्सालयों द्वारा ही प्राप्त हो सकता है—कारण यह है कि शहरों के दवाखानों में शहद की बदबूदार गंदी हवा मिलेगी और सेवन करने की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

औषधियाँ मिलेंगी जो आपके शरीर का सर्वनाश कर डालेंगी और बाहर जंगल, बाग या पहाड़ की तराई में बने प्राकृतिक-चिकित्सा गृहों में जाते ही आपके रोग समूह इस प्रकार नष्ट हो जायंगे जैसे पवित्र पावनी गंगा के दर्शन से पाप नष्ट हो जाते हैं। जंगल, बाग में बने प्राकृतिक-चिकित्सा गृह रोगियों के लिए कल्प-वृक्ष और कामधेनु के समान फल देने वाले हैं।

कैसा सुन्दर वहाँ का दृश्य होता है—कितना मनोहर वह स्थान होता है ? कैसी जीवन-दायिनी स्वास्थ्य-प्रद वहाँ की ठंडी ताजी हवा होती है इसका अनुमान वे ही लोग कर सकते हैं जो ऐसे स्थान पर रहे हैं।

जंगल का रहना—झरने नदी के या कुएं के निर्मल जल में स्नान करना—अत्यन्त पाचक जल का पीना, अत्यन्त आरोग्य व बलदायक पृथ्वी माता की गोद में, तारों भरी चाँदनी रात में, शयन करना साक्षात अमृत तुल्य सर्व व्याधि नाशक फलों व मेवे जात व कन्द मूल-शाक का भक्षण करना, दिन रात अबाधित रूप से नग्न या अर्धनग्न शरीर पर धूप व हवा का लगाना, जंगल की स्वस्थ गाय, बकरियों का उत्तम धारोष्ण दूध पीना आदि उपचार करने पर भी क्या साधक के शरीर में व्याधि पीड़ा या रोग रह सकता है ? हरगिज नहीं—इतना भी स्वास्थ्य रूपी श्रेष्ठ धन की इच्छा करने वाले लोग दवाखानों या अस्पतालों में जाकर दवा रूपी जहर पीना ही पसन्द करेंगे ? शायद बहुत थोड़ा सोचिए और प्रकृति की शरण में आइए !

स्वास्थ्य सम्बन्धी तीन नए प्रकाशन

कविराज महेन्द्रनाथ पाण्डेय की स्वास्थ्य सम्बन्धी महत्वपूर्ण कृतियाँ प्राकृतिक रोगोपचार के प्रेमियों के बीच कितनी लोकप्रिय हुई हैं, यह कहने की बात नहीं इनकी प्रत्येक पुस्तक की अधिकाधिक मांग ही उनकी लोकप्रियता का सहज प्रमाण हैं। आपकी नयी युक्तियाँ निम्नलिखित हैं :—

(१) तपेदिक—तपेदिक के सम्बन्ध में सारी जानकारी की बातें, तथा इस भयंकर रोग से बचाव का उपाय इस पुस्तक के द्वारा आप बिना किसी की सहायता के जान सकते हैं। इसकी एक प्रति तो प्रत्येक घर में रहनी ही चाहिए। मूल्य ४) रु०

(२) जुकाम—इसमें जुकाम, ब्रोंकाइटिस, दमा, खांसी, निमोनिया; एनफ्लुएञ्जा आदि का अचूक इलाज बताया गया है। बड़े काम की चीज़ है। मूल्य १।।) रु०

(३) हमारा भोजन—पाण्डेय जी की यह एक नवीनतम कृति है, आहार एवं स्वास्थ्य सम्बन्ध सभी ज्ञातव्य बातों की जानकारी इस पुस्तक से आप प्राप्त कर सकते हैं। मूल्य ४)

इन पुस्तकों के लिए आज ही लिखें—

मैनेजर—स्वास्थ्य ग्रंथ भण्डार, 'जीवन सखा' कार्यालय

२८७ बादशाही मंडी, चौक, इलाहाबाद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गर्भ की रक्षा

डा० इन्दुमती सिनहा

माता प्रकृति कल्याणमयी है। वह प्राणिमात्र का कल्याण करती है। यदि हम शरीर-रचना शास्त्र की बारीकियों पर विचार करें, तो यह रहस्य हमसे छिपा नहीं रह सकता। कठिनाई या परेशानी तो उसी हालत में उत्पन्न होती है जब हम जानबूझ कर या अपनी गैर जानकारी के कारण प्रकृति के मार्ग में रुकावटें डालते हैं, उसके नियमों की अवज्ञा करते हैं। यही हमारी सारी मुसीबतों की जड़ है। यदि हम अपने को पूरी तौर से प्रकृति पर छोड़ दें, यदि हम सचाई के साथ प्रकृति के बताए मार्ग का अनुसरण करें तो कोई कारण नहीं जो हमें किसी भी प्रकार की रोग-व्याधि, या संकट का सामना करना पड़े।

गर्भाधान से लेकर प्रसव काल तक और सच पूछिए तो उसके बाद भी प्रकृति मां स्वयं वे समस्त साधन प्रस्तुत करती है जो कि भावी माता तथा गर्भस्थ शिशु दोनों की सुरक्षा के लिए आवश्यक हैं। प्रकृति यह रक्षा-कार्य किस प्रकार करती है, इसी का यहाँ पर सरसरी तौर पर उल्लेख कर देना मैं आवश्यक समझती हूँ।

आमतौर पर योनि-मार्ग (वेजाइना) उसकी दीवारों की ग्रंथियों से होने वाले एक प्रकार के स्राव के कारण अम्ल कारक बना रहता है। अम्ल गर्भाशय की सुरक्षा के लिए प्रकृति द्वारा निर्मित 'बाहरी रक्षा-कतार' है। इस अम्ल-प्रधान स्राव में किसी प्रकार के अनिष्टकर जीवाणु टिक ही नहीं सकते। गर्भाधान हो जाने के बाद यह स्राव उत्पन्न करने वाली ग्रंथियों की क्रियाशीलता और भी बढ़ जाती है। इस प्रकार सगर्भावस्था में रोगकारक अथवा अन्य किसी प्रकार का अनिष्ट करने वाले, कीटाणुओं के विरुद्ध यह रक्षा-कतार और भी सुदृढ़ बन जाती है।

साधारण रूप से गर्भाशय ग्रीवा या गर्भाशय-मुख बन्द रहता है। उसमें सिर्फ एक बारीक सुई की नोक बराबर सूराख रहती है। इसी सूराख से मासिक स्राव बाहर निकलता और इसी छिद्र के रास्ते पुरुष का शुक्राणु गर्भाशय में पहुँचता है। गर्भान्वित हो जाने के बाद डिम्ब गर्भाशय में आ जाता है और वहीं वह भ्रूण के रूप में और फिर गर्भस्थ शिशु के रूप में परिणत हो जाता है इस अवस्था में प्राकृति के लिए यह बहुत आवश्यक हो जाता है कि वह कोई ऐसा प्रबन्ध कर दे जिससे कि बाहर से किसी अनिष्टकारी कीटाणु का गर्भाशय में प्रवेश न होने पावे।

गर्भाधान हो जाने के बाद गर्भाशय-ग्रीवा, मुलायम पड़ जाती है और उसके द्वार या मुख को श्लेष्मा की झिल्ली बन्द कर देती है। गर्भाशय मुख को बन्द कर देने वाली इस श्लैष्मिक झिल्ली को 'ओपरकुलम' कहते हैं। यह अधिकांश रूप में उन श्वेत रक्त-कणों के बने होते हैं, जिनमें रोग जन्य कीटाणुओं को अपने में विलीन कर लेने या उनको विनष्ट कर देने की शक्ति होती है। ओपरकुलम को हम ठेंठी या काग कह सकते हैं। इस प्रकार बाहरी रोग-जन्य कीटाणुओं के आक्रमण से सर्वथा सुरक्षित रह कर गर्भाशय में भ्रूण की वृद्धि होती है। वही भ्रूण पूरे महीने का होकर बिना किसी बाहरी सहायता के बालक के रूप में जन्म लेता है और गर्भाधान से लेकर बालक के जन्म-समय तक प्रकृति उसे रोग-कारक कीटाणुओं से पूरी तौर से सुरक्षित रखती है।

प्रसव के समय भी प्रकृति प्रजनन-मार्ग को रोग जन्य कीटाणुओं से आश्चर्यजनक रूप से बचाव करती है। गर्भावस्था में तो प्रकृति को केवल भ्रूण की ही हिफाजत करनी पड़ती थी, लेकिन प्रसव के समय तो उसे इस रक्षा-कार्य के लिए उससे कहीं अधिक तैयारियां करनी पड़ती हैं। बालक को सर्वथा अदूषित अवस्था में उत्पन्न करना प्रकृति का कार्य है। और प्रसव के बाद उसे न केवल गर्भाशय को बल्कि योनि-मार्ग को भी रोगाणु-रहित बनाए रखना है। प्रसव के बाद गर्भाशय ग्रीवा या द्वार फौरन ही बन्द नहीं हो जाता बल्कि कुछ समय तक खुला रहता है और इस बीच किसी बाहरी रोग कारक कीटाणु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का उन पर आक्रमण हो सकता है। इसलिए इस बीच के समय के लिये गर्भाशय-द्वार और योनिमार्ग को कृमि-रहित बनाए रखने के लिए प्रकृति ने इसका सुन्दर प्रबन्ध किया है कि उसे देखकर मानव-मस्तिष्क चकित हो उठता है।

प्रसव के समय वस्तुतः होता क्या है उसे संक्षेप में इस प्रकार समझिए। बच्चे का सिर गर्भाशय-द्वार तक आ जाता है। यहीं पर एक झिल्ली की चादर मिलती है जो गर्भ के सिर पर पट्टी का काम करती है। प्रसव-वेदना होने से बच्चे का सिर बाहर निकाल देने के लिए माता जोर लगाती या कांखती है। इसी प्रसव वेदना के कारण नीचे की तरफ होने वाला दबाव जब एक खास स्थिति में पहुँच जाता है तो वह झिल्ली का परदा एकाएक फट जाता है! यह पर्दा फटने पर बहुत सा पानी बहने लगता है, जो कि योनिमार्ग की दीवारों और उस योनि-मार्ग को भी धोकर स्वच्छ बना देता है। अब प्रसव के के लिए यह आवश्यक है कि वह झिल्ली का परदा बिलकुल ही न रह जाय। प्रकृति यह कार्य बड़ी खूबी से करती है। इस जल-स्राव में पड़कर प्रत्येक दूषित, विसदृश या अनावश्यक पदार्थ बहकर साफ हो जाता है। याद रहे कि सफाई की यह प्राकृतिक क्रिया प्रसव होने के पहले ही होती है। प्रकृति गर्भ में ही शिशु के सिर में बाल उगा देती है। इसका भी एक खास प्रयोजन है। प्रसव के समय शिशु सिर का बाल एक बड़ा ही उपयोगी कार्य करता है। योनि-मार्ग की धुलाई हो जाने के बाद यह झाड़ू का कार्य करता है और योनि-नली की दीवारों को प्रसव के समय के पोंछ कर साफ कर देता है। क्योंकि उस समय यह उन दीवारों को सख्ती से रगड़ता चलता है। बच्चे का सिर निकल जाने के बाद में फिर जल स्राव होता है। यह उस जल का बचा हुआ भाग होता है जो कि प्रारम्भ में ही निकल चुका है। लेकिन इस प्रकार की अन्दरून सफाई का कार्य यहीं पर समाप्त नहीं हो जाता। अभी खेड़ी निकलना बाकी है। और प्रकृति इसके लिए सफाई के बचे हुए साधन सुरक्षित रखती है। बच्चा पैदा हो जाने के बाद खेड़ी गिरती है। यह बहुत मुलायम होती है। यह जब योनि-मार्ग से होकर बाहर निकलती है तो वह धुल-पुछ कर बिलकुल साफ सुथरा और विसदृश पदार्थों से रहित बन जाता है। लेकिन प्रकृति का यह सुरक्षा तथा स्वच्छता का कार्य यहीं पर समाप्त नहीं हो जाता, बल्कि वह अभी कुछ समय तक और जारी रहता है। वह इस रूप में कि जब तक गर्भाशय-द्वार या गर्भाशय-ग्रीवा खुली रहती है तब तक उसमें से रक्त का स्राव जारी रहता है। और यही स्राव योनि-मार्ग, गर्भाशय तथा गर्भाशय ग्रीवा को स्वच्छ और रोगाणु रहित बनाए रखता है।

प्रकृति ने गर्भ की तथा उससे सम्बन्ध रखने वाले अवयवों की हिफाजत के लिए जो रक्षा-कतार बनाए हैं उनको नष्ट हम भले ही कर दें किन्तु प्रसव के समय उनमें हम कृत्रिम उपायों से कोई सुधार नहीं कर सकते। प्रायः ९५ प्रतिशत भावी माताओं के लिए प्रसव-काल सामान्य ही होता है जिसमें किसी बाहरी हस्तक्षेप की कतई कोई जरूरत नहीं होती। सामान्य प्रसव की अवस्था में स्त्री जननेन्द्रिय के भीतरी भाग को अंगुली या किसी यंत्र के द्वारा जांच करने और उसे कृमि-रहित बनाए रखने के लिए प्रयत्न करने की कोई आवश्यकता नहीं। जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है प्रकृति गर्भ की कृमियों से रक्षा करने के लिए इतनी होशियारी के साथ पहले से ही प्रबन्ध कर दिया है कि वहाँ तक मनुष्य की बुद्धि जा ही नहीं सकती। फिर अगर मनुष्य डूशिंग आदि के रूप में योनि-पथ को कृमि-रहित बनाने का प्रयत्न करता और इस प्रकार प्रकृति के कार्य में टाँग अड़ाने की कोशिश करता है तो उसका परिणाम घातक हुए बिना रह नहीं रह सकता। प्रसव के समय इस तरह के प्रयत्नों से प्रकृति के कार्य में केवल बाधा ही पड़ती है।

प्रसव के पहले योनि-मार्ग आमतौर से स्वच्छ और कृमि-रहित ही रहता है और डूश लेने की कोई आवश्यकता नहीं रहती। इस अवस्था में अगर डूश लिया जाता है तो वह सम्भव है कि कोई सहायता पहुंचाने के बजाय सड़ाव उत्पन्न करने वाला ही बने।

अतः एक बार इस बात को फिर ध्यानपूर्वक सुन लीजिए, कि साधारणतौर पर प्रसव के समय किसी बाहरी हस्तक्षेप की कोई जरूरत नहीं रहती, और यदि इस तरह के हस्तक्षेप की आवश्यकता जान पड़े तो समझना चाहिए कि इस मामले में प्रकृति के नियमों की उपेक्षा है अथवा प्रकृति के कार्य में बाधा डालने का प्रयत्न किया गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक भुक्त भोगी के हृदय की पुकार !

एलोपैथिक हास्पिटल या 'कच्ची जेल'।

श्री धूलीलाल बोहरा; हेड मास्टर, जयपुर स्टेट

३० अगस्त सन् १९४५ ई० की घटना है। उस समय मैं गंगापुर हाई स्कूल में अध्यापक था। मेरा बालक सोमदत्त जो सातवीं कक्षा में पढ़ता था, एक बार अध्ययन करते समय चारपाई पर से गिर गया। इधर-उधर न टहल कर वह पुनः चारपाई पर बैठ कर पढ़ने लगा। लेकिन उसके कोई आध घन्टे बाद उठा तो लंगड़ाने लगा और पैर को किसी भी प्रकार सीधा न कर सका। बालक खिलाड़ी तथा चञ्चल है। इस लिए मैंने समझा कि शायद कहीं खेल कूद में हड्डी न तुड़ा लाया हो। इसलिए मैं शहर के एक डाक्टर के पास उसे ले गया। डाक्टर ने भली-भाँति देख कर कहा कि पेट में बाईं ओर भयङ्कर गांठ उठने वाली है। ब्लेडीनो-प्लास्टर की पट्टी चढ़ा दी गई। मैंने बच्चे को किसी प्रकार की औषधि नहीं खिलाने दी और बच्चे को घर लाकर नस और हड्डी के विशेषज्ञ पहलवान को दिखाया तो उसने नस सरकना बताया। मैं स्वयं भी नस और हड्डी सरकने या टूटने से भयभीत हो रहा था। बाकी किसी भी रोग का मेरे पास सर्वोत्तम प्राकृतिक-साधन है जिससे अपने परिवार एवं मित्रों की अचूक-चिकित्सा-सेवा किया करता हूँ।

प्राकृतिक-चिकित्सा आरम्भ करने वाला ही था कि अजान किन्तु सहृदय मित्रों ने सम्मति दी कि यदि आप प्राकृतिक-चिकित्सा के उन्माद में पड़े रहे तो बालक लंगड़ा और नपुंसक हो जायगा। रेलवे हास्पिटल के असिस्टेन्ट मेडिकल अफसर तथा प्रधान मेडिकल अफसर बालक का निरीक्षण किया और उसकी परीक्षा कर चुकने के बाद कहा—हमें हड्डी टूटने का अन्देशा है। आप भरतपुर "एक्सरे" करवा लाइये। हम इसकी चिकित्सा कर देंगे।"

हड्डी टूटने की बात से भयभीत होकर राजपूताने के सुप्रसिद्ध तथा राजधानी के सब से बड़े हास्पिटल में पहुंच कर मैंने बालक को धुरन्धर सर्जनों की शरण में डाल दिया। वहाँ मैंने दूर-दूर के आए हुए रोगी देखे। बालक के साथ मैं भी कुछ सेवा-लाभ के लिए कच्ची जेल में सम्मिलित हुआ। शुद्धता एवं स्वच्छता का ध्यान साधारण रोगियों के लिए जैसा इस अस्पताल में है वैसा बड़े से बड़े रईस के यहाँ होगा, मुझे तो इसमें सन्देह ही होता है। यहाँ डाक्टरों की सज्जनता तथा दयालुता मानव के लिए अनुकरणीय है। किन्तु अल्पवेतन पाने वाले अन्य कर्मचारी रोगियों के साथ अच्छा व्यवहार नहीं करते। मैं तो सदा रोगियों में भगवान की भावना रखता रहा हूं। अतः मैं स्वस्थ-व्यक्ति रोगियों के बीच उपस्थित रहा करता। अवसर मिलने पर वार्ड वाले रोगियों की सेवा किया करता था।

मैंने वहाँ जो कौतुक देखे, अद्भुत थे। मैं भुक्त-भोगी हूँ। यद्यपि डाक्टर अपने विषय के पूर्ण विद्वान हैं अंतड़ियों तक का उन्होंने सफल आपरेशन किया है, किन्तु प्रकृति-निर्मित्त जीवित शरीर-यन्त्रों को जड़ लोहे के शस्त्रों से ठीक करना कहां तक सम्भव है, यह मैंने अपनी आंखों देखा। आज भी जब मैं उस कच्ची जेल का स्मरण करता हूं तो आँखें भर आती हैं। रोगी और उसके साथ वाला वहाँ मन, वचन, कर्म से कैद होता है। बच्चे को दस्त न होने पर मैं एनिमा के लिए प्रार्थना किया करता था। कम्पाउण्डर परिश्रम होना समझ सदा टाला करते थे। बच्चे को तीन दिन से दस्त नहीं हो रहे थे। वार्ड इञ्चार्ज डाक्टर से एनिमा के लिए लिखवाया। कम्पाउण्डर से ४-५ बार प्रार्थना करने पर वह एनिमा देने आये। साबुन का पानी चढ़ा दिया गया और विस्तरे पर कमोड रख कर बच्चे को टट्टी जाने के लिए लेटा हुआ बिस्तर और कमोड पर ही छोड़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिया। आध घण्टा टट्टी करने की कोशिश और जोर करने से बच्चे की गुदा चौड़ी हो रही थी पर फुजले की मोटी गांठ नहीं निकल रही थी। बालक भारी कष्ट पा रहा था। कम्पाउण्डरों से बार बार कहने पर भी वे जवाब देते थे कि आपके कहने तथा डाक्टर के लिखने के अनुसार एनिमा दे दिया गया है अब हम क्या करें ? मैंने कहा-मेरा उद्देश्य टट्टी निकलवाने का है। बच्चे को इस प्रकार कमोड पर कैद नहीं देख सकता। यदि आपके पास कोई उपचार नहीं तो डाक्टर का बंगला बताइये मैं उनके पास जाता हूं यदि उनके पास भी इसका उपचार नहीं तो मैं इस जेल से छुटकारा चाहूंगा। तब एक दयालु कम्पाउण्डर ने रबर का पंजा पहन कर गुठले को फोड़ कर निकाला।

आपरेशन के बाद भी बड़ी लीलायें हुई। पैर सीधा न हो सका तो दोष मेरा ही होगा, यह मुझे आरम्भ में समझा दिया गया था। रात दिन ध्यान रखता कि कहीं बालक फिर पैर टेढ़ा न करले। कभी पट्टी खिंच कर बंधने का दोष, कभी कम्पाण्डरों की भूल और हुल्लड़बाजी मुझे परेशान करती रहती। गहरे घाव की चिकित्सा के साथ साथ बुखार व मवाद की रोक के लिए अलग औषधियाँ दी जा रही थीं। शक्ति बनी रहने के इञ्जेक्शन पृथक दिये जा रहे थे। चूंकि बच्चा प्राकृतिक-चिकित्सा का आदी था अतः कटु, कषाय औषधियाँ एवं इञ्जेक्शन को देख कर रोया करता था। मैं भी उसकी मुक्ति चाह रहा था।

अभी घाव में से रबर का ट्यूब तो निकला ही नहीं था कि बाँई जांघ में फिर वही दर्द होने लगा। जगह सख्त पड़ गयी और वहां नसें सख्त पड़ गयीं। बड़े डाक्टर को दिखाने पर ज्ञात हुआ कि पट्टी खिंच कर बंधने पर मवाद पड़ गया है, यह भी निकाल दिया जायगा। डाक्टर से मैं कह चुका कि अब दुबारा आपरेशन नहीं कराऊँगा।

मैं शुद्धि के विचार से कच्ची-पक्की को भूलकर सच्चा सामयिक ब्राह्मण बन गया। छुआछूत का भेद-भाव भूल गया। न नियमित भोजन मिलता था न स्नान सन्ध्या। एक दिन शाम को रोगी के पास बैठा भोजन कर रहा था कि वार्ड में सर्जीकल डिपार्टमेन्ट के सर्वेसर्वा ख्यातनामा डाक्टर आ पहुँचे। बच्चे को पलंग में लेटा हुआ और मुझे भोजन करते देख वे बोले कि "आप भोजन करने आये हैं या बच्चे की संभाल करने ?" ये शब्द मेरी आत्मा के लिए जेल से छुटकारा पाने के लिए पर्याप्त थे। जो बड़े से बड़े कष्ट को भी कुछ न समझकर अतः दूसरे ही दिन बालक को जिस दशा में प्रवेश किया था उससे दुगुनी बुरी दशा में उसको वहाँ से निकाला। अब तक २००) खर्च तथा ४० दिन का समय नष्ट हो चुका था।

प्रकृति की शरण में

प्राकृतिक-चिकित्सा की ओर कई बार ध्यान जा चुका था पर एक मास की जेल का योग भी तो पूरा होता। परोपकारी, त्यागी; योग्य-सज्जन डाक्टर रामप्रसाद जी प्राकृतिक-चिकित्सक, जैपुर, की सम्मति के अनुसार वहीं चिकित्सा आरम्भ की। भोजन में फल विशेष कर टमाटर, अंगूर दिया गया। अन्न बिलकुल बन्द। नये फोड़े पर स्टीम-बाथ, ठण्डी गद्दी तथा शाल्ट-नींबू की पुलटिस गर्म करके बाँधी गई।

जिस रोग को दूर करने के लिए स्थान-स्थान पर पागल की तरह मारा-मारा फिरा वह ठीक हो गया। डेढ़-दो हजार रुपये पाने वाले डाक्टर जिस पर अपना पूरा मस्तिष्क खपा कर भी झुँझलाने लगे थे। जिस शिक्षा को प्राप्त करने इंगलैण्ड, जर्मनी जाकर अपनी मातृभाषा को बोलना भी भूल गये थे; उन महानुभावों का ज्ञान प्रकृति के सम्मुख शून्य निकला। उन लोगों का किया हुआ घाव भी प्रकृति पर ही छोड़ा गया। केवल सूखा कपड़ा, ऊपर रुई तथा पट्टी बाँध कर रोगी को पूर्ण आराम दिया गया जिससे वह भी ठीक! तब अपने जन्मस्थान सवाई माधोपुर पहुँच कर प्रभु जगदीश को धन्यवाद देने लगा। मैं लगभग १५ वर्ष से निरन्तर इसी चिकित्सा-पद्धति का अनुगामी और परमभक्त हूँ। छोड़ने पर मुझे एक मास की कच्ची जेल भोगनी पड़ी कई बार आपको अपने प्रयोग लिखने की इच्छा हुई किन्तु समयाभाव तथा यह झिझक कि मुझ जैसा व्यक्ति आपको क्या लिखे—यही संकोच मुझे रोक रहा था पर प्राकृतिक-चिकित्सा के जादू से चमत्कार का छिपाना भी मुझे अभीष्ट नहीं है अतः उच्च स्वर से प्रकट करके रोगी भाइयों की ओर से अपील करता हूँ :—

(शेष पृष्ठ ६३ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

टहलना

श्री जानकी शरण वर्मा

कहा जाता है कि टहलना सब से अच्छी कसरत और अक्सर, बहुत से लोग टहलते देखे जाते हैं पर क्या उन सबों को टहलने से पूरा-पूरा लाभ होता है ?

टहलना क्यों सब से अच्छी कसरत है, यह बात बहुत से टहलने वालों को शायद ही मालूम हो। किस तरह टहलने से सचमुच तन्दुरुस्ती बनती और बढ़ती है, यह तो और कम लोगों को मालूम है। जब मैं देखता हूँ कि भारी-भारी लबादे से लदे हुए सज्जनों की एक टोली खरामा-खरामा सैर के लिए जा रही है, और इसी समय ये सज्जन अपनी सारी कठिनाइयों का—शादी-ब्याह, मामला मुकदमे का हल भी निकालना चाहते हैं तो मुझे सन्देह होता है कि क्या यह गपोड़ियों की टोली अपना समय खराब नहीं कर रही है ? मैं बहुतों से पूछता हूँ कि क्या टहलने से उन्हें लाभ हो रहा है ? उत्तर मिलता है—"कोई खास लाभ नहीं, पर क्या किया जाय, यही एक कसरत हम कर सकते हैं।"

कई साल हुए एक ऐंग्लो-इंडियन साहब मेरे पास आए और अपने रोगों की सूची देते हुए मुझसे कहा कि "मुझे योगासन सिखाओ।" मैंने उन्हें दो-चार आसन बता कर कहा—"मैं इस कला का विशेषज्ञ नहीं हूँ। साथ ही मैं समझता हूँ कि इन रोगों का उपचार सुबह-शाम नियमित रूप से टहलना है।" साहब कुछ नाखुश हुए; बोले—"मैं अभी जवान हूँ, सिर्फ टहलने से क्या होगा ?" मैंने उन्हें टहलने का लाभ इस तरह बताया :—

"मामूली तौर पर किसी भी तन्दुरुस्त आदमी की नाड़ी एक मिनट में ७२ से लेकर ७५ बार तक धड़कती है। इस धड़कन के मानी है दिल की वह क्रिया जिससे दिल शरीर में दौरा करने के लिए खून को अपने अन्दर से बाहर निकालता है। एक धड़कन में लगभग ३ छटांक खून दिल से निकल कर बाहर आता है और शरीर के हर हिस्से में पुष्टि पहुंचाने के लिए धमनियों द्वारा चल पड़ता है। हम जानते हैं कि इसी खून के दौरान पर शरीर का स्वास्थ्य बहुत कुछ निर्भर है। दो बातें जरूरी हैं—(१) खून का दौरान ठीक-ठीक हो और (२) खून अच्छा, विकार-रहित हो।

"जब हम मामूली हरकत भी करते हैं तो नाड़ी की धड़कन बढ़ जाती है। इसके मानी यह हुए कि दिल की धड़कन, अपने अन्दर से बाहर खून निकालने की दिल की कोशिश, बढ़ जाती है। मामूली तेजी से चलने के कारण नाड़ी हर मिनट में ७२ बार धड़कने के बदले ८२ बार धड़कती है, जिससे खून का दौरान हर मिनट में (१० × ३) ३० छटांक खून के बढ़ने से ज्यादा अच्छा, साथ ही ज्यादा तेज, हो जाता है। अब अगर टहलने वाला खुले मैदान में चल रहा है और सांस के सहारे साफ हवा और हवा के सहारे काफी मात्रा में आक्सीजन अपने फेफड़ों में भर रहा है तो खून की सफाई भी अच्छी तरह होती जाती है। यह हमें मालूम है कि आक्सीजन से खून के विकार जल जाते हैं और इस तरह लाल चमकता हुआ संशोधित खून अच्छी तरह हमारे शरीर के काम आता है। टहलने से ऊपर लिखी दोनों बातें एक साथ हो जाती हैं—खून अच्छी तरह साफ होता है और ज्यादा मात्रा में और तेजी के साथ शरीर के हर हिस्से में पहुँचता है। शर्त यही है कि साफ हवा में तेजी से टहला जाय और टहलते समय गहरी सांस ली जाय।

टहलने का ढंग

"तेजी से टहलते समय शरीर की ५०० मांस-पेशियों पर हल्के तौर पर लेकिन लगातार जोर पड़ता है। ठीक-ठीक टहलने का खास ढंग है। पीठ और रीढ़ सीधी रहे, सिर ऊंचा रहे, आंखें अपनी ऊँचाई तक सामने देखें, घुटने बहुत न मुड़ें, दोनों हाथ अपने पीछे और आगे की पूरी पहुंच तक आसानी से बिना बहुत तने हुए जायं। शक्ति के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुसार तेजी से कदम आगे पड़ें और नथने बिना सिकुड़े हुए हवा खींचते और बाहर निकालते रहें। इस तरह सिपाहियाना ढंग से और शान के साथ टहलने के अभ्यास से दो-तीन महीनों में ही तन्दुरुस्ती चमकने लगेगी।

"पहले दिन से ही बहुत तेजी के साथ और बहुत दूर न जाना चाहिए। धीरे-धीरे तेजी और दूरी को बढ़ाना चाहिए। जब टहलने वाला १५ मिनट में एक मील की चाल से और ऊपर बताये ढंग से ५-६ मील राज टहलने लगेगा तो निश्चय ही उसका पाचन अच्छा होगा, पेट की सफाई भी अच्छी तरह होगी. खून साफ बनेगा, शरीर की सभी क्रियायें ठीक-ठीक होंगी, आंखों में तनदुरुस्ती की झलक आ जायगी और सारा शरीर चमक उठेगा।

"टहलने की एक विशेषता यह है कि प्रायः सभी कसरतों में दिल पर बहुत जोर पड़ता है वह टहलने में नहीं होता। टहलने में भी कुछ जोर जरूर पड़ता है, लेकिन वह बहुत मामूली और हलका जोर होता है। इसीलिए और इसलिए भी कि टहलते समय प्रकृति की सुन्दरता और मधुरता (खिले फूलों की सुगन्धि, हरे-भरे खेतों की हरियाली वृक्षों की हरी पत्तियों की सघन शोभा, नदियों का उत्साह-वर्धक प्रवाह, झरनों की मीठी कल-कल, चिड़ियों की संगीत-पूर्ण चहक इत्यादि) का भी काफी आनन्द लिया जा सकता है। टहलना सभी के लिए सब से बढ़िया और कमजोरों के लिए खास कसरत है। माना कि नवजवानों को बिना दौड़े-धूपे या कसरत किए संतोष न होगा, पर अगर उन्हें भी अपच या कब्ज जैसी कोई बीमारी है तो शुरू-शुरू में टहलना ही उनके लिए उपयुक्त होगा।

भोजन और पहनावा

"टहलने से पूरा लाभ उठाने के लिए कुछ बातें जरूरी हैं। एक तो यह कि भोजन नियमित, आसानी से पचने वाला और साथ ही पुष्टिकर हो। भोजन में फल, दूध-दही और साग-भाजी की अच्छी मात्रा रहे एक बार के भोजन में कई चीजें न हों; दो भोजनों के बीच काफी अन्तर रहे; जो खाया जाय अच्छी तरह चबा कर खाया जाय, अति भोजन न किया जाय। अगर भोजन अनियमित होगा तो खून बहुत विकारयुक्त होगा और टहलने से पूरा पूरा लाभ न होगा। दूसरी बात यह है कि टहलते समय बहुत कपड़े न पहने जायं। चुस्त पाजामे के बदले ढीला पाजामा या पतलून अच्छा होगा। उस से भी धोती अच्छी होगी और सब से ज्यादा उपयुक्त होगी निकर (हाफ-पैंट)। जाड़ों में इतना कपड़ा तो जरूर पहनना होगा कि सर्दी के कारण कष्ट न हो; पर ऐसा न हो कि सूती बनियान पर ऊनी बनियान, उस पर ऊनी कमीज, कमीज पर पुलोवर और पुलोवर पर कोट और चेस्टर लादे हों। शरीर के सारे अंगों को हवा के सम्पर्क में आना ही चाहिए। तीसरे, अगर टहलते समय शरीर पर पसीना निकल आया हो तो घर लौटते ही बन्द कमरे के अन्दर पानी में निचोड़े तौलिया से शरीर पोंछकर कपड़ा बदल लेना चाहिए।

"एक और जरूरी बात यह है कि टहलते समय चित्त प्रसन्न रखा जाय और हृदय में यही भाव रहे कि तनदुरुस्ती अच्छी हो रही है। अकेले टहलना बहुत अच्छा है, लेकिन अगर मन के लायक एक साथी हो (ज्यादा नहीं) तो कोई हर्ज नहीं।"

साहब ने मेरी पूर्वोक्त बातें ध्यान देकर सुनीं, फिर भी अप्रसन्न और असन्तुष्ट की तरह अपना चेहरा बनाये रहे। उन्होंने कुछ और न कहा और न पूछा, "गुड बाई!" कह कर चले गये। मैं भी धीरे-धीरे उनको भूल गया। चार महीने के बाद जब वह फिर आये तो मैं उन्हें पहचान न सका। उन्होंने मुझे याद दिलाई और कहा कि मैं वही 'लारेंस' हूँ, जिसे आपने टहलने का नुस्खा बताया था।' लारेंस साहब ने कहा—"मैंने टहलने के साथ-साथ आप की बताई सभी बातों का अक्षरशः पालन किया और जी खोल कर टहला किया। अब मुझे कोई शिकायत नहीं है। धीरे-धीरे अभ्यास बढ़ाकर पहले महीने के अन्त तक मैं हर रोज छः मील टहल लेता था, दूसरे महीने के अन्त तक मैं हर रोज छः मील टहल लेता था, दूसरे महीने के अन्त तक मैं ८ मील पूरा करने लगा और अब मैं १० मील का चक्कर लगाता हूँ। ढाई घंटे रोज लगते तो हैं, पर शरीर और मन की सभी क्रियाएं तेज हो गई हैं।" साहब को देखकर मैं बहुत खुश हुआ।

सचमुच नियम के साथ टहलने की, बड़ी भारी महिमा है। प्राकृतिक-चिकित्सा के विशेषज्ञ, अमेरिका-निवासी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैकफैडन का दावा है कि उन बीमारियों को छोड़कर जिन में खाट पर लेटना जरूरी है (जैसे बुखार या बढ़े रक्त-चाप जैसी दो-चार बीमारियाँ) और प्रायः सभी बीमारियाँ टहल-टहल कर ही भगाई जा सकती है। और टहलने से न सिर्फ बीमारियाँ भगती हैं, बल्कि तनदुरुस्ती भी बढ़ती है और मांस-पेशियों के उभरने से शरीर सजीला और सुगठित दीखता है। मैकफैडन का दावा सच्चा और निर्विवाद है।

टहलने का समय

अब प्रश्न सिर्फ यह बचा कि किस समय टहला जाय। "सबेरे ही"—बहुत से पाठक उत्साह के साथ कहेंगे। ठीक है। सबेरे हवा ज्यादा साफ रहती है, पर अगर सबेरे टहलने से सोलह आना लाभ होता है तो शाम को टहलने से कम से कम चौदह आना लाभ जरूर होता है। लेखक की नीति तो यह है कि जभी समय मिले या आवश्यकता हो या जभी इच्छा हो टहलने निकल जाओ। लेखक सावन की झड़ी और जेठ की दुपहरी में, भादों की अंधियारी और शरतपूनों की चांदनी फागुन की मस्ती से लदी हवा के बीच और पूस की कनकनी में, जभी इच्छा हुई टहलने चला जाता है। हाँ, इतना वह जरूर करता है कि वर्षा में टहलने के बाद घर लौट कर फौरन कपड़े बदल लेता है और अगर जेठ की दुपहरी में वह निकलता है तो सिर, कान और गर्दन को अच्छी तरह ढक लेता है। जब उसे कोई चिन्ता सताती है तो वह जरूर टहलने निकलता है। क्योंकि सफलता के साथ चिन्ता दूर करने का इससे अच्छा और कोई साधन उसे अब तक न मिला।

गाँधी जी का टहलना

गांधी जी इन दिनों टहल रहे हैं—टहल-टहल कर देश की एक बड़ी भारी समस्या हल करने की कोशिश में में लगे हैं। सम्भव है कि समस्या सुलझ जाय, सम्भव है कि न सुलझे, पर इस में कोई सन्देह नहीं कि अपनी १२५ वर्ष तक जीने की प्रतिज्ञा पूरी करने का एक अच्छा उपाय वह कर रहे हैं। उनके उपाय निराले होते हैं। कई उलझनों को सुलझाने के लिए दीर्घायु करने वाली उनकी उपवास विधि सर्वमान्य हो चुकी है, अब टहलने की विधि जगत्प्रसिद्ध होगी। लेकिन गांधी जी ने तो कई साल पहले ही डांडी तक टहलकर अपना नया ढंग बताया था! टहलना सचमुच कई रोगों की दवा है।

(पृष्ठ ६० का शेष)

(१) देश के महान नेता इस सरल और सस्ती उत्तरदायित्व-पूर्ण चिकित्सा-पद्धति को क्यों नहीं अपनाते? विश्ववन्द्य बापू इसकी ट्रेनिंग के लिए भारत के गाँव-गाँव में इसका प्रचार हो ऐसी स्कीम क्यों नहीं बनाते? अब भी अच्छे शिक्षित कहे जाने वाले भी इसके नाम से अनभिज्ञ हैं। देश का सार्वजनिक-स्वास्थ्य क्या कम महत्व रखने वाली चीज है?

(२) यहाँ के धनी-मानी-दानी (बिड़ला बन्धु जैसे) आयुर्वेदिक, एलोपैथिक-चिकित्साओं के अतिरिक्त इसके चिकित्सालय पर अपने धन का सदुपयोग क्यों नहीं करते जब कि पाश्चात्य देशों में इसके बड़े-बड़े सफल-चिकित्सालय चल रहे हैं शायद एक बार जीवन-सखा में पढ़ने को मिला था कि बिड़ला जी एक आदर्श प्राकृतिक-चिकित्सालय कहीं खुलवा रहे हैं।

(३) इस चिकित्सा के विद्वान् अपने पेट को छोटा बनाकर स्वार्थों का बलिदान क्यों नहीं करते? जल, वायु, प्रकाश आदि तत्वों को काम में लाने की सम्मति भी वे निःशुल्क नहीं दे सकते। क्या उनके पास उदर-निर्वाह का अन्य जरिया ही नहीं? जीवन कला सीख कर भी उनके हृदय में त्याग की भावना क्यों नहीं है? पारस मिलने पर भी क्यों सोना चाँदी की खान के खोज में अपने साथ गैंती-फावड़ी का वजन सहते फिरते हैं।

मैंने इस चिकित्सा के अद्भुत चमत्कार देखे हैं। बन्ध्याएँ आज बच्चे खिला रही हैं। मृतवत्साओं के बालक स्कूलों में विद्याध्ययन करके योग्य बनने में लगे हुए हैं, मृत्यु-शय्या पर पड़े हुए असाध्य रोगी आज चंगे होकर सन्तान-वृद्धि कर अपनी सृष्टि बढ़ा रहे हैं। न जानने वाला अत्युक्ति समझेगा पर मैं यथार्थ सत्य लिख रहा हूँ। चिकित्सक-महानुभावों के विरुद्ध जो कड़े शब्द लिखे गये हैं उनके लिए क्षमा प्रार्थी हूँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आत्म-निवेदन

नए साल के आरम्भ के साथ 'जीवन सखा' के जीवन के नए वर्ष का भी आरम्भ होता है, इस प्रकार प्रत्येक नव वर्ष हमारे पथ की दूरी का निर्देशक मील-प्रस्तर के रूप में प्रकट होता है। हम जिस पथ पर अग्रसर हो रहे हैं उस पर आज से ठीक ग्यारह वर्ष पूर्व हम आरूढ़ हुए थे जब कि जनवरी सन् १६३६ में इस पत्र का प्रकाशन आरम्भ हुआ था। अतः पिछले वर्ष की समाप्ति और नए वर्ष के आरम्भ के साथ-साथ 'जीवन सखा' अपने जीवन के बारहवें वर्ष में पदार्पण करता है। इस दृष्टि से हर नया साल जीवन सखा के इतिहास का एक नया पर्व एक पुनीत अवसर बन कर आता है जब कि स्वभावतः बीते हुए वर्ष का हम निदिध्यासन और आने वाले वर्ष की मंगल कामना करते हैं। ऐसे मौके पर हम यह भी अनुभव करते हैं कि अब तक हमने अपने पथ की कितनी दूरी पार करली है और यह कि हमें अपने अन्तिम लक्ष्य तक पहुंचने के लिये अभी कितनी दूरी पार करनी है! कहना न होगा कि हमारी मंजिल अभी हमसे बहुत दूर है—हमें अपने अंतिम लक्ष्य तक पहुंचने के लिए अभी काफी लम्बा रास्ता तय करना है। और इसीलिए प्रत्येक नया वर्ष हमारे लिए एक नयी आशा, नया उत्साह और नया विश्वास लेकर आता है और तब हम अब तक की हुई प्रगति का सिंहावलोकन और नए वर्ष के लिए नया संकल्प करते हैं।

हमें इस बात का हार्दिक हर्ष है कि अन्य वर्षों की अपेक्षा हम इस वर्ष अपने पाठकों की अधिक सुचारु रीति से सेवा कर सके। पिछला वर्ष भी यद्यपि कठिनाइयों एवं बाधाओं से मुक्त न रहा फिर भी ये बाधाएं कठिनाइयाँ हमारी प्रगति को रोक देने वाली न होकर कुछ और ही तरह की हुई। अब तक 'जीवन सखा' के पास अपना कोई निजी प्रेस नहीं था। प्रकाशन के लिए दूसरे प्रेसों पर निर्भर करने के कारण हमें भारी कठिनाई होती थी। किन्तु इस कठिनाई को हमने इस वर्ष दूर कर देने की चेष्टा की अपना एक छोटा सा प्रेस 'स्टार्ट' कर दिया। इस सम्बन्ध में आर्थिक कठिनाइयां भी थीं जिनके कारण 'जीवन सखा' के नियमित प्रकाशन के समस्त समुचित साधन न प्रस्तुत कर सके। किन्तु हमारे लिए सन्तोष तथा प्रसन्नता की बात है कि इस वर्ष की समाप्ति के साथ-साथ 'जीवन सखा' के प्रकाशन सम्बन्धी स्थिति में बहुत सुधार हो गया है। और अब हम आशा करते हैं कि इस नए वर्ष में हम अधिक नियमित तथा सुन्दर और समुचित रूप में अपने प्रेमी पाठकों के पास जीवन सखा पहुँचा सकेंगे।

हम इधर पिछले कुछ वर्षों से 'जीवन सखा' के नए साल में पदार्पण करने पर एक विशेषांक निकालते हैं। व्यायाम अंक, और भोजनांक के बाद हमने पिछली बार जल-चिकित्सांक निकाला और इस बार योग-चिकित्सांक निकालने का विचार किया था, पर कुछ अनिवार्य कठिनाइयों के कारण हम इस वर्ष अपने इस विचार को कार्यरूप में परिणत न कर सके और जनवरी का अंक साधारण रूप में ४ फार्म का छपने के लिये दे दिया। लेकिन जब इसके ३ फार्म छप चुके और चौथा फार्म छपने जा रहा था, तो यह विचार उत्पन्न होने लगा कि नए वर्ष 'जीवन सखा' का यह साधारण अंक हमारे पाठकों को खटके बिना न रहेगा। अतः हमने इसे आठ फार्म के एक नव-वर्षांक के रूप में परिणत कर देने का विचार किया। सोचा, कुछ नहीं से कुछ तो अच्छा ही होगा। इस प्रकार इसके लेखों को यथा क्रम न रख सके। जो लेख पहले छपने चाहिए थे वे बाद में और जो बाद में दिये जाने वाले थे वे पहले बैठ ए गए हैं। इसके लिये हमारे सुहृदय पाठक हमें क्षमा करेंगे। अब हमारा अगला विशेषांक योग चिकित्सांक होगा। इस विशेषांक को पिछले के विशेषांकों की अपेक्षा अधिक विस्तृत, सर्वांगपूर्ण तथा संग्रहणीय बनाने का हमारा इरादा है। यह एक बड़ी चीज होगी। इसके लिए हम लेखों का चयन एवं सम्पादन अभी से आरम्भ करने जा रहे हैं। किन्तु इस बीच के समय के लिए पत्र पुष्प के रूप में इस नव-वर्षांक को हम इस नए वर्ष पर उपहार के रूप में भेंट करते हैं और कहते हैं कि हमारे पाठक इसे स्वीकार करेंगे।

हम अपने सहृदय पाठकों तथा लेखकों को बधाई देना चाहते हैं। जिनके सतत सहयोग से 'जीवन सखा' सन्तोषजनक प्रकाशन हुआ है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पढ़िये ! लाभ उठाइये !!

सुन्दर, स्वस्थ और सुखी जीवन के इच्छुकों को

ये पुस्तकें पढ़नी चाहिए

(१) बच्चों की रक्षा—लुई कूने	...	॥=)
(२) मैं निरोग हूँ या रोगी ?—लुई कूने	...	॥=)
(३) स्वास्थ्य के नुस्खे—'जीवन सखा' कार्यालय	...	।)
(४) क्या और कैसे खायं—डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह	... ...	।=)
(५) कब्ज या कोष्ठबद्धता : डा० बालेश्वरप्रसाद सिंह	... ...	१)
(६) आसन—डा० बालेश्वर प्रसाद सिंह	... ...	३॥)
(७) आनन्दमय जीवन—श्री शंकरलाल तिवारी	... ...	॥)
(८) शक्ति-दर्शन—श्री शंकरलाल तिवारी	... ...	१)
(९) प्राकृतिक चिकित्सक—श्री रामनारायण दुबे	... ...	७॥)
(१०) फलाहार—श्री नारायणप्रसाद अरोड़ा	... ...	१)
(११) ब्रह्मचर्य ही जीवन है—स्वामी शिवानन्द	... ...	१॥)
(१२) प्राकृतिक चिकित्सा—श्री रामनारायण वर्मा	... ...	३)
(१३) हम सौ वर्ष कैसे जीवें : श्री केदारनाथ गुप्त, एम० ए०	... ...	१॥।)
(१४) आरोग्य-साधन—महात्मा गाँधी	... ...	॥)
(१५) स्वास्थ्य साधन—श्री रामदास गौड़	... ..	३॥)
(१६) दवाओं से बचो—श्री गंगाप्रसाद गौड़, 'नाहर'	... ...	१)
(१७) उपवास चिकित्सा—श्री रामचन्द्र वर्मा	... ...	२)
(१८) मूत्राशय और पित्त की पथरी एवं शूल की प्राकृतिक चिकित्सा—डा० रमाचरण		।=)
(१९) आहार ही औषधि है—डा० लक्ष्मी नारायण रवरा	... ...	१।)
(२०) Your diet in health & disease by Harry Benjamin	..	1-4-0
(२१) Food-de-Medicine by Dr, L. N. Ratra, H. M. B.	..	1-2-0
(२२) Bettersight without glasses by Harry Benjamin	...	3-12-0
(२३) Practical Nature cure Dr. K. Lakshman Sharma.		8-8-0
(२४) Constipation and Dyspepsia	.. ..	1-8-0
(२५) Gems of health by Dr. Jatashankar Nandi	..	2-0-0
(२६) Drugless healing by L. Kameshawar Sharma	..	1-0-0
(२७) New science of healing by louis kuhne	...	9-0-0

स्वास्थ्य सम्बन्धी पुस्तकें मिलने का पता:—

मैनेजर, स्वास्थ्य ग्रंथ-भंडार २८७, बादशाहीमंडी, चौक, प्रयाग।

078736

प्रश्नोत्तरी कूपन जनवरी १९४७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारे नए प्राकृतिक-चिकित्सक

प्राकृतिक-स्वास्थ्यगृह, प्रयाग, के तत्वावधान में पिछले अक्टूबर मास में लिए गए प्राकृतिक चिकित्सा—शिक्षण-क्लास के कुछ उत्तीर्ण छात्र।

सर्व श्री मथुरानाथ लहकर, हिम्मतसिंह भटनागर; एच० जी० दीवान; विश्वम्भरनाथ द्विवेदी; ब्रह्मस्वरूप; राजेन्द्रप्रसाद, श्रीमती राधा प्यारी, श्रीमती मनोरमा शर्मा; श्रीमती सीता सिनहा; महादेव प्रसाद, सत्यनारायण सिंह सनेही, हरिवंश नारायन सिंह; शशीभूषण चित्र में स्वास्थ्यगृह के संचालक डा० बी० पा० सिनहा, तथा गृह चिकित्सक डा० एम० सिनहा बीच में बैठे हैं।

Printed and Published by Syt. Baleshwar prasad Sinha. 287, Badshahi Mandi, Chowk, ALLAHABAD.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Compiled
1990-2000

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain.